स्व० ब्र० सीतलस्मारक ग्रन्थमाला।

करीब ४० वर्षों तक जैनसमाजकी व 'जैनमित्र' की अथक सेवा करनेवाले स्व० श्री जैनधर्मभूषण ब्रह्मचारी श्री शीतलप्रसादजीकी सेवाओंका स्थायी स्मारक करनेके लिये हमने आपके नामकी ग्रन्थमाला निकालनेको कमसे कम १००००) की अपील आपके स्वर्गवास पर वीर सं० २४६८ में की थी, लेकिन उसमें सिर्फ ६०००) ही इकट्ठे हुए, और इतने स्थायी रुपयोंमें आज क्या हो सकता है? तो भी हमने इस ग्रन्थमालाका कार्य वीर सं० २४७० से जैसे तैसे चालू कर लिया, और निम्न ग्रन्थ प्रकट करके जैनमित्रके ग्राहकोंको भेंटमें बांटे हैं—

१-स्वतंत्रताका सोपान—(ब्र० सीतलकृत) पृ० ४२५, मू० ४)

२-आदिपुराण—(पं० तुलसीरामजी, देहली निवासी कृत श्री ऋषभनाथ पुराण भाषा छन्दोबद्ध) पृ० ४०० मू० ४) और यह तीसरा ग्रन्थराज-श्री चन्द्रप्रभपुराण भाष छन्दोबद्ध प्रकट कर रहे हैं, और 'जैनमित्र' के ५२ वें वर्षके ग्राहकोंको भेंट दे रहे हैं।

आय अतीव कम व खर्च अधिक बढ़ जानेसे इसवार जैनमित्रके ग्राहकोंसे एक २ रुपया अधिक लिया गया है, लेकिन चन्द्रप्रभ पुराण जैसा महान ग्रन्थराज 'मित्र' के ग्राहकोंको भेंटमें मिल रहा है यह कोई साधारण बात नहीं है।

यदि सीतलस्मारक फण्डमें अब भी कमसे कम ४०००) और मिल जायें तो १००००) पूरे होकर अधिक कार्य हो सकता है और प्रतिवर्ष उपहारग्रन्थ दिया जा सकता है। अतः 'मित्र' के सुज्ञ व दानी श्रीमानोंसे हम पुनः निवेदन करते हैं कि इस सीतलस्मारक ग्रन्थमालाको हराभरा करें जिससे यह हजारों रुपयेके ग्रन्थ भेंटमें बांट सकें। निवेदक—

मूलचन्द किसनदास कापड़िया, सूरत।

—प्रकाशक।

प्रस्तावना।

दिगम्बर जैन समाजके ग्रन्थ भण्डारोंमें अभी तक ऐसे हजारों गद्य पद्य हस्तलिखित ग्रन्थ अप्रकट पड़े हैं कि उनमेंसे जितनोंका भी उद्धार किया जा सके थोड़ा ही है।

इनमें चौवीस जिन पुराणोंके प्रायः पद्य ग्रन्थ तो अप्रकट जैसे ही थे, अतः हमने ९ वर्ष हुए कविरत्न श्री नवलशाहजी (बुन्देलखण्ड) कृत श्री वर्द्धमान पुराण (महावीर पुराण) भाषा छन्दोबद्ध वीर सं० २४६८ में प्रकट किया था उसके बाद कोई ७-८ वर्ष पहले हमको देहलीके जैन साहित्यप्रेमी व प्रचारक तथा हमारे मित्र बा० हीरालाल पन्नालाल जैन अग्रवाल (बुकसेलर) से सूचना मिली कि देहलीके बड़े मंदिरके ग्रन्थ भण्डारोंमें कई हस्तलिखित पद्य ग्रन्थ तीर्थंकर भगवानके पुराणोंके भी हैं। यदि आप उन्हें प्रकट करनेकी व्यवस्था कर सकें तो इन ग्रन्थ रत्नोंका उद्धार होकर उनका पठन पाठन घर २ हो सकता है। यदि आप स्वीकार करें तो उन ग्रन्थराजोंमेंसे प्रेस कॉपी तैयार करके मैं भेज सकता हूं।

इस सूचनाको हमने सहर्ष स्वीकार किया और बा० पन्नालालजीसे देहली नि० कविरत्न तुलसीरामजी रचित श्री ऋषभ पुराण (आदिनाथ पुराण) भाषा छन्दोबद्ध तथा कवि श्री पं० हीरालालजी बड़ौत नि० रचित श्री चन्द्रप्रभ पुराण ये दो ग्रन्थ आपसे प्रेस कॉपी तैयार कराके मंगवाई। उनमेंसे हम श्री ऋषभनाथ पुराण (आदिनाथ पुराण) तो २ साल हुए जैनमित्रके उपहारमें प्रकट कर चुके हैं, और यह चन्द्रप्रभ पुराण ग्रन्थ भी आज प्रकट कर चुके हैं।

हमारे ८ वें तीर्थंकर श्री चन्द्रप्रभस्वामीका यह कथानक एक ऐसा पुराण ग्रन्थ है जिसमें सभी तीर्थंकर नारायण प्रतिनारायण, बलभद्र, कालवर्णन, सागार अनगार वर्णन, जैन सिद्धांतका समस्त वर्णन एक ही ग्रन्थमें मिल जाता है। हां, इतना अवश्य है कि यह पद्य ग्रन्थ है और भाषा पुरानी है, तो भी इस ग्रन्थका ध्यानपूर्वक वार वार पठन करनेसे इस ग्रन्थका वर्णन अच्छी तरहसे समझमें आ सकेगा।

यह कोई साधारण पद्य ग्रन्थ नहीं है, लेकिन कविश्री पं० हीरालालजीने तो इसकी रचनामें गजब ढा दिया है। क्योंकि आपने इसकी रचना दोहा, चौपाई, पद्धड़ी छंद, सवैया इकतीसा, अडिल्ल छन्द, छप्पै, घत्ताछन्द, जोगीरासा, शशिवदन छन्द, सुन्दरी छन्द, परमादि ढाल, भुजंगप्रयात छन्द, सोरठा, वसंततिलका, शिखरिणी छन्द, काव्य, वंशस्थल छन्द, शार्दूलविक्रीडित, लावनी, मालिनी, गीताछन्द, ढाल, चंडी छन्द, त्रिभंगी, शंकर, इन्द्रवज्रा, चूलिका, मनहरण, आदि अनेक छन्दोंमें करीब ४००० श्लोकोंमें इसकी अपूर्व ऐसी रचना की है कि जिसे पाकर कविकी अजब कवित्वशक्तिका पता चल जाता है। क्योंकि इतने रागरागिनियोंमें रचना करना कुछ सहज कार्य नहीं है।

ग्रन्थकर्ता कविरत्न पं० हीरालालजीका परिचय ।

श्री चंद्रप्रभपुराण भाषा छन्दोबद्धके रचयिता कविरत्न पं० हीरालालजी कब होगये, व कहांके थे ? उनके वंशमें अब कोई है या नहीं, उनके गुरु कौन थे, और उन्होंने इस चंद्रप्रभपुराण ग्रंथकी रचना कब व कहां की होगी ? यह जाननेके लिये हमारे पाठक अतीव उत्सुक होंगे, अतः इस विषयमें हमने बा० हीरालाल पन्नालालजी देहली, वाणीभूषण पं० तुलसीराम काव्यतीर्थ बड़ौत व पं० जुगलकिशोरजी मुख्तार सरसावासे पत्र व्यवहार किया तो मुख्त्यार साहबने लिखा कि मैं कवि हीरालालजीके विषयमें कुछ नहीं जानता हूं आदि। इधोवृद्ध वाणीभूषण पं० तुलसीरामजी काव्यतीर्थने लिखा कि पं० हीरालालजीके सम्बंधमें यहां बड़ौतमें किसीको कुछ पता नहीं है, न उनका कोई वंशधर ही अब यहां है। इतना पता तो चलता है कि वे यहांके थे और बड़ी ही साधारण स्थितिके व्यक्ति थे। मेरी समझमें यह श्री चन्द्रप्रभ पुराण ही उनके वंशका अवशेष है। यहां जितने भी जैन अजैन स्त्री पुरुष हैं उन सबसे मैंने पूछ लिया पर उनका समकालीन कोई भी नहीं है आदि।

अब हमारे मित्र भाई पन्नालालजी अग्रवालने इस विषयमें बहुत छानबीन की तो अन्तमें मास्टर उग्रसेनजी बड़ौतके जवाबमें सहारनपुरसे एक पत्र आया उसमें वे लिखते हैं कि—

सहारनपुरमें अतीव वयोवृद्ध ला० हीरालालमलजी अग्रवाल हैं वे कहते हैं कि चन्द्रप्रभ पुराणके रचयिता कवि पं० हीरालालजी और हम एक ही खानदानमें हैं। उनका और हमारा एक ही खानदान है। यद्यपि मेरी उम्र इस वख्त ८० साल हो चुकी है और ला० हीरालाल कविको करीब ७०-७२ साल फौत हुए हो गये हैं। अलबत्ता मैंने उनको देखा है और वह मेरी यादमें उस वक्त मेरी उम्र करीब ९-१० सालकी होगी। मैं उनके माता-पिताका नाम कैसे बतला सकता हूं? जब कि मैं अपने सगे पड़बाबाजीका ही सिर्फ नाम जानता हूं जो जीसुखराय था। उनके मातापिताका भी नाम नहीं जानता हूं, जब कि वह मेरे पड़बाबाजीके चचा ताऊजादभाई थे, और ला० हीरालालकी पैदायश और मौतकी तारीख कौन बतला सकता है? और उस खानदानमें इस वक्त एक मैं ही एक बदनसीब जिन्दा हूं। बड़ौतके अन्दर तो आजकल इस खानदानसे शायद ही कोई वाकिफ हो आदि?

अतः इस पत्रसे इतना तो पता चला कि कविश्रीके खानदानमें एक भाई हीरालालमलजी सहारनपुरमें ८० सालके मौजूद हैं। अब इस ग्रन्थराजके अंतमें १७ वीं संधि ३५ श्लोकोंकी है उसे पढ़नेसे ग्रन्थकर्ता कवि श्री हीरालालजीके विषयमें पता चलता है कि—

हस्तिनापुरसे पश्चिम दिशामें मेरठके पास बड़ौत (Baraut) नामक नगर है जहां सुन्दर चित्रकारीवाले दो जैन मन्दिर हैं, व अनेक प्राचीन प्रतिमायें व अनेक हस्तलिखित शास्त्र यहांके शास्त्र भण्डारमें हैं। यहांके जैनी दान धर्ममें बड़े विख्यात हैं—सातों क्षेत्रमें द्रव्य खर्च करते रहते हैं। यहां कई जातिके जैनी बसते हैं उनमें अग्रवाल जैनी अधिक हैं। इस अग्रवाल जातिमें गोयल व गर्गगोत्रमें मेरा जन्म हुआ है। मेरे वंशमें जिनदास, म्होकमसिंह हुए, उनके चार पुत्र जैकंराय, धनसिंह, रामसहाय और रामजस हुए, उनमेंसे धनसिंहका पुत्र मैं (हीरालाल) हूं। मैंने मेरे गुरू पंडित ठंडीराम जो बड़े विद्वान थे उनसे मैंने अध्ययन किया है। मैं न तो संस्कृत जानता हूं न मुझे

छन्द, अर्थ, पद, पिंगल मात्रा आदिका पूर्ण ज्ञान है तौ भी मैंने देव गुरु शास्त्रके प्रसादसे व सब पंचानकी सहायसे अंग्रेजी राज्यमें इस ग्रन्थकी पद्यमय रचना मुझ अल्पबुद्धिने छः वर्षके परिश्रमसे विक्रम संवत १९१३ भाद्रपद वदी १२ और गुरुवारके प्रातःकालमें पूर्ण की है, जिसमें २४७७ श्लोक हैं। मैं अल्पबुद्धि हूं अतः इसमें जो भूलचुक हुई हों विद्वजन इसे सुधारकर पढ़ें व पढ़ावें आदि।

ग्रन्थके अन्तमें इतना वक्तव्य होनेसे ही अब ठीक २ पता चल जाता है कि कविश्री हीरालालजीको हुए करीब १०० वर्ष होचुके हैं और आज आपके वंशमें सहारनपुरमें ला० हीरालालमलजी जैन ८० वर्षके मौजूद हैं। कविश्रीने चन्द्रप्रभपुराणके सिवाय और कोई ग्रंथकी रचना की हो, ऐसी प्रशस्तिसे मालूम नहीं होता, तौभी किसीको आपकी अन्य रचनाका हाल मालूम होजावे तो हमको सूचित करेंगे तो उसके उद्धारका भी हम प्रयत्न करेंगे।

यह श्री चंद्रप्रभपुराण ग्रन्थराज प्रकट होकर 'जैनमित्र' के ५२ वें वर्षके ग्राहकोंको उपहारमें दिया जा रहा है और सिर्फ इनी गिनी प्रतियां ही अलग निकाली गई हैं। अतः जो 'मित्र' के ग्राहक नहीं हैं वे इस ग्रन्थराजको अवश्य मंगा लेवें अन्यथा पीछेसे ऐसा प्राचीन ग्रंथराज नहीं मिल सकेगा।

अंतमें भाई हीरालाल पन्नालालजी जैन अग्रवाल देहलीका विना उपकार माने हम नहीं रह सकते हैं क्योंकि आपने इस ग्रन्थकी प्रेस कापी तैयार नहीं करदी होती तो, यह ग्रन्थ प्रकट नहीं हो सकता था।

इस प्रकार अन्य अप्रकट ग्रन्थराजोंका उद्धार होता रहे तो हमारा प्राचीन बहुतसा अप्रकट साहित्य प्रकाशमें आ सकता है।

सूरत-वीर सं० २४७७ विक्रम संवत २००७ माघ सुदी ५ ता० ११-२-१९५१	निवेदक— मूलचंद किसनदास कापड़िया -प्रकाशक।

विषय-सूची।

संधि	विषय	पृष्ठ
१.	प्रथम संधि—श्रेणिक कृत वीर पूजा वर्णन ...	१
२.	द्वितीय संधि—सप्तत्तर अधोलोक वर्णन	१२
३.	तृतीय संधि—मध्यलोक ऊर्ध्वलोक वर्णन	३४
४.	चतुर्थ संधि—श्री ऋषभदेव चरित्र वर्णन	४९
५.	पंचम संधि—प्रथम भव श्री ब्रह्मराज, द्वितीय भव प्रथम स्वर्ग श्रीधर देववर्णन ...	६८
६.	षष्ठम संधि—अजितसेन तृतीय भव चक्रवर्ती पद ग्रहण वर्णन	९२
७.	सप्तम संधि—सोलम स्वर्गमें चतुर्थ भव इन्द्रपद प्राप्ति वर्णन	१२१
८.	अष्टम संधि—पंचम भव पद्मनाभ नरेन्द्र पद प्राप्त वर्णन	१४३
९.	नवम संधि—पंचम भव पद्मनाभ मुनिव्रत ग्रहण वर्णन	१६४
१०.	दशम संधि—षष्ठ भव वैजयन्त पद प्राप्ति वर्णन ...	१९१
११.	एकादश संधि—जिन गर्भावतार प्रथम मंगल वर्णन	२२१
१२.	द्वादश संधि—जन्मकल्याणक वर्णन	२४२
१३.	त्रयोदश संधि—निष्क्रमण (तप) कल्याणक वर्णन ...	२६८
१४.	चतुर्दश संधि—जिन केवलोत्पन्न समोसरण, धनेन्द्र रचित जिन धर्मोपदेश वर्णन	२९४
१५.	पंचदश संधि—मघवा नृप प्रश्न, दत्त गणोत्र तथा द्वादशांग रचना वर्णन	३४२
१६.	षोडश संधि—स्० चन्द्रप्रभ मोक्षकल्याणक वर्णन ...	३९५
१७.	सप्तदशम संधि—कवि कुल नाम ग्राम वर्णन ...	४१९

ॐ नमः सिद्धेभ्यः।

श्री चन्द्रप्रभपुराण भाषा।

(छन्दोबद्ध)

प्रथम संधि।

दोहा—श्री चन्द्रप्रभ पदकमल, हाथ जोड़ि सिर नांय।
प्रणम शारदा मातसु, गुरुके लागूं पाय ॥१॥

पद्धडी छन्द—वंदूं श्री रिषभ जिनेन्द्र देव, सुर नर मुन नम पद करै सेव। वंदूं श्री अजित जिनेन्द्र चंद्र, कर जन्म न्होन थुत इन्द्र वृन्द ॥ २ ॥ वंदूं श्री संभवनाथ तोह, भव भवके अघ नाशैं जु मोह। वंदूं श्रीअभिनन्दन जिनेश, भव्याब्ज विकासनको दिनेश ॥ ३ ॥ वंदूं श्री सुमति पदाब्ज दोय, जूं सुमति सुबुधि परकाश होय। वंदूं पदम प्रभु पदम सार, संसार समुदसैं करत पार ॥ ४ ॥ वंदूं सुपार्श्व त्रियविधि त्रिकाल, पाऊं मनवांछित नमत भाल। वंदूं श्री चन्द्रप्रभ विशाल, चन्द्राक चरन तन दुति रिसाल ॥ ५ ॥ वंदूं श्री सुविध जु दुविध नास, लहि लोक अन्त सिद्धाल वास। वंदूं श्री सीतल

चरन श्रेष्ठ, दुठ अष्ट नष्ट गुण पुष्ट ज्येष्ठ ॥ ६ ॥ वंदूं त्रिपांस
श्री मोक्ष कंत, कर कोह मोह मय लोभ अंत। वंदूं क्रम श्री
जिन वासपूज, कल्याणक पण सुर असुर पुज्य ॥ ७ ॥ वंदूं श्री
विमल जिनेन्द्र तोह, कर विमल सु आतमराम मोह। वं
अनंतगुण अन्त नाहि, तो बरननकर सुरगुर थकाहि ॥८॥
श्री धर्म जिनेन्द्र चन्द्र, पादारु वृन्द इन्द्रादि वन्द। वंदूं
कारण सुपाय, भये चक्र मक्र व्रत तप धराय ॥ ९ ॥ वंदूं
कुन्थ जिनेश्वराय, मम भवसागर गागर समाय। वंदूं श्री अर
नाथ सैप, दग ज्ञान वीर्य सुख रत्न कोष ॥ १० ॥ वंदूं
मल्लि जिनेश सार, हे कृपासिन्धु गुण अमल धार। वन्दूं मुनि
सुव्रत व्रत विधान, सिंहानक्रीडतादिक बखान ॥ ११ ॥ वं
श्री नमि ईक्षिपमस्कार, इक्षिप गुण गण ग्रेही लनाद। वन्दों जादौं
पति नेम बाल, ब्रह्मचारी रजमति तजि रिसाल ॥ १२ ॥ वन्दूं
श्री पारस चरण दोय, मम लोहे फरस सम कनक होय। वन्दूं
सनमति पदकमल तास, ए चौविस बरतत मरो आस ॥ १३ ॥
वन्दूं निर्वाणादिक अतीत, भावी महापद्मादिक विनीत। ए
चौ त्रस चौबिस और वीस, सीमंद्रादिक नित नांय शीस। १४॥
दस जन्मातिशय दस ज्ञान होत, सुरकृत चौदय प्रतिहार्य चोत।
वसु नंत चतुष्टय धार देव, जै जै अरिहंतसु करूं सेव। १५॥
वसु कर्म नासि छिनवास कीन, वसु वसु गुण सम्यक्तादि लीन।
वसु द्रव्य जजूं वसु अंग नांय, सो सिद्धदेव वसु जाम ध्याय
॥ १६ ॥ द्वादश तप दस वृष पंच चार, त्रिर गुप्त षडावश्य सार

चार। वन्दौ विमुच अंग पूर्व जोय, गुण उपाध्याय तसु पर्ण दोय ॥ १७ ॥ धर पंच महाव्रत सुमत पंच, पंचेन्द्रिय रोधा-वश्य संच। भूमैं न न्होन विन वस्त्र तिक्त, कच लौंच लघु कवार भुक्त ॥ १८ ॥

दोहा—मुखमैं दातन ना करै, ठाडे करै आहार।
ए गुण जुत मुन पद नमूं, पंच परमेष्ठी सार ॥ १९ ॥

सरस्वति स्तुति।

वस्तु छन्द—नमूं माता २ भारती पद तोह। निपच प्रभ झरी द्रह गणि त्रिमछानान ढली। वानी सीता भेद भूम-राज दंत श्रुत दधिमें रली। सप्त भंग तरंग उठत पाप ताप कर नास। सो ग्रांजली सो तीर्थ जल पीवतु बुध परकास ॥ २० ॥

गणधर स्तुति।

दोहा—वृषभसेन गणधर प्रमुख, गौतम गणधर चर्म।
चौदै शत त्रेपन अधिक, वंदौ मन वच पर्म ॥ २१ ॥

गुरु स्तुति।

सवैया—तृण हेम अरिहितु सम गिने, निंदा थुत महल ममान दुख सुख मृत्यु जीवना। गिरपै ग्रीषम काल पावसमें तरु तले हिमरितु नदी तट ध्यानामृत पीवना। ध्यानांजुली तिहु काल त्रिसा आए गिनै नांहि जद्यपि किरोध लोभ मोह तीनों खोवना। तथापि करम नृप छिदपै करत सदा ऐसैं गुरु पद जुत मेरे अघ सीवना ॥ २२ ॥

पंच इष्टकूं नमस्कार।

चौपाई—बंदौ पंच इष्टको सदा, ताको भेद सुनो सरवदा॥ बंदौ निज माताके पाय, जाकी कूख उपज्यौ आय॥ २३॥ बंदौ पिता तने जुग चर्न, वैश्य वंश लियौ उत्तम वर्न। वंदू गुरु विद्या दातार, जातै प्रगट्यौ सुबुधाचार॥ २४॥ बंदौ वर्तमान नृप जोइ, जाके राज चैन भयौ मोइ। बंदौ अन्तम इष्ट निहार, जो रुजगार तनौ दातार॥ २५॥

दोहा—देवसार दासु गुरुकौं, नमस्कार इम कीन।
इष्ट मनाकर ग्रंथकौं, कियौ आरंभ नवीन॥ २६॥

पंडित लक्षण।

अडिल छन्द—जो होय ज्ञाता ग्रंथ षट मत धरम युत चुत हो सही, बाल नाना वृद्ध होहै नीतवान नरो सही। सुविचार सुधाचार किरिया छिमायुत प्रश्नोत्तरं। तसु होय धारक श्रेष्ठ वक्ता जिन पदाब्जसु भृंवरं॥ २७॥

श्रोता लक्षण।

छप्पै—देव शास्त्र गुरु भक्त धर्म वत्सल दातावर, पात्रापात्र विचार गुणागुण गहत समझिकर। काम क्रोध छल लोभ मान दुराग्रह छंडै, जिन वचनामृत स्वात बूंद चात्रग गुन मंडै। अरु जो वक्ता भूलै कदा, मिष्ट वचन तासू कहै फुनि विनय सहित निरणय करै, सो श्रोता सद्गुण लहै॥ २८॥

कथा लक्षण।

छंद पाइता चाल–अक्षेपणी कथासुजानं, विक्षेपणी बहुरि पुमानं। संवेगणी तीजी सोहै, निर्वेदनी तुर्य सु मोहै ॥ २९ ॥ सुन अर्थ सु इन ए मातं, थापै हेतु दिष्टांतं। पुन स्यादवादमें जोहै, अक्षेपणी कथा जु सोहै ॥ ३० ॥ मिथ्यात दिशा सब जामें, पूरवापर विरुद्ध सु तामें। ताको उत्थापन करहै, विक्षेपणी सो मन हरहै ॥ ३१ ॥ तीर्थंकर आदि महानां, पुराण पुरुष व्याख्यानां। वृष २ फल वरनन जामें, संवेग नीती जो नामें ॥ ३२ ॥ संसारभोग थित लक्षण, कारण वैराग ततक्षण। निर्वेद चतुर्थनि येही, ए लक्षण कथा बरेही ॥ ३३ ॥

ग्रंथ महिमा।

छप्पै–मिथ्या कुंजर सिंह मोह पादप कुठार वर, पाप तापको इंदु ध्वांत अज्ञान दिवाकर। क्रोध नागको मंत्र मान गिरको वज्रोपम, माया सफरी जाल लोभ घनको सुपोन सम। आगल समान है कुगतको, स्वर्ग मुक्तिको श्रेणिवर। शुभ ऐसो ग्रंथ महान यह, पढ़त सुनत आनंद घर ॥ ३४ ॥

कवि लघुता।

अडिल्ल–चंद गहै जू बाल रु पकड़े नागको, चुल्लुनत सागर चार कैर संख्याजको। नगपै चढ़ै जु पंगु बन फल तोड़है, ताइतनी त्यौं ग्रंथकी भाषा जोड़है ॥ ३५ ॥

चौपाई–सज्जन हांसी करो न मोह, सोधो भूल जहां कछु

होइ। करो क्षमा हम शठता देख, तुमस्यो विनय करूं यह पेख ॥ ३६ ॥ वंदेहं चंद्रप्रभ सदा, तत्पुराण कथेहं मुदा। पूर्व क्रमेण सुनो जन सही, जूं गौतम श्रेणिक प्रति कही ॥ ३७ ॥ जिन गुण कथन अगम असमान, बुध बल कौन लहै अवसान। गणधरादि आचार्य महंत, वरनन कर पायो नहीं अंत ॥ ३८ ॥ तो अब अल्प बुद्धिको धनी, मिनती कौन करै तिन तनी। जो बहु भार न गजपै चलै, सो क्यौं दीन मुसक ले चलै ॥ ३९ ॥ तथा द्रव्य जो रवि दरसाय, ताहि दीप क्यौं ना दिखलाय। कठिन मार्ग जो इभिदल मिलै, तित मृग छावा सुखसू चलै ॥ ४० ॥ त्यौं मैं अणु गुरु कथित विलोय, मन वच काय सुनो सब कोय। महापुराण त्रिषष्ठी जान, गुणभद्राचारज सु बखान ॥४१॥ तामै देखि कथा विस्तार, हम अपने मन ऐसैं धार। बड़े ग्रंथ लखि आलस होय, समय पाय बांचत है कोय ॥४२॥

तातैं चन्द्रप्रभु पुराण, जुदो होय बांचै तुछ ज्ञान। बाल गुपाल पढ़ै नर नार, सुनते पुण्यरु हर्ष अपार ॥ ४३ ॥ धर्म अर्थ काम अरु मोक्ष, ए चव दाता गुण मण कोष। पढ़ै सुनै न बुद्ध बलहीन, ये निश्चै जानों परवीन ॥ ४४ ॥ सब द्वीपन मधि जम्बूद्वीप, ज्यूं सब जनमें दिपै महीप। जोजन लक्ष तास विस्तार। तावत तुंग मेरु मधि धार ॥ ४५ ॥ दक्षिण भरत दूजसम चन्द, छहो खण्ड संयुक्त अमंद। दध तट मध्य आर्ज खण्ड वसै, मगध देश देशनको हंसै ॥४६॥ धन कन कंचनको भंडार, श्रीमुनि आर्ष करे विहार। पर्वत्त नदी ताल उद्यान,

पैड २ पै श्री जिन थाव ॥ ४७ ॥ भ्रू पंकति मनु मुक्तन माल, मज्जन भरे मनु झलक विसाल । सो माला चक्रीसम वेस । धरै कंठकर लज्जित सेस ॥ ४८ ॥ अवधि राजगृहीपुर थसै, दाम मत्र जू धुक धूकि लसै । थाय हूर पोखर अपरी, ता जुत-पुर अति शोभा धरी ॥ ४९ ॥ कोट खंब धोला गिर दनो, परिखा सजल लो नदध मनो । चहुंदिश सुन्दर धारा द्वार, बूरज कंगूरादिक छवि धार ॥ ५० ॥ बारे जोजनको विस्तार, वन्दी नगर सो वलियाकार । मंदिर कुंज सवन बाजार, बीच बीच जिन मंदिर सार ॥ ५१ ॥ शिखरवृन्द पेदा जगमगै, कोटिक थंख सूर द्युति भगै । ऐसे श्री जिनबिंब मनोज्ञ, देखत हरै जनन अघ ओघ ॥ ५२ ॥ भविजन न्हौन करैं त्रियकाल, पूजा कर रू पढ़ें जयमाल । आश्रम श्रवण सुगुरु पद सेव, धैरै शीलव्रत दान करेव ॥ ५३ ॥ इन्द्रपुरी सम शोभा धरै, श्रेणिक नृपत राज तहां करै । मानो इन्द्रतनो अवतार, बुद्ध विधाता तन छविमार ॥ ५४ ॥ धीरण वीर भानु परताप, लक्ष्मीवंत धनिद जू आप । दाता सुर तरु गुण गण कोष, कुल अरु जात पक्ष निरदोष ॥ ५५ ॥ सज्जन कुमुद प्रकाशन वेस, नमहर वंशमाहि निस्सेष । जन चकोर लख लखन त्रिपंत, कीर्ति चन्द्रका दधि परियंत ॥ ५६ ॥ चतुरंग सेना बल भरपूर, हयगय रथ पायकगण सूर । छहो वर्ग संयुक्त नरेश, तिनको बरनन सुनो विशेष ॥५७॥ देश अनेकथैं जाकी आन, कोष भरो मनु हाटक खान । दुर्ग सुगढ़ दुर्गम्य विशेस, रम्य

नांहि अरि मन परवेस ॥ ५८ ॥ तुर्य सुभट रणमैं अति धीर, जंगम गिर सम गजगण भीर। जो बढ चलै पवनतै जोर ऐसे अश्व वर्ग पट जोर ॥ ५९ ॥ भोगी भोगभूमिया जिसो, लक्षण लक्षित शोभित इसो। मणिन जड्यो कलिधौत जु हार, ऐसो उपश्रेणिक सुत सार ॥ ६० ॥ गुण अनेक नृप वर्णै कोय, होनहार तीर्थंकर सोय। मंडलीक पदवी संयुक्त, ताको भेद कहूं जिन उक्त ॥ ६१ ॥

अथाष्टभेद राजा यथा कडका छंद–कोट पूर्व ईश राजा सोई जानिये। पंचशत भूप नुत अर्द्ध राजा सहस नृप नमत जिसै सो महाराज है॥ दुगुन फुन नमत मंडलाच्व राजा। दुगुन फुन नमत मंडलीश राजा वही। महामंडलीश वसु नमतै दुगुन फुन नमत चक्रार्ध राजा वही॥ चक्रीको सहस बत्तीस नमतै ॥ ६२ ॥

चौपाई–चोरनको षडिया बल धार, मारनको चोपडकी सार। बंध नाम है बंधन मार, दंड सु एक छत्रमैं धार ॥ ६३ ॥ ताडन नाम वृक्ष ताडको, पालन कह तिल तिल कारको। जाके राज प्रजा सब सुखी। ईत भीत ना कोई दुखी ॥ ६४ ॥ रूपवंत धनवंत विवेक, कलावंत विज्ञान विशेष। चारौं वरन वसैं परवीन, अप अपने मत सम्यक लीन ॥ ६५ ॥ ता राजाकै नार अनेक, पटरांणी चेलना सु एक। जास रूप रोहणी रत रती, सुगुण सुलक्षण शोभित सती ॥ ६६ ॥ पूजा दान विषै अति चाव, गुरु सेवामें रत अति भाव। जती व्रतीको आदर

करे. साधरमीसू वातसल धरै ॥ ६७ ॥ शीलांकित सुंदर सर्वंग, क्षायिक सम्यक धरै अभंग। इत्यादिक शुभ लक्षण धार, मानो इंद्राणी अवतार ॥ ६८ ॥ राजा राणी सुगुण विशाल, सुखमैं जात न जानै काल। इक दिन सभा मध्य सुनरेश, निवसै मानौं सुरग सुरेश ॥ ६९ ॥ नृप सुत मंत्री अभयकुमार, समय पाय तब वचन उचार। अहो तात यह नर अवतार, जिन चरचा बिन अफल असार ॥ ७० ॥ श्री जिनेन्द्र पद सीस न नमै, सो थोथे नरियल सम पमै। नैन पाय जिन दरसन हीन, मानो चित्र चितेरे कीन ॥ ७१ ॥ श्रोत पाय नहीं सुनै पुरान, तन मंदिरके छिद्र समान। जो निजमुख प्रभु थुत ना करै, नाग जीभ बिल वच विष भरै ॥७२॥ पूजा दान विना कर जास, वटडाढ़ी वत शोभा तास। जाको हृदा दयावृष विना, पाहन खंड बराबर गिना ॥ ७३ ॥ जो निज पद सुतीर्थ ना करै, तास भारतै भू थरहरै। वपु सुंदर व्रत संयम विना, चर्म-वृक्ष विव नानै ठना ॥ ७४ ॥ इत्यादिक सब कारण बना, देव धर्म गुरु सरधा विना। इंद्र धनुषवत शोभा धार, यातैं गहो श्रावकाचार ॥ ७५ ॥ पंच उदंबर तीन मकार, सप्त विसन त्यागो निशहार। अनछान्यो जल ना आचरो, बाईस अभक्ष संधानो हरो ॥ ७६ ॥ जल घृत तेल हींग पकान, चुन ए चर्म सपर्शित हान। पंचाणुव्रत गुणव्रत तीन, चव शिक्षाव्रत धारै लीन ॥ ७७ ॥ सामायक तिहु पण आदरै, पूजा दान सील व्रत धरै। चारो प्रोषध कर उपवास, अभय कुवार इत्यादिक

मास ॥ ७८ ॥ राजा आदि सभाके लोय, धन २ कवर कहै यह जोग। तादि समय आय वनपाल, षट रितुके फल फूल रिसाल ॥ ७९ ॥

दोहरा–भेट धार नृपको नयो, सीस नांय कर जोर।
आए समवति गिरिशिखर, लेहु वधाई मोर ॥ ८० ॥

कुसुमलता छंद–ताके पुन्य प्रतापफला वरु षटरितुके इकवार फरे, अति विरोधी जीव सुखी हरहर मयूर मिल प्रीत धरे। तीन कोट द्वार इक इक पो मानसथंभ चुवेदि धरे, द्वादश सभा मध्य सिंहासन चतुरानन प्रभु दर्श करे ॥ ८१ ॥ सुनत वचन हरष्यो नृप ततछिन सिंहासन ते उतर चलो, सप्त पैंड गिर सनमुख्ख ह्वे नुत कर परोक्ष दे दान भलो। वस्त्राभरण मालीकूं दीयें पुत्रें आनंद भेरि दई। सुनकर सव नरनारी हर्षे दरसनकी उर चाह ठई ॥८२॥ कर असनान पहर पीतांबर अंग अंग आभर्ण धरे, ऐसें नरनारी सव सजकर आय रायकै द्वार खरे। हय गय रथ सिवका वहुसजि सज्ज तुर मृदंग निशान वजे, नृत्य होत अखाड़े चाले दरशनको सव साज सजे ॥ ८३ ॥ मानस थंभ विलोकि मान तजि वाहन छड़ाने पांव चले, समोसरणका आदि पोल पै लख मंगल द्रव आठ भले वीथी तुप महलकी पंकित चैत वृक्ष फल वारिजकौं, सोभा देखत जात चले सव सभा मध्य नृप जाय टिकौं ॥८४॥

आर्य छन्द–प्रभु सवमुख कर जोड़े, सीस न्याय जै जै

सनमति स्वामी। भए अनंत अघ थांरे, ले पुष्पांजलि क्षेप नृप नामी ॥ ८५ ॥

इति पुष्पांजलिं क्षिपेत्।

एकाक्षर श्री नामछंद—स्वं, कं, जैं, दैं, जलं ॥ ८६ ॥

दुअक्षरा छंद—नाम, श्री गंधा, लिधा, रजे, जजे। चंदनं ॥ ८७ ॥

त्रिअक्षरा छंद नाम—नारीय, लेघालं, मर्यालं, जैदेही अक्षतं ॥ ८८ ॥

चतुक्षरा छंद—नाम कन्या, नानफूलं, कामाशूलं, नासलीनो, पूजाकीनो। पुष्पं ॥ ८९ ॥

पंचाक्षरा छंद—भो भूखं बीरं, सो तू मैं चीरं, नैवेद्यं, ताजे, तुम भेटं साजे। चरु ॥ ९० ॥

षष्टाक्षरा छंद नाम—दीपं रत्नं जोतं, मोहार्थ है होतं। सो ले पूजा कीने, स्वहं ज्ञानं दीने। दीपं ॥ ९१ ॥

सप्ताक्षर छंद—नाम सार्षांस्यं—कृष्णा नारं ले आयो, खेवत धुवां फैलाओ। मानो छायो मोदाधं, पूजत नासं विघ्नामं। धूपं ॥ ९२ ॥

अष्टाक्षरा छंद—विद्युन्माला नाथ! एलाकेला आदि लीनो। हेमा थाल मैं भारीनो। पूजूं थांके पादै पंकं, दीनोहं सुष्कं निष्कलंकं। फलं ॥ ९३ ॥

नवाक्षरा छंद—नीरौ गंधो शीरं तंदुलं, पुष्पाढ्यं पक्वानं दीपधुलं। धूपाद्यं फलार्घं भर थालं, त्वं पादोद्वैज ज्येन्यामालं। अर्घं ॥ ९४ ॥

अथ जयमाल।

घत्तानंद छंद—जै जै तन कंचन मृगपति लक्षन सप्तहस्त वपु त्वंग बनौं। जै णाण दिवायर गुण रैणा यर मंगलाष्ट प्रतिहार्य ठनौं ॥ ९५ ॥

छन्द पद्धडी—अहि भूत खगेंद्र नरेंद्र इन्द, गणधर मुनिंद्र रवि चन्द्र जिंद। तीर्थांत वीर तुम पाद पद्म, वंदत सदीव लहि सुख्य सद्म ॥ ९६ ॥ जे चौतीस अतिशय विराजमान, जै नंत चतुष्टय गुण निधान, जै क्षायक दर्शन आदि लब्ध। नव लद्दी सु तुम छालीस गुणब्ध ॥ ९७ ॥ जग बंधू पितामह पूज देव, लख तन मन हरष्यौ करूं सेव। जै ब्रह्मा विष्णु महेश ईश, तुम सम नहीं जगमें हे जगीश ॥ ९८ ॥ मम सीस सफल भयो नमत तोहि, तुम दर्शन कर द्रग सफल मोहि। कर सफल भये पूजा करंत, पग सफल भये आयो तुरंत ॥ ९९ ॥

दोहा—इत्यादिक अस्तुत विविध, कर श्रेणिक भूपाल।
हाथ जोड प्रभुको नमैं, जोता भाग विशाल ॥१००॥

इति पूजा।

कवित्त—गणधर गौतम बहुर मन कर, फुन मुन आर्या वंदे पाय। करै सभा सु इत उत देख, मानुष कोठे बैठो जाय॥ पूरव पुण्य कियौ नृपनै, अति ता फल परतिक्ष जिन लख सार। गुणभद्राचारज यों भाषै, हीरालाल सु निश्चै धार ॥१०१॥

इति श्रीचन्द्रप्रभपुराणे गुणभद्राचार्यप्रणीतानुसारेण पीठिका वा वीरपूजा श्रेणिक कृत वर्णनो नाम प्रथमसंधि: संपूर्णम ॥ १ ॥

द्वितीय संधि।

दोहा–चौतीसौं अतिसै सहित, प्रातिहार्य फुनि आठ। नंत चतुष्टय धारकै, नमत खुले हिय पाठ ॥ १ ॥ गुणभद्राचारज प्रनम, संस्कृत कियो बखान। नर नारी मन लायकर, भाषा सुनो सुजान ॥ २ ॥

चौपाई–अब श्री वीर दिव्यधुनि खिरी, सर्व देस भाषा विस्तरी। रसना अधर तालु हालै न, सब्द घोर घन इछाहै न। छह २ घडी त्रिकाल खिरंत, साढेबारह कोड बजंत। सुर दुदमी रु देवी देव नृत करै मन हर्षित सेव ॥ ४ ॥ चात्रिग सम सु सभाजन जान, धर्मामृतकी चाह महान। इंद्र अवधतैं सब मन जान, प्रश्न करो प्रभु तबै बखान ॥ ५ ॥

कवित–चारों गति पण अक्ष काय छै जोग तीन त्रिय वेद प्रमानं। वेद ज्ञान वसु संयम सात चार दरसन परवानं ॥ छ लेस्या भव्याभव जुग छै समकित जुग सैनी मनानं। आहारक अनहारक दो फुन चौदै मारग रण गुण ठानं ॥ ६ ॥ षट परजाय प्राण दस संज्ञा चौ समास उन्नीस सुमाय। द्वादस है उपयोग परुपण बीस ध्यान चव आश्रव थाय ॥ लाख चोरासी जग्या जोन सत्र दो कोडाकोडी कुल कोड। आधा लाख कह घट यामैं चौविस ठाणो यह सब जोड ॥ ७ ॥ सप्त तत्त्वका भेद सुनो अब जीव तत्त्व पहलो इक जान। सिद्ध एक २ संसारी २ द्वै भेद बखान ॥ इक थावर पण भेद कहे इक त्रसके

भेद पुमान ॥ इक विकलत्रय एक पंचेन्द्रिय, पंचेंद्री फुन दोय सुमान ॥ ८ ॥ एक असैनी सैनी इकमें, मिथ्याती समद्रष्टी दोय। समद्रष्टीके लक्षन सुन अब, तीन काल षट द्रव्य जु सोय ॥ लेस्या काय छै काय अरु पण, व्रत अरु सुमति गर्ह अरु ज्ञान। पंचाचार पदारथ नव सब निकट भव्य यह कर सरधान ॥ ९ ॥ शुभके उदै होत चहुं गतमैं, अशुभ उदै दुख खान सुनेय। नारक पंच दुष्ष करि संजुत, भूख प्यास पशु दुष्य सहेय ॥ मानुष नेक विपत कर संजुत, देव सेव परमा दुख ठान। ऐसो जीव चेतना सत्ता, लक्षन है उपयोग महान ॥ १० ॥

काव्य—पंचकाय संजुक्त भेद सुन आदि औदारिक, नर पशु गतिमें होय नर्क सुर वैक्रिय धारिक। ऋंधिवान अहारक तन मुनि क्रोधी तेजस, कारमान तन कर्म पिंड सूक्षम२ लख॥ ११॥

कवित्त—चार प्राण धारक जीवे था, जीवे है जीवेगा मान। सुख सत्ता चेतन बोधता जीव चेइ नये अरु बहु जान। अस्त वस्त परमेइ अगुरुलघु द्रव्यप्रदेस चेतना मूर्त। पंच ज्ञान धारक ए लक्षन, जीवतत्त्व इम लखकर सूत ॥ १२ ॥

अजीव तत्वमें पुद्गलद्रव्य वर्णन।

एक अजीव तत्व भेद पण पहलो पुद्गल दोय प्रकार, अणुऽस्कंध फुन छै भेद है, सूक्षम २ अणु विचार। फुन सूक्षम है कारमान तन, सूक्षम थूल विषय रसनान। फरस आठ गंध दो रंग पण, सब्द सात बाईस ए जान ॥ १३ ॥ थूल रु सूक्षम धूप छांय है, थूल घीव जल तेल रु क्षीर, थूल २

पृथ्वी निर काठ सु, ए छ भेद बहु २ सुन वीर। धूप छांह चांदनी अंधेरा, शब्द अकाश थूल तुछ बंध। खुलत भेद इम दस पुद्गलकी, है परजाय जान परबंध ॥ १४ ॥

धर्माधर्म द्रव्य वर्णन।

अडिल–जैसे मीन चले न सहाई वार है, जीव चलन सहाई त्यों धृम सार है। ज्ञान पुलावे पंथीको लख थित करै, जिय सहाय त्यों अधृम निहतिह थित धरै ॥ १५ ॥

आकाश द्रव्य वर्णन।

कवित्त–सर्व द्रव्यकों ठौर देत है, द्रव्य अकास गुण परकास। ताके दोय भेद तुम जानों, लोकाकास अलोकाकास। पुद्गल धर्म अधर्म जीव जम, पंच जहां सो लोकाकास। पंच द्रव्य बिन एक सुन नभ, सो अलोक ए भेद प्रकाश ॥ १६ ॥

कालद्रव्य वर्णन।

असंख्यात समै इक आवलि असंख्यात आवलि इक स्वांस, सैंतीस सतक तिहत्तर स्वांसको एक महूरत तीस जु रास। ताको एक दिवस दिन तीसको एक मास जुग रितु षट वर्ष, लाख चुरासीको पूर्वांगकु लाख चुरासी दूरब दर्स ॥ १७ ॥

सवैया–पर्वांग पावक नयुतांग नयुतरू कुमुदांग कुमदरु पदमांग, पद्मा नलिनांग नलिनरु कमलांग कमलरु तूटीतांग तूटीतरु अटटांग पंद्रमा। अटटरु अममांग अममरु हा हा अंग हाहाफुन हुहुअंग हुहु बाईसदमा विंदुलता गुरु फुन विंदुलता म्हालतांग महालता पुने करै सीर्ष प्रकं पदमा ॥ १८ ॥

दोहा–हस्त पहेलक अचलात्मक, ए सब उनतीस जान।
ऊपरले जुग मिलि भये, इकतीस भेद प्रमान ॥१९॥
कर चौरासी लाख गुण, भिन्न २ सब ठौर।
सबके अंत प्रमान इम, आगै अंक निहोर ॥२०॥

सवैया–चार चार नव चार दोय, पण षट षट तीन एक। चार नव तीन वसु पांच है, चार षट एक नव सात। पांच दोय नव पांच पांच षट, षट आठ एक राच है। आठ आठ सात पांच एकषट दोय सात, पांच एक षट सुन्न षट पण माच है। दोय षट सात दोय चार पांच एक षट, नव षट सुन दोय सात दोय साच है ॥ २१ ॥

दोहा–तीन आठ चव अंक ए, आठ रु नव्वै सुन्न।
अचलात्मकके भेदसै, संख्या अंक सत्रन्न ॥ २२ ॥

लौकिक गिणती।

सवैया–सुन कुंड तीन भेद सलाका रु दूजा प्रतिसलाका तीसरा महासलाका ए सु माच है। जंबूद्वीप सम गोल जोजन सहस औंडे चौथे अनवस्य कुंडता ही सम राच है॥ तामैं सरखप भर तुंग दीप सिखावत ताकी संख्या छियालीस अंक मित साच है। एक नव नव सात एक दोय तीन आठ चार पांच एक तीन पांच है॥ २३ ॥

दोहा–एक षट रु सकल मिल, षोडश अंक सु चीन। चंदरे वर तापै बहुर, छतीस २ कीन ॥ २४ ॥ इम छालिस

अक्षर प्रमति, सर्षप कुंड प्रमान। सो सुर भर निज जानमें, ताको सुनो बखान ॥ २५ ॥ प्रथम सलाका कुंडमें, इक सरसों कण डार। फिर इक जंबुदीपमें, इक लोनाब्धि मंझार ॥ २६ ॥ दीप धातकी खंड इक, इक कालोदधि मांहि। इम दीपोदधि इक प्रति, इक इककण छिटकांहि ॥ २७ ॥ होय जोनसे दीप तक, सब सर्षपको अंत। ता दीपांत प्रमानकर, रचौ कुंड सुचवंत ॥ २८ ॥ गहरो जोजन सहस इक, भरे सिखावत ताह। ता सरसौंकु देव फिर, भर विमान ले जाहि ॥ २९ ॥ तामें दानों काढ इक, धरै सलाका फेर। कुंड मांहि दो कण भये, अग्र दीप दध हेर ॥ ३० ॥

पूरववत इक इक कणा, छोडत जाय सुजान। जहां अंत सर्षप सकल, तावत भूमि प्रमाण ॥ ३१ ॥ रचै कुंड अनवस्थि फिर, गहरो प्रथम समान। भरै सिखावत कणिक ले, धरै सलाका थान ॥ ३२ ॥ त्रय दाने भय तास मैं। योही क्रम करि जान। भयो सिखावत कुंड जब, छालिस अंक प्रमान ॥ ३३ ॥ तैसैं ही दूजो भरै, प्रति सलाका ताल। महासलाका कुंड फिर, त्यौंह भरै दग हाल ॥ ३४ ॥ बढतर जावे सु सर, प्रथम नाम अनवस्थ। गोलरु गहरो प्रथम सम, सर्षप सिखांत ग्रस्थ ॥ ३५ ॥

अंत कुंड अनवस्थकी, सर्षप चुत जह अंत। ताहि भूमि तक फिर रचै, सर अनवस्थ महंत ॥ ३६ ॥ भर सिखांत सरसौं जिमैं, दानों एक निकाल। सुसंख्यात उत्कृष्ट इम, भेद

कहौं दर हाल ॥ ३७ ॥ इक दानों ले और ही. जहंतक रह कण होय । मध्य संख्यातके भेद सब, जघिन एक कण होय ॥ ३८ ॥ जो दानौ इक काढियो, प्रथम सु फिर तिनस्य । यो सब सिरसों राशि मित, जघिन परीत असंख्य ॥ ३९ ॥

चौपाई—जघिन परीता यह जु असंख, याके मांडो अंक निसंक । तान ताक फिर दूजे धरो, गुनो परस्पर वर्ग जु करो ॥ ४० ॥ वर्ग तनी मित सर्षप कन्य, असंख्यात जु गता जु जघिन्य । तामें इक दानो कर नष्ट, असंख्यात परीता उत्कृष्ट ॥ ४१

दोहा—यामें इक कण और हन, मध्यम नाना रीत ।
इक कण अधिकसु जघिनतें, मध्यम असंख्य परीत ।४२॥

अडिल—असंख्यात जु गता जघिनकी रासको, असंख्यात जुगता तुछ सो गुण तासको । यह जु भई रास तास परमानिये, असंख्यात सु असंख्यात लघु जानिये ॥ ४३ ॥ यही राशिमें तें इक दानों काढिये, इम उत्कृष्ट असंखित जुगता मांडिये । जघिन और उत्कृष्ट मध्य दाने जिते. सो मध्यमके भेद कहे नाना तिते ॥ ४४ ॥

सवैया ३१—असंख्यात असंख्यात रास जो भई ए लघु याही रासकू जो कोई यही रास तें गुनें । वेह दूजी रास थाकू याही दूजी तें गुनैरु भई तीजी रास ताकों तीजी रास तें गुनै ॥ ऐसें तीनवार गुनी रास मांहि ऐ मिलावै धर्म द्रव्यके प्रदेश त्यों अधर्मके फवे । जीवके प्रदेश लोकाकाशके प्रदेश अरु बादर प्रतिष्टत वनसपतीके सबे ॥ ४५ ॥ ए जो छहों

रास मिलके भई जो रास–महा याको तीनवार गुनै ऊपर समान ही। तामैं और ए मिलाय कषाय निमित्त पाय उपज्ञ अध्यवसाय दोय बन्ध जानही॥ फुन जोगनतैं भए प्रकृति प्रदेश बन्ध तिनके अध्यवसाय सर्व चारों बन्ध ही। रूप परनामनके पलटनकी जो रास पुन काल कल्प सबै रासको प्रबंधही॥४६॥

पद्धडी–ये सकल रास मिल इम कहंत, सो जघिन परीता है अनंत। फिर तामैं तें इक कणा नेट, सो असंख्यात असंख्यात श्रेष्ट॥४७॥ जे कन उत्कृष्ट रु हेट पेट, ते नानाविधि मध्यम समेट। ए जघिन परीता नंत सार, सो असंख्यात सम षट प्रकार॥ ४८॥

सवैया ३१–गुनी सो जघिन रासि नंतानंत ताको फिर तीनवार गुनै तैसे जू ऊपर समोद। इस महारासमें ए रास और मिलाईये सिद्ध जीवकी जो रास वनसपती निगोद॥ ताके जीवोंकी जो रासि तीन वर्त भावी काल समयनकी जो रास पुग्गल दरबकी। परमानुकी जो रास प्रदेश अलोकाकासकी जो रास मिल भई महान संवरकी॥ ४९॥ रासको त्रिवार गुनै आदि सम रासि अरु धर्मास्तकायके गुन अगुरु लघु मिले। ए जो भई रासि ताको त्रिवार गुनै जु आदि ताही रासमैं केवलदर्स रास ही मिले॥ केवलज्ञानकी रासको मिलाय रास भई सोई नंतानंत उत्कृष्ट भेद जानिये। यूं त्रिविध संख्याउरु नव विध असंख्यात तैसे ही अनंत मिल इक्कीस प्रमानिये॥ ५०॥

दोहा–अब सुन पल्ल सागरतनी, गिनतीको परबद।
पल्ल त्रिविध व्यौहार इक, फुन उधारु अरु अध॥५१॥

सोरठा—बीजभूत व्यौहार सुर नारकि थिति पल्लति वसु।
अर्घा सागर कार, ता कारण गिनती कहूं ॥५२॥

सवैया ३१—नभको प्रदेस रोकै पुग्गल्ल दरव अणु अवध ज्ञानी देखें नैन गोचरन सोय है। नंतानंत खंद मिलै सन्नासन्न नाम जाको आठ मिले पट रेण त्रसरेण सोय है॥ रथरेण उत्तमरु मध्यम जघिन कर्म धर्म्म विलासोक वाल लीक तील जवांगुल होय है। सोई उत्सेध नाम नर्क सुर्ग देह धाम यादीतैं कियो प्रमान पानसै गुनो यही॥ ५३॥ दूजो ए प्रमानांगुल यातैं दीपोदध सैल नदी जिनवर धाम तीजो भेद सुनियै। आतम अंगुल जान पट काल वृद्ध हान आसन पताका छत्र रथादिक मानियै॥ चौबीस अंगुलको सुहात एक चार चाप वसु सहस जोजनेक येही सब गुनियै। आतम अंगुल बिना दोऊतैं जोजन गिना लघु गुरु भेद भना सुन भ्रम लुनियै॥ ५४॥ एक महाजोजनको चोडो औंडो गोल कूप उत्कृष्ट भोगभूमि नर-वाल कीन है। तास रोम खंड खंड फेर नाही होय जास कूट कूट ताको भर वर्ष सत हीन है॥ सए एक रोम काढै जेका काल ताहि लागै सोई व्यवहार पल्ल अंक पैतालीस हैं। चार एक तीन चार पांच दोय पट तीन सुन्न तीन सुन्न आठ दोय नभ तीन है॥ ५५॥

एक सात सात सात चार नव पांच एक दोय एक नव दोय सताईस लावनों, आगे ठारा सुन्न धर रोमांगुल पडबीस लाख सतानवै सहस तीन सत बावनो। संख्याके निमित्तक ही

बीज भूत पल्ल यही और कछु काज नहीं पल्लाच सुनिजियै, यातै असंख्यात गुणी दूसरी उधार नाम आद रोम रासतें ते कूपरास कीजियै ॥ ५६ ॥ असंख्यात वर्ष गये रोम काढै जेता काल लागै सब दीपोदध संख्या यातै जानियै, दूजी रोम रास तेते कूपरास असंख्यात लाख कोड वर्ष गए अर्धा रोम हानियै। दस कोडा कोडी अर्धापल्लको सागर होत वीस कोडा कोडि दधकाल कल्प होत है, अतीत वरत भावी तीनों काल व्यवहार निश्चै जो अनु अभेद अखंड उद्योत है ॥५७॥

उक्तं च-एक द्रव्य है अकाश ताके नंत परदेश तामै लोकाकाश असंख्यात परदेश हैं। एक २ देश मांहि एक एक कालाणु है रयण रास जैसे थिर न्यारी विन लेस है ॥ सर्व दर्व प्रवर्तन सहाय निश्चै काल असंख्यात सत्ता अवनासी अक-लेस है। एक ठौर धरो मंड चाक जू फिरै अखंड त्योंही लोकाकाश मांही काल ही असेस है ॥ ५८ ॥

बेसरी छन्द-जीवाजीव धर्माधर्म नभ पण बहु परदेसी। कालाणु ना मिलै यातैं तन अवलेसी ॥ अस्त वस्त परिमेय अगुरु लघु द्रव्य प्रदेसी। मूर्ति अमूर्ति जड़ादि यही पुद्गल चरवेसी ॥ ५९ ॥

आस्रव तत्व वर्णन।

दोहा-मिथ्या पण अव्रत दुए, पंद्रै योग प्रमाद।
सम पचीस कषाय सब, ए आस्रव मरजाद ॥६०॥

पंच मिथ्यात्व नाम।

सोरठा–मिथ्या पंच प्रकार, आद इकांत विनय फुन।
त्रिय विपरीत निहार, संसै तुरि अज्ञान पण ॥ ६१॥

एकांत मिथ्यात्व।

छप्पै–पंच अन्ध लख हस्ती अंग, भिन भिन्न करै भ्रम। उदर देख इक कहे स्थूल पद लखत थंभ सम। श्रोत्र देख कहै छाज सूंडि लख कहै केलि सठ॥ पूंछ लखत कहै दंड ऐसो भिन भिन्न करै हठ। केई जप तप ज्ञान चरित दृग इक इकमें कहै मोक्ष है। इम लख इकांत मिथ्यात यह, दूजी विनय सुदोष है॥ ६२॥

विनय तथा विपरीत मिथ्यात्व।

सर्व देव नित नमैं सर्व भिक्षुक गुरु जानैं। सर्व सार अनीत सुनै सर्व मत धर्म प्रमानैं॥ सबकी विनय सु ठान विनय मिथ्यात जु धारै। वेस्यापुत्र समान बाप काकों उचारै॥ जो जीं छांडि मिथ्यात यह, यही विपर्यय भेद है, जूं जोक लगे थनके विषै। दुग्ध त्याग रुधिर गहै॥ ६३॥

संसय मिथ्यात्व वर्णन।

अडिल–निकसि निगोदसै जीव षट सत फुन वसु। आय रास विवहार माह तै सम वसुं॥ मास षटमें जाय सिद्ध न्य ऊद हा। घटै न रास निगोद यही संसै महा॥ ६४॥

निगोदमेंसै जीव निकसै जीव नाहीं घटै यह निर्वंत वर्णन।

सवैया ३१–रास जो निगोद ताके पांच भेद सुन वीर श्रणीपै जेतो पुग्गल आवत है। ताके नंतानंत भाग अंडिर निगोद एक ताके नन्तानन्त भाग खंड रमावत है॥ पुलवी अवास देहा त्योंही २ भाग ठान तिहुँकाल सिद्ध ते अनंत गुने जानिये। एक देहा एते जीव रास ना घटै कदीव जैसे दध जल कुम्भ नल तै नहानिये॥ ६५॥

सिद्धालय माहि जीव जावै सिद्धालय पूर्ण न होय, यह वर्णन।

कवित्त–अधिक २ जो परिग्रहे बाढ़े वोऊ तृष्णा नाहि तृपंत। अथवा काल भखत सब जगको, भखत२ सो नाहि त्रपंत॥ त्यौंही सिद्धालयके मांही, जावै जीव अनंत अपार, कब ही पूरणता नहीं हो है, यह निहचै कर संसै छार॥ ६६॥

अज्ञान मिथ्यात वणन।

चाल विजयानी सेठानीकी–संसै विधिजी और बहोतसी जानियो, अज्ञानि मनी जिम दग रोग सु ठानियो, मोतिया बिंद सु जी खुले नैन दीसै न ज्यूं श्रुत सुनत सु नीमलो बुरो समझे न त्यूं॥ ६७॥

अव्रत वर्णन।

छप्पै-ए मिथ्यापण त्याग बहुरि अव्रत सु निलज्जै, फरस रसन गंध वरण श्रोत्र मन वस नहीं किज्जै। भूजल अगन समीर हरी त्रस काय हनिज्जै, ए वारे अव्रतरु जोग त्रयभेद सु निज्जै, सत असत उभय अनुभौ सुमन। वचन तुरी तुरिकाय सुन, औदारि वैक्रिहारक मिश्र, तेजस कारमन सप्त सुन ॥६८॥

पंद्रह प्रमाद।

छंद लक्ष्मीधरा-भेद परमाद पंद्रा अबै जानियै। च्यारि क्रोधादि फुन विकथ चौ मानियै ॥ पंच इन्द्रिरु इक मोह स्नेह है। एक ए सर्व मिल पंद्रगणी भेय है॥ ६९॥

कषाय वर्णन।

छप्पै सिंहावलोकन-अनंतानुबंध च्यारि च्यारि लखि प्रतख्यान इन। इन अवि प्रताख्यारि च्यारि संज्वलन मान फुन ए सोलै जान जान मुद हिंस विषै कर॥ कर चोरी परिग्रह ग्रह नए रुद्र ध्यान धर। धर इनमैं रतकर अरत फुन फुनि इष्ट वियोग अनिष्ट मिल। मिल पीडा तन मन दान ठन, ठन सोक भय रु गिलानि गिन॥ ७०॥

दोहा-पुरस चाह त्रिय वेद है, नार चाह नरवेद।

नय पुंसक जुग चाह है, पचीस कषाय ए भेद ॥७१॥

जोगीरासा-अब सुन बंध भेद कर मनको आठ प्रकारसु आनो। ज्ञान दर्सनावरणी पण नौ दोय वेदनी ठानो॥ अठाईस

मोहनी थिति चौ बहुरि सु नाम तिरानौं ॥ गोत्र दोय अंतराय पांच सब सो अडतालीस मानो ॥ ७२ ॥

दोहा—जैसैं भोजनको किये, सप्त धात हो जाय ।
त्यौंही आश्रव जोगतैं, कर्म्मबंध वसु थाय ॥ ७३ ॥

ज्ञान दरस अंतराय वेदनी त्रिसत कोडाकोडी । सत्तर करम मोहनी चारित चालीस कोडाकोडी ॥ बीस नाम गोत्र अरु आयुस तेतीस सागरकी है । जघन मोहनी तीन नाम दो महूर्तांतर सबकी है ॥ ७४ ॥ तोडे बंध भेद चहुं विधिको आदि प्रकृति ही जो है । जैसी प्रकृति रूप ह्वै बैठत उदय सोही होहै ॥ भिन्न प्रदेस आत्मके बांधै बंध प्रदेस कहावै । जो जितनी मृजाद ले बैठै सो थितबंध प्रभावै ॥ ७५ ॥

दोहा—थित मांहि त्रिय भाग धरि, दुख सुख मिश्रित भाव ।
सो अनुभाग प्रबंध है, बहुरि बंध दस थाव ॥ ७६ ॥

परको आपा मान जिय, करम बंध रस देय । पहलो रस बंध है यही, दूजै उदै सुनेय ॥ ७७ ॥ उदै आय बिन ना खिरै, पुनि उदीरणा बंध । आयु करम विनु सातको, उदै लाय कर छंद ॥ ७८ ॥ जौलों उदै न आय है, सत्तामांहि प्रबंध । सत्ता बंध चौथो यही, फुनि उत्कर्षण बंध ॥ ७९ ॥ परनाम संयोगतैं, बंध प्रबंध बढाय । तथा घटावै बंधको, अपकर्षण घट थाय ॥ ८० ॥ पाप प्रकृति पुनि रूप है, पाप रूप ह्वै पुन्य । संकर मन सो सातमो, अष्टम उपसम अन्य ॥ ८१ ॥ उदीरणा विन उपसमैं, नवमो निद्धत बंध । उदीरणा संक्रमण विन,

दसम निकांछित बंध ॥ ८२ ॥ घटै बढै नाहीं कदा, उदीरणा नहीं होय। संक्रमण नहि होय जिस, ए दस बंध सुपोय ॥८३॥ बंध तत्त्व ए विधि कह्यो, संवर तत्त्व स्वरूप। गौतमस्वामी यूं कहै, सुनि श्रेणक वर भूप ॥ ८४ ॥

इति बंधतत्त्व वर्णन।

दोहा—राग दोष अरु मोहको, जहां नहीं सद्भाव।
अनुभवको अभ्यास है, इम संवर गहो राव ॥ ८५ ॥

उक्तं च—वस्तु विचारत ध्यावतैं, मन पावै विश्राम। रस स्वादत सुख ऊपजै, अनुभव याको नाम ॥८६॥ तन तलावमें करमजल, आवै आश्रव द्वार। ता मूदन उल्हास सु, षट् बहत्तर विस्तार ॥८७॥ तेरह विध चारित्र है, फुनि दसलाक्षण धर्म। द्वादश तप अरु वीस दो, कही परीसह पर्म ॥ ८८ ॥

छन्द शशिवदन—बारै भावन त्रिमन सुवनै, गहै इम थोकै। वसु विधि रोकै ॥ ८९ ॥

दोहा—करम सु आवत ही रुकै, सोई संवर जान।
अब निर्जरा सुतत्त्व सुन, दोय भेद परवान ॥ ९० ॥

इति संवर तत्त्व।

सविपाक अविपाक इम, सविपाक जिय सर्व। कर्मबंध रस दे खिरै, अविपाक सुन जर्व ॥ ९१ ॥ ज्यौं कचाम्र फल तोरके, पाल दाबि झट पक्क। त्यौं जोरावरि कर्मकौं, उदै लाय फल चक्ख ॥ ९२ ॥ अथवा तन सु तलावमैं, रह्यौ करम जल जास। तास नासके कारणौं, ध्यान भाव परकास ॥ ९३ ॥

ध्यान च्यारि विधि आर्त इक, रुद्र धर्म अरु शुक्ल। आर्त रुद्र आश्रव विषै, निर्जरमें नृप शुक्ल ॥ ९४ ॥

चौपाई–इष्ट वियोग अनिष्ट संयोग, पीडा–चित निदान प्रयोग। आर्त यही सुन रुद्र प्रबंद, हिंसा मृषा चोर विसनंद ॥९५॥ अग्या विच जिन वच सरधान, विच उपाय व्रत किरियावान। विधि विपाक विच राग न रोष, विच संस्थान त्रिलोक सुजोष ॥ ९६ ॥

छप्पै–प्रथम चार दस भेद बहुरि सुन धर्म ध्यान इम, आदि अपाय नास अरि जिन वच फुनि उपाय इम। जीव चेतना जान त्रिय भिन तूर्य सपुदगल, कर्म उदै सदभाव पंचपट राग हनै बल। भव त्याग चितमन सप्तमो, अष्टम लोभ न केत है। नवमे जिनेंद्र धुनि सीसवर, जिन वच निज हियमें गहे ॥९७॥

चौपाई–शुक्ल ध्यानके पाये च्यारि, भिन्न भिन्नता भेद निहार। सप्तम ठान अधिक जो मुनी, द्वादशांग पाठी श्रुत धनी ॥ ९८ ॥ श्रुत मैं तर्क उठाय अपार, कर विचार संसय निरवार। सोइ प्रथक वितर्कसु आदि, फुनि इकत्व वितर्क प्रसाद ॥ ९९ ॥ मन इकत्वमैं तर्क जु कोय, उठै तुरत शांत हो सोय। ए जुग वीतराग छद्मस्त, ताहीके हो है जु प्रशस्त ॥ १०० ॥ अंत दोय केवलीके होय, पदमासन षडगासन जोय। जीव प्रदेस चलै तन जोग, सूक्षम क्रिया प्रतिपादन योग ॥१०१॥ सकल क्रिया निरवर्त सुध्यान, सो विपरीत क्रिया नृप जान। ध्यान रूप इम अग्नि जगाय, कर्म काष्ट जिन दिये जलाय ॥ १०२ ॥

सवैया ३१—मिथ्यागुन ठाने मांहि जीव जो कहे अपार तामैं त्रिय करनके सनमुख भये जे, तातैं समदृष्टी जोय तातैं अणुव्रति सोय। तातैं परमत मुनीषय उपसमीजे, चौकड़ी अनंत नास तातैं द्रग मोहे नास तातै सातों। जो विनास तातैं श्रेणी आदिजे, तातैं ग्यारैं ठाने जो हैं तातै श्रेणी छायक है, तातैं जिन केवलीके बारे थान सादिजे ॥१०३॥ असंख्यात गुण निर्जरा, वातै वाके जान। ए विधि निर्झर तत्त्व है, सुन शिव तत्त्व बखान ॥ १०४ ॥

इति निर्जरा तत्त्व।

ज्ञान दर्शनावरण फुन, मोहि अंतराय अंत। केवलज्ञान प्रकाश जब, तबहि भये अरिहंत ॥१०५॥ बंध हेतु मिथ्यात जो, ताहि अभाव सुठान। निरजर करि कृत कृत्य है, कर्म्म भिन्न शिवजान ॥१०६॥ उपसम भव्य रु भाव थे, तो सिव पाई सार। केवल सम्यक ज्ञान द्रग, सिद्ध तलहै शिव चार ॥ १०७॥ सर्व कर्मके नासतैं, आय अंत तनघात। जो अरंडको बीज अरु, अगनि सिखा विख्यात ॥ १०८ ॥

सवैया ३१—कौन कौन कारण तैं पावत है शिवजिय आरज सु खंड क्षेत्र काल चौथी थाय है। नगर तिपुर लिंग सर्व तीरथंकरके बारे यथाख्यात शुभ चारित्र पसाय है ॥ आप प्रति बुद्ध होय तथा और देस पाय मतिश्रुत मांहि थिर केवल ले काय है। उत्कृष्ट चाप सवा पंच सत सत वसु, समै एक एक तुक सात हाथ जाप है ॥ १०९ ॥

दोहा—मोक्ष तत्व ए विधि कह्यो, सातो तत्व बखान।
मुनि श्रावकके धर्मको, भन्यों विशेष सुजान ॥११०॥

चौपाई—त्रेसठ पुरुष सलाका भये, तब श्रेणक नृप पूछत ठये। तिनको भिन्न करो विस्तार, मोमन संसै देहु निवार ॥ १११ ॥ इंद्रभूत गणधरसु बखान, सुन श्रेणक नृप मन दे कान। प्रथम अनंत अलोकाकास, दसौं दिशा मरजादन जास ॥ ११२ ॥ शून्य सरूप गगन सब ठौर, दूजौ दरब तहां नहीं और। अमल अनादि अखंड अरूप, अचल अजीव अकृत अनूप ॥११३॥ तहां अनादि लोक थिर सदा, छिदे पद कर-कट जन तदा। उत्तरको सुख सुन भ्रम भयो, मग्धाधिप तब परसन ठयो ॥ ११४ ॥ बिन अधार कैसे थंप रह्यौ, तब मुन-नायक ऐसे कह्यौ। जैसे काहु भवन कराय, षटदिस चुंबक पाहन लाय ॥ ११५ ॥

लोह पुतली लोकाकार, तामें धरी सु अधर निहार। ऊरध अधो नग छै चहै, जैठाकी तैठा थिर रहै ॥ ११६ ॥ तैसे स्वयं सिद्ध यह लोय, ना इस करता हरता होय। चोदह राजू ऊंच निहार, त्रसत तितालीसको घनकार ॥ ११७ ॥ तलै सात पुर्वापर मध्य, एक पोण पै पांच प्रसिद्ध। अंत एक दक्षण अरु उत्र, राजू सात कह्यौ सर्वत्र ॥११८॥ इकसो क्षण-वैको अधलोक, सैतालीसो उरधलोक। आधे पैसारो मिरदंग, यह सरूप जिन भन्यो अभंग ॥११९॥ तीन बातबल वेढ सु रह्यौ, वृक्षछाल वपु चाम ज्यु कह्यौ। अधो मध्य ऊरध त्रिपभेद,

ताको भेद सुनो विनखेद ॥१२०॥ तले एक राजू मैं जान, जीव निगोद रास असमान। तेरह राजू तुंग चकोर, राजु इक त्रस जीव सुठौर ॥१२१॥ त्रंस नालवत रूप सदीव, याके बाहर जंगम जीव। समुदघात विन जाय न कदा, प्रश्न करो सुख हो विभ यदा ॥१२२॥ सुन उत्तर आगे सुखदोर, तीन सतक उनचीस रखो और। तामें थावर जीव अनंत, पंच काय भाषे भगवंत ॥१२३॥ है निगोद संजुत अधभूम, सात नाम तम तम तम धूम। पंक बालुमें श्री मण क्रांत, छालीस छे छे घाटि क्रमात ॥१२४॥ सबको घनाकार यह मान, राजू राजू ऊंचे जान। इक राजूमु निगोद प्रमाव, सप्त नरक सुन हो बुधवान ॥१२५॥ नाम माघवी मघवी होय, अरिष्टा अंजन चव योय। मेघा वंसा धम्मा जान, वसु षोडस च्व २ अधिकान ॥१२६॥

सहस२ अस्सी इक लच्छ, छति मोटी अंतर सुन दच्छ। एक राजू मोटाई बिना, एक पाथडा पहिले गिना ॥१२७॥ दो दो अधिके सातो ठौर, भए उनं चास सब और। उनं चास इंद्रिक प्रति एक, श्रेणी बंध कहुं सुविशेष ॥१२८॥ आदि दिस चव दूजे थान, दिसा आठ विदिसा चो जान। वसु २ अधिक अंत पातरो, उनचास दिस दिस विस्तरो ॥१२९॥ विदिश २ माही अठताल, सबकी संख्या लेउ संभाल। छस्सै त्रैपन नो हजार, इंद्रक सहित सब दुखकार ॥१३०॥ अरुवर कीरणक पिडमाजान, लाख तिरासी नव्वैमान। सहस तीन सत सैंतालीस, सब चौरासी लाख महीस ॥ १३१ ॥ आदि पंच पंच घट लाख,

त्रयदस पंद्रै पचीस लाख। तीस लाख अंत नृक मांय, सुन विस्तार बिलन दुखदाय ॥१३२॥ इंद्रक जोजन है संख्यात, श्रेणी बंध असंख विख्यात। परकीरणकमें दोऊ भांत, अंतर बिलन मांहि सुन भ्रात ॥१३३॥ जघिन कोस इक दीर्घ हजार, तीन सहक नव नव नव सार। दोय कोस मोटाई सुनो, लघु इक कोस पंच गुरु भनो ॥ १३४ ॥

सवैया ३१–तेतिस बाईस पंद्रै दस सात तीन एक उतकृष्ट दूजेमें सो आदिमें जघन है। अंतमें जघन्य आव दश हजार प्रमान तन ऊंचो उतकृष्ट चाप सत पन है॥ सातो मांहि आवो आघ ज्ञान कोस एक फुन च्यार कोस ज्ञान लेस्या जो कि सन है। नील औ कपोत फुन आद ढाई महा सीत अंत बाकी उसनता जन्म थान भन है ॥१३५॥ कइक कडाही कुंभी मुहुर मृदंग नारी हय गंगा हथियार खेत मोगाकार है। एक दोय तीन कोस तथा सात जोजनके चोडे ऊंचे पंचगुने सब निरधार है॥ तारन मांहि जैसे अंतर सरूप ऐसें पोसत करोंड़ो तेसे आरे जु अपार है। तामें गर्भ दुःख सहै जन्मत ही भू‍म लहै तपै तवा तिल जैसें उछल बिथारहै॥ १३६ ॥

दोहा–अवधि विभंगा ज्ञानसैं, अशुभ होय सब याद।
आपस माही लडत है, कर्म बहु विखवाद ॥ १३७ ॥
चौथे ऊपर असुरगण, भूलेको सु बताय।
भिड़त देख ६.ति हरषकर, हिमानंद सु भाय ॥ १३८ ॥
सेल कटारि त्रिशूल असि, शक्ति मुद्गर दंड।
बादुरणादिक आयुध विविध, लिये हाय परचंड ॥१३९॥

अडिल–पीसे घरटी घाल रु शूल चढ़ावही, तेल कढाही धाक सुबाल पचावही। घायल घेर घसीट रु बालु भुंजावही, वैतरणीके जल सुव्रण छिड़कावही ॥ १४० ॥ काल वरण विकटानन द्रग अति लालही, वेद नपुंसक हुंडक तन विकराल हो। सब क्रोधी अरु कलही तन मन दुख सहै, क्षेत्र काल गति और बहुत कहांलो कहै ॥ १४१ ॥ खंड खड तन होय मिले पाएजिसो, मेरुरासि बत खाय मिले न कन नाजसो। सागरको जल पीय न तिरपत होत है, मिले बूंद एक नाहि और दुख बहुत है ॥ १४२ ॥

सवैया ३१–पहले नर्क मांहि नर मछ दोऊ जांहि निकसिकै पशु होय फेर अघोगति है। नारी दूजा मांहि जाय निकसी सम्यक पाये नाहर तीजामें जाय आयो महाव्रती है ॥ सर्प चौथेमैं सु जाय आयो जो केवल पाय, पंखी पांचमैं सु जाय आय जिनपतो है। सरी सर्प छठे जाय असैनी जो अंत मांहि नर पशु पंच इंद्री नर्क गत्यागती है ॥ १४३ ॥ नर्क मांहि जीव जीते घाट बाढ हो न कदा, उतकिष्ट अंतर छ मासका सु जानियै। मिथ्याती आरंभी पापी बहोत जे परग्रही निरदई, झूठे परधन दारा हानियै ॥ मांस मद्य मधु भखी अनंतानंतबंधी उदै विसनके धारक लुटेरे दुष्ट मानियै। बणि ग्राम जाल देय दुराचारी नर्क जाय अंत जो रतनप्रभा तीन भाग ठानियै ॥१४४॥ पहलो बहुल भाग मोटाई सहस असी तामैं तेरै पांतडे है दूजो पंक भाग है। सहस चौरासी मोटी भूमिमैं असुर दोय राक्षस

असुरकार ऐसे दोय भाग हैं॥ खरभाग सोलै छात सहस सहसकी है किन्नर किंपुरुष महो रग भाग है। गंधरव यक्ष भूत पिशाच ए आदसत आगे भेद भवनपती सु नव भाग हैं ॥ १४५ ॥ सात कोड़ बहतर लाख जिन भवन सब आदिमें असुर लाख चौसठ सदन हैं। दूजे बाकी नव भाग तामें नाग-कुमार चौरासी लाख अगार बहत्तर लाख सुवर्न है ॥ दीपोदध मेघदिग अगनि विद्युतकुमार छहत्तरलाख भिन्नभिन्न है। पवन-कवार लाख छियाणवे भवुरन आत एकदध कछु अधिक कथन है॥ १४६ ॥ नागकारी तीन पल्ल है अढाई पल्ल बाकी डेढ पल्ल सबकी है उतकिष्ट जानिये। जघिन हजार दस तन तुंग असुख पचीस धनुष और दस चाप मानियें॥ भवन वितर दोय हर प्रतिहर दो दो पंचेंद्री मनुष पसु होय सुर जानियें। देव मर पांच गत पावक भू जल तरु नर पसु एही जान भवन-पती ठानियें ॥ १४७ ॥

छप्पैछंद—एक एक जिन सदन सदन प्रतिबिंब बहु सुत। सतपण धनु तनु तुंग तुंग जोजन सु पौनसत ॥ सत आयाम रु व्यास अर्द्ध अधि समोसरण सब। सब रचना आधार धार हीरा सु लाल कवि ॥ कर हाथ जोड जिनवर नमि, नमि गुण-भद्राचार्य वर। वर सप्ततत्व अधोलोक सब, सवि कथन श्रवणमें भव्य धर ॥ १४८ ॥

इतिश्री चंद्रप्रभपुराणे सप्ततत्व अघोलोकवर्णनोनाम द्वितीय संधिः समाप्तम्।

तृतीय संधि।

दोहा--सनमत सनमत देत हो, नमो नमों गुणभद्र।
गौतम गणधर कहत हैं, सुण श्रेणिक चितभद्र ॥ १ ॥
चित्राभूमि तले जु सब, कियो संछेप बखान।
अब मध्य ऊरध लोकको, कहूं सु तुछ कहान ॥ २ ॥

चौपाई--मध्य मेरु ते गिनत प्रबंध, एक सहस जोजन अस कंध। दस सहस नव्वै अघ व्यास, गोल त्रिगुण कछु अधिक सुभास ॥ ३ ॥ वसु प्रदेस गोस्तन तल जोय, क्षेत्र प्रवर्त आद सु सोय। जीव जनम धारै नह थान, मरकै चौरासी भटकान ॥ ४ ॥ वार अनंत कल्प जिम फिरै, तो कछु संख्या नांही धरै। आद जनम भूमिके कनै, जनमद्वारै तो गिणती ठनै ॥५॥ त्योंही तीनलोक परदेस, सबमैं जम्मन मरन द्वरेस। लगत लगत तो गिणती आय, अंतर कछु संख्यामैं नाय ॥ ६ ॥ त्यौंही दरब काल व भाव, चारोंहीको लेहु फलाव। वार अनंती जीवन करी, पंच परावतन सब धरी ॥ ७ ॥ चित्रापै दस सहस सु मेर, भद्रसाल बन बहुदिस घेर। पणसतपै नंदनवन सार, चारों दिव जिन मंदिर चार ॥ ८ ॥ चार चैत छत्तीस हजार, सुमन सबन चैत्याले च्यार। साडेबासठ सहस उत्तंग, पांडुक चार चैत्याले संग ॥ ९ ॥ विदिसमैं पांडुक सिल चार, जिह जिन जनम न्होन विस्तार। मध्य चूलिका चालीस तुंग,

चाला तरु जू जान अभंग ॥ १० ॥ जोजन लाख सु जम्बूद्वीप, दखन उत्तर सुनो महीप। सप्त क्षेत्र षट पर्वत जान, पुरवा परव देह मन आन ॥ ११ ॥

सवैया ३१–दखनदिसातैं संख्या भरत चौडाई पानवे नीस जोजनास उनीस अर्धका। आगे दून दून सुन हिमवन हेमवंत महा हिमवन हर निषध विदेहका ॥ आगे आधोआध च नीलगिर रम्य क्षेत्र रुकमी हिरन्यवत सिखरे छ नगका। एरावत क्षेत्र सात नग आभा हेमरूपा सुधा हेमकी कंठकर देम रंगका ॥ १२ ॥ सम मूलापुर द्रह पदम पदम महा त्रिगच्छ केशरी महापुड पुडरीक है। जोजन हजार लांबे आधे चौडे दस ऊंडे एक फूल दूना दून आधोआध ठीक है ॥ कवल कवल प्रति मंदिरमें देवी नाम सिरी हिरी धीर्त कीर्त बुधलछमीक है। आयु एक एक पल्ल कुछक अधित जात सामानक परिषत माता सेवनीक है ॥ १३ ॥

छप्पै–पदम द्रहसे निकसि नदी गंगारु सिंधवर, भरतमांहि त्रिस्तार साडे बासठि जोजन धार। दुगुनम फिर रोहित रोही-तास्या महरदुहर ॥ कांता सीता सत सीतोदा अर्द्ध अर्धकर, नारी नरकांता स्वर्णकुल रुपकुला रक्ता सुपट। रक्तोदा ऐरावत विषे भरत जेम विस्तार रट ॥ ४ ॥

अडिल–सातजोड दोदो सुपूर्व पूरवगई। अंत किप छम गई लोन दध मिलि गई। चौदे चौदह हजार गंग सिंधुमें मिली अ-ठाईस छप्पन सहस चौरासी आगली ॥ १५ ॥

दोहा—अर्द्ध अर्द्ध छप्पन सहस, मूल सु चोदै जान।
साठ सहस पण लाप सब, यह परवार प्रवान ॥ १६ ॥
भरत ऐरावतके विषै, काल फिरन है जान।
उत्तम मध्यम जघिन है, भोग भूम पण थान ॥ १७ ॥

सवैया ३१—भरत मध्य रूपाचल जोजन पचास चौडा आधी वसु भाग ऊंड दश आयाम। दस ऊंचे श्रणी दोय दस दस चौडी जहां दषण पचास साठ खगेन्द्र तना गाम॥ त्यौंही और ऊंची चौडो दूजी पै व्यंतर वास फेर पांच ऊंची दस चौडी जहां आराम। तहां नव कूट जान आठमैं असुर गेह मध्यमैं जिन सधाम ताको मम प्रणाम ॥ १८ ॥

छंद त्रिभंगी—हिमवंत क्षेत्रमैं जघन भोग भू एक कोस तन थित इक पल्ल मध्यम भोग भूमि हर माहीं तीजी मेर तलै लख भल्ल ॥ दूनी दूनी आय काय है वसू मनुप सवही जो वंत। तैसेही उत्तरकी दिसमैं मेर आदि ऐरावत अंत ॥ १९ ॥

दोहा—दोदो नील रु निषद तट, देव कुरुत्तर भूम चार। कनकगिर दोय तरु जामनसै भल झूम ॥२०॥ दुतियक्षेत्र मध्य-नाभगिर, जू विदेहमैं मेर। चार भोग भूचार है, दोदो नदीसु धेर ॥ २१ ॥ सदा सुथिर भूकायसो, सहंस२ तासंग। मूल वज्र पन्नासु दल, फलजुत फूल सुरंग ॥ २२ ॥ पूरब साखा तासपर, अवनासी जिनधाम। अष्टोत्तर सत बिंबजुत, सुरपंग जनहु नमाम ॥२३॥ सोष विदि सकुनि दंतगंज, चार आठ दिगगाज। आठो दिसा सुमेरकी, स्वयं सिद्ध सब साज ॥ २४ ॥

चौपाई—पूरब दिसा वेदिकातलै, दोनौ तट सीतासे चलै। नील नीषधलो चोडे जान, दो देवारण वण परवान ॥ २५ ॥ पूरवते पश्चमकी ओर, तीन सहस ठंतर विनजोर। ता आगै वदेह लंबाय, बाईस सतेतेरै अधिकाय ॥२६॥ अष्टमांस जोअन एक ऊन, आग्र वषार पंचद्रु सून। आगे ते ता दूजादेस, आगै नदी विभंगावेस ॥ २७ ॥ इकसो पचीस चौडी जान, त्यौं त्रिषनदी च्यार नगमान। अष्ट विदेह मध्यरूपस्त ॥ देस समान-लंब परसस्त, ॥ २८ ॥ तह सब रचना भरत समान, ऐठै नगर दूतर्फ समान। आठ वषारनदी षटदेस, षोडस पूर्व दिश गिर रुवेस ॥ २९ ॥ इक इक दिशमैं गंगा सिंध, चौदे चौदे सहस मिलंध। ठाईस सहस विभंगासंग, सीता मांहि मिलीसु अभंग ॥ ३० ॥ तेइस सहस क्षेत्रमैं जान, यह रचना भाखी भगवान। आगै बाईस सहस प्रमान, भद्रसाल वन सुनो बखान ॥ ३१ ॥

सवैया २३-दो सरता वन दो तटमैं लख पंच सरोवर सोहै। एक सरोवरके तट सुंदर कंचन अद्रि दसौदिस जो है॥ एकिक अदनपै इक मंदिर एकिक बिंब अकृत्सम सोहै। दो सतक कंचनके गिर ए सबसे रतने जुग ही दिस हो है ॥३२॥

सुन्दरी छन्द—सर्व बत्तीस विदेह रु भरत है, ऐरावत मिल चौतीस करत है। चौतिस रूपाचल मध जानिये, खंड छैह छैह नदीसु ठानिये ॥ ३३ ॥ राजधानी इक इक आर्जमें, चौतिस वृषभाचल सु अनार्जमें। चौसठि गंगा सिंधु विदेहमें, विभंगा द्वादस फुनि देहमें ॥ ३४ ॥ चारै लाख बत्तीस हजार

है, यह परवार तहां विस्तार है। मूल नव्वै सुन परवारको, लाख सतेरवणवै हजारको ॥ ३५ ॥ अठतर मंदिर जिन सासते, चार तीर्थ विदेहमें राजते। यही जम्बूद्वीप समान है, देख ग्रन्थवशेष महान है ॥ ३६ ॥ वर्तुलकृत वज्रसु कोट है, तुंग वसु जोजन जहां ओट है। चार गोपुर चौदिसमें बने, नाम विजयादिक अति सोहने ॥ ३७ ॥

कवित्त–आगै दोय लाख जोजनको चोडो सिंधु कुंडलाकार। तटपै मधु पक्षुका सम जलमध्य भाग ग्यारै हजार ॥ तहां कूप चार चौ दिसमें लाख उदर जड मुख दस सहस। उदर विदस जोजन हजार दस जड मुख एक अन्तर सहस॥३८॥

दोहा- एक उदर जड मुख शतक, आठों अन्तर जान।
एकेकसो पचीस सब, सहस आठ सब जान॥ ३९॥

ढाल परमादी–तले अधन मध प्रौन, उपर जल सु भरे है। एक एकमें तीन भाग इस भांत परे हैं ॥ यामें दोनों उर अंतर दीप परे हैं। कुल गिर सुउपर और भूम कुभोग भरे हैं ॥४०॥ मीठी मृतका नीर घास सम काल विराजे। पावस हिम और उष्ण तहां बाधा नहीं छाजे ॥ कान दीर्घ इक टंग नर तन पशु मुख केई। पशु तन नर मुख कोप ऐसे जीव घनेही ॥४१ कुपात्र दान फल एह मुनि श्रावक द्रव्य लिंगी। भक्ति भावसै दान देख मन वच तन चंगी॥ अथवा कुपात्र सु दान देय नर्कै जावै। अथवा पशु परजाई मर मर जनम धरावै ॥४२॥ लवनोदध या नाम लवनो सम जल अति खारी। आगै धातकी दीप

च्यार लाख विस्तारी ॥ लवनोदधकी वेटअर तुलकार विराजै। पूरव पश्चिम भाग मेर जुग मध्य छवि छाजै ॥ ४३ ॥ दोनों दिसके मांहि रचना भिन्न सु भिन है । जंबूद्वीप समान भाष्यो यो श्री जिन है ॥ दखन उत्तर थांहि इष्वाकार पहारा। दोय मेर यह सीम जिन मंदिर सिर धारा ॥ ४४ ॥ एकसोठावन ग्रहे श्रीजिन अष्ट शाश्वते। फुन कालोदध सिंधु लाख वसु वार रासते ॥ रचना सिंधु सु आदि सोई सब यामैं। आगै पुष्कर द्वीप मानुषोत्तर मध तामैं ॥ ४५ ॥ जोजन सोलहलाख उर ले आधे मांही। धातकीखंड समान रचना धर मनमाही॥ मेर जुगमया मांहि चारों मेर समाने। जोजन सहस उतंग चौरासी परवाने ॥ ४६ ॥

दोहा–सत्रासै इकीस तुंग, मानषोत्तर जड पाव।
दससे बारस चारु सत, चौवीस जुगम चुडाव ॥ ४७ ॥
अपर चार जिनेस घर, मानुष हद नग थाय।
मानुषोत्तर यातै कहै, उपन नवाहर नाय ॥ ४८ ॥
मनुष जाय सोलै अगै, इकनोर कचो अमर।
पशु पंचींद्री विकलत्रय, थावर पण नर अजर ॥ ४९ ॥
आवै तेरै थानतै, थावर तेज रु वात।
सिद्धाले मैं जायने, आवै कबहु न भ्रात ॥ ५० ॥
मानुष विन मुनि पद नहीं, मुनि विन सिव पद नांहि।
शिव नहीं सम्यकदृष्टि विन, समकित विन भटकाय ॥ ५१ ॥

सवैया ३१–सामान मनुष कही पदवी धारक, सुन सुरग नरक जिन आए शिव पाय है। चक्री अर्द्ध चक्री हली कुलकर मात, तात जिन मार कलहप्रिय रुद्र सुर आय है। जिन तात हली मार सुरगवा शिव, जाय कुलकर निज मात सुरगमैं जाय है। दोनों अर्द्ध चक्री रुद्र नारद नरक जाय, चक्र तीनो थान नर्क सुर्ग शिव माय है ॥ ५२ ॥

अडिल–जंबूदीपतै लवनोदध चौबीस गुण, बहुरि धातकी दीप चवालीस सत गुणा। छहो बहतर गुणा कालुदध जंबूसे, ग्यारासे चोरासी पुसकर जंबूसे ॥ ५३ ॥ लाख पैंतालीस लंबो चौडो जानियै, सहस दोय पचीस खंडसो ठानियै। लाख लाख जोजनके भिन्न चनाईये, जंबूदीप समान सबै मन लाईये ॥ ५४ ॥

दोहा–मानुषको परदेस इक, याके बाहर कोय।
समुदघात विन जान ही, ए निहचै मन जोय ॥ ५५ ॥
मानषोत्र आगै कह्यौ, आधो पुष्कर दीप।
फुनि पुष्कर दधवारिणी, दीपोदध सु समीप ॥ ५६ ॥
क्षीर दीप फुन क्षीर दध, घृत वर दीप समुद्र।
इक्षुवर दीप समुद्र फुन, नंदीसुर सुन भद्र ॥ ५७ ॥

छप्पै–इकसो त्रेसठि कोट लाख चोरासी जोजन, व्यास दीप मध अंजनगिर चव दिस २ प्रति उन। गिर गिर दिस दिसवाल लाख जोजन मध दधमुख। सर प्रति विदिसाको नव विस रत कर ऊरध रुप, सब सहस चौरासी दस इक।

जोजन समतल ऊरै सब बावन जिन मंदिरन जुत, गोलनाम सम रंग धरै ॥ ५८ ॥

कवित्त–अरुण दीप दध दसमो अरुणोद्भास ग्यारमो जान, कुन्डल दीप मध्य कुन्डलगिर कुन्डलकार चार जिन थान । बहुर कुन्डलोदधरु संखवरु दीपोदध फुन रुचक सु दीप, मध्यरु चकगिर गोल चौदिसमें चार जिनाले जान महीप ॥५९॥ रुचकार्णव सु आद ए तेरह और असंख दीप दधमान, अन्त तीन देवदुद्धुवर सिभूरमण दीप दधमान ए सब सोले दीपोदध है तेरे आदि अंत त्रयक है। इनिकै मध्य सर्व दीपोदध सुभ नाम जिनेस्वर कहे ॥ ६० ॥ लवनोदध जल खार लवन सम वारुणि वर जल मदिरा जेम । घृतवर नीर स्वाद घीव सम क्षीर सिंधु तोयपै तेम ॥ काल्वेदधरु सिंभू रमणार्णव मिष्ट जेम गंगाको नीर । पुष्कर जलध सहत सम पाणो और इक्षुरस सबे सुनार ॥ ६१ ॥

दोहा–लौनोदध कालोद्ध दध, अंत स्वयंभू स्वच्छ ।
इनमें जलचर जीव फुन, अरु जलकाय सुवच्छ ॥ ६२ ॥

सवैया ३१–दीप सिंधु रमण जो मध्यमें नागेंद्र नग ताके ऊरै त्रिघन सुभोगभूमि रीत है । भूचर खेचर पसु मरल है मोनत्रक जलचर विकल रु नाही जीत है ॥ आधे पुष्करार्द्ध आगे सर्व दीप रीत एही नागेंद्र पहाड़ आगे पंचमांतरीत है । मेर मध्यभाग आदि अंतोदव अंत तट आधे राजू मांहि सब गिनती पुनीत है ॥ ६३ ॥ नंदीस्वर दीप पै वारुणी सु दीप

और वरुण समुद्र तामें महा अंधकार है। ब्रह्म स्वर्ग ताई फैलो बडी रिद्ध धारी जाय हीन रिद्ध देवनको नहीं अधिकार है॥ कुंडल सु दीप मांहि कुंडलसु गिर जड एक ऊंचौ बयालीस सू दसहजार ह। चौडा अंत चो हजार छिनवै जोजन सर्व रावटी आकार सब दधनको वार है॥ ६४॥ चार दिस चार चार कूल सोलै नग क्वार देवनके सुंदर महल कर सोहते। तेरमो रुचक फुनि दीपमें रुचकगिर जोजन हजारकंद चौरासीचं मोहतें॥ ब्यालीस सहस चौडा चार ओर चार कूट तहां दिगपाल रहै आठ आठ औरतें। चारौं दिशा मांहि कूट दिग क्वारी देवी रहै गरम अगाऊ जिनमाता दासी होय है॥६५॥ विजयादिवारी स्वस्तकादशी साहलादिपै छत्र धारे चोर ठोरै लंबुजादि आठं। फुन चार कूट और दिसानमें चार देवी चित्रादि विद्युतक्वारी बात करे ठाठं। रुचकादि विदिसामें चार चार और जुदी विजियादि मातासेवै जनम उछाठाठं। जुदे जुदे कूट भोन तिनमें सु देवार है सो त्रित रुचकगिर ऐसे सो महाठाठं॥६६॥ ऐसे मध्यलोक महादीप दध असंख्यात बहुरि जिनै संख्या यौ बताइयै। पचीस जु कोडाकोडि पल्ल दूनी औ धारजो रोम सब जेते तेते दीपोदध पाईये॥ अंत सिंधु रमणमें मक्ष सहस जोजनको ताके मुखमांहि जीव आवै और जाय है। वाके राग दोष नाहि वाके कान मांहि लघु मछयो विचारे देखो मूढ़ नहीं खाय है॥६७॥ खानेकी सकत नांह भावनके पर भाय सातवें नर्क जाय भर्थ मात्र देखपै।

चक्रवर्तिकी विभूति तामें रतनाइ जु जल जजऊ न्यारो पै ताहीमें नित पेखवै ॥ पूछे सिख कैसे जीव छोटो बड़ो होय सोई करो भेद संसै छेद सुन सोविसेसर्प। आगनको संगजे सोई घनको होय ते सोही फलाव त्यौंही जीव काय लेखपै ॥ ६८ ॥ जम्बूद्वीप नाथ अनाकृत आगे लवन दघ जल पोडस हजार एक ठूंगा भूमांही। स्वासता ऊंचो भूदस कृष्ण सेतु पक्षमांही पांच घटै बढ़ै एक तीजा अंश दिनही ॥ ठारे परै ब्यालीस बहत्तर हजार सुर नाग कार तरग सु थावै सुनियोग है। स्वस्तित अधिष्ट एक घातकीमें दोय सुर प्रमास रूप दर्से आगे दो दो जोग है ॥ ६९ ॥

दोहा–कालोदध पत काल सुर, महाकाल पुष्कार।

पदम पुंडरीक रु युगम, ऐसे सब निरधार ॥ ७० ॥

चौपाई–ढाई आदि रु आधा अन्त, इनमें त्रय पशु जीव अनंत। पंचइंद्री पन्द्रैमें जाय, चार देव पण थावर काय ॥७१॥ त्रिकलत्रय पसु नरक मनुष्य, इनहीमें तें आवे दृष्य। विकलत्रय दस त्याग स्थावर, विकल पशु नर इति ॥ ७२ ॥ नर्क बिना चोदै तै आय, भू जल तरु ह्वै थावर काय। देव बिना दस तै आत्रिना, तेज वाय लहनो नर बिना ॥ ७३ ॥ यह महि मंडल तुछक थान, अब कछु जोतस पटल बखान। चित्रा भू ऊँच सत सप्त, नव्वै जोजन तारे लिप्त ॥ ७४ ॥ फुन दस भान अस्सी पैचंद, चार निषत बुध चार अमंद। शुक्र गुरु कुज शनि प्रमाण, तीन तीनपै नोसत जान ॥ ७५ ॥ एकसो दस

जोजन नभमांहि, मोटी छात अधर फैलांह। सोम इन्द्र प्रति इन्द्र दिनेस, गृह अठासी ठाईस रीखेस॥ ७६॥ छासठ सहस पिछतर कहे, नोसै कोडाकोडी लहे। उडगण ए सब संख्या धार, एक इन्दुको यह परवार॥ ७७॥ जम्बूद्वीपमें दोय निसेस, लवण चार धातकी बारेस। ब्यालीस कालांबुध पुष्प, अर्द्ध और बहत्तर दृष्प॥ ७८॥ ए नित मेर प्रदक्षना ठान, तिन कृत काल विभाग प्रमान। बाहर थिर सब घटाकार, रात दिवसको भेद न धार॥ ७९॥

सवैया ३१—उधर पुष्कर भाग लाख लाख जोजनाठ गोलाकार बिम्ब ससि इस भांति रट है। मानसोत्तर तट बले तामें एकसो चवाली आगै चारचार जादै बारैसै चौसठ है॥ आगै पुष्करमें तावत बले बत्तीस आदमें अधोके दूने ससितिम माईयैं, सब संख्या ससि धार दो सत ग्यारै हजार आगै दीपोदध मांहि ऐसे ही फैलाईयैं॥ ८०॥

चौपाई—आयुष पंक पल्लइके वर्ष लाख अर्क सहस पल वर्ष। सत इक पल्ल शुक्र गुरु पौण, आध पल्ल कुज बुध शनि जोन॥ ८१॥ तारे पाव पल्ल सु भाग, उत्तम जघिन आयु संभाग। जोजनास इकसठ ससि जान, छप्पन अड़तालिस सरवमान॥ ८२॥ कोस एक शुक्र गुरु पौण, ग्रह सब अद्धरु तारे जोन। अर्द्ध पाव अर सप्तम भाग, लघु गुरु जोजन सहस सु लाग॥ ८३॥ सूरज बुध सनि स्वर्ण समान, निस पति गुरु फटिक मणी जान। शुक्र रजित अरु मंगल रक्त, राहु

केत स्याम मण जुक्त ॥ ८४ ॥ इक इक जोजनके विस्तार, रजनी पति रवी तलै निहार। चौडा राजु एक प्रमान, उन्नत जोजन लाख सुजान ॥ ८५ ॥ मध्यलोक यह कथन सु पेख। अब कछु ऊरध लोक विशेष ॥ ८६ ॥

सवैया ३१–चित्रा भूसें डेढ डेढ आध आध घट ठौर अन्त एक राजू सातमैं नो धारयै, घनाकार साडे उनीस रुसाडे सतीस दो २ साडे सोलै आगैं घाट दो दो अन्त जारिये। पटल इकतीस सात चार दोय एक एक तीन तीन बावन छ राजू स्वर्ग धारियैं, ग्रैवकमैं तीन तीन तीन एकनुतमैं पिचोतर एक सब त्रेसठ समारियैं ॥ ८७ ॥

अडिल–स्वर्ग सौधर्म इसानरु सनतक्वारजी, बहुरि महेंद्ररु ब्रह्म ब्रह्मोत्तरसारजो। बतीस–ठाईस बारै आठरु चारजी. लाख इक इक मांहि अन्त आगारजी ॥ ८८ ॥ लांतव अरु कापिष्ट शुक्र महाशुक्रजी। स्वर्ग सतार सहश्रार माहिसु अनुक्रजी, सहस पचास सचालीस छत्रिप जोटमें। आनत प्रानत आरण अचुत गोटमें ॥ ८९ ॥ सात सतक फुनि त्रिक त्रिक त्रिक नवग्रीवमें, सो ग्यारै सो सत्त कियणे घर जीवमें। नोनषोतरा पंच पिचोत्तर ईस है, लाख चौरासी सहस सताणु त्रिनीस है ॥ ९० ॥

सवैया ३१–त्रेसठ पटल मांहि इंद्रक त्रेसठ आदि बासठ २ श्रेणि बंध चार और है, दोसै अडतालीस रु आगैं चार घाट अन्त चार सब संख्या ठचरसै सोरहै। उत्तर पटल एक बीच एक इंद्रक है दिशाचार श्रेणि बन्ध प्रकीर्णक चार है, अठैताई

चासठवें चार चार घटे अन्त चार और पिछोत्तर मांहि धार सार है ॥ ९१ ॥

चौपाई—सहस निनाणवै सोलै लाख, तीन सतक अस्सी गुरु भाष। जोजन सो संख्यात प्रमाण, इंद्रक श्रेणी बुध सु जान ॥ ९२ ॥ अरु परकीर्णक भी कछु आइ, बाकी असंख्यातके मांहि। इक इकमें जिन मंदिर जान, रतन बिंब सत आठ प्रमान ॥ ९३ ॥

सवैया ३१—आदि दूजै स्वर्ग मांहि मह लले ढाई पीठ ग्यारासै इकीस सब जोजन प्रमानिये, आगै दो दो नाक मांहि निनाणवै घाट घाट फुन मोन चोडे आदि दिन दोमें जानिये। जोजन सतक बीस आगै दोमें सतक है फुन दो दो मांहि दस दस घाट ठानिये, तैसे तीनों त्रक मांहि निरोत्तरे पिछोत्तरे दोनोंमें जोजन पांच पांच व्यास मानिये ॥ ९४ ॥ पहले जुगल ग्रह छसत जोजन ऊँचे दूजे जुगपान सत आगै पांच जोटमें, पचास पचास घाट पचीस पचीस आगै घाट घाट सब ठौर अततार्ड गोटमें। मंदरोंकी नीव आदि जुगम जोजन साढ दूजे जुगमें पचास आगै घट जोटमें, पांच पांच घाट फुन त्यौंही तीनौं त्रक मांहि आगै चौदह थान मांहि ढाई ढाई आटमें ॥ ९५ ॥

छंद छप्पै—आदि जुगलमें पंचरतन मय मंदिर दूजे कृष्णरतन विन बहुर नील विन चौथे तीजे, पंचरु छठे जुगलके मांही पीत स्वेतमण। सात आठमें जुग अहमिंदर एक स्वे-

तमण, बसु जुगलमें चारें इंद्र है। जुगल चार बसु चार चव, है दक्षन उत्तर पटरु षट सुरी जान षट लाख चव ॥ ९६ ॥

दोहा–पहले दूजे सुरगमें, निज नियोगनी जान।
दक्षण उत्तर श्रेणी सुर, ले जावे निज थान ॥ ९७ ॥
आदि पंच दो दो अधिक, बारह तक सुरी आव।
सात सात तुरी अन्त सब, पचपन पल्ल गिनाव ॥ ९८ ॥

अडिल–भवनतिरक जुग सुरग भोगनर नारसो, दोमें फरस चारमें रूप निहारसो। चारमें सबद सुने मन विकलप चारसों, आगे सहज सील अहमिंदर धारसों ॥ ९९ ॥ आदि जुगल दध दोय सप्त दूजे त्रये, दस चौदह तुरी जुगलरु दो दो अधि किये नवग्रीवक दो उत्तर ग्यारे थानमें, इक इक अधिकाते तीस अंतम थानमें ॥ १०० ॥ देवन काया त्वंग सप्त कर आदमें, षटकर दूजे जुगल पंचत्रय चारमें। पंचजुगल कर चार पत्र कर होट ही, सात आठ त्रय हाथ देह जोट ही ॥ १०१ ॥

सोरठा–अर्द्ध अर्द्ध कर हीन, त्रय ग्रीवक इम उत्र जुग। पाव पाव कर हान, देवनके दस भेद सुन ॥ १०२ ॥

सवैया ३१–पुरंदर तथा तुल्य सो सामान समान जात दूजे तीजे जुगराज जैसे उमराव्से चौथे। चाकरसे पांच छठे कोतवाल अनीककी सात सेना हाथी घोडे रथ पयादे चोथे ॥ गायन बजंत्री नृत भावमीके सात भेद आटमे रथै तनो मैं गजादि वाहन हैं। दसमें चंडाल ऐसे दस जात देवनकी त्रित्र खग दोमैं मंत्री लोकपाल बिन है ॥ १०३ ॥ अनंत पंचागनी

भवन तिरक जाय परम व्राजक दंडी पांचमें सुरगमें। परमती परमहंस अणुव्रती तिरजंच बारमें सुरग जाय सोलमें सुरगमें ॥ श्रावक श्राविका जाय द्रव्यलिंगी नवग्रोव भावलिंगी मुनि जाय उपर सरबमैं। पंचइंद्री पशु और मानुष सुरग जाय जाकी सुभ भावनतैं भवन तिरकमें ॥ १०४ ॥ देव पंचगति जाय भू जल हरत काय नर पसु दूजे नाक ऊपर था बरना। बारमें उपर जाय मरिकै मानुष होय उत्तरके इंद्र षट विनयादि बरना ॥ एक दोय भवमांहि सिद्धालेमैं जाय सोइ दखनके सक्र षट सर्वारथ सिद्धके। सोधरम इंद्र सची लोकपाल लोकांतक एक भव माहि जाय भोगै सुख सिद्धके॥ १०५ ॥

अडिल–प्रश्नोत्तर लोकांतक सुर कहा हम कह्यौ। ब्रह्म-स्वर्ग लोकांतक पाड़ौ बन रह्यौ॥ ब्रह्म रीषीस्वर रह सीलव्रत धार है। अष्ट प्रकारन नार तत्त्वार्थ विचार है॥ १०६ ॥

छप्पै–जोजन बारे परे सिला सरवारथ सिद्धतैं। वहु मोटी मध व्यास पैंतालिस अधिक कटिकतैं॥ ता ऊपर शिव क्षेत्र अंत तन वातवलयमें। तहां सिद्ध भगवान नंत सिद्ध इक इक तनमें॥ सो श्रेणिक तुम कल्यान कर, गौतमगण इम कहतवर। कर दिव्य वचन गुणभद्र युत, धनसुत कुंदे नीज सुघर॥१०७॥

इतिश्री चंद्रप्रभपुराणमध्ये मध्यलोक ऊर्ध्वलोक वर्णनो नाम तृतीय संधिः संपूर्णम्।

... अ० भा० ... ग्रन्थालय ... प्रतापगढ़ (राज.)
पुस्तक संख्या .... विषय

चतुर्थ संधि।

दोहा—वर्धमान गुणभद्र नमूं, देह दान निज ज्ञान।
गौतम गणधर कहत हैं, सुन श्रेणिक बुधवान॥ १॥
यह त्रलोक सु प्रकासको, कह्यो संक्षेप बखान।
अब कछु बरनन कालकी, कहूं रीत परवान॥ २॥

चौपाई—नरक सुरग दोयोदधि मांहि, जैसी रीत जहां कछु आदि। वैसी सदा रहैगी सही, भरत ऐरावत बिन सब मही॥३॥ प्रभुजी भरतमैं कैसी होय, ताकी रीत बतावो मोय। कालचक्र तामाहीं फिरै, नंतानंत कल्प विस्तरै॥ ४॥ बीते नंत होय नंतानंत, ऐसो भेद जान बुधवंत। एक कल्प दो भेद सुजान, सर्पणी उत्सर्पणी यह मान॥ ५॥ जैसैं एक मास दोय पक्ष, कृष्ण शुक्ल दीसै परतक्ष। चन्द्रकलाजूं घट बढ़ होय, निगलै उगलै तैसैं सोय॥६॥ एक सर्पणी भेद सुनेय, दस कोड़ाकोड़ी-दध नेह। तामै षट काल मरजाद, कोड़ाकोड़ी चार सुआदि॥७॥ सुषमा सुषमा उत्तम सोय, भोग भूमिकी रीत सु होय। मनुष तिर्यंच पंचेन्द्री होय, भोग दसांग भोगवै सोय॥ ८॥ तीन पल्लकी आयुष कही, तीन कोस तन उन्नत सही। कल्प-वृक्ष दस पृथ्वीकाय, पुन्न प्रमानो रचे सुराय॥ ९॥

सवैया ३१—दस जात कल्पवृक्ष आद जोतरांग जेम रवि ससि प्रभा दूजो ग्रहांग आगनदे। प्रदीपांग दीप जोत तुरजांग बाने देवै भोजनांग भोजन दे भाजन भाजन दे॥ पाटांग अंबर देवे मालांग सुमनमाल भूषनांग गहने दे मद्यांग हैं दस यौ।

दस विध वस्तु देवै जाचे इन पास आय, पावै सोई मन चाय दान फल लसियो ॥ १० ॥

पद्धड़ी—षट उदै जोत नरनार रूप, सुंदरिता अति जानो अनूप। तीजे दिन भोजन चाह होय, बद्री फल सम कर जो सोय ॥ ११ ॥ बिनतीके नरनारी तिर्यंच, नहीं घाट वाद इक होय रंच। नव मास आयु बाकी रहाय, तब नार गर्भ धरै अघाय ॥ १२ ॥ जब ही बालकको जन्म होय, तब ही पितु जननी मरै सोय। सो तात छींक आए पलाय, अरु मात जंभाई कर नसाय ॥१३॥ इन तन कपूर वत खिर सोय, ए जुगल मरै अरु जुगल होय। चूसे अंगुष्ट फुन भूम लोट, बैठन सुसकि फिर चलै ओट ॥ १४ ॥ फुन कला निपुन फुन गुण निधान, फिर जोबन पावै अति अमान। ये सात सात दिन मांहि जान, फिर करै निरंतर भोग मान ॥ १५ ॥ दिन उणचास पाछैरु सात, तब सम्यक पावै नारनाथ। है सरल सुभावरु आर्जभास, सुषमै सुखपावति सुमणरास ॥ १६ ॥

दोहा—प्रथमकालकी रीत, आय काय क्रम हीन।
अब कछु दूजो बरनऊं, कोडा कोडी तीन ॥ १७ ॥

रेखता—दो पल्ल आयु काया दो कोस त्वंग भाया, दो दिनांतरे भोजन। फल बहेड़ा समो गन ॥ १८ ॥ जम सुष्यमा सु जान, अब त्रितीय भेदमान। दो कोडा कोडि सागर, इक पल्ल थित नागर ॥ १९ ॥ एक कोस तन उत्तंग, आहार दिनके भंग। फलः आवले समान, सुक्ख दुक्खमा सु जान

॥ २० ॥ पल अष्टमांस रहिया, तब भोग स्त्र नसिया । सुर वृक्ष जोत मंदं, भए रीत कुल करंदं ॥ २१ ॥

दोहा—श्रेणिक पूछै कौन है, कैसे कुलकर होय ।

इन्द्रभूत भाषै सुनौ, कुल रीत करै नृप सोय ॥ २२ ॥

छंद नाराच—गंगा सिंधु मध्य आरज खंडखांडिकी सुरीत, सप्त जुगम भूप होय आदि प्रतश्रुत बीत । पूर्वजन्म याद नास तासके समै निहार, चंद्र सूर्य अस्त उदय देष जगत भूमं धार ॥ २३ ॥ पूर्णमासि सांझ काल सर्व आय पूछ भूप, जोतषी सुदेव जान सूम भान मान रूप । पल्ल भाग धर्म आयु भोग स्वर्ग लोक जाय, दूसरा सनमत निछत्र जोतषी बताय ॥ २४ ॥

सोरठा—पलके अस्सी भाग, काल रह्यो भयौ तब सु यह । पलके सौमे भाग, याकी आयु सुजानियौ ॥ २५ ॥ पल्ल भाग पखान, अष्टम दस दस भाग कर । तेरै जबै सुजान, याकी जब कुलकर भयै ॥ २६ ॥ दस दसवां कर भाग, पल्ल सनौ तेरै भयौ । देती २ भाग, आयुष्य कुलकर सबनकी ॥ २७ ॥ कुलकर काया तुंग, ढारै—घेरै आठसत । पचीस २ भंग ए प्रवान सब तन धनु ॥ २८ ॥

छंद घनासिरी—कुलकर छेमंकर तीजा छेम करता है सिंह व्याघ्र क्रूर भये विश्वास न कीजियै । चौथा छेमंधर हर व्याघ्र महा क्रूर भये ताके दूर करवेकूं लाठी हाथ लीजियै ॥ पांचमा श्रीमंकरके समै सुर तरु हेत सब लडै तरु बढै सीमंधर छुटमें । मृगादिक सीव बांधी विपुल वाहन तानै वाहन गजादि भाषै चक्षुष्मान अठमें ॥ २९ ॥ ताके समै पुत्र भये नोमा यसस्वीके

समै पुत्रनका नाम धारो अभिचन्द्र दस यौ। ताके समै बाल रोये गोदमें खिलावत हे तथा जलकुंड मांहि ससि देख हसियौ॥ ग्यारमें चंद्राम समैं पुत्रन सहत जिये बारमाहे मस देवताके समैं लसयो। जलवन गिर क्रीडा नावादि तरंड भये मेव वृष्टते रमेंद्र सेन जित वसयौ॥ ३०॥

दोहा–जरे सहत बालक भये ताको कह्यौ उपाय।
नाम नरे सुर चौदमें, नाभ नाल जुत थाय॥ ३१॥
ताह देख डरपे सु जन, कुलकर रीत बताय।
ये चेहन सुदर सकल, होय करम भूमांहि॥ ३२॥
बहु वरषातैं अन्न सब, भई औषधि सु अपार।
कल्पवृक्ष जाते रहे, क्षुधावंत दुख धार॥ ३३॥

चौपाई—तब सब मिलि गये नृपके द्वार, जाय नये प्रभु आज्ञ निहार। हमरी दया करो मन लाय, क्षुधावंत हम सब विललाय॥ ३४॥ कुलकर भणे सुणोरे भाय, साठन खेत बढे अधिकाय। तुम सब ताह तोड़कर लेहु, अरु निचोर रसकू पीलेहु॥ ३५॥ तुरत क्षुधास ईक्षुतैं हरो, तब इक्ष्वाकु वंस उचरो। कोड़ पूरब आय तनु तुंग, धनुष सवार पच सतरंग॥ ३६॥ कंचन वरण सबै सुखदाय, ऐसे नामराय गुण गाय। तानृपके मरुदेवी नार, जुवति गुणन मुख्य सिगार॥ ३७॥ कछुक काल सुख भोगत गये, प्रथम सुरेन्द्र अवधि चितये। होनहार तीर्थंकर जान, भेज्यो धनिद भगति उर आन॥३८॥ आय नगर निरमापो सही, कौसल देश अयुध्या ठई। हेम कोट

सुंदर बाजार, बीच बीच जिनवर आगार ॥ ३९ ॥ मध्य सु भाग महिपति भौन, सुर मंदिर ता आगै कौन। इक्यासी खण परम विसाल, चित्र विचित्र लटक फुलमाल ॥ ४० ॥ श्री जिन भक्ति बनिंद उर फूल, पंचाश्चर्य करत सुख मूल। रत्नवृष्टि साढ़े दश कोड़, तीन बार साढ़े दश कोड़ ॥ ४१ ॥ इक इक दिनमैं नृपके गेह, वरसै मानौ आनंद मेह। इक दिन मरुदेवी पतसंग, सोवत रैन भई बहु भंग ॥ ४२ ॥ चौथे जाम सुपन अवलोय, तज सरवारथ सिद्ध विशेष। गर्भ मांहि लीनौ औतार, उठी मात कीनौ सिंगार ॥ ४३ ॥ प्रातः असाढ़ दूज कलिदिना, पतिसे प्रश्न कियो सुत भना। छप्पनदेवी सेवै माय, जन्म चैत बदि नवमी पाय ॥ ४४ ॥ सुना सुपुर मेर कियो न्हौन, तांडवनृत्य अर भो भौन। तीन ग्यान जुत भये वृषंक, एक दिन नाभिराय भरि अंक ॥ ४५ ॥ करो ब्याह गृहस्तकी आदि, चलै रीत बाढ़ै मरजाद। प्रभु मुसकाय अधो मुख किनौ, जानी तात अनंदित भयौ ॥ ४६ ॥ कच्छ सुकच्छ अवनिपति सुता, नंद सुनंदा बहु गुण जुता। आदि कुंवर परणी संयोग, मनवांछित भोगवै सु भोग ॥ ४७ ॥ शत सुत सुता दो तिनकै भये, जगत रीत सब उपदेशये। तीन वरण षट करम सु किये, क्षत्री वैश्य क्षुद्र निरमये ॥ ४८ ॥ सो क्षत्री परजा प्रतिपाल, वणज करै जु वैश्य गुणमाल। शूद्रमाहि तेतीसो जात, असि मसि कृषि विद्या विख्यात ॥ ४९ ॥ वणज शिल्प यही षटकर्म, असि तलवारादिक जे धर्म। सर ग्रगहि अरु मिसल खिनाद,

कृष खेती अरु वणज अगाद ॥ ५० ॥ विद्या सीखन बहुत प्रकार, सिल्पी धंधा किये अपार। ॐ नमः सिद्ध भण अंक, अकारादि सुर सोलै बंक ॥ ५१ ॥ ककारादि करे पैंतीस, व्यंजन मांहि लीये तेतीस। लक्ष बिना सब विंजन होय, क क ख ख ऐसी संज्ञा जोय ॥ ५२ ॥ क का कि की कु कू के कै, को कौ कं कः संग्या दई। ऐसे बारे बारे मान, एक एकके भेद सु जान ॥ ५३ ॥ क कि कु ए त्रिय लघु अनादि, नव दीरघ और जुतका आदि। पुलत घनी देर जु उचार, तेतीस चारी रूप निहार ॥ ५४ ॥ ओं एक सोलै सुर वर्ग, पैंतीस मात्रा बारै सर्ग। ए सब चौसठ अंक सु जान, चौसठ विद्याकरी बखान ॥ ५५ ॥ लिखन क्रिया इत्यादि बताय, भरतादिक शत पुत्र पढाय। वंश चार क्षत्रिनके किये, नगर सु बांट राज सब दिये ॥ ५६ ॥ कुरुवंसी कुरु जंगल देश, गजपुर सोम श्रेयांस नरेश। काशी देश बनारसी ग्राम, नाथ सु वंश अकंपन मान ॥ ५७ ॥ उग्र वंश कच्छ महाकच्छ, आप इच्छाकु वंश परतच्छ। इत्यादिक अनेक भू कंत, किये आदनाथ भगवंत ॥ ५८ ॥ लाख तिरासी पूरबकाल, सुखमैं बीत गयो सु विसाल। प्रथम इंद्र चिंतै मनमांह, प्रभु कैसे वैरागी थांह ॥ ५९ ॥ तुछ आयु नीलंजस सुरी, कर सिंगार लायो भुहरी। नृत्यारंभ सभामैं कीन, रागरंग वृषभेश्वर चीन ॥ ६० ॥ नाचत नाचत गई पलाय, तब छिन और रची सुरराय। नृत्य भंग नहीं जानै कोय, विस्वनाथ तब सब अवलोय ॥ ६१ ॥

रसतैं विरस भये तज आस, लख २ त्यौं सब जग नाश। इत्यादिक शुभ भावन भाय, राज दियो सुत भरत बुलाय ॥६२॥ तब लौकांत आय सुर नये, संबोधनमे पुन्य बहु ठये। तत छिन बहुरि इंद्र पालकी, लाय चढ़े प्रभ चले घर थकी ॥ ६३ ॥ पोंहुचे अरन प्रयाग मंझार, चार सहस्र राजनकी लार। वस्त्राभर्ण उतारे सर्व, पद्मासन दिश मुख कर पूर्व ॥६४॥ मुष्टीपंच उपारे केस, नमः सिद्ध भण सुन्दर भेस। षट मास योगासन लियो, जनमदिना नृप युत मुन भयो ॥ ६५ ॥ कछादिक विधि जानें नांहि, प्रभुकी भक्त थकी मुन थांह। दोय चार दिन बीत जु गये, क्षुधा तृषा कर पीड़ित भये ॥ ६६ ॥ तिनवें भरत पुत्र इक नीच, मिथ्याती अति दुष्ट मरीच। ताकी आज्ञातें सब जना, फल सुफलादिक भोजन ठना ॥ ६७ ॥ अरु तलाव जल पीवन करै, तब नभमैं सुर वच उचरै। ऐसो काज करै या भेष, ताकौं हम मारैगे देख ॥ ६८ ॥ तब सब ध्वारकर छालके पट्ट, पहरे भिष्ट भये सब दुष्ट। मत पेदांत नैयाय विशेष, सांख्य बोध इत्यादिक भेष ॥६९॥ भय अपनी इछामत खंड, तीन सतक त्रेसठ पाखंड। भये और सुण श्रेणिकसार, प्रभु साले नमि विनमि कवार ॥७०॥ मांगै राज मुनिन पै आय, सबकूं दियो हमैं विसराय। तब धनेश आसन कंपियो, आयराज रूपाचल दियो ॥ ७१ ॥ पूरण जोग असनके हेत, उठे स्वयंभू मुन पद चेत। ग्राम रु नगर फिरे नही काइ, भीजन विधि कोउ जाने नांह ॥ ७२ ॥ निरख भूप बहु आदर करै, कन्या हयमय

धेट सु धरैं। अंतराय लख फिर वन गये, चार सवक दिन बीतत भये ॥ ७३ ॥ विहरत विहरत आए कहां, कुरु जंगल हथनापुर जहां। पुरमें आवत देखे भूफ, सोम श्रेयांस नाम सुत रूप ॥७४॥ जातिसुमरण भयौ श्रेयांस, वज्रजंघ श्रीमती गतांस। जिनको दान ताल पै दियौ, सो सगरी विध ज्ञानत भयो ॥७५॥

दोहा—इन सु भवांतरको कथन, आगै सुन नर नाह।
सो कषाय परसंगमैं, संधि पंदरमी माह ॥ ७६ ॥

चौपाई—ततछिन कर नमोस्तु पडगाह, सुद्ध इक्षु रस कन घट मांह। सप्त गुण जुत नौधा भक्त, प्रभु करांजुलिमें विधि युक्त ॥ ७७ ॥ दियौ लियौ भये पंचाश्चर्य, बतीस अंतराय कर वर्ज। छालीस दोष विना हुयो इम, श्री श्रेयांस दानेश्वर सार ॥ ७८ ॥ सुदि वैशाख तीज तिथ दिना, अक्षय तीज तब सब जग मना। दान तना फल क्षय नहीं होय, कारण पायन नासै कोय ॥ ७९ ॥ पोंहची भरत कनै यह सार, ऋषभदेवको भयो अहार। तुरत श्रेयांस पास तब गयौ, तुम किम वाकौ मरम सु लख्यौ ॥ ८० ॥ कथा भवांतरकी सब कही, भरत भणै धन भव तुम सही। फेर अजुध्या आय सुभाव, तासु भेद सब कह्यौ विख्यात ॥ ८१ ॥

वसंततिलका छंद—माता सुमोह सत रोय पुकार हा हा, गाली सुदेय भरतेश्वर दुष्ट महा। मो पुत्र सुद्ध नहीं लीनी राजमातो, चिंते नरेस कब केवल तातु रातौ ॥ ८२ ॥

छंद शशिवदन—जननि लेजाऊं दरस दिखाऊं लख भ्रम माजै तब सुख पाजै ॥ ८३ ॥

सोरठा—बीते वरस हजार, तब केवल ग्याना लियो। फागुन तिथ अलि ग्यार, समोसरण धनपत रच्यौ ॥ ८४ ॥

चौपाई—तीन पुरुष एक ही वार, दई वधाई भरत कंवार। एक कहै प्रभु केवली भयो, एक कहै सुपुत्र उपजयो ॥ ८५ ॥ एक कहै आयुध ग्रह थान, उपज्यो चक्र रतन वर मान। सुन नृप चिंते धूप जग सार, आनंद भेरि दे नगर मझार ॥ ८६ ॥ मदन दुरद पयादे तुरंग, पर पुरजन सज रंग सुरंग। चलै धुजा सु दूरतें देख, तब माता मन हरष विशेष ॥ ८७ ॥ जब सुन मग्न भये अधिकाय, प्रान त्यागकर सुरग सिधाय। फिर तज सोक हरष जन भरे, निकट जाय लख अचरज करे ॥८८॥

सवैया ३१—पैडी हाथ हाथ ऊंची चढ़के सहस बीस तहां चैत भूमि देख आदि धूलिसाल है, गोल पोल चारों दिशा मांहि चार मानस थंभ थंभ प्रतिवापी चार वापी दो दो ताल है ॥ खाई जल भरी फूल वाडी फुन कोट हेम विदिशामें बाग चार धूजा नाटसाल है। आगे रूपाकोट फिर तूव नो नो धर्मसाला सभी भूमि गंधकुटी लख न्यारी भाल है ॥ ८९ ॥

चाल त्रिभुवन गुरुकी—जै जै जिनस्वामीजी, त्रिभुवन पति नामीजी। सतइंद्र करै तुम सेव पदांब्जकीजी ॥९०॥ सिंहासन सोहैजी, अंबुजमन मोहैजी। तापै प्रभु अन्तरीच्छ विराजे देवजी ॥ ९१ ॥ इत्यादि अपाराजी, सुत भरत कंवाराजी। करकै मानुष कोठे मैं थिर ठयोजी ॥ ९२ ॥ प्रभु दिव धुन वाचीजी, खिरी सब सुख दानीजी। समझे सब ही निज निज भाषा विषैजी ॥ ९३ ॥

चौपाई–श्री जिनभाखे धर्म सुसार, नर सुरेन्द्र शिव पद दातार। दया आद महाव्रत मुनधर्म, त्रेपन क्रियासु श्रावक पर्म ॥ ९४ ॥

छप्पै–अष्टमूल गुणपाल बार व्रत व्रत सुलक्षा, कर तप शक्ति समान बार विधि तस्वन सर्वा। प्रतिमाग्यारै धार दानविध चार शक्ति सम, जल छाणे निश भुक्त, असन नित्य त्यागनेम जम। कर जिनेन्द्र दरसन बहुरि, शास्त्र सुने मन लाय कर॥ चारित्र धरे विधि शुद्धि फुनि, क्रिया श्रावक त्रेपन सुकर॥९५॥

चौपाई–इत्यादिक सु बहोत वृष भेद, भाखे रिषभ सुणे विन खेद। पूछै नृप संसैकर सोय, याकी दशा कोन विध होय ॥ ९६ ॥ जीव दरब विन मूरत लखो, तत संबंध परजाय सुरखो। सो परजा है छ परकार, हार वपु इंद्री पण धार ॥९७॥ सासो-स्वास वचन मन येह, अब सुन हार भेद छे जेह। कर गिरास ग्रह मुखमें धरे, कवलाहार रु सुज्ञिम करै ॥९८॥ अंडा सेवे पंछी दक्ष, तीजो लेय खैंच जलवृक्ष। कर्म वरगना नरकन मांहि, चौथो और सु भोजन नांह ॥ ९९ ॥ मनसा पंचम देवनके है, षष्टम नव रूप केवलिके है। तज परजाय अन्य गति जावै, अनहारक अंतरमें लावै ॥१००॥ तीन समै उत्कृष्ट रूपा छै, तनको ग्रहण हार सोई लाछै। सो नोकर्म हार तुम जानो, अब तन पांच सुनो सुखदानी ॥ १०१ ॥

छंद अडिल–पकरे पकरा जायरु छेदा छिदत है, गलै सडै नर पशु उदारिक धरत है। इक तनके तन दोय चार बहु बनत

है, लघु गुरु सुर नार नारकसो वैक्रिक थात है॥ १०२॥ मनके संसै निश्चित भाखतें नीसरे, धूम्र पूतला मनुप खेम तनु विस्तरे। उज्जल फटिक समान सुहारक भ्रम हरे, फुन तैजस बन अन्न दिस रव जू करे॥ १०३॥

सोरठा—कारमान तन सोय, कर्म पिंड संग आतमा। जाय भवांतर जोय, सूक्षम सूक्षम भाखवैं॥ १०४॥

सवैया ३१—पांच इन्द्री भेद सुन, भूजल पन जै वायु नित्य इतर निगोद लाख सात सात है। जीवजो अनादि काल सेती तहां रहत है सोई नित्य इतर विवहार आत जात है॥ कंदादिक भेद जान हरित पत्येक दस फास बावनलाख एकेन्द्रीकी जात है। संखादिक दोय इन्द्रीजूं लीकादिते इन्द्री है मख्खी भौंरा चौइन्द्रीय लाख दो दो ख्यात है॥ १०५॥

सोरठा—पंचइन्द्री सुरनारकी, चार चार पशु लाख। चौदे लाख मनुष्य है, सब चौरासी लाख॥ १०६॥ मात पक्ष सो जात है, पितापक्ष कुल जान। होनहार चक्री सुनौं, अब कुल कोड वखान॥ १०७॥

छप्पै—भूम काय बाईस सात जल अगनि त्रिवायव सस हरित ठाईस विकलत्रय सात आठ नव साढे बारा बार जीव जलचर नभचर गन चतुपद दस नव सिरी सर्प नारक पचीस ठन सात लाख कौड चौदे मनुप अरु देव छबीस सुजानियै। कुल कोड़ाकोड़ी दोय सत अर्द्ध लाख विन मानिये॥ १०८॥

चौपाई—या चौधावर तन परमान, जोजन सहस अधिक

कहु ज्ञान। तन जुगाक्ष द्वादस जोजना, उत्कृष्ट संख्यादिक तना ॥१०९॥ त्रिय इंद्री तन मित्त त्रिय कोस, चतुरिंद्रिय जोजन मित पोस। पंचइन्द्री जोजन हजार, यह उत्कृष्ट देह विस्तार ॥११०॥

सवैया ३१–प्रथ्वी कायके सुजीव मसुर समान जलकाय मोती सम गोल अग्निकाय जीवजे। सुईकी अणी समान पोनकाय धुजाकार अनेक आकार और तरुकाय जीवजे॥ पांचौंकै फरस एक दो इन्द्रीके फर्स मुखते इन्द्रीके फर्स मुख नाक चौ इंद्रीवजे ताकै फर्स मुख नांक आंख पंचइंद्री फर्स मुख नाक नैन कान सुन वीसै सीवजे ॥ १११ ॥

छप्पै–फरसे च्यापचै चाप जीभ चौसठ सो नासा। दस जोजन उनतीस सतक चउवन क्रम भाषा॥ दुगन ऐसै नीलोक श्रवन वसु सहस धनुप फुन। सैनी सपरस विषै कह्यो नो जोजन श्रीसुन नो रसन घ्राण वो चक्षु फुन॥ सैतालीस हजार गति दोसै त्रेसठ बारह श्रवन विषै क्षेत्र परवान मनि ॥ ११२ ॥

सवैया ३१–पांचौ इंद्रीको आकार भरत भूपार सुन फरस है डंडाकार खुरपीसी रसना। सरसोंको फूल जिसो नासाको आकार तीसो हग है मसूराकार जौंकी नाली श्रवना॥ ऐसे षट काय जीव सांसो स्वांस ले सदीव पोनको ग्रहन त्यागि त्रस बोलै वचना। जीव पुद्गल संग मनदकी उतपति और सैनी मनयुत गर्भ सेस्रो उपजना ॥ ११३ ॥

दोहा–एही छै परजाय है, एकेन्द्रीके चार।
पांच असैनी विकलत्रय, सैनी षट ही धार ॥११४॥

छंद शिखरणी–प्रज्ञा पूर्ण धारै, चवपणलहो पर्जपपत्तसो अपर्यापत्ता है एक जुग धरै पूर्ण करसो अलब्धा सो जानो एक जुग धरै नास्त लहवा असैनी जीवादिकके लब्ध अलब्धा काय लहवा ॥ ११५ ॥

चौपाई–यह परजाय धरत है जीव, ताकी हिंसा त्याग सदीव। कैसी हिंसा कहिये सोय, प्रान पीडनो हिंसा होय ॥११६॥

दोहा–कोन प्रान पंचाक्षत्रिप, बल रु स्वांस फुनि आय।
आयु प्रान प्रभु कोन विध, सुनो भेद मन लाय ॥११७॥
बंदीखाने देहमें, बस है थित मरजाद।
सोई आयु प्रमान है, सुण मन नृप अहलाद ॥ ११८ ॥

सवैया ३१–उतकिष्ट आयु सुन प्रथ्वी दोय भेद मांहि बार पाहन बाईस सताईसकी। पोनतीन दस ८रु सरक बयालीसरु बहतर स्वग सब हजार हजारकी ॥ अग्नि तीन उनचास तेइंद्री दिवस षटमास चोइंद्रीरु दोय इंद्री वर्ष बारकी। सीरी सर्पनो पूर्वांग नर मछ कोट पूर्वकर्म भूममांहि फुन मध्य नाना धारजी ॥११९॥

दोहा–भोगभूमि त्रिय पल्ल थित, मनुष तिर्यंच निहार।
तेतीस सागरकी जु थित, देव नारकी धार ॥१२०॥
भोगभूमि ये जीव सब, सुर नारकी निहार।
सूछम थावर सर्व ही, ए अखंड थित धार ॥१२१॥

चौपाई–ऐसी आयु धरै ए जीव, ताकी हिंसा होत सदीव। खनैरु ताप छेद अरु येद हिंस्या कारणके थे भेद ॥ १२२ ॥ हिंस्याका है केतेक पाप, ताको भेद कहो प्रभु आप। मेर समान हेमकी रास, कोडों दान करे जन तास ॥ १२३ ॥ एक

जीव फुन हिंस्या करै, तो यह पाप अधिक सिर धरै। इत्यादिक और कथन अपार, कियो आदनाथ विस्तार ॥ १२४ ॥ सोम श्रेयांसादिक मुन भये, जय आदिक निज सुत नृप किये। ब्राह्मी आदि आर्जिका भई, भरतादिक श्रावक पद्र लई ॥१२५॥ केइयक सम्यकदृष्टी भये, कर नमस्तु निज निज घर गये। भरतपुत्र जन्मोत्सव किया। चक्रपूजि मनमें हरखिया ॥१२६॥

छहों खंड साधनके हेत, चालौ दल सुख डांग समेत। सुर खग गज रथ हय भृत केद, मानों सोहत गाजत मेद ॥ १२७ ॥ पूरव दिश साधे सुर आदि, और अनेक महीपत साध। दक्षण जे फुनि पछिम और, जीत मलेछखंड सुवठोर ॥१२८॥ आय अजुध्यापुर परवेश, चक्र सु धसत नांह लवलेस, चक्री चिंता करै विसाल। जीते छहु खंड भूपाल ॥ १२९ ॥ तब सैनेस भणे जै कुमार, प्रभु भाई नहि आज्ञा धार। तब सब ही पै दूत पठाय, आज्ञा पत्र बांचि सब भाय ॥१३०॥ अठाणवे बाहुबल विना, वृषभसेन आद मुन ठना। बाहुबल नहि मानी आन, तब चक्री कियौ कुच मसान ॥ १३१ ॥ बाहुबल भी भयौ तयार, तब मंत्रिनने कियौ विचार। दग जल मल्ल युद्ध त्रय थेड्ड, निज निज ढोला करो सु तेह ॥१३२॥ रूप अपने नृपकूं समझाय, दोनौ उठत वरण भू आय, प्रथम नैन जुध होरा होर। देखै पलक मुंदै यह खोर ॥ १३३ ॥ पांच सतक धणु भरत शरीर, पचीस अधिक बाहु बलवीर। चक्री उर्घ भयो मकेस, भरत नैन जल भरी सु केस ॥ १३४ ॥

सवैया ३१-बाहूबल जात भई फुन सर मांहि दोनों जल जुध करत सु भरते सहारियो, फुन जुधके अखाडे मांहि दोनों ठाडे भये बाहुबल भरतको पौंचिसे अभारियो। तीनों बार भरतेस हारो जीतो बाहुबल भ्रे वीर जिने त्यागी सुगहू विचारियो, केसको उखार तब दिक्षा धार जोग दियो वर्ष एक द्वार त्याग ध्यान सुभ धारियो॥ १२५॥

दोहा—नंदा सुत थुत कर भणे, धन बाहूबल सूर।
कर नमोस्तु घरकूं चलो, भये मंगल भूर॥ १२६॥

सवैया ३१-चक्रीको विभूति सुन नवनिध चौदे मण दंती रथ लाख है, चौरासी कोट पायक अठारे क्रोडवाजी छाणवे सहस्र नारी बत्तीस हजार ऐसवे नृप नायक इत्यादि। विधो अपारता मांहि अलिस ऐसो जलमें कमल निसो सुध बुध लायक एक दिनमें, विचार करत भरत ऐसे दयावान जाने श्रावक अब थायका॥ १२७॥ बैठो निज बाग जाय गमे हरित काय ऐसो द्वार ही खुलाइ टेरे सब जनकौं, मयासैं रहित गये दयावान ठाडे रहे शुद्ध भूमके मारग बुलाये सबनको। उनको आदर कीयो जैनी हो जनेऊ दियो 'दरसग्यान' चारित यों कहत वचनकों। तीनों लड़ कंध धार बामते दखन द्वार कटताई लंब कार जनीयो सुचनको॥ १२८॥

चौपई—यौं ब्रह्मचारी भये सुचित्र, चौथो वरण भरथ कियो छिप्र। और सुनो बानारसी भूप, नाम अंक धनसुता अनूप॥१२९
नाम सुलोचन कन्याहेत, रचौ स्वयंवर मंडप चेत। भरत पुत्र इक

अजै कवार। आये बहुत भूप तेह वार ॥१४०॥ मंडप मै सज्ञ सज्ञ भूपार, आए मानो देव कंवार, तब दासी करके सिंगार। ल्याय सलोचनकूं सतकार ॥ १४१॥ अलंकारलंकृत सुंदरी, मानो सुकव काव्य रसभरी। अथवा पुण्यो उगत चंद, सब नृप नेत्र कवलनीवृंद ॥ १४२ ॥ लख लख फुन पाये तेहवार, आई कन्या सभा मंझार। दक्षण करमें वर फुल मार, वाम सहचरी कर गहलार ॥ १४३ ॥ देखत जाय सखी तब भणे, वंस नाम कूल पुर नृप तणे। अर्ककीर्ति युष्यापत पूत। वंस इक्ष्याकु सुगण संयूत ॥ १४४ ॥ इत्यादिक बहु भूप कवार, आगै जाय लखो जैकवार। गजपुर सोम पुत्र कुरुवंस, सोहे सबमें जु खगहंस ॥ १४५ ॥ वरमाला डारी गलतास, अर्ककीर्ति तब रोस प्रकास। भयौ युद्ध दोऊकौ जबै, चक्री सुतको बांध्यौ तबै ॥ १४६ ॥ ब्याह सलोचन जै घर गयौ, बहोर सुजाय भरतको नयौ। भूप कहै धन धन जै सही, अर्क-कीर्ति अपकीर्त सु यही ॥१४७॥ फुन बाहुबलको सुध काज, गयौ समोश्रतमें नरराज। तुभ्यं नमः श्री वृषभेस, फिर नामि वृष वसुसेन गणेश ॥ १४८ ॥ नर कोठै नरिंद्र थित करी, द्वादशांग सुन संख्या करी। गणधर भषै भेद पद तीन, अर्थ प्रमाण रु मध्यम चीन ॥ १४९ ॥

सवैया ३१—अरंथ सुपद यह जेते अंक अर्थ होय फुन परमाण पद अंक धार है। मध्यम सुपद अंक सोलासै चौंतीस कोर तिहतर लाख फुन सपत हजार है ॥ आठसै अठासी अंक

ऐसे द्वादसांग पद एकसो बारे करोड़ त्रासी लाख चार है। बावन सहंस पांच कियो विस्तार सब श्रुत ज्ञान मांहि सार मंत्र नमोकार है ॥ १५० ॥ पराकृत वचनमें छंद गाहारूप सोय पैंतीस वरन मात्रा इकसट जानिये। लक्षवार जपै ताहि मन वच तन लाय तीर्थंकर पद पाय एकासन ठानियै ॥ और जपकार ववजेताकी गिनती सुकौन तातैं गहू जोग एह यासे हित मानिये। इत्यादिक कथन सुन जैयादिक मुन भये तब समै पाय कर भरत वखानियै ॥ १५१ ॥

छंद शिखनी—किये ब्रह्मवंसा, दया ताल हंसा अजी ये भला है। तथा कुलचास है ॥ १५२ ॥

चौपाई—गणवर भाखै सुनो नरिन्द्र, दसमे तीर्थ समै हो भ्रष्ट। सुणो खेदकर भरत विचार, कैसे हो इनको संचार ॥१५३॥ मनपरजय ज्ञानी गणधार, नृपके मनकी जाणी सार। अहो भूप ये खेद निवार, होणहार यौं ही निरधार ॥ १५४ ॥

कवित्त—भणे गणेशा काल वशेसा सर्पणि उत्सर्पणी असंक, बीत जाय तब हुंडासर्पणी काल आय एक अति वंक। परै करे विपरीत बहोतसी भरत ऐरावतमें सोज्ञान, काल तीसरेमें होवै जिनश्री जिनवरके सुता वखाण ॥ १५५ ॥

चौपाई—सुरतरु नसे रु वृष्ट पसाय, विकल त्रिय उपजै अधिकाय। चक्री विकल्प जिन त्रिपवर्ग, सप्त चरम जुगको उपसर्ग ॥ १५६ ॥

कवित्त—तीन सतक त्रेसठ पाखंडरु विजै भंग चक्री दुनवंस। तुर्यकालमैं पुरुष सलाका के ठावन होवै नरहंस ॥ अंतराल

सुविधादि सात जिन चार पञ्चमें धर्म विनास। नारुद्र रुद्ररु पंचमजनमें जिनमतमें बहु भेद प्रकास ॥ १५७ ॥ और तुरकमत होयगा बहुताते खेद करो मत भूप। सुनकर हाथ जोड़ चक्री फुन पूछे बाहुबलको रूप। धर्मचक्र भाषें चक्री सुन एक वर्ष तिन तजो अहार। प्रभु केवल क्यों नाहीं उपज्यौं नृप ता मनमें सल्ल निहार ॥१५८॥ कैसो सल्ल कौण विध नासे भरत महि ये सूक्ष्म सल्ल। तेरे नमन करत सो नासें पावे अवचल ग्यान सुमल्ल ॥ तुरत कैलास जाय नृप देखौ बेल जाल वेढो गिर जेन। मृतकाके तनपै अहि मंदिर करसै दूर करें तन हेम ॥ १५९ ॥ लखत वंदन कर स्तुत भण धन्य २ धारज यह ध्यान। प्रभु भूमिपै भये भूप बहु मेरी मेरी करें अज्ञान ॥ सो सब नास भये प्रथ्वी थिर तातै मो अपराध खिमाय। इम थुत कर घरकूं गयो तब ही सुकलध्यान मुन बाहु ध्याय ॥१६०॥

वसन्ततिलक छंद—लहो सु केवल शिवाल थिर पदा। सु देव बतीस हजार सर्वदा॥ विहारते अष्टपदाद्र आईयो। जनेंद्र संख्या तब संघ थाइयो ॥ १६१ ॥

चौपाई—सात प्रकार मुनी सुर भेस, चौसठ ऋद्ध धरै सु गणेश। चौरासी सु वृषभसेनादि, सो प्रभुको सुपुत्र ही आदि ॥ १६२ ॥ सैतालीसै और पचास, एते पूरब धारी भास। इकतालीसै और पचास, सिष्य मुनी कर सूत्राभ्यास ॥१६३॥ अवध ज्ञानयुत नौहजार, केवलज्ञानी वीसहजार। छैसैवीस सहस वैक्रिया, रिधधारी फुन मन परजया ॥ १६४॥ पोणोदेरे

सहस प्रमाण, फुन वेतेवादी रिष जान। अरजका सु पचास हजार, तीनलाख श्रावक व्रत धार ॥ १६५ ॥ पांच लाख श्रावकनी जान, असंख्यात देवी सुन मान। संख्याते तिरजंच सु कहौं, एही संघ च्यार विघ भयौं ॥ १६६ ॥ बहुत भव्य-जनको वृष पोष, गिर कैलास थकी लइ मोख। तीन वरष और सतरै पक्ष, तीजे काल मांहि रहे दक्ष ॥ १६७ ॥ चौदस माघ अलि तिथ दिना, शिव कल्याणक सुरपत ठणा। गीत नृत्य जग्यादि विधान, करकर देव गये निज थान ॥ १६८ ॥ सुणी भरत तब भयो सुचेत, भू निर्वांण वंदना हेत। चालौ सघ सहित कैलास, जानत पूजा करी हुलास ॥ १६९ ॥

छंद काव्य—करवायो जिन भोन एक तामेंसु बहत्तर, भिन्न भिन्न ग्रहजेम समोश्रत रचन महत्तर। तीन चुवीसी विवरगतन उचरु लक्षन, पंचरतनमें कर रु भरत घर गयो तत्क्षन ॥१७०॥

चौपाई—कारण पाय वैरागी भयौं, सुतकौं राज देय सुन थयौं। अंत महूरतमें लह्यौ ज्ञान, केवल बहुरि गये निरवान ॥ १७१ ॥ गौतम भाखै सुण वृष भूप, ए सब धर्म्म वृक्षफल रूप। कर्मभूमि प्रवर्तन कह्यौं, अथवा श्रीजिन श्रुत ए गह्यौ ॥१७२॥

दोहा—आदिपुराण संक्षेप यह, गुरु वसेन बखान।
जिनसेना सिख कहत इम, टंडोराम सिष्यमानि ॥१७३॥

इतिश्री चंद्रप्रभपुराणमध्ये श्री रिषभदेवचरित्र वर्णनो नाम
चतुर्थ संधिः संपूर्णम् ॥

पञ्चम संधि।

दोहा—वंदो वीर जिनेस वर, फुन गुणभद्रा सूर।
वीरनंद मुनि भारती, करो बुद्ध मोहि भूर॥ १॥

चौपाई—गणधर भाखै सुणो नरिंद, बहुरि अजित संभव अभिनन्द। सुमत रु पदम सुपारस चंद, तव विभ्रम युत हर्ष अमंद॥ २॥ गौतम गणधर कुं सिर नाय, श्रेणिक प्रश्न करै हरषाय। प्रभु श्री अष्टम जिन सुखकार, वाको चरित कहो विस्तार॥३॥ इंद्रभूत कहे सुणो नरेस, श्री चंद्रप्रभ चरित्र विसेस। त्रितीय दीपमें आदि गिरेस, अपर देह सुगंधा देस॥ ४॥ शीतोदा उत्तर दिस जान, कहीं गिर तुंग कहीं जल थान। कहिं सरिता कहीं कानन चंग, तामैं वृक्ष फलै अति तुंग॥ ५॥ आम्र रु पुग निंबु नारंग, खिरनी खारक श्रीफल चंग। लौंग लायची पिस्ता दाख, जावत्री रु जायफल भाख॥ ६॥ दाड बिजामन सैवल सेव, इत्यादिक फल फले अभेव। फूले फूल सु नाना जात, मरुवा मोलश्री विख्यात॥ ७॥ चंपाराय वेल चंबेल, करना केतकी नागरवेल। गुल गुलाब आदिक महकाय, मंद मंद तहां पवन सुहाय॥ ८॥ देस नाम सत्यारथ पाय, बहुत जीव तहां केल कराय। सेही सार्दूल सुडाल, अष्टापद गैंडा मृग स्याल॥ ९॥ हंस परेवा कीरसु मोर, बुलबुल मैना करै जु सोर। मानो देस तणे गुण गाय, तहां मुनीस्वर ध्यान लगाय॥ १०॥ करै आत्माको चिंतौन, कै स्वाध्याय तथा धर मौन। शुद्ध

दोष चुत चारित मुदा, अन्न कलिंगी नाहीं कदा ॥ ११ ॥

काल चतुर्थ जहां नित रहे, वरण तीन दुज बिन सरदहै। बिना सर्म हो धान अपार, रितु इक ससि रसवै सुखकार ॥ १२ ॥ लाभ सर्व ही पुन्य संयोग, द्रव्य सुहाण दानमैं होय। उन्नत जिनपद सवही नमें, और निचाई इक नाममें ॥ १३ ॥ कोमल अंग सबै नरनार, कठनपणो तिय कुचन मझार। चंचलता इक द्रगमें लहै, अचल वचन सब ही मुख कहै ॥ १४ ॥ दंड सु एक तुलामें आह, तिक्षण बुद्ध सबनके मांहि। शब्द शास्त्रमें है अपवाद, एक पंच जल सर मरजाद ॥ १५ ॥ मारक नाम विन नही आन, भगे दोष कृप करैं किसान। उष्म दिसा पावक ही धार, तापकता रवि किरण मझार ॥ १६ ॥ धीर वीर जन सहज सुभाव, कायरता हिंसामें भाव। क्रोध कषाय न कबहु धरैं, अहि मणि धार क्रोध विष भरै ॥ १७ ॥ मान रूप जुवती मन धरैं, तिनके घरघर ससि नित फिरैं। निज कलंक धोवनके काज, मायाचार धरै गिरराज ॥ १८ ॥ अंदर कठन ऊपर मृदु होय, वेल जाल तरु वेष्टित सोय। दया पालनेमें इक लोभ, अवर न कहुं लोभको क्षोभ ॥ १९ ॥ धर्म जन नहीं दूजो जहां, श्री जिन बिंब बिना नहीं तहां। जहां एकांत वाद ना होय, जैनागम जानैं सब कोय ॥ २० ॥ नर नारी सुर सुरी समान, देव जन्म चाहे जहां थान। इत्यादिक तिस देस मझार, सोभा और अनेक निहार ॥ २१ ॥

भूमंडल नभ मंडल मनो, तहां नगर उडगणसे गनो। धन धान्यादि भरे दुत धरै, तिनकी छवि लखि सुर पुर हरैं ॥ २२ ॥ ग्राम नगर पुर पट्टन द्रोन, करवट खेट मंटंव सुभोन। संवाहन इत्यादिक थान, कुरकट उडवत अंतर जान ॥ २३ ॥ तिनमें श्रीपुर ससिप्रभ लसै, मानौ इन्द्र लोकको हंसै। सकल वस्तुको आकर पर्म, समदृष्टी सुर चय लहै जन्म ॥ २४ ॥ नर पद लहै पुरुषारथ साध, तिनमें धर्म विशेष अराध। मोक्ष काज नही स्वर्ग निमित्त, घर २ मंगल गीतरु नृत्य ॥ २५ ॥ तहां पुरको प्राकार उतंग, हेम रतन मय मंदिर संग। परिखा सजल पौल अतिलसै, देखत सब जन मन हुलसै ॥ २६ ॥ कूप तडाग बावनी बनी, वन उपवन कर सोभै घनी। लक्ष भरो पुर कमल समान, नगर नाम सत्यारथ जान ॥ २७ ॥ राज करै श्रीषेण नरिंद, सोहै मानो दूजो इंद। प्रजा कंज विगसावनं सूर, अरिगण निरखत छिपै लखभूर ॥२८॥ अथवा सीसं पायके रहे, बहोत भूप तसु आज्ञा लहै। हय गय रथ चरगण अति भीर, गुणरासी त्यागी रणधीर ॥ २९ ॥ प्रातकाल सामायक करै, कर स्नान पूजा विस्तरै। साध पोषकै करै अहार, दीन दुखी पै करुणा धार ॥ ३० ॥ जस उज्वल जिम ससि चांदनी, तहां देसमें फैली घनी। नष्ट विक्रिया जार समान, संका धार बैठी निज थान ॥ ३१ ॥ तारा जाके रानी घनी, श्रीकांता रानीन सिरमनी। हर घर कला ससी रोहणी, क्या सोभा बरनूं ता तनी ॥ ३२ ॥

कुंडलिया—मृदु स्निग्ध लंबे घुने, वक्र केस अलि संग। रानीके मुख कमलकी, ले मकरंद अभंग। ले मकरंद अभंग माल ससि सुक्कु अष्टमों। भ्रकुटी चाप कच भृंग सघन अति पुष्टसो॥ मृग दृग जलजक्कु सेयना, कग्नुक भयो घृद्धसो। त्रिवोष्टी रद द्विज पांत मृदु गंडाऽमग्यसो॥ ३३॥ चौ० गिरदाकार बन्या मुखचंद, ठोडी मात कामको फंद। कंठ गूढ़ त्रिवली ग्रीवास कंचन कुम्भ तुंग कुच जास॥ ३४॥ त्रिटल स्याममुख अंबुज जुक्त। सुंदर उदर त्रिवलि संजुक्त॥ तासमकूप कामको धाम। कट कंठीरव नृपका वाम॥ ३५॥

छप्पै—जंघ केलजु थंभ घुटनटकने नितंभसु। गूढ कूरम कीलंक चरण करण कर पत्र वेल लसु॥ स्थनको भार अपार लचक अति गतमरालसो। पिक वच कोमल अंग अंग आभरण धारसो॥ वस्तर सिंगार संयुक्त इम मनों भारती आप है। ऐसी नरेस तिय चतुर अति सब सोभा कविको कहै॥ ३६॥

चौपाई—नृपकी आज्ञाकारणी सोय, संग चलै छाया जू लोय। लज्जा दया शील व्रत धरै, मानौं रतन त्रय आचरै॥ ३७॥ भूषण भूषित सोभित ऐसे, तारन मध्य चंद जु लसै। वसन युक्त तन दुत सु अखंड, मानौं घनमें दामिनी दंड॥ ३८॥ नवजोवन दंपति सुकुमार, भोगै भोग पुन्यफल सार। संवत्सर इक दिन समजाय, सुखमें काळ गमावै राय॥ ३९॥ इक दिन निज मंदिरपै चढो, नृप तिय दस दिश निरखै ठडो। बालक क्रीड तनैन निहार, ते आपसमें येंद उछार॥ ४०॥

तिनै देख मन भयो उदास, नैन नीर भर आयो जास। जो मेरे सुत होतो कोय, केल करत लख अति सुख होय ॥४१॥ पुत्र विना सूनौ संसार, पुत्र विना तिय आवै गार। पुत्र विना सज्जन क्यौं मिलै, पुत्र विना कुल कैसे चलै ॥ ४२ ॥ जैसे फूल विना मकरंद, कवल नैन संज्ञा द्रग अंध। पंडित विन जू सभा असार, चंद विना जू निस अंधियार ॥ ४३ ॥

कवित्त–कवल विना जल जल विन सरवर सरवर विनपुर पुर विन राय। राय सचीव विन सचिव विना बुध बुध विवेक विन सोभ न पाय ॥ विवेक विना क्रिया क्रिया दया बिन दया दान विन धन विन दान। धन विन पुरुष तथा विन रामा राम विन सुत त्यौं जग मान ॥ ४४ ॥

चौपाई–सघन छाह तरु फूलौ घनौ, रूपादिक संपत यो बन्यौं। फल विन सोभा पाये नाहि, विना पुत्र तिय त्यौं जग मांहि ॥ ४५ ॥ ताको बांझ कहै सब लोय, अरु तसु आदर करै न कोय। विकल अंग जग दुर दुर करै, दुख दलिद्र सब औगन धरै ॥ ४६ ॥ ऐसी महिला सुतको जनै, ताको सब जग ऐसे भनैं। धन्न जन्म याको अवतार, पुत्तर सहित भई यह नार ॥ ४७ ॥ मूरछा खाय धरनपै परी, ह्वै सचेत नीचै ऊतरी। परी सेजपै चित कराय, जू हिमतै वल्ली मुरकाय ॥४८॥ एतेमें नृप घर आईयो, राणीको लखी विस्मै भयौ। पूछे राव कोन दुख दियौ, सो अब भुगतै अपनौ कियो ॥ ४९ ॥ राणी कछु जबाब नहीं दियो, तब दासीनै इम भाषियौ। चढी सदन दिस

देख न लगी, पर सुत देख सोगमें पगी ॥ ५० ॥ सुण राजा मन भयौ उदास, राणी लंबे लेऊ स्वांस। रुदन करै अति ही अकुलाय, तब भूपतने उरमूं लांय ॥ ५१ ॥ संबोधनमें वचन उचार, हे कृषोदरी हिया सहार। भावी लिख्या सो निश्चै होय, ताहि निवारि सके नहीं कोय ॥ ५२ ॥ होनहार सोई परवान, पूरव कृत्य सुभासुभ जान। हे प्यारी तेरे दुख दुखी, मेरे दुखकर परजा दुखी ॥ ५३ ॥ हे ससि वदनी सोक निवार, ज्यौं सबकूं हो सुख अपार। जब सन्तोष गह्यौ सा नार, तब नरेन्द्र गयौ सभा मंझार ॥ ५४ ॥ कर कपोल धर सोच कराय, तब मंत्री पूछै सिर न्याय। कैको नृपति भयो प्रतिकूल, कैको सजि आयौ अरि भूल ॥ ५५ ॥ कै काहू आग्या निरवार, कैको देस साधनौ हार। मनको भेद कहो महाराज, जो जाने तो करै इलाज ॥ ५६ ॥ हम मंत्रिनको यही सुभाव, तब प्रधानसे बोले राव। और चिंत नहीं मेरी कोय। पण मम नारि दुखी अति सोई ॥ ५७ ॥ सुतकी चिंता करै अपार, नातर बांझ कहै संसार। ताको भेद कहो मंत्रीस, कहै सचिव हो सुनो महीस ॥ ५८ ॥ पूज कुदेव कुगुरुकी सेवा, हिंसा धर्म सुमानै एव। देव धर्म गुरु निंदा करै, सो निश्चै बंझा अवतरै ॥ ५९ ॥ पुष्पवती जिन मंदिर जाय, पुत्रवती कुलख खुनसाय। सुत विहीन लख आनंद धरै, सो निश्चै बंझा अवतरै ॥ ६० ॥ पर सुत मर्यौ सुनै हरषाय, हरौ गयो सुन अति विगसाय। बांझ तिया लख हर्ष सु करै, सो निश्चै बंझा अवतरै

॥ ६१ ॥ इत्यादिक पूरव भव करै, ताकौ फल प्रभु ऐसो धरै।
ताके लछन कहु बखान, जान भेद नव उपजत थान ॥ ६२ ॥

कवित–सचित जीव जुत नर तिरजंचरु अचित जीव विन सुर नारकी। सचित अचित मिल मिश्र जोन कोउ सीत छठे सातवे नारकी ॥ उष्ण आद पंचम नारक लो सीत उष्ण मिल मिश्र सु होय। संवृति जान नजर नहीं आवे विवृत प्रगट लखे सब कोय ॥ ६३ ॥

दोहा–कछु दीसै कछु नाहि जो, मिश्र मूल नव एह।
उत्र चुरासी लाख है, फुन उतपत सुन लेह ॥ ६४ ॥

कवित–गरभज गरभ सेतीसों उपज, तीन भेद ताके पहचान। जरायु जे सहित इक होवे अंडज अंडेसै इक जान ॥ पोतज विना लेप ही उपज, ऐसे केहर जिनवर होय। नर तिरजंच होय ऐसैं ए, गर्भज भेद जानिये सोय ॥ ६५ ॥

दोहा–फुन उतपाद सु जानियें, देव नारकी होय।
बाकी सन्मुर्छन जु सब, सभी थानमें सोय। ६६ ॥

कवित–पहले सचित जोन जो भाषी मनुष तिर्यंच तनी सो जान। मानुषनीमैं तीन भेद हैं, संख कुरम वंसा पहचान ॥ संख समान जोन जासकी, सो निश्चै वंझा तिय होय। वंसा पत्र वंसके सम भगत तहां समान मनुष सब होय ॥ ६७ ॥

दोहा–कर्म काछवा पीठ सम, जोन होय जासार।
तीर्थंकरादि महान जन, उपज तास मझार ॥ ६८ ॥

चौपाई–वंस जोन नारी जग मांहि, तामैं भी वंझा बहु

आहि । निश्चै वंझा फूल सु बिना, कोऊ पुष्प सहित ही गिना ॥ ६९ ॥ ताके भेद सुनो मन लाय, भिन्न २ भाखूं हूं राय । जो जाने तो करे इलाज, समा सहित सुन हो महाराज ॥७०॥

छप्पै–उठै जोनमैं सूल होय ज्वर श्रवैं जु श्रोणित तुक पलासके, फूल रंगके सूमं सु सुशोभित । कवल मरा जल होय सीस दुखै रति करतो ॥ वायु भरे तेलंक सरदतैं कुछरत करतो । ये सर्व दोष कहे वायुके । बहुरि पित्तके सुन सकल होकर पद उदरमजलन अति गरमी है तनमें सकल ॥ ७१ ॥ लहु कष्टतै श्रवै धार मोटी जामन सम कवल उष्ण अति होय तन स्वेत दूध सम। अब कफके सुन भूप नाममैं शूल उठै अति अति पीडा तन मांहि, शून्य पावादि रोग जित जिहरक्त सुपेदी लिये घनो श्रवे, सु मोटी धार अति फुन सुन त्रिदोषतै तीव्र ज्वर । कुछ जो निकटि पीठ अति ॥ ७२ ॥ सूल नीद अति होई हो यह फूटणि तनमैं । चढो कवलपै मांस कँप उठै भोगनमैं ॥ रतमैं दूखै उदर कवलमैं कीडा जानो । पडत वीर्य भख जाय एही विध बांझ पिछानौ ॥ फुन व्यक्त निसुन सप्रमेह गद स्वेत धार नितही झरै । लहुसे ज्या वंझा नारितैं बहुता कवि थोरा झरै ॥ ७३ ॥ वंझा मुत्रती रूप फिरै तन संकुच दुरबल भोग करत जल श्रवै त्रिसुखी भोजन रति परवला गर्भश्रावि सो जान जासका गिरै अधूरा । बालक जीवै नांहि मृत्यु वंझा कहै सूरा ॥ फुनि एक होय वा दोयही फिर होय नांहि लख टेकिये । सब काक वंझ वाकूं कहै, वीर्यहीन नर एक ए ॥७४॥

चौपाई–इन सबमें दुषण एकहू नांहि, तौ ग्रह दूसण है नर नाहू । जन्मपत्र सन्मखि मिलाय, ऊंच नीच ग्रह देखो राय ॥ ७५ ॥ रवि ससि भोम बुध गुरु शुक्र, शनि राहु केतु ग्रह वक्र । इनके शांति हेत कर यज्ञ, जिनमतके अनुसार बुधज्ञ ॥ ७६ ॥ श्री जिन सिद्ध सूर गुरु साध, वृष श्रुत ग्रह जिन बिंब अराध । वासुर क्षुद्र उपद्रव करे, शांति करे पूजा विस्तरे ॥ ७७ ॥ ए सब दोष साध्य ही जान, अब असाध्यको करूं बखान । पुष्प सु रहित होय जो नार, अथवा रक्त सेत लिये जार ॥ ७८ ॥ आठ दसैं दिन देय दिखाय, वकी वांझ ए लक्षन थाय । भगसे जल नत झरे कवलनी, ए सबही असाध्य लक्षनी ॥ ७९ ॥ इम सब भेद कह्यौ मंत्रीस, अति आनंद भयौ सु महीस । वनमें केल करन चित चह्यो, रुत वसंत लख नृप उमह्यौ ॥ ८० ॥ बाजे भेर मृदंग निसान, पर पुरजन तिय नृपति दिवान । नटी नटत चाले वन मांहि, सुंदर वेलरु तरुकी छांह ॥ ८१ ॥ कहीं लता मंडप बन रहे, कहीं सघन फूल खिल रहे । कहीं ताल जल कंज सु भरै, नंदनवन सम सोभा धरै ॥ ८२ ॥ मंद सुगंध चलै तहां वाय, सबही केल करै मन चाय । क्रीडा कर जब घरकू फिरे, नपतै मुनि आवत दिठ परे ॥ ८३ ॥ जेह अनंतवीरज है नाम, अवधज्ञान धारी रिध धाम । आय भूमपै तिष्ठे सोय, नृप धुन करै सु हर्षित होय ॥ ८४ ॥ धन्य मुनीस्वर हो संसार, दुद्धर तप धारी अनगार । सहो परीषह धीरज धरौ, आप तिरौ पर कूंछे

तिरो ॥ ८५ ॥ फुनि पंचांग कियो डंडौत, हस्तांबुज गोडन मय होत। भूमि सपरस नमस्तग न्याय ए पंचांग नमन विध थाय ॥ ८६ ॥ धर्म्मवृद्ध दीनी रिष जबै, धर्म्म भेद प्रभु भाखौ अबै। जीवदया सो धर्म्म सरूप, जीव समास कहुं सुन भूप ॥ ८७ ॥

छप्पै–दोय भूमि जल अगनि पवन, नित इत रस धारन। सप्त सप्तलघु गुरु चतुर दस वृत लता मन, तरु लघु गुरु जड पंच जुत निगोद सुपर तिष्ठत। बिन निगोद अप्रतिष्ठ विकल-त्रय विधि भू तिष्ठत, गत जल थल नभ सन्मूर्छ त्रय सैनी असैनी षट सु ठिक। सवपर्य अपर्य अलब्ध कर, तेतीसके सत हीन इक ॥ ८८ ॥ फुन पण इंद्री जलचरादि त्रय फुन गर्भज षट, उत्तम मध्यम जघन भोग भू थल नभचर षट। तीन भोग कुभोग भूमि मर आर्ज अनारज, उणचास पातडे नरक सुर त्रेसठि द्वारज। दस भवनपति व्यंतर वसु पंच जौतिसी सर्व मिल, सत त्रेपन पर्य अपर्ज कर तीन सतक षट भय सकल ॥८९॥

काव्य छंद–भये च्यारसै पंच छठो अलब्ध तेरमा, नारी मग कुच कूख नाम नर मूत मै रमा। फुनि सुरदेमें होय असैनी ए विध जानो, तीनकी दया सु पाल, मुनि ए भांति बखानो ॥ ९० ॥ त्रस संसार असार सारदिछा कवि हे है, नृपके मनकी जान मुनि ए भांतिक है है। होय प्रवज्या पुत्र होय तसु राज देय जब, अन्तराय क्यों भयों तासुको भेद सुनो अब ॥ ९१ ॥ देवानंद एक वैश्य नार श्री कुक्ष सु जाके,

सुता सु नंदा जासु भई ज्ञानी मद ताके। एक दिन अन्य सु नारि गर्भनी देखी तानें, सिथल संकुचित नजर मंद गत खेद सु तानें ॥ ९२ ॥

चौपाई–ए विध देख सुनंदा डरी, फिर निदान बांध्यौ तिह घरी। तरुणपणें ऐसी गत हो, हो उन ही जिन नम हु तोहि ॥ ९३ ॥ धर्मध्यानसे तन तज दिया, उपजी दुरजोधनके धिया। सो यह तुमरी भई पटरनी, आगे और सुनो भू धनी ॥ ९४ ॥ होनहार तीर्थंकर जोय, ऐसो पुत्र तिहारे होय। इम भण सुन नम मग करगोन, तब राजा आयौ निज भोन ॥ ९५ ॥ पूजा दान सु करते भयौ, कंचनमई जिनग्रह निरमयौ। रतनमई चित्राम विसाल, स्वर्ग मध्य और पाताल ॥ ९६ ॥ कही स्वप्न देखे जिनमाय, कही न्हवन विधि सुर गिर जाय। कही सु दिक्षा दान विधान, कही समोसरण मंडान ॥ ९७ ॥ कही जम्बु कहि ढाई द्वीप, कही सु तेरे दीप महीप। कही सु सिद्धक्षेत्र चित्राम, देखत मोहै सुरनर वाम ॥ ९८ ॥ इत्यादिक सोभा सु अपार, जब जिनमंदिर भयो तयार। सुवरण रतनमई बिंब कराय, करी प्रतिष्ठा संघ बुलाय ॥ ९९ ॥ सो मैं कथन कहां लो कहूं, थिरता नाहि बुद्धि किम लहूं। फिर अष्टाह्निक आयो पर्व, भूपालादि हर्ष भयौ सर्व ॥ १०० ॥ तब प्रभुको कर वर अभिषेक, कीनौ नृपने हर्ष विशेष। अष्ट द्रव्यसो पूजा करी, पुन्य भण्डार भर्‍यौ तिहुं घरी ॥१०१॥ इत्यादि अरु व्रत विधान, फिर उद्यापन कियौ

महान। सो अष्टाह्निक कथा मझार, देख लेहु ताको विस्तार ॥१०२॥ इक दिना राणी निस सेझ, गन पंचानन कमला देख। सुपनांतर जागी सो नार, तब ही गर्भ धरयौ सुखकार ॥ १०३ ॥ इन चेहनतैं कर निरधार, आलस जंभा अरुचि विकार। कुच मुख स्यामरु लज्जा धरी, भूषण भार सहै नहीं धरी ॥१०४॥ मन्द वचन मन निरधन दान, तब दासी भेजी नृप थान। गोप वचन सुन हरख्यौ राय, जू रवितैं सु जलज विकसाय ॥ १०५ ॥ बहुजन संग गयो तिय धाम, तब सुपनव फल पूछै वाम। गनतैं पुत्र होय बुधवान, हरतैं होय अधिक बलवान ॥१०६॥ कमलातैं नृप पद अभिषेक, करवावै राजा सु अनेक। इम सुन देवी भई अनन्द, दिन २ गर्भ बढौ जिम चंद ॥१०७॥ सुख सु मास बीत नव गया, इक दिन कछु खेद उपनया। तब शुभ घड़ी जन्म सुत भयो, मानौ पुन्य पुंज उपजयौ ॥ १०८ ॥ काहु जाय कह्यौ दरबार, तब नृप लियो गणिक हंकार। आप जोतसी पूछै राय, कैसो पुत्र भयो सु बताय ॥ १०९ ॥

छप्पै—गणिक विचारी लगनमे खेचर मांहि भयो है, जन्मथान रवि बुद्ध द्विती ससि शून्य क्रिया है। तूर्य गुरु पण केत षष्ट विन सप्त शनि लख, शून्य अष्ट नव दशै भूमि फुनि राह रुद्र अब। भृगु अंत उच्च षट ग्रह सु है, रवि ससि कुज रु वृहस्पंत। फुनि शुक्र ससि मध्य मंत्रिय, मध्यम तिनको उदयंत ॥ ११० ॥

कवित–सूर्य बुद्ध देखै सप्तम घर वीस विस्व हो तेज अपार। चंद्र आठमें घर कूदेखै, तातैं द्रव्य सुहोय विचार ॥ शुक्र छठा घरकू तिहु देखै, जग्य दानमैं धन अति खर्चै। गुरु अष्टम बारम घर देखै हो सुख मात देख हो सुर्चै ॥ १११ ॥ प्रथम पंचमे घरकू देखै मंगलतै सु पितासै तेज। प्रथम तीसरेकू शनि देखै तातै तिय सुख नित हो सेज ॥ सप्त पंच तीजे बारम घर देखै राहु शत्रुतै जीत। केतु प्रथम ग्यारस नवमै षट घर देखै हुय पुत्र विनीत ॥ ११२ ॥

चौपाई–इम विचार जौतिसी करौ, मानौ सुश्रीकंत गुण भरौ। तातै श्री ब्रह्मा धर नाम, घनसम दान दियौ नृप ताम ॥११३॥ घर घर गावै सुदर नांर, घर घर भयौ मंगलाचार। दिन दस राय वधाई करी, नितप्रत जिन पूजा विस्तरी ॥११४॥ दिन दिन बाल बढै जिम चन्द, मात पिता मन होय अनंद। क्रम २ करि सिसु भयौ कुमार, पढ़ लीनी विद्या सब सार ॥ ११५ ॥ तर्क रु छंद कोस व्याकर्ण, हय गय वाहन अरु जल तर्ण। बत्तीस लक्ष बल छित काय, ताकौ भेद सुनो मन लाय ॥ ११६ ॥

काव्य छंद–घट बढ़ होय न अंग जहांके तहां, चिह्न सब प्रथम प्रमाण सु जान रु शुक्रित पुन्य करै सब, रूपवंत कुलवंत सील पालै अति जोधा, सत्य वचन मुख चवै सोचत नमनकू सोधा ॥ ११७ ॥ चित प्रसन्न बुधवान चतुर बहु ग्रन्थ पढ्यो है, परदारा पर त्याग मान जन मांहि बढ्यो है। धर सन्तोष

विवेक मधुर वच मनत सु सज्जन, तुच्छ काम लहवंत सुगुण पूजित सब सज्जन ॥ ११८ ॥ मात भक्ति पित भक्ति भक्ति गुरुजन गुरु आदिक. पर उपगारी दान भोगिनीतैं मन आदिक। सदा धर्ममें लीन नित्य पूजे जिननायक। तुच्छ हार तुच्छ नींद चिह्न बतीस सुखदायक ॥ ११९ ॥

दोहा—पूरन पुन्य विपाकतैं, बतीस लक्षण होय।
　　श्री ब्रह्मा इस कुवरमें, भये इकट्ठे सोय ॥ १२० ॥

चोपाई—नरनारी मनाम्बुजको भान, नृप मंदिर सुत कलस समान। राज धिया संग सिसुको ब्याह, भयो मंगलाचार उछाह ॥ १२१ ॥ रूप शील लावन्य अपार, करैं केल जैसे रतमार। ताके संग सुनाना भांत। जीवन सफल करै दिन रात ॥ १२२ ॥ इक दिन सभा मध्य सु नरिंद, निवसै मानौं स्वर्ग सुरिंद। वाही समै आय बनपाल, षट रुतके फल फूल रिसाल ॥ १२३ ॥ भेट धार विनवै कर जोर, श्रीप्रभ तीर्थंकर पुर ओर। समोसरण जुत आए आप, सो प्रभु तुमरे पुन्य प्रताप ॥ १२४ ॥ सप्त पैंड जिन सनमुख जाय, करी परोक्ष वंदना राय। आनंदभेरि नगरमें दई, सबहीके दरसन रुच भई ॥ १२५ ॥

छंद इन्द्रवज्रा—तुरंग हस्तीरथ आदि साजा, नारी नर संग मिलाय राजा। चलो पताका लख उजसंवारे, भये समोसर्न विषै विधारे ॥ १२६ ॥ जलादि द्रव्याष्ट ले तीर्थ पूजौं,

सिरादि अंगाष्ट सुनत्व हूजो। अनंतदर्शादि चतुष्ट धारी, नमो सु तुभ्यं थुत यौं उचारी ॥ १२७ ॥

नदीराष्टककी चाल—नर कोठें थित कर भूप सुनि जिनवर वानी, तब प्रश्न कर्यो सु अनूप नर सुर हरषानी। प्रभु जीव-तना गुन कोन ताको भेद कहो, मैं पूछत हो कर तौन संसै कुंज दहो ॥ १२८ ॥ प्रभु खिरी दिव्य धुनि सार, भाषा सब देखी सुन सभा हर्ष उर धार तत्वन उपदेसी। यह जीव जिसो गणधार तिसो थानक पावै, सो गुण ठाणो निरधार सुणतैं भ्रम जावैं ॥ १२९ ॥

काव्य छंद—गुण थानक ए नाम प्रथम मिथ्या सासादन, दुजा अव्रत सम्यक्त तुर्य पण देस व्रतागन। षट प्रमत अप्रमत अपूर्व कर्म आठमा, नव अनिवृत सु करण सूक्ष्म संपराय दसमा ॥ १३० ॥ इर उपसांत कषाय क्षीण चक्री संयोगी, फुनि अयोग है अन्त भिन्न भिन्न करो संयोगी। इन गुण ठाणे मांहि लिम बतीस ए धरिये, गत इन्द्री अरु काय जोग फुनि वेद सु भरिये ॥ १३१ ॥

सवैया ३१—पष्टम कषाय ज्ञान संयम दरस लेस्या भव्य द्रग सैनी फुन आहारक मानिये, जीवके समास फिर परजाय प्राण संज्ञा उपयोग ध्यान मिल वीस भेद आनिये। आश्रव रु बंध उदै उदीरणा सत्ता भाव जया जीन कुल–कोडि चाल गुन ठानिये, जीव संख्या आयु मृतु गतादी बतीस भेद ठाणे पै लगाय सब अन्तरमें जानिये ॥ १३२ ॥

चौपई—ए सब जीव विवहार स्वरूप, निहचै आप आतमा रूप। दृष्टि अगोचर शुद्ध विहार, अरु अजीव है पंच प्रकार॥ तामें पुद्गल पहले जान, ताके संग विभाव महान। सो विभाव है आश्रव द्वार, होय एकठा बंध निहार॥ शुद्ध भावतैं ताको रोक, सो संवर जानों मन थोक। तप करि बंध खिरै निर्जरा। मोख शिवालयमें थित करा॥ १३३॥ एही सप्त तत्व है राव, द्रव्य दृष्टसैं ध्रौव्य सुभाव। परजयतैं उतपति अरु नास, जैसैं कंचन मूंदी भास॥ १३४॥ हाप बनाई तोरा करा, एउ तपत वय तन विस्तारा। सत्व जान सरधा सम भाव। सत्व भयो समकित परभाव॥ १३५॥ चौगतिमें सैनीके होय, सो सम्यक जानो विधि दोय। इक निसर्ग अधिगम्य सु एक, होर सु भाव निसर्ग सु टेक॥ १३६॥ देव शास्त्र गुरुको उपदेश, ए अधिगम्य तनो ही भेव। फुनि छह भेद सुनो मति वंत, आदि मिथ्यात अनादि अनंत॥ १३७॥ द्वितीये सासादन दग थाय, समकित वम मिथ्या मग आय। ज्यूं तरु तै फल गिर भू परै, अन्तर सासादन थित धरै॥ १३८॥ याको ऐसो जान प्रसाद, खीर भये च्युत आवै स्वाद। त्रिये मिश्र दग मिथ्या मिलो, ज्यूं घटरस मिठरस मिलि गयो॥ १३९॥ चौथो उपशम सम्यक जान, तीन मिथ्यातरु चव नंतान। सो मिथ्यात कौन विध देव, सो नृप ताको सुनियें भेव॥ १४०॥

अडिल—जो सरदहे औरकी चोर मिथ्यातजू, अग्रैहित इक गृहीत एक विख्यात जू। अग्रहित सब गति परजायमें

होत है, गृहत सुर मानुष गति माहि उद्योत है ॥ १४१ ॥
कुगुरु कुदेव कुधर्म पुंजि अरु मानि जू, एक समय इक समय प्रकृति इम जान जू। नरक पशुगति मांही ए नाही कह्या, समै मिथ्यात इम जान मनुष सबमें लह्या ॥ १४२ ॥

दोहा—समय प्रकृति जिन मत विषैं, यह जानो निरधार।
शांतीक पूजा करो, होवै शांति अपार ॥ १४३ ॥

कवित्त—क्रोध लाख पाहन पाहन थम मान वंस छल विढारु लोः लाभ रंग सम अनंतानु चव तीन मिथ्यात करे जब क्रोध नरकमांहि ले जाय सातए इन उपसम जू अहिको मंत्र अथवा अग्निकू बंध कियो जू खूले दुःख देवे सुअनंत ॥१४४॥

चौपाई—पंचम छयो उपसम सरधान, एक दोय तीन चव थान। छह २ करे रु उपसम और, सो क्षयोपसम सम्यक होर ॥ १४५ ॥

दोहा—जो सातांकू छय करे, सो छायक पहचान।
समकित जुत जो व्रत धरे, सोई व्रत परमान ॥ १४६ ॥

अडिल—हिंस्या झूठरु चौरी नारी परिग्रहै। पांच पापको त्याग सोई व्रतको गृहैं। एक देस जो त्याग सोई है अणुव्रती ॥ जोय सर्वथा त्याग सोई है महाव्रती ॥ १४७ ॥

दोहा—पांच पांच है भावना, इक इक व्रतकी जान।
सो रक्षाके कारणै, नगर कोटवत मान ॥ १४८ ॥

अडिल—वचन रु मन दो गुप्त देखके भू चले। देख उठावै धरे समित ए दो मिले ॥ भोजनादि जो खाय जलादिक लख

धीवै । एही भावना पंच अहिंसा व्रत फवै ॥ १४९ ॥ क्रोध लोभ भय हांसी च्यारु त्यागिए । वचन विचार सु भणै सत्य व्रत पागिए ॥ सूना घर अरु ग्राम तुरत उजड भया । तस धनीकूं काढ़ि तहां मुनि ना गया ॥ १५० ॥ ले अहार निर-दोष महामी जो लिरै । मेर तेर इत्यादि वार नाहीं करै ॥ एही अचौरज व्रतकी है पण भावना । अब सुन ब्रह्मचरजकी जो नित भावना ॥ १५१ ॥ जास कथाके सुनत नारिमें राग हो । प्रीत भावतैं अंग निरख मांही कही ॥ पूरव तिय भोगी सु फेर चितवन्नजी । जारसम खेपु तनमैं कामोत्पन्नजी ॥ १५२ ॥ फिर शरीर सिंगार समार सु अप्रति करै । इन पांचोंकू त्यागि सील दृढ़ता धरै ॥ पांचों इन्द्रीय विषय राग अरु दोष जूं । सोइ परिग्रह जाके त्याग जत पोष जूं ॥ १५३ ॥

दोहा—पालै या विध महाव्रत, दुद्धर तप कर ध्यान ।
सहै परीसह कर्मगण, नास लहै निर्वाण ॥१५४॥

चौपाई—इह विध श्री प्रभ जिनवर कह्यो, सर्व सभा सुन आनंद लह्यौ । नृप श्रीषेण सुपुत्र बुलाय, ताकों राज दियौ समझाय ॥ १५५ ॥ प्रजा पालियौ पुत्र समान, न्याय कीजियौ रीत पिछान । मन्त्री पूछ कीजियौ काज, वृद्धि हूजियौ तेरो राज ॥ १५६ ॥ ए कह आप महाव्रत लियौ, नास अघाती केवल भयौ । बहुत भव्य जन संबोधियौ, फिर सिद्धालय वासौ कियौ ॥ १५७ ॥ श्रीब्रह्मा सरधानी भया, चौथै गुण ठाणै थिर ठया । ए गुण ठाण प्रथम सोपान, मुक्ति सदनको जान

सुजान ॥ १५८ ॥ प्रभु वंदन कर घर आईयो, राजभिषेक सुजन मिल कियो। तब चतुरंगी चमूं मिलाय, विजयकरण चालौ हरषाय ॥ १५९ ॥ पूरब पच्छम दक्षन उत्र, च्यारूं दिसके जीते शत्रु। भेट लेय नृप घरकूं आय, सुखनुं राज करें हरषाय ॥ १६० ॥ या विध सुखमू काल विताय, इक दिन उतम समै सु आय। पून्यम शुक्ल अषाढ़ सुपर्व, करि उपवास जजै वसु दर्व ॥ १६१ ॥

दोहा—श्री जिनकी थुत कर विविध, भई अठाई अन्त।
पुन्य उपाय सुमहल पर, तिष्ठत हर्षित वंत ॥१६२॥
दसो दिशा अविलोकना, उलका पातल खंत।
तब अनित्य संसारकूं, जानत भयौ तुरंत ॥१६३॥

जोगीरासा—तन धन राजपुत्र पर जन त्रय, देखत देखत नासै। यातै अथिर जानिये चेतन, कर अनुभव अभ्यासै। इन्द्रादिक थिर नाहीं जगमैं, सरण कौनकी ठानों। विवहारे परमेष्टि सरण है, निश्चै आतम जानौ ॥ १६४ ॥ अरु संसार मांहि ये प्राणी परकूं आपा हेरैं, ए अचरजकी बात देखिये। पाहन गहि मणि गेरै, आदि अनादि एकला चेतन। तीनलोक तिहुकाला। भिन्न सदा पुद्गलमें वर्ति है, जूं लोहेमें ज्वाला॥१६५॥ सात धात उपधात सात तन असुचि अपावन न्यारा। आश्रवमें वह भेद कहे हैं राग द्वेष मोह भारा ॥ तामैं तेरे ठगनित ठग हैं गृहस्थ पनेमें भाई। जूवा आलस शोक भयकू कथा कुतूहल आई ॥ १६६ ॥ कोप कृपण अज्ञानता भ्रम निद्रा

मद मोही। द्वृत चोर तन मंदिर बैठे, पंच रतन ले सोही॥ धर्म कर्म शुभ सुजस बडाई, अरु धन प्रगट चुरावै आलस ठग उद्यमकूं लूटै, सिथल अंग हो जावै॥ १६७॥ ए विध बाहर बहुर अन्तर धर्म वासना नासै, शोक संताप तीसरा ठग है। यातैं शुभ विधि नासै, रोवै पातिक तेरे दिन तग आठ वर्ष तक मर है। यातैं घाट मरै जो कोई, तास विसेस उचर है॥ १६८॥

दोहा–दस नव आठ रु सात षट, पंच चार अरु तीन।
एक २ दिन बस अति, घटत घटत इम चीन॥१६९॥

जोगीरासा–सूतक दिन दस तकका जानों, शुद्ध समान कुटम्बा। त्रिय साख तक कह्यौ बराबर, दसम न्हवन अविलंबा॥ चौथो भय ठिग सुलकू लूटै, उर कंपै ता आये। सात प्रकार जानिये भाई, धर्मोद्य मन सिजाये॥ १७०॥ पनमू चोर मिथ्या घुन कर है, जपलौं मग्न सुधामें। धर्म ध्यान वासना रंचिक, कबहु न पावै तामें। छठौ काठियो कौतूहल है, विभ्रम सु हरपावै। मृषा वस्तुकू सतकर जानै, सत्यारथ नस जावै॥ १७१॥ सप्तम क्रोध अग्नि सम आतम, आपापरकू दाहै धर्म कर्म दोनों ही नासैं, जगमे निंदा लाहै कृपन शुद्ध अष्टम ठट पारो, प्रगट लोभ ही भासै। लोभमांहि ममता ममतामें, धर्म भावना नासै॥ १७२॥ नवमें ठग अज्ञान उदै तै, हो अपराध अपारा। जो अपराध पाप है सोई, जिन अघ तित शुभ छारा। दसमो भ्रम वासि अशुभ कर्म कर, सो

दुरमति दूर नासै। दूर ठग नींद उदै नहीं चीनै, मन वच तन जड मासै ॥ १७३ ॥ बारम मद बसु विष मुडे़ ०५, ऐ करि हो सो करि है। बिनै रतनको नास होय जब तब कृपनाणि जन सरि है। चरम मोह सुविवेक विनासै, नर पशु धर्म न धारै। इरै रत्नत्रय यातै जगदिश, तेरै तीन निहारै ॥ १७४ ॥ इत्यादिक आश्रव बहु जानो, फुनि संवरकूं भावै। राग दोष रोक समता भदै, कर्माश्रव रुक जावै ॥ पिछले कर्म खिरै सु ध्यान नर, केवलि निजर होई। चौदे राजू ऊंच लोकमैं भिन्न आतमा होई ॥ १७५ ॥

दोहा—ज्ञान आतमा चिह्न है, अगनि चिह्न जू धूम्र।
चेतन विन कहूं ज्ञान ना, तेजी विन नव संदु ॥१७६॥

सवैया ३१—आठ जवका अंगुल अंगुल असंख्य भाग तन ज्ञान अंकके असंख भाग धरै है। छासठि सहस फुनि तीनसै छतीसवार अंतरमहूरतमैं जन्म मृत्यु करै है॥ एक स्वास मांहि ठारै ताके स्वास छतीसपै रखातीरु तीजा अंन तहां दुख भरे है। नंतानंत काल ऐसी निगदवै निकसि कै भू जल अगनि वायु तरु तुछ गुरहै ॥ १७७ ॥ कठन कठन वे ते चौ इंद्री जनम पायो दुल्लभ असैनी तातैं सैनी तन लह्योजी। जल थल नमचर नरक असुर नर मलेछ आरज नीच ऊंच कुल गह्योजी ॥ कठिन कठिन तामें जैन धर्म सैली ज्ञान शुभ दी सु पाय तातैं गुरु ऐसैं कह्योजी। समझि समझि त्यागि भवविषै भोगनिकूं नातो तुम बहुरि निगोद दुख सह्योजी ॥ १७८ ॥

छंद पद्धडी—इत्यादि भावना भूप भाय, तब ही हरषित माली सु आय । धर भेट ज्यौं कर सीस न्याय, आए श्रीप्रभ जिन भूप सहाय ॥ १७९ ॥ तब हर्षयुक्त नृपसयौं प्रचार, प्रभु नुत कर पूजे वसु प्रकार । थित नर कोठे कर सुनो धर्म, तब नयो मोह अरु सकल मर्म ॥ १८० ॥ फुनि श्रीकांति सुतको बुलाय, दियो राजभार ताको सुराय फुनि राजनीत जगरीत होय, समझाई ताको विविध सोय ॥ १८१ ॥

छंद च छप्पै—सिथल मूल दृढ करै फूल चूंटै जल सींचै । ऊरधडार निवाय भूमिगत ऊरध खिचैं ॥ जे मलीन मुरझाय टेकदे तिन्हैं संवारै, कूडा कंटक गलित पत्र बाहर चुन डारै । लघु वृद्धि करै भेदै जुगल वाडि समारै फल भखै, माली समान जो नृप चतुर सो विलसै संपति अखै ॥ १८२ ॥ पुनः प्रात धर्म चितवै सहज हित मंत्र विचारै, चर चलाय चहु वोर देसपुर प्रजा संभारै । रागदोष दोऊ गोप वचन अमृत सम बोलै, धर्म ठौर पहचान कठिन कोमल गुण बोलै । निज जतन करै संचै रतन, न्याय मित्र अरिसम गिनै । रणमैं निसंक ह्वै संचरै, सो नरिंद्र रिपुदल हनै ॥ १८३ ॥

दोहरा—इत्यादिक समझाय सुत, श्रीप्रभकू सिर नाय ।

जग अगाध दधि मैं तरी, दिक्षा द्यौ जिनराय ॥१८४॥

चौपाई—गणधर भणे धन्य हे राय, ये परवज्या शिव सुखदाय । हाथ जोड़ नृप वस्त्र उतार, केश लुंचे चि महा-

व्रत धार ॥ १८५ ॥ तेरह विधि चारित आदरौ, दुद्धर तप कर वपु कृस करौ। सही परीषह भर सन्यास, श्रीप्रभ गिर पर परम हुलास ॥ १८६ ॥ देह त्याग लिय सुर्ग सु धर्म, श्रीधर नाम विमान सुरर्म। श्री प्रभदेव भयौ तिह थान, प्रभा पुंज जुं दामिन मान ॥ १८७ ॥ उठो सेजसैं सब दिस ताक, चकृत चित निमेष दग थाक। है प्रत्यक्ष धो सुपना एह, सुन्दर नरनारी बन गेह ॥ १८८ ॥ तब ही अवधिज्ञान सु जान, तप तरु सुफल फलो यह आन। जाय जिनालय पूजा करी, धन्य जन्म मानो तिहि घरी॥१८९॥ अणिमादिक वसु रिद्ध सु पाय, ताको नाम अर्थ सुन राय। अणीमा सैं तन अणु सम करैं, महिमा तैं तन नग सम धरैं ॥ १९० ॥ लघिमा देह तूल सम राच, गिरिमा भारी उठै न कदाच। प्राप्ति तैं भूपै थित होय, मेर चूलिका फासै सोय ॥ १९१ ॥ प्राकामित तने परभाव, गिरपै चलै जसै नभ मांह। जलपै थलवत थल जल जेम, सुन ईसत्व सक्षमी येम ॥ १९२ ॥ हरि फनेस चक्री सम ठनै, वा त्रिलोकपति आपहि बनै। वसु वसत्व तै सब बस करै, चाहै जो नर सुर पशु सिरै ॥ १९३ ॥ इम सुर पद पायौ सुखरास, दोय पक्षमें ले उस्वांस। दोय सहस बरस गये चाह, भोजन भुंजै मनके मांहि ॥ १९४ ॥ अनुपम अमृतमई झंकार, तासु तृपै देव कवार। दो दष आयु प्रथम सु ओध, तावत करै वैक्रि दव बोध ॥१९५॥ काय भोग नर नार समान, लेश्या पीत भाव

पहचान। पूरब पुन्य उदैतैं एव, भोगै भोग सु श्रीधर देव ॥ १९६॥ सुनि श्रेणिक ए धर्मप्रभाव, कहा स्वर्ग हो शिवको राव। पुत्रार्थी श्रीषेण नरिंद, नृप सेवत लह्यो सुत गुण वृन्द ॥ १९७॥

दोहा—तातैं मन वच काय कर, सेय धर्म जिनराज।
　　गुणभद्राचारज कहै, सुत संपत पद राज ॥ १९८॥
　　लहै स्वर्ग अरु मुक्ति फुनि, या सम नहिं जग और।
　　वीरनंद मुनिराज वच, हीरालाल निहोर ॥ १९९॥

इतिश्री चंद्रप्रभपुराणे प्रथम भव श्रीवर्मराज द्वितीयभव प्रथमस्वर्गे श्रीधरदेव: वर्णनो नाम पञ्चम संधि: संपूर्णम् ॥

षष्ठम संधि।

दोहा—षष्ठ गुणी वप वृद्ध जुत, वंदूं सिद्ध महान।
सुनों भव्य चित लायकर, षष्ठम संधि कथान ॥ १ ॥
गुणभद्राचारज प्रणम, वीरनंदि मुनिराज।
भणि चन्द्रप्रभ काव्यमें, या विधि कथन समाज ॥२॥

चौपाई—गौतम गणधरकूं सिर न्याय, श्रेणिक प्रश्न करे हरषाय। स्वामी सो सुर चय कित होय, ताको भेद सुनावो मोय ॥ ३ ॥ गणधर भाखे सुन भूपाल, दीपधातुकी खण्ड विशाल। विजय मेरु तें दक्षग भरत, छहौ खंड मंडित मन हरत ॥४॥ तामें आरज खंड मंझार, सर्पिणी उत्सर्पिणी अपार। बीते काल कल्प सो नंत, इक सर्पिणी छह भेद धरंत ॥ ५ ॥ चार तीन दो कोड़ाकोड़, सहस बियालीस दिन इक ओर। इकीस इकीस सहस प्रमान, ऐसे छहों काल थित जान ॥६॥ भोग सुभूमि आदि त्रियकाल, उत्तम मध्यम जघन्य विशाल। तीन दोय इक पल्ल सुआय, तावत तुंग कोस है काय ॥ ७ ॥ कल्पवृक्ष दस घर २ विखै, दान तनो फल सब ही चखै। ऐसें भोगभुमि या जान, तीन काल यह रीति पिछान ॥ ८ ॥ चौथो काल आय जब परे, कर्मभूमि सब विधि विस्तरे। तब ही पुरुष सलाका होय, धर्म कर्म विधि जाने सोय ॥ ९ ॥ अरु मुनि श्रावक वृष विस्तरे, इम आरज खण्ड रचना धरे। तामधि कौसल देस ललाम, मानो भूमि

तिलक अभिराम ॥ १० ॥ ताकी उपमाको कवि कहै, वन उपवन कर सोभा लहै। तहां जंतु बहु केल करंत, आम्र मंजरी जुत सोभंत ॥ ११ ॥ किरत सुकिरत विहग मुख धरे, तित गज गण मद झरना झरै। फैली सकल अरण मकरंद, आवे मधुर वृंद आनंद ॥१२॥ बैठ कपोल करै झंकार, तिन सुन शब्द उठै किलकार। मुक्ताफल तिन मस्तकमाहि, ऐसे गजन जूथ विचरांहि ॥ १३ ॥ केसावलि जुक्त कटि छीन, लावी पूछ सीस धर लीन। ऐसे केहर धुन सुन करी, भजै पवनवैं जु घन टरी ॥१४॥ वेल जाल विष्टत कहुं भूम, मानो कंचुकी धारे झूम। जल निवाण कहुं विस्तरो, मानो नाव काम जल भरो ॥१५॥ नदी वहै मनु सुन्दर हार, पर्वत कुच इव सोभा धार। भाल तिलक सूरज सुन्दरी, भू तिय सुर नर पसु मन हरी ॥ १६ ॥ इत्यादिक सोभा जुत देस, तामे नगर अजुध्या वेस। स्वर्ग सुलोक हर्ष कर मनो, करी सुभेट भूमिपुर ठनो ॥ १७ ॥ परषासाल द्वार कंगूरे, सजल तुंग सुंदर मद जरे। जिनमंदिर जनमंदर भरी। नरनारी मानौ सुर सुरी ॥१८॥

सार्दूलविकिडित छंद—है राजा अजितंजय अरिजय मक्रेश-कांत। विद्यावान निधान धीर अजरं॥ इत्यादि सोभा लिपु मंत्री फौज भंडार दुर्ग सबलं। चातुर्य सोभा सही ताग मागुण धाम वाम सकल मुख्यंगु रागमाल ही ॥ १९ ॥

चौपाई—नाम अजितसेना अति लसैं, रतिसम रूप सची नखि खिसैं। भोग भोगवैं मनके चाय, हसि हसि पियसे बात

कराय ॥ २० ॥ फुनि कछु बात सुनौ विख्यात, सुतकी चाह धरै दिन रात। स्वाति बूंद ज्यूं चात्रग चहै, तब निज पतिसे ऐसे कहै ॥ २१ ॥ मो पापिनी संग तैं पिया, पुत्र बिना तुमकू दुख हुया। तब नरेस तांसू इम कहै, पुन्य उदै बिन कैसे लहै ॥ २२ ॥ कैसो पुन्य कोन विधि होय, अरु ताको फल कैसा होय। पूजा दान करै अधिकार, व्रत नाना विधि पालै नारि ॥ २३ ॥ इत्यादिक है पुन्य अपार, विषै कषाय करै परिहार। दया क्षमारु धरै वैराग, या विध पुन्य करै अनुराग ॥ २४ ॥ धन अरु धान्य पुत्र संपदा, स्वर्ग रिद्ध फुनि पद इर तदा। इत्यादिक सुपुन्य फल जान, सुन राणी सुहर्ष उर आन ॥ २५ ॥ धर्म विषै मन वच तन लाय, पूजा करै जिनालय जाय। दान देय मन वांछित सदा, शक्ति समान गहे व्रत तदा ॥ २६ ॥ षट ऋत संबंधी जे भोग राजा राणी पुन्य संजोग, भोगै कामदेव रति यदा। मन वंछित सुख भोगै सदा ॥ २१ ॥

मालिनी छंद—इक दिन निसि मांही दंपत मध्य सिज्या, मगन युगम भोग रात्र बहु तीव्र लिज्या। चिर रतिश्रम खेदं सुप्त निसांति मांही, लखत सुपन मन्न हर्ष राणी लहांही ॥२८॥

चाल छंद—सो श्रीधर देव चया है, इन गर्भमैं आय रहा है। उदयाचलपै रवि आया, तब ही अंधियार नसाया ॥२९॥ भयो प्रात मान सुन रानी, उठि सामायिक विध ठानी। फिर न्हवन विलेपन कीनो, झीने अंबर पहरीनो ॥ ३० ॥ आभूषण

सब ही साजे, जु ससि समीप रिपु राजे। इम कर सिंगार दरबारे, गई सखीय संग ततकारे॥ ३१॥ लखि आदर भूपति कीनों, अर्धासन बैठन दीनों। कर जोड़ नई मस्ताको, फिर पूछे फल सुपनाको॥ ३२॥

श्लोक–करिंद्र वृषभं सिंहं, चंद्र सूर्य च संखयं। कुंभोदिकं मया दृष्ट्वा, कथितांत शुभाशुभं॥ ३३॥

लावनी छंद–गज देखतैं होय पुत्र जु, वृष जिन दर्शनतैं। गौ सुतके देखें तैं गुण, निधि बलि हर दर्शनतैं। ससितैं सोम तेजस्वी रवितैं सुपनावली जैसा कहै, भूप सुंदरी सुनौं इन सुपनन फल ऐसा॥ ३४॥ संख लखन ते चक्री, पद फुनि संख चक्र तनमैं। इत्यादिक शुभ लक्षन होवै, लखत हर्ष मनमैं। जल पूरन घट देखनतैं, द्रव निध नायक ऐसा। कहै भूप सुंदरी सुनौं इन सुपनन फल ऐसा॥ ३५॥ गर्भ वृद्ध जुं शुक्लपक्ष दधि निसदिन सुखमैजी, वीत भए सुमास नव ऐसे सुभ दिन पडिमैंजी॥ जन्म भयो सुत दान दियो नृप घन वप जैसा। कहै भूप सुंदरी सुनो इन सुपनन फल ऐसा॥ ३६॥ दस दिन राय बधाई कीनी को उपमा देरी। घर घर मंगल चार बधाई गावै तिय टेरी॥ हरषे सब सज्जन घन धुन सुन श्रीखंडी जैसा। कहै भूप सुंदरी सुनो इन सुपनन फल ऐसा॥ ३७॥

दोहा–फिर नृप गणि बुलाइयो, लगन सोधि भाषंत।
अजितसेन भणि नाम फुनि, सब ग्रह उच्च लसंत॥ ३८॥
द्वितीया ससि सम तन कला, बढत बाल दिन रैन।
ओं आदि विद्या सकल, पढी सजन सुख दैन॥ ३९॥

चौपाई—एक दिना नृप सभा मंझार, बैठो मानों सक्र निहार। मंत्री आदि सकल उमराव, बैठे मानों निरन्तर राव ॥ ४० ॥ ऐते नरनायक सुत आय, मानों मारि तनुज सुख-दाय। देखत विनय करै सब जना, हर्ष अमंद आनंदित घना ॥ ४१ ॥ ता छिन सोभा कौन कहाय, इंद्र सभा मानों बैठी आय। तब इक चंद्ररुची सुर कोय, आय सभा लखि चकित होय ॥ ४२ ॥ पूरव वैर प्रसंग सुपाय, मोहित करी सभा जुत राय। निद्रामैं घूमैं अरु गिरे, सुध बुध कछु नाहीं दीठ परे ॥ ४३ ॥ तब सुरने ऐसे लिख लियो, भूप तनुजकूं हर ले गयो। पिछैं सकल सुचेत लहांहि। देखे राजा नंदन नांहि ॥ ४४ ॥ मूर्छा खाय धरनपर पर्यो, मानों चेतन ही नीसर्यो। तब कीनों सीतल उपचार, भयो चेत नृप करै पुकार। हा हा कुंवर गयो तू काय, तो बिन मोकूं कछु न सुहाय। सिर छाती कूटै अकुलाय, सुनत सभा सब रुदन कराय ॥४६॥ तबही खबर भई रणवास, सुण राणी तब भई उदास। परी भूमिपै मृतक समान, चंदन छिरके रु पवन सुठान ॥४७॥ जब सुध आय सु रोवन लगी, अंबरफाड सोकमैं पगी। उदरकूट तन नखन विदार, जित तित रुधिर चमक दुति धार ॥४८॥ कंचन तन जुं मानक जरैं, अश्रुवन करि गंगा विस्तरै, करि पुकार सुत को ले गयो। मोहीकूं सुमारि किन गयो ॥ ४९ ॥ हा निरदई दया छिटकाय, ढूंढी खडग चलाई आय। नाजी ईन कई जमधाम, ऐसे रुदन करै नृप वाम ॥ ५० ॥

छप्पै–वा पूरब भव मांहि कीर लालो रुलाल गज्र। मृग पति मृग हय वृषभ मेख कुर्कट कूकर मज्र॥ पारेवा मयूर हंस मंजार भगेरा, नाग व्याघ्र कपि नवलरीछगे ढान रहेरा। इम एक दोय वामबनके वाल विछोवा मैं कियो॥ सो पाप बंध उदय आय अब मो पुत्र विछोवा इम भयो॥ ५१॥

चौपाई–यूं तिय नृपति करे अफसोस, निज २ कर्मनकूं दे दोस। नृप समझायो बहु परधान, होणहार याही विधि जान॥ ५२॥ याते सोक करो मति राय, देखो नभ मैं मुनवर आय। चारण रिध धारी है सही, नाम तपो भूषण गुण मही॥ ५३॥

दोहा–वाही क्षण उतरे जती, राजा भक्ति भराय।
औढी वस्त्र उतारिके, भूपर दियो बिछाय॥ ५४॥
आय साध तिष्ठे जहां, तब नरिंद्र कर जोर।
सीस नांय गुरु चरण ढिग, थुत कीनी सुखदोर॥ ५५॥

काव्य–धन्य २ मुनिराज दर्स देखत सुख होहे। पटभूषण बिन सरल चित्त जूं बालक सोहै॥ बन ही नगर समान कंदरा महल अनूपम। विकट कठिन भू सेज कंटक कर सु फूल सम॥ ५६॥ समता सखी समान सुबुध नारी अति सुंदर। नाना अर्थ विचार करे जिम भोग पुरंदर॥ दीपक ससिकी किरण मित्र सारंगसु जानो। तपमई असन करत नीर है निर्मल ज्ञानो॥ ५७॥ अंबर चारित शुक्क मूलगुण भूषण सोहै। उत्तरगुण सिंगार सहित सुरनर मन मोहै॥ धेन कवच सजी अंग ध्यान

आयुध सु समारैं। तीन काल रणभूमि मांहि विधि अरि संघारे ॥ ५८ ॥

दोहा–इत्यादिक अस्तुत विविध, इंद्र करै चिर कार।

तो उन तुम गुण पार लहि, हम पावैं किम पार ॥ ५९ ॥

पद्धडी–तब धर्मवृद्ध मुनवर सुदीन। कर जारि भूप पूछन सुकीन ॥ प्रभु धर्मतनो करिये बखान। गुरु कहै सुनो नृप बुधवान ॥ ६० ॥

ढाल दोहामें–दान सील तप भावना पूजा आदि विधान। धर्मतने बहु भेद हैं, करहे जे बुधवान ॥ दर्श करो जिनबिंबको ॥ ६१ ॥ चिंतवन प्रोषध सहस फल लख प्रोपध चालंत। कोटि जिनालयमें गए, कोडाकोडि अनंत ॥ ६२ ॥ दर्श करो० ॥ साधु वंदनाको कह्यो, पोषध सहस प्रमाण। तातैं सहसगुणो सुफल, गणधरको सुत ठाण ॥ ६३ ॥ दर्श करो० ॥ तातैं सहस गुणो सुफल, केवल दर्शन ज्ञान। तातैं सहस गुणो सुफल तीर्थंकर भगवान ॥ दर्श करो० ॥ ६४ ॥ तातैं सहस गुणो सुफल वंदन सिद्ध अनंत। तातैं सहस गुणो सुफल नमि जिन बिंब करंत ॥ दर्श करो० ॥ ६५ ॥ वंदक सुरनर सुख लहै, क्रम क्रम शिव पुर जाय। निंदक दुःख पसु नर्क लहै, बहुरि निगोदै जाय० दर्श० ॥ ६६ ॥ मनवच काया ते करे, प्रोषध एक जु कोय। नरक पशु गति छांडिकै, सोपावै सुर लोय ॥ दर्शकरो० ॥ ६७ ॥ पुनः त्रसजु व इन्द्री आद ही, परै असनमें आय। सूक्षम दिठ नाहीं परै, भखत उदरमें जाय। निशि भोजन बुध

त्यागिये ॥ ६८ ॥ खादम अन्यादिक विविध, फुनि लौंगादिक स्वाद । लेय सु चटनी चाटनी पेजल दूध सु आदि, निसि भोजन बुध त्यागिये ॥ ६९ ॥ दोय घड़ी दिनके चढ़े, दोय घड़ी दिन अंत, तावत भोजन कीजिये । पीछे सुबुद्धि तजंत ॥ निसि० ॥ ७० ॥ अधिक अंधेरे जु दिन विखै, घन आंधी संजोग, अथवा गृह अंदर विखै । भोजन नांही जोग, निसि भोजन बुध त्यागिये ॥ ७१ ॥ बाल भखे सुर भंग हो, माखी वमन कराय । जूंतें रोग जलंदरो, मकड़ी कुष्ट उपाय ॥ निसि० ॥ ७२ ॥ ए दुख नैना देखिये, याही भव मांहि । पर भव नर्क निगोद है, नाना दुख लहाय ॥ निशि० ॥ ७३ ॥ पुनः जल छाणो ही पीजिये, बिन छानों नहीं लेय । तामैं जीव जिनंदने, भाखे सो सुन लेय ॥ श्रावक जल इम आचरों ॥ ७४ ॥ एक बूंदमैं जीव जे, धरैं कबूतर जोन । जंबूदीप नमावही, अधकी भाखे कौन ॥ श्रावक जल इम आचरो ॥ ७५ ॥ कोट औषध इकठी करै, ताकी अरक निकार । तामैं तृण भरि लीजिये, सबकी अंस निहार ॥ श्रावक० ॥ ७६ ॥ इम थावर जलबूंदमें, फुनि त्रिस जीव अपार । सूछम दिठ नाही परै, केई दिष्ट निहार ॥ श्रावक० ॥ ७७ ॥ छतीस अंगुल लंब पट, चौडो चोवीस जान । दिढ दोहेसे कर छानिये, जतनसुं हे बुधवान ॥ श्रावक० ॥ ७८ ॥

दोहा—श्रावककी त्रेपन क्रिया, मुख्य तीन ए जान ।
केतेक दिनमें पुत्र नृप, मिलसी हे बुधवान ॥ ७९ ॥

इम कहि मुनि नभ मग चले, नृपतिय धर संतोष।
आगे श्रेणिक भूप सुन, कहुं कथन कछु जोष ॥ ८० ॥

चौपाई—निर्जर राजकंवर ले गयो, महा भयंकर वनमें गयो।
तहां सरोवर एक निहार, तामैं बालक दीनों डार ॥ ८१ ॥
नीट नीट निज पुन्य बसाय, निकसि बाल वन देखि डराय।
बेल जाल कहीं वृक्ष उतंग, सिक्काथल कहुं भू भूत चंग ॥८२॥

पद्धड़ीछंद—कहुं जल निवाण कहु अस्त पुंज। कहुं २ त्रण पल्लव पत्र पुज ॥ कहुं मुक्ताफल विखरे अपार। सो रक्तयुक्त नैनन निहार ॥ ८३ ॥ मानो नभमैं मंगल विमान। कहुं सुष्क वृक्षपे काक आन ॥ दुर शब्द करे तमचर अनेक। मग भगे फिरें गजहर अनेक ॥ ८४ ॥ मार्तंड लखत जूं तम पलात। तौं मृग छौनाकी कौन बात ॥ भय भरे सुनी धुनि सार दूर। इत्यादि जीव तहां भरे क्रूर ॥ ८५ ॥ इम देख सुवन झरझर चलंत। तब इक डूंगर सुंदर लखंत ॥ जब वा देखन चढने लगोय। तब एक पुरुष आयो सु कोप ॥ ८६ ॥ इय काल वरण विकराल रूप। नख कच कठोर मानो जम सरूप ॥ द्रग लाल कीये भयरोकिलीन। अरु कहैं बालसें अरे दीन ॥८७॥ तू कौन कहाकू जाय मूढ। सुर खचर पशू जे सबल मूढ ॥ ते नगपे जाय सकै सुनांहि। तौ तू कैसे समरथ लहाहि ॥८८॥ अरु जो तू बल धारै अपार। तौ मोसै जुद्ध सु कर अबार ॥ इम कठिन वचन सुन राजपुत्र। तब बहुरि तासकू देय उत्र॥८९॥ कहावकै सुदुप लख स्वान जेम। मो आगै तू कीटक सु तेम॥

मम भुजा पराक्रम लख अवार। तातैं पहलै तू कर प्रहार॥९०॥

कवित्त—अजितसेनके वचनतै, लसे लगत क्रोध दव उठो अनंत भीच अधर दसनन सब तब ही। मुष्टि प्रबल अति दृढ बांधत इम वनचारीने दई कुंवरकै भयौ सब्द चपलाजू परी। अजितसेन तब युद्ध करो अति टर्यो नांहि जैसे भूधरी॥९१॥

चौपाई—मानौं जमके बालक दोय, भिरे परस्पर डरै न कोय। भुजबल सेती राजकुमार, कियौ युद्ध चिरकाल अपार॥९२॥ खेद खिन्न वाकूं बहु कियौ, जीत्यौ कुंवर दुष्ट हारियौ। तब उन पुरस रूप तज दिया, दिव्यरूप निज सुर कर लिया॥ ९३ ॥ नमस्कार कीयौ पग लाग, फुनि थुत कीनी हे बडभाग। धन्न धीर धीरज है तोहि, धन्न सुबल तै जीत्यो मोहि॥ ९४ ॥ धन्न सु मात तात धन वंस, निजकुल कवल सरोवर हंस। मैं संतुष्ट भयौ सु अवार, यातैं कछु वर मांग कंवार॥ ९५ ॥ देवे जोग कहारे क्रूर, पुन्यवानकै सर्व हजूर। अरु मुझकूं कुछ इच्छा नांहि, तबही निर्जर हर्ष लहाहि॥९६॥ फिर सुर कहै सुनौ भूपाल, मैं निज कथन कहुं तुम नाल। हम तुम पूरवभव सम्बंध, पुष्कराद्ध वर दीप अमंध॥ ९७ ॥

दोहा—ताके पूरव मेरुतै, पछम सार विदेह।
सीतोदा उत्तर विषै, देस सुगंध कहेय॥ ९८ ॥
तुम थे श्रीपुरके विषै, श्री ब्रह्मा भूपाल।
रवि ससि दोय ग्रहस्त हम, रवि धन ससि जु निकाल॥९९॥

झपटत आए तुम निकट, न्याव कियौ बुधवान।
सूरज धन दिलवाइयौ, दुखद भयौ ससि जान ॥१००॥

चौपाई—फिर अकाम निर्जरा पाय, मरे भये दोनौं सुर राय। ससिचर चंद्ररुचि सुर भयौ, तुम चुराय केसो स्याइयो ॥ १०१ ॥ रविचरमैं सु कनकप्रभ भयौ, नृपचर अजितसेन तू भयौ। जब तुम याद करौ भूपाल, तबही मैं आऊं दर हाल ॥ १०२ ॥ इम कहि देव अदसि हो गया, तब ही नृप चकतिचित भया। ए प्रतक्ष अथवा सुपना, अजितसेन इम संसै ठना ॥ १०३ ॥ पाछै जाती सुमरण भया, तब संदेह सकल मिट गया। सब वृतांत पिछले भव यथा, लखो आरसीमैं मुख तथा ॥ १०४ ॥ फिर सुचेत ह्वै आगै गयौ, बहुत पुरष भागत लख लियौ। तब इक जन टेरौ नृप बाल, तासौं पूछौ सकल हवाल ॥ १०५ ॥ अहो भ्रात क्यूं भागै लोग, कहो सकल ताकौ संजोग। तब उन कह्या सुजानत नही, कहा गगनतै आयौ सही ॥ १०६ ॥ तेरौ वचन सत्य परमान, मैं नभतैं आयौ उठ जान। तब जन कहै सुनौ भूपाल, एही अरिंजय देस विसाल ॥ १०७ ॥ जनकुल वार भरो जल थान। धन धान्यादिक बल अधिकान। फैली कीर्ति सुगंध अपार, सुरगण भृङ्ग रमै असरार ॥ १०८ ॥ देसन मध्य भान सम दिपै, अन्य देस उडगण छवि छिपै। निज आकर जीते सब देस, सत्य अरंजय नाम सुवेस ॥ १०९ ॥ तामैं नगर अनेक सु वसैं, सुन्दरता सब ही दुत लसै। तिन मध्य एक विपुल पुर जान,

श्री दिगम्बर जैन वीस पंथी पुस्तकालय
ग्रन्थालय प्रतापगढ़ (राज.)
पुस्तक संख्या (१०१) विषय

सोनागिर जीते सुभ थान॥ ११० ॥ तित जय ब्रह्मा नृप दुति-वंत, भुजबल करि अरिगण जीतंत। कोस देससे नागढ भूर, तेजोयुत जूं उगत सूर॥ १११॥ श्री जिनदेव नमैं तिहुं काल, सेवै गुरु भव्य गुणमाल। राजा सम परजा अनुसरै, सब ही जैन धरम आचरै॥ ११२॥ ता तिय जयश्री तन दुतिहेम, पुत्री चन्द्रप्रभा रति जेम। नृप महेंद्र तेजस्वी सोय, दई नही सुढि आयो वोय॥ ११३॥ देख उजाड़ रुधेरी पुरी, यातै सब परजा दुखभरी। भागे लोग जाय यू देव, राजकुंवर सुण जाणो भेव॥ ११४॥

दोहा—हार तार वाकू दियौ, भयौ अनंदित सोय।
हार लेय घरकूं चलौ, और सुनो मुद होय॥ ११५॥

छप्पै—साधरमीकूं कष्ट जानि तब साहस कीनो। चलौ बाल जू सिंह अरीगण गज भयभीनो, चमू मध्य नृपसदन गगनके॥ मैं जित जाकर सुन महेंद्र रे दुष्ट वचन मेरे सुख आकर। अब छांड सुहठ निज गच्छ घर॥ नाहक जमसुख क्यौं परै। इम सुन महेंद्र कोप्यौ अधिक अरे दुष्ट किम उच्चरै॥ ११६॥

पद्धडी—तब भयै युद्ध इकलोक वार, अरु नृप महेंद्र सेना अपार। जूं हरकूं घेरै मृग अनेक, सो हर न सकै तम रवि सुलेख॥ ११७॥

छप्पै—केई चरणसे खूंद केई गोठनसे मारे। बहु चोटसे मार कोई हाथनसे मारें॥ केई कहोनीन गिराय केई खड्ग

बंत्रमें परे। केई पवनसूं इने केई पग पकरिसु चीरे॥ इम देख पराक्रम कवंरको, केई चित्रवत हो रहे। केई भागे भागे फिरत इम, अभ्र पटल पवन जु लहे॥ ११८॥ नृप महेन्द्र जब आय तासतै जुद्ध कियौ अति कटुक वचन आलाप शस्त्र छाडे घन-जलवत। कियौ जुद्ध चिरकाल भयौ निरबल महेन्द्र नृप, गयौ भाग तत्काल ऊलू द्रग जूं रवि लख छिप॥ तब जीत भई नृप पुत्रकी हुओ आनंद अपार ही। फिर जय ब्रह्मा नृपके कने किनही जा सब एक ही॥ ११९॥

चौपाई–सुनकर चलौ हितू अति जान, जाय कियौ आदर सन्मान। मिले परस्पर आनंद बढ़्यो, शुक्लपक्ष ज्यूं दधि उमड्यौ॥ १२०॥

छप्पै–साधरमी वय अधिक जान यौ अजितसेन तसु। नृप उपगारी मान अंक भर लियौ भनत जसु॥ कर उछव ले गयौ नगरमैं राय ततक्षन भयौ हाप पुर मांहि सकल नर नारी इम भन। धन धन्य कवंर ए जात है अंग अनंग समान छबि, नृप अरि भगायो छिनकमैं लघुवयमें गुण धरत सब॥ १२१॥

चौपाई–इम सो राजभवनमें गयौ, आनंदसे तहां रहतो भयौ। राजकाज सब सौंप्यौ ताहि, राजा हरख्यौ अंग न मांही॥ १२२॥ अजितसेन नृप सदन रहंत, निस दिन सुख मांही बीतंत। इकदिन जय ब्रह्मा भूपाल, सुखमें सोवत निस तिय नाल॥ १२३॥ नृप तनुजाकी सखी जु आय, भूपतिकूं इम गिरा सुनाय। जा दिनसैं अरि जीतनहार, कुंवरी देखो

नैन निहार ॥ १२४ ॥ तबतैं खान पान सिंगार, छांडि दियौ तन काम विचार । मलियागिर लागै अगनि समान, कर कपोल धरि सोच महान ॥ १२५ ॥ उष्न स्वांस लंबे अति लेय, सून्य रूप मनु मूरत एह । वचन भणै नहीं संज्ञा करै, मदन धनंजय हैं नित जरै ॥ १२६ ॥ अवर कहां भास्य भूपाल, तुम सब जानतहो गुणमाल । तब नृप तनुजा मनकी जान, प्रात समामैं जा बुधवान ॥ १२७ ॥ कियौ मंत्र मंत्रीसैं राय, तब ही निमती लियौ बुलाय । सुभ दिन लगन महूरत जोग, कर विवाह तनुजा संजोग ॥ १२८ ॥ मंगल चार वधाई करी, जिनपूजा विध सब विस्तरी । अजितसेन संग ससिप्रभा । भोगै भोग पुन्यफल लभा ॥ १२९ ॥ विपत पडे तै संपत होय, ए जानौ सु पुन्य फल सोय । आगैं और सुनो व्याख्यान, जो कछु पूरव श्रुतमैं जान ॥ १३० ॥ भरत मध्य रूपाचल जहां. आदितपुर दक्षिन तट तहां ॥ राज धारणी केत करंत, खगगणसे दिनकर सोभंत ॥ १३१ ॥ सो है श्रेणिको चक्रीस, तसु आज्ञा धारै खग सीस । इकदिन ताकी सभा मंझार, आयौ क्षुल्लक प्रियवृष सार ॥ १३२ ॥ ताहि देख नृप आदर कियौ, उठि स्तुति करि सिर न्याइयौ । इम क्षुल्लक सुन हर्षित भयौ, वचनालाप नृपतिसै ठयौ ॥ १३३ ॥ सो राजाको भाई जान, भ्रात मोहि वसि आयौ मानि । धर्म कर्म संबंध कथान, कीयौ बहुत क्षुल्लक सुखखान ॥१३४॥ तेरे भले देत है राय, आयौ मैं सुनियै चित लाय । कर्म मोहनी प्रेरयौ आय, मोहकर्म जीवन दुखदाय ॥ १३५ ॥

छंद रोडक–देस अरिंजय नगर विपुलपुर नृप जयवरमा। जयश्री नारि प्रभा ससि पुत्री तसु गुण धरमा॥ जो उस वरै चोहि मारेगो फुनि है चक्री। क्षुल्लक धारणी धुन सुन मन भयो चक्री॥ १३६॥ खेदखिन्न अति भयो सु पूछै क्षुल्लक सेती। हे दयाल कहिये उपाय अब मम हित हेती॥ मुनिन यूं उचरा पुन्य तुमरेको प्रेरयौ। आय कह्यौ मैं सोय भूप सुन चिंता हेरी॥ १३७॥

छंद कामनी मोहनी–धर्म्म पिरथैसु क्षुल्लक भयो गगन मग। मंत्रिसे मंत्र कीयौ तबै नृपति खग॥ दूत उदताच्छ जयब्रह्मपै भेजियौ। तुरत सो जाय जयब्रह्म नृपको नयौ॥ १३८॥ दूत कर जोरिकैं वचन कह भूप सुनि। एही विजियार्द्धकी श्रेणि दक्षन सुमुनि॥ तत्र आदित्यपुर धारणी धुज्ज नृपं। तिन्है मोहि भेजियौ तुम कनै हे नृपं॥ १३९॥ चंद्रपरभा सुता दई जाने बिना। जाति कुल वंस पुर देस तसु क्या ठना॥ सो हमें दीजिये नाहि रणकू करो। तबहि जयब्रह्म कह ढील क्यों विस्तरो॥ १४०॥

दोहा–दूत जाय निज नाथसूं, भाख्यौ सकल हवाल।
सुन राजा अति क्रोध कर, टेरी सचित्र सुहाल॥१४१॥

छप्पै–खेचरेस कियौ मंत्र सचिवसे रणकूं तबही। मंत्री कियौ प्रणाम दई रणभेरी जबही॥ धुन सुन सूर अपार गये अपने अपने मंदिर। न्हाय जनै जिनराज हर्ष धरै दिल अन्दर॥ सो भोजन कर अंबर पहर, फुन भूसनादि फूलमाल। अरु गंध

विलेपन तन कियौ, भोग करै तिय नाल ॥१४२॥ केई रावत तिय बोधि केई रोवानी पतिकूं। ऐतै जीत सु आय रात बारौ तुम सतकूं॥ जीत शत्रु तन घाव सहित आए देखूं जब। करू पूजा जिनदेव फूल ले कनकमई तब॥ जो सुनूं मृत्यु ना पीठ दे, तौ निहचे दीक्षा धरूं। इम जोधा तियके वचन सुन, भणै सु ऐसी क्यूं करूं ॥१४३॥ कर इम वचनालाप विदा ह्वै निज निज घातें। चले सूर सजि भूर लिये तरकस भरि सातैं॥ कर कमान असि कुन्त गदा तोमरु दंड लिये। गये सकल दरबार देखि नृप मुदत हुयौ हिय। केई हयगय रथरु विमान केई बहु सजि सजि चले अपार, इम मानौं नमदध उमड्यौ सब सोभा जुत सार॥ १४४॥ आयुध झलझलाट रवितैं जुलहर पवनतैं, धुजा किंकनी जुत विमान रथ भरे खगनतैं। मानौं चले जिहाजग्राहसे कुंजर सोहै, नक्र चक्र सम तुरी मीनसे किंकर मोहै। घे भवण सुसेवावर्त है, राजत धुन है ही सना। अरु रथ विमान झणकार बहु घन गरजनसी गरजना ॥१४५॥

दोहा—इम सेना खगकी चली, फुनि जय वर माहाल।
सुण श्रेणिक चित लायकै ताकौ सकल हवाल ॥१४६॥
दूत गये पीछे नृपति, रण वाजित्र बजाय।
धुनि सुनि आए सूरगणि हरषे अंग नमाय ॥ १४७ ॥

चौपाई—अति कोलाहल पुरमैं भयो, सुनिकैं कंवर सभामें गयौ। प्रथम भूपकूं कियो जुहार, जैसो कछु राजन विवहार ॥१४८॥ पूछे कंवर सुकारण कहा, रणको साज बनायो महा।

नृपनै भाष्यौ दूत हवाल, तुम ताकी करियौ प्रतिपाल ॥१४९॥
हम जुधकूं आवें ले सैन, तब ही कंवर भणै वच ऐन। मो होतैं
तुमकू नहीं जोग, तुम तो सदन करो सुख भोग ॥ १५० ॥
मैं ही जाय जुद्ध अति करूं, सकल पराक्रम ताको हरूं।
अति हट राजा ताकी जान, सेना संग दई फरमान ॥१५१॥

कवित्त–जगंमभू भूतसे करेंद्रमण चंचल अस्व पवन सम
चाल। सुर विमानसे रथ किंकनी जुत धुजादंड लूंबे फूलमाल।
चरकर माहि धरे बहु आयुध खेट धनुष फर्सी अरिकाल॥
नेजा तुपक कशचि फुनि पहरे तिनको संघट है अमराल ॥१५२॥

कामनी मोहनी छंद–कवर जुद्धको चलो सैन ले संग ही,
जाय नृप धारणी धुज्ञ सु कियो जंग ही। अस्वतैं अस्व गज
गज व रथ रथनसे, भृत भृत लरत कर शस्त्र जिनके लसे ॥१५३॥
भूचर घमसान कर खग भगाये सवै, भगत लखसैन निज
धारणी धुज्ञ तबै। उठ्यो कर क्रोध मनमोद धर जुद्धकूं, सबै
भूचर भगाये सुधर बुद्धकूं ॥१५४॥ सैन निज भागती देषिके
कनर जब, चढो सुसाहस कर धीर दियो सबन जब। धारणी
धुजके सनमुख भयो ततछिना, देख खग भूपरसे क्रोध करि
इम भना ॥ १५५ ॥

काव्य–हम विद्याधर सुर समान सुर हमरे सेवग, विचरै
गजन मंझार सेवक रहै भूचर खग। विद्या बल भोगवै भोगमन
वंछित सारे, तुझकूं दुल्लभ क्रूर क्यों न निज सक्ति संभारे॥१५६॥
दोनों श्रेणी भूप जीते वैताडतने, सब जीते इक छिन मांहि सीस

न्यावै मोकूं सब। मम भुज बल उद्योत जोत दीपक सम सोहै, तू पतंगवत परै प्रान अपने क्यों खोवै ॥ १५७ ॥ तब कुवार उचार अरे क्या कां कूंकरहै, तू खग काग समान राशि संग्या सुखचर है। हिनाहनाय मृत समै अरे मूरख त्यों गरजै, भूचर भूप महान तहां ए पदवी धरजै ॥ १५८ ॥ तीर्थंकर चक्रीस हर प्रतिहर बल हो है, भूमि गोचरी मांहि इत्यादिक पदवी सो है। कटुक वचन इत्यादि भास फुनि सस्त्र चलायो, हस्त चरण सिरगिरे केई केई घात सुखायो ॥ १५९ ॥ सूंडि पूंछ पग कान गिरे गज तथा अश्व मुख मांस, कीचरन भई रक्त सरिता सम दे दुख। हयगय भृत केई फसे केई बह गये सु तामें, कायर लख भयभीत होय जोधा सुख पामै ॥ १६० ॥ सर वर्षे जलधार वाज सम असि चमकाई, वाजत धुन घनघोर घटा मानो जुर आई। दुप गरजै तुरि हिन हिनाट रथ गण झणकारै, जोधा अरि ललकार कान सुनि येन पुकारै ॥१६१॥ वघर दिशा दश भई जुद्ध कीनो चिर पलचल, अजितसैनने लूनै सीस धारणि धुज कोमल। पर्यो धरणि पर आय तब सेना जु पलाई, जब भूचर दई अभै घोष नित्र फेरि दुहाई ॥ १६२ ॥ जय वस्मा निजपुर सिंगार परवेस कंवरको, करवायो पुरमांहि भयो आनंद सबनको, नरनारी जस भनै भाट बृद्ध बलि भाषै, नारि वरी अरि जीत पुन्य महिमाको आषै ॥ १६३ ॥

चौपाई—इम चिरकाल रह्यो तिह थान, भोगै भोग पुन्य

फूल जान। इक दिन मातपिता कर याद, निजपुर चलन चहो अह्लाद ॥ १६४ ॥ जाय सुपरम्भू विनती करी, आग्या देय जाय निजपुरी। कहै भूप यह वचन न भणै, विरह लाय दह हिरदे घणौ ॥ १६५ ॥ तब अति आग्रह करी कँवार, कहै भूप तुमको अखत्यार। हम कैसें आज्ञा दे लाल, करो सोय जो सुख हो हाल ॥ १६६ ॥ सुभ दिन चलन महूरत काढ्यौ, पुत्रीसे रावणी उचरौ। सास ससुरकी आज्ञा बहु, और सुगुरुजन पग गहि रहु ॥ १६७ ॥ पतिकी छाया वति चालियो, भूल न उत्तर दे दिजियो। राजा सो वो दियो अपार, अस्व दिये नाना परकार ॥ १६८ ॥ पाखरका रचो वमप तूल, गजगण अंबारी जुत झूल। कंचनके रथ रतननजरे, नाना रंग धुजा फरहरे ॥ १६९ ॥ सुम २ पति गज अस्वन जुरे, झरन २ इम दुंदभि घुरे। बहुरि सुखासन अरु चंडोल, शिवका दई सुंदर बहु मोल ॥ १७० ॥ चवर छत्र सिंहासन नूर, रत्नजड़ित आभूपण भूर। जरिवाफाके वस्त्र अपार, दियो संग दल बहु परकार ॥ १७१ ॥ चालत मिलत नैन जल भरौ, मानो कछु दोस जो करौ। दग जल मिसकरि निकसौ बार, चलौ कंवर तब ह्वै असवार ॥ १७२ ॥ केतेक दूर कवर पहुंचाय, फिर राजा निज घरकूं आय। कंवर कूच मुकाम करेय, केतेक दिनमें पहुंचौ गेह ॥ १७३ ॥ जननी जनक मिल्यौ हरपाय, जू बसंत रुत कामी पाय। चात्रग जथा स्वात जल लहै, पुरजननं किसान मुद गहै॥१७४॥ पुत्र सहित सु अजित भूप,

करै राज आनंद सरूप। त्रिविध त्रिभुवनत भोगै भोग, पुन्योदित सब पायो जोग ॥ १७५ ॥ कलमल रहित न्याय विस्तरै, सबकूं धर्म देशना करे। इकदिन सभा मध्य भूपार, फलोलोभ जाय वतिभा भार ॥ १७६ ॥ ततछिन आय सुवन पति कूल, धारे भेट राय अनुकूल। सीस न्याय कर जोर सु भने, आए स्वयम्प्रभ पुर कनैं ॥ १७७ ॥

दोहा—समोसरण लक्ष्मी सहित, तीर्थंकर भगवान।
सुन राजा हर्षित भयो, नगर घोषना ठान ॥ १७८ ॥

ढाल सीमंधर स्वामीकी—पुरजन परजन सहित नृप जगसार हो करी वंदना जाय मुनि आर्जा फुनि वंदिकैं जगसार हो। नरकोठे थिर थाय ॥छंद॥ थिर थाय धरम बखान सुनियौ सप्त तत्वादिक सबै कर जोर सीस निवाय प्रभुसौं प्रश्न कियौ नृप तबै॥ अजि साध श्रावक भेद कहिये दिव्य धुनि प्रभुकी खिरी। सो सुनत संसय सबे भागी बहुरि गणधर विस्तरी ॥ १७९ ॥ बाईस अभख गृहीत जो जगसार हो। वोला श्रव घन मांहि घोल बड़ा पालर किया जगसार हो ॥ राईलुन चलाय। सोच-लाय पानीमैं उठायौ करौ पीठी पेसनी सो बड़ा पकौड़ी आद दी फुनि रात्र भोजन वर्जनी। फुनि भिन्न नाही बीज गुदा सु बहुबीजा जानियै फुनि ताहुतैं अति नष्ट वैंगन यूं जुदा सु बखानियै ॥ १८० ॥ मखन तज संधानको जगसार हो। अष्ट-पहर उपरंत, लोजी आम्रसु आदही जगसार हो ॥ तामैं त्रस उपजंत। उपजंत जंत अचार मांही व मुरब्बा भिष्टसौं। पण

उदंबर फल न भखिये, देख त्रस तहां दृष्टसौं। अनजान फल नहीं खाइये, अरु कंद मूलादिक तजौ॥ मृतक विषफल त्यागिये सो जीव वधकर उपजौ॥ १८१॥ विष्टा माखी वमनही जग-सार हो, अंडादिक संयुक्त छत्ता तोडि निचौडिये जगसार हो। ऐसौ महत निरुक्त। निरुक्तदश लखि पडै त्रस तहां जीव जम मंदिर लहै॥ मधु त्याग इम फुनि त्याग माखनसो प्रमित जिन गुर कहै। फुनि छाल गुड औटाय खैवै क्रम पडै मदता जबै सो छिये मुचिता जाय तजिये, अरख आदिक मद सबै॥१८२॥ साधारण बहुकाय है जगसार हो। फल अति तुछ सुजान, तुसार सुहिम रुत जल जमैं जगसार हो तज है सो बुधवान, बुधवान त्यागै चलत रस जो स्वाद अपना पलट है॥ अमख बाईस जानिये ए, जे भव सुलट है फुनि साक पुष्प सु त्यागिये। अरु रडा फल पेठादि जो, फुन चरम फास तही तजौ जल आदि अरु पक्वान जो॥ १८३॥ चरम होइ जा जीवको जगसार हो। उपजै ताही जात जीव चरम घृत फर-सतै जगसार हो॥ सूछम दृष्टि न अन्तर दिखै न प्राणी प्राण तनधर जन्म पावै ततछिना जिम नार जोनरु कुच विषै जिय सोई मानुष कुल गिना, तिहु ताय जात सुजान जीव सु त्याग चर्म स्पर्शको। असन च्यार प्रकार जिस रजि मनै, श्री जिन जननकौं॥ १८४॥ वंस नालमैं तिल भरे जगसार हो। लाल कियो गज लोय दियो नालमैं तिल जलै जगसार हो॥ एक बचै नही कोय, नहीं बचै जैसे एक तिलमी त्यौंहि रत करनासो

नवलाख भगमैं जीव है सब मरे एकै बारसौं। इम जानियै तिय संग त्यागै धन्य ते संसारमैं तथा पर्व दुगात्र त्यागै ते विवेक विचारमैं ॥ १८५ ॥ स्वदाराका पाप ए जगसार हो न्याय रीत इस मांहि अघ अनंत पर तिय रमैं जगपार हो। सो अन्यायके मांहि, अन्यायसेती जगत भंडै ॥ दंड देवै नृप घना स्याम मुख कर खर चढावै फुनि धिकारै सब जना। सिर नाक छेदि सुदेसतैं कर बांध फुनि देखै धनी ॥ दुठ वचन भाखै हाथ बांधै मार खिरमैं पगतनी ॥ १८६ ॥ ए दुख इस भौमैं लहै जगसार हो परभौ नरक मझार लोहपूतली लाल करै जग-सार हो लावैं अंग मंझार। लावैं सु तनमैं बचन भाखै दुष्ट नरभवके विषै परनार सेई एक अथवा घनाति रूप किन चखै ॥ तातैं सु श्रावक जोग किरिया करौ जैनी सब जना। परम दुद्धर है मुनीकी नगन मुद्रा सोभना ॥ १८७ ॥

सोरठा—सुनि अजितंजय भूप मन वैराग्य बढायकै। निक-सन भवांध कूप तवै सार दिक्षा धरी। १८८ ॥

चौपाई—है उदास बनवासा लियौ, तजि मंदिर कंदिर चित दियौ। दुद्धर तप बारै विधि कियौ, तजि उपसम छायक सम लियौ ॥ १८९ ॥ राग दोष मद मोह निवार, इछा विन सोहं उचार। अंतमहुरत सुकलसु ध्यान, तावत पायौ केवलज्ञान ॥ १९० ॥ चतुरन काय अमर तक आय, गंधकुटी रचि पूजे पाय। प्रभु धुन खिरी मधुर घनघोर, सुन हरषित नाचै भव मोर ॥ १९१ ॥ बहुरि केवली कियौ विहार। बहुत भव्य-

जनकौं उद्धार। फुनि इक समै मांहि निर्वान, पायौ लोक अंत सुख थान ॥ १९२ ॥ अब सुन अजितसेन का कियौ, सरधा-जुत श्रावक व्रत लियौ। प्रभु नुत कर निज घरकूं गयौ, राज पाय सुख करतौ भयौ ॥ १९३ ॥ पुन्ययोग आयुध ग्रह जहां, उपजौ चक्र रतन वर तहां। सहस भार किरनावलि लिये, सहस रश्मि छवि छीनसु किये ॥ १९४ ॥ किंकर आय बधावा दियौ, शस्त्र सुथान चक्रमणि जयौ। सुनकर वस्त्राभरण उतार, दिये भृत्यकूं हर्ष अपार ॥ १९५ ॥ जाय चक्रकी पूजा करी, चलौ जीतने छह खंड अरी। हय गय रथ चर सुर खग जेय, ये खडांग सेना संग लेय ॥ १९६ ॥ आरजखंड भूप सब जये, भेट देय चक्रीकौं नये। कन्या मणि हय गय इत्यादि, फुनि म्लेछखंड पांचौं साधि ॥ १९७ ॥ ठारै सहस भूप मद छोर, पायन परे दोय कर जोर। पुत्री आदिक नजर करेहि, आग्या मानि रहे निज गेह ॥ १९८ ॥ मागधादि सु असुर बहु जीत खचरादिक वश किये पुनीत। छहों खंड वरती नृप देत्र, दानव देव करैं सब सेव ॥ १९९ ॥ इम दिग विजय करी चक्रेस, फिर निज नगर कियौ परवेस। बढ़ी संपदा पुन्य प्रभाव, भोग भोगवैं जूं सुर राव ॥ २०० ॥ ता विभूत अब वरनन सुनौं, जैसैं कछुक ग्रंथमैं भनौं। सहस बत्तीस सासते देस, धन कन कंचन भरे असेस ॥ २०१ ॥

छप्पै—कटक वाडि सहित ग्राम छाणवे कोड सब, पुरी बहत्तर सहस कोटि प्रति पौल च्यारि फब। लसैं पंचसत ग्राम

मिश्र अटंब सहस तुरि, नग सरिता मद खेट सहस षोडस प्रमानकर ॥ चौवीस सहस कर वट सकल गिर वेढे जानों प्रबल, फुनि दुने पट्टन मन सकल रतन जहां उपजे अतुल ॥ २०२ ॥

सवैया ३१—दश तट द्रौण मुख सहस निन्यावे रु संवाहन सूदरपै चवदे हजार है। तातें दुगने दुर्ग रिपु मनको न परवेस उपदधिमध दीप छप्पन हजार है ॥ रत्नाकरि छत्तीस हजार सार वस्तु खान कुछ सप्त सत मणिधरा औ अगार है। जैन धाम धर्मीजन भरे सो सुवस वसै मारु थलि सम वन ठाईस हजार है ॥ २०३ ॥

चौपाई—हय गय रथचर नृप अरुनार, भरथ समान सबै निरधार। नृप मलेछ आरज खग सुता, बत्तीस सहस निज गुण जुता ॥ २०४ ॥ नख सिख सुभग सुंदराकार, रूप जलध वेला उन हार। सहस बत्तीस नृत्य कालनी, हाव भाव विभ्रम रस सनी ॥ २०५ ॥ लय जुत मुलक मुलक नृत करै, अमरी सम चक्री चित हरै। अरु गण बद्ध जातके देव, सोलै सहस करैं नित सेव ॥ २०६ ॥ तीन कोडि गोकुल परवान, लाख कोडि हल सहित किसान। खिती साल नाना प्राकार, पौलि भर्वती भद्र निहार ॥ २०७ ॥ वैजयंत रहनेको धाम, डेरा निंद्यावर्त ललाम। दिगसुस्तक सुसभा ग्रहनाम, पुष्कर वर्त चांदनी धाम ॥ २०८ ॥ कूट सुधारा गार अगार, ग्रीषम रितमै सुख दातार। पावस रितु ग्रह कूटक भौन, वर्द्धमान सब रितु सुख भोन ॥ २०९ ॥ सौ चौरासी षणों उतंग, मेरु

शुभ व्रत सोभा चंग। दिस देखन गृह कूटक गेह, जीमूतक मंजन घर नेह ॥ २१० ॥ देव रम्य सुवर प्रको धाम, वसुधारा कोठार सुनाम। सर्व वस्तुको आकर धाम, सुकुवेर कांत भंडार सु नाम ॥ २११ ॥ अवतंसक नामा मणिमाल, सुविध नाम आपा सु विसाल। देव छंद नामा सुभ हार, एक सहस वसु लड विस्तार ॥ २१२ ॥ एक कोडि भाजन दुतिसेत, दाल भात रांधनके हेत। एक कोड़ कंचनके थार, त्रयेसत साठि रसोइदार ॥ २१३ ॥ एक सहस चावलको ग्रास, चक्री भोजन करै हुलास। एक ग्रास चक्रीको जोय, नारि सुभद्रा तृप्ते सोय ॥ २१४ ॥ एक ग्रासमैं त्रप्ते बने, अति गरिष्ट भोजन रस सने। नृप कितेक ग्रास भखि जाय, ऐसो बल चक्री मैं आय ॥ २१५ ॥ छहौ खंड भूपति बल रास, तिनसै अधिक देह बल जास। आदि सरीर आदि संस्थान, तिनको भेद सुनौ बुधवान ॥ २१६ ॥

सवैया ३१—वज्र कीले हाड़ चाम वज्र वृषभ नाराचि आदि संधनन तन दूजो वज्र नाराच। चाम वज्र विना जास फुन तीजो नाराच रु चामकीले वज्र विना चौथो अर्द्ध नाराच ॥ अर्द्ध वज्र कीली जामैं और सब सामानताकी लोकमैं कीली हड़ और सु अनाराच। हाड हाड सौं मिलाय नसा चामतैं लपेट सोई सफाटिक तन संघनन साराच ॥ २१७ ॥

दोहा—सहंनन नाम है हाडको, गत गुणठाणे काल।
कौन कौन संहननमैं, ताको सुनौ हवाल ॥ २१८ ॥

वकंच छप्पै—छहो तीसरे जाय पच चौथे पंचमलग।

च्यारि संघनन छठे एक सातवें नरक मग ॥ छहों आठवें स्वर्ग पंचवारमसुर जावै, च्यारि सोलवैं स्वर्ग तीन नव ग्रीवक पावै। फुन संघनन उतरे एक पंच पंचोत्तरे, इक चरम शरीरी शिव लहै सन्मति घुन इम विस्तरै ॥ २१९ ॥ पुनः प्रथम दुतीय तृतीक कालमैं पहला जानौ, चौथे षट संघनन पंचमैं तीन प्रवानौ। करम भूमि तिय तीन एक छट्ठेके मांहि, विकुल चतुकमें एक एक इन्द्रीकै नांही ॥ षट कहे सात गुण ठाण लौं तीन ग्यारे लौं लहो, इक छपक श्रेणि गुण तेरवें। श्रेणक इम विधि सरदहो ॥ २२० ॥

चौपई—जैसो जहां चाहिये अंग, तैसौ तहां होय सरवंग। अंगोपांग ललित सब होय, समय चतुर संस्थान सु जोय ॥ २२१ ॥ ऊरध थूल अधोगति छीन, सुनिग्रोध पर मंडल चीन। हेठ थूल ऊपर कृष होय, सात्विक नाम कहावै सोय ॥ २२२ ॥ कूबड सहित नक्रतन जास, कुब्जक नाम कहावै तास। लघु शरीर वामन संस्थान, विकल अंग हुंडक परवान ॥ २२३ ॥ इम छह रमैं पहलौ जोय, अजितसेन चक्री लह्यौ सोय। जूकन मुकट पंच मणि जरो, लक्षन व्यंजन कर यूं भर्यौ ॥२२४॥ नवनिधि नाम रु गुण आकार, सुणि श्रेणिक तिनको विस्तार। प्रथम काल निधि पुस्तक देय, फुनि असि मसि सामग्री जेय ॥ २२५ ॥ ए सब महा काल निधि देय, फुनि नय सर्प्प यूं भाजन गेय। पांडुक चौथी असन सु देत, पदम पंचमी वस्त्र निकेत ॥ २२६ ॥ मानव देव [illegible] बहु भांति,

पिंगलदे भूपन विख्यात। दे बाजित्र अष्टमी संख, सर्व रतन मणि देय असंख ॥२२७॥ ए नवनिधि सब सटकाकार, लखी नव बारह विस्तार। वसु जोजन औंडी चौकौर जुत वसु चक्र बसै नभ ठौर॥ २२८॥ एक एकके रक्षक देव, सहस२ माखे जिन देव। अब सुन चौदै रतन नरेश, नाम सु गुण उतपति कह देस॥ २२९॥

अडिल–षट खण्ड साधन हेत सुदर्शन चक्र है, सो नंदक असि चण्ड वेग दंड वक्र है। चरम वज्रमय उतपत्ति आयुध सालमैं, रवि प्रभ क्षत सुदोय मलेचन आलमैं ॥२३०॥ चरम बिछाय रु छत्र उपर विस्तार है, नव बारै जोजन मध सेना धार है। बरपै पाहन खंड अगनि जल धारजू, कछु उपद्रव सेनामें न निहारजू॥ २३१॥ षट चूडामणि रत्न कांकनी सम जूं, करै गुफामें शशि रवि सम दो दीप्तजूं। ए तीनों उपजे श्रीदेवी ग्रेहमें, जीव रहित ए सात रत्न लख नेहमें ॥२३२॥ फुनि अजोध सेनापति जयकर है सदा, बुध सागर प्रोहित प्रवीन बुध सर्वदा। थपित भद्र मुख नाम सिलावट् चतुर है, काम वृष्टि ग्रहपति ग्रह कारज अति रहै॥ २३३॥ चक्रीपुर उतपति इनि च्यारनकी कही, नाम विजयगिर गज पवनंजय तुरंग ही॥ हयपै चढि सैनिक दंड करमैं धरै। खोलै कंदर द्वार अगनि तहां नीसरै॥ २३४॥ ऊलटे पग हय हटे सु जोजन द्वादश। मास षटमें होय अगम्यु सांतिसं॥ मणिकरचूर सुभद्रा तिय साथिया करै। वर आवै कर विजय आरती पति

करै ॥ २३५ ॥ रत्नदीप घर थाल सुहर्षित अंगमैं। या मम नहि जग और नार गण संगमैं ॥ इन तीनोंकी उतपति खग-गिरपै कही। जीव सहित ए सात मनुष्य चोदे सही ॥२३६॥

चौपाई–सहस सहस सेवे सुर यक्ष, अब कछु अवर सुनौ नृप लक्ष। सिंहवाहनी सेज मनोगि, सिंहारूढ चक्रतै जोग ॥ २३७ ॥

गीताछंद–विष्टर अनुत्तर नाम रतनन जड्यो सुंदर सोहनो। गंगा तरंग समान नूपम चवरनामि ममोहनों ॥ फुनि दोय कुंडल मणिनिके हैं वज्र सम अति दुति मगे। वर कवच जान अभेद नाम सुजान रिपुको ना लगै ॥ २३८ ॥ अरु पादुका विषमोचनी जग विष हनै पदपद विषै। अजितंजय रथ सुभग जलपै चले जैसे थल विखै। अरु वज्रकांड सु धनुषवान अमोघ नामा अति लख्यौ, फुनि वज्र तुंडा विकट शक्ति कुंत सिंहाटक कख्यौ ॥ २३९ ॥ लोह वाहनी छुरी संज्ञा मनोवेग सु कवणहै, फुनि भूत मुख है ढाल संज्ञा एहु आयुध सरण है वर ढोल वज्र सुघोष बारे भरि आनंद नतिति, सरवण भी रावत दूने बारे जोजन धुनगत ॥ २४० ॥

दोहा–वृषभादिक चेहन धरैं, नाना वर्ण सुजान।
सम अठतालीस कोड मित, संख्या केत प्रमान ॥२४१॥
रतन रु निधि रानी नगर, सिज्या आसन फोज।
भांड भुक्त वाहन सुदस, चक्री भोगै सोज ॥२४२॥

भोगादिक संपति विविध, जो उत्तम भूलोक।
चक्री बिना न और घर, यूं जानो ध्रुव थोक ॥२४३॥

चक्री नृपकी संपदा, कहै कहांलो कोय।
ज्यूं ज्यूं मत विस्तारिये, त्यूं त्यूं अधिकी होय ॥२४४॥

गौतमस्वामी कहत है, सुण श्रेणक भूपाल।
पुन्य वेलि पूरब बोई, फली सघांनी डाल ॥२४५॥

इह विभूति सब भूतसी, गिनै धन्य नर सोय।
गुणभद्राचारज भणी, 'हीरा' हर्षित होई ॥२४६॥

इतिश्री चंद्रप्रभचरित्रे अजितसेन तृतीयभव चक्रपद्मदणवर्णनोनाम
षष्टम संधिः समाप्तिम् ॥ ६ ॥

सप्तम संधि।

दोहा—महासेन सु तन मन कर, गुरु गुणभद्र मनाय।

गौतम स्वामी यूं कहै, सुण श्रेणिक मन लाय ॥ १ ॥

चौपाई—अब सो अजितसेन चक्रेस, सिंघासन थित जू अमरेस। सभा लोक सब देव समान, तब नृप करै धर्म्म व्याख्यान ॥२॥ प्रथम सुभेद मुनी सुर धर्म्म, दूजौ श्रावकको गुण पर्म। ताकौ भेद सुनौ अब लोय, मन वच काय बखानू सोय ॥ ३ ॥ चक्की चूल्हा उखली तोय, सूनी दर्प उपार्जन सोय। ये षटकर्म करत अघ ठना, सब ही करै गृहस्थीजना ॥४॥ ताके पाप सांतके हेत, सुगुरु भणै षटकर्म सुचेत। प्रथम जिनेन्द्र जग्य विस्तरै, विविध द्रव्य सुंदर अनुसरै ॥ ५ ॥ मन वच तन उज्जल कर करै, मनवांछित फल सो अनुसरै। सचित भणै संसय उर आन, बिंब अचेतन भाव परवान ॥ ६ ॥ पूजकको फल कैसे करै, तब नरेंद्र ऐसे उच्चरै। नख सिख ललित नार कौ रूप, चित्रमई देखै बुध भूप ॥ ७ ॥ तेहुं राग ठने वस थाय, ताकौ फल नरकादि कषाय। तोसु अजाननकी चो बात, त्यौं जिनबिंब लखत विख्यात ॥ ८ ॥ उपजै भाव परम वैराग्य, ताकौ फल सुरगादिक लाग। श्री जिनप्रतिमा फटक समान, जीवन भाव डाकिवत जान ॥ ९ ॥ जैसी डाक फटिक संजोग, तैसो रंग लखै सब लोग। फुनि दर्पणवत जिन छवि अहै, सरल वक्र देखै सुख लहै ॥ १० ॥ पूजक भव भवमें

सुख लहै, क्रम २ करत मोक्षपद गहै। निंदक भव भवमें दुख पाय, नर्क निगोदादिक भटकाय ॥ ११ ॥ फुनि गुरु सेवा करनी जोग, विविध भांति शी पुन्य नियोग। फुनि जिन ग्रंथ पढ़ै अरु सुनै, जासै वृष उपगै अत्र हनै ॥ १२ ॥ संयम नाव आखडी अहै, जम अरु नेमरूप संग्रहै। तप बारह विधि सकती समान, करै दान च्यारयौं बुधवान ॥ १३ ॥ औषध शास्त्र अभै जु अहार, तजै कुदान सु दस परकार। भ्रमादिक मिथ्या मत कहै, जासै दुख नरकादिक लहै ॥ १४ ॥ ए षट कर्म धरो बुध सर्व, सप्त क्षेत्रमैं खरचो दर्व। ताकौ भेद सुनौ मनलाय, जिन मंदिर अति तुंग कराय ॥ १५ ॥

नर्क स्वर्ग दीपोदधि चित्र, तथा भोगभु रचै विचित्र। कंचन कलस उर्द्ध जगमगै, तामैं द्रव्य असंख जु लगै ॥ १६ ॥ स्वर्ण रतनके चिंब भराय, द्रव्य लगावै मन वच काय। करै प्रतिष्ठा संग समेत, तामैं धन खरचै बुध चेत ॥ १७ ॥ ग्रंथ लिखाय जिनालय देय, तथा श्रमणकी भेट करेय। दान देय पात्रहि पहचान, ताकौ भेद सुनौ मतिमान ॥ १८ ॥ नव जु सुपात्र कुपात्र त्रिजान, तीन अपात्र पंच दस मान। उत्तम मुन मध्यम ग्रह व्रती, अरु कनिष्ट द्रग जुत अव्रती ॥ १९ ॥ उत्तम मैं उत्तम जिनराज, मध्यम गणधरादि आचार्य। जघन्य समान्य मुनी सिष्यादि, अब सुण मध्यम त्रिविध अनादि ॥ २० ॥ श्रावक प्रतिमा ग्यारे भेद, क्षुल्लक अईलक आदि निवेद सात आठ नव मधमैं मध्य, मदमैं लघु षट श्रावक लभ्य ॥ २१ ॥

लघुमैं उत्तम क्षायिकवंत, बहुरि छयोपसम मध सोमंत। जघन जघनमैं उपसमवत, ए तीनों सम्यक धारंत ॥ २२ ॥ द्रव्य लिंगी कुपात्र मुनिराय, तिनके सिष्य मोक्षकूं जाय। सहैं परिषह मन वच देह, कनिका चलिवत डिगै न तेह ॥ २३ ॥ मध्यम श्रावक प्रतिमावंत, जघन द्रव्य सम्यक धारंत। इनकै समकित नाही गिना, अरु अपात्र दृग् चारित विना ॥ २४ ॥ ते अनेक विध नाना भेष, जूं वरषा रुत हरित विशेष। इन सब दान तनौ फल एह, कह्यो जिनागम सो सुनि लेह ॥२५॥

कवित–उत्तम पात्र दान फल जानो, उत्तम भोग भूमि सुखदाय। मध्यम पात्र दान फल जानो, मध्यम भोग भूमि सुख पाय ॥ जघन पात्र दान फल हो है, जघन भोग भूमि सुख लाय। और कुपात्र दान फलकै, सुख क्षेत्र कुभोग भूमि सो अगाध ॥ २६ ॥

चौपाई–अरु अपात्र दान फल इमा, पाहन भूमि बोइयो जिसा दिया। तथा नदी तट लेय बहाय, यथा अग्निमैं दियो जराय ॥२७॥ दान तनो सुद्रव्य खो दियो, तथा सुफल ह्व गति निगोदियो। तामैं द्रव्य लगै सु अपार, तबको पूछै संसै धार ॥ २८॥ कणइइ आदि ग्रास बत्तीस, यासै बाढ न लेय मुनीस। बहु धन कैसैं किम इत लगै, याहि भेद सुन संसैं भगै ॥२९॥ प्रथम सुमुनि पडगाहै जबै, भोजन गृह आवै गुरु तबै। अष्ट प्रकारी पूजा करै, माणिक मुक्ताफल थाल सुभरै ॥ ३० ॥ कर निछावर मुन पद कनैं, भोजन करवावै विध सनैं। फिरवै रतन

सुदान करेय, दुखित भुखित आदिक जनदेय ॥ ३१ ॥ षष्टम तीर्थंकर केवली, आचारज फुनि मुनि मंडली। तथा पंच-कल्यानक भूम, सिद्धक्षेत्र आदिक करिधूम ॥३२॥ संघ चलावे बंधन काज, सो संगीका है बुधराज। तामैं वित्त लगावे घना, सप्तम पंचकल्याणक मना ॥ ३३ ॥ तासु क्षेत्रमैं जिन मंद्रादि, तथा प्रतिष्ठा कर अहलाद। सिद्धक्षेत्रमैं बीत्यौं करै, नर सुर भोग मोक्ष अनुसरै ॥ ३४ ॥ इत्यादिकमैं द्रव्य लगाय, ताकौ फल होहै अधिकाय। बीज बोय वट तरु जो फरै, ऐसैं आचारज उचरै ॥ ३५ ॥

फुनि इकीस गुण धारे जोय, उत्तम श्रावक जाणो सोय। प्रथम सुलज्या उरमैं धरी, करुणा सुजल हिये सर भरी ॥३६॥ सदा प्रसन्न वदन सौं रहैं, तूर्य प्रतीत सभी जन गहैं। पंचम करै सुपर उपगार, गोप करै पर दोष निहार ॥ ३७ ॥ सोम मूर्ति देखे ह्वय प्रीत, अष्टम गुण ग्राही शुभ नीत। मान रहित मार्दव गुण धरै, सब जनते सुमित्रता करै ॥ ३८ ॥ न्याय पक्ष गह तज अन्याय, मधुर वचन सबकौ सुखदाय। तेरम करै सुदीर्घ विचार, बहुरि कुवादी खंडनहार ॥ ३९ ॥ सज्जन सुभाव सुगुण पंद्रमो, पूजादिक जुत धर्म्मारमो। भली बुद्ध धारै सत्रमो, जोगा जोग आन ठारमौं ॥ ४० ॥

दीनोद्धत विन मध्य सुभाव, सहज विनै धारै गुण राव। शुभ शुभ क्रिया गहै बुधवंत, इकईस गुण गृही धरंत ॥ ४१ ॥ सतरै नेम चितारैं रोज, धारत भजै पापकी फौज। असनादिक

भोजन मरजाद, मिष्टादिक रस पान जलादि ॥४२॥ चंदनादि लेपन ले द्रव्य, सूंघनादि पुष्प जे सर्व। नागवेल गीतनृत्यादि, फुनि अब्रह्म करे मरजादि ॥ ४३ ॥ हवन अभूषन वस्त्र अनेक, वाहन सिज्या आसन टेक। सचित वस्तकी संख्या करे, संख्या नेम सतरमो धरे ॥ ४४ ॥ एती वस्तु आज रप लई, अरु सब बाकी त्याग सु दई। ऐसे चक्री दियौ उपदेश, सभा भणै धन धन्य नरेश ॥ ४५ ॥

एतेमें वन पालक आय, हाथ जोडि कर सीस निवाय। भेट धार भाषै अरणेस, आए स्वयंप्रभ तीर्थेस ॥ ४६ । सुन नृप आनंदभेरि दिवाय, सबकै भयौ सुदर्शन चाव। परजन पुरजन संग मिलाय, वंदन हेत चल्यौ हरषाय ॥ ४७ ॥ जाय प्रभुकी पूजा करी, अष्ट प्रकारसे थुति उचरी। फुनि गणेश मुनि वंदे पाय, फिर गणनीको सीस नमाय ॥ ४८ ॥ तब नर कोठे मैं थित करी, जब प्रभुकी दिव्य धुनि खिरी। सप्त तत्त्व गर्भित जीवादि। फुनि उतपादव्यय ध्रुव सादि ॥ ४९ ॥ नाम थापना द्रव्य रु भाव, इत्यादि अरु जीव प्रभाव। जीव आतमा-तीन प्रकार, वहरातम अंत्रातम धार ॥ ५० ॥

अरु परमातमको सुन भेद, वहरातमा लहै जगखेद। तन संबंध तनी जो जोन, ता आपा मानै सुध गोन ॥ ५१ ॥ तीजे ठाने तक है दौर, ताकौं तजै सुबुध सिरमौर। सिद्ध समान शुद्ध अभी लोक, आपै मांहि आपकू जोक ॥ ५२ ॥ ताहीकी सरधा दृढ़ धरै, ताको ग्रहन सु मन वच करै। चतुर

आदि बारम गुण ठान, सोई अंतर आतम जान ॥ ५३ ॥ परमातमको ध्यान धरंत, नाम अघाती हो अरहंत। केवल आदि सिद्ध परजंत, सोई नंत चतुष्टयवंत ॥ ५४ ॥ ए विधि परमातमा सरूप, बहरातम सुविभाव विरूप। सो संसार मांहि भ्रमो फिरै, पंच परावर्तन सो करै ॥ ५५ ॥ ताको भेद कहूं चकेश, त्रिविध भांति सो कहूं विशेष। पूरव ग्रंथ तणे अनुसार, याको कथन जान निरधार ॥ ५६ ॥

कवित–राग दोष भावकर आतम गह पुद्गल परमाणू एक। ताहि छोडि नंत भव भटके फिर वाहीको गहै सुटेक ॥ एक एक परमाणुको योवार अनंतनंत गह त्याग। सो गिणतीमें नाही आवै लगत लगत गह लेखे लाग ॥ ५७ ॥

दोहा–जीव राशितैं जानियै, पुद्गल प्रमाणु अनंत।
द्रव्य प्रवर्त्तन नाम इस, पुद्गल जीमापंत ॥ ५८ ॥
सम्यक उपसम फर्स तज, जीव इसो जो कोय।
पुद्गल प्रवर्त्तन अर्द्ध ही, रहै जगतमें सोय ॥ ५९ ॥

इति द्रव्य प्रवर्त्तन।

सवैया ३१–लोकमें प्रदेस आठ मेरै तलै गोऽस्तन आदि पुरुष दिसकन आदि भव पायौ है। बहुरि अनंत भव भटक्यौ अनंतवार फिर तहां जन्म लियो गिनति न थायो है ॥ लगत दुनै प्रदेश मांहि जन्म पायौ जब तब दुनै क्षेत्र देस गिणतीमें आयौ है। ऐसे सर्व लोकके प्रदेसमें जनम पायौ लगत २ गिनो वृथान्य गवायौ है ॥ ६० ॥

दोहा—क्षेत्र प्रवर्त्तन जीवनै, करी अनंती वार।
आगे काल प्रवर्त्तको, सुनो भूप विस्तार ॥ ६१ ॥

इति क्षेत्र प्रवर्तन।

छप्पै—उत्सर्प्पणी प्रथम आदि समयमैं जनम भया जब, काल कलपमैं भम्या भवावलि नाहिं गिना तब। फिर उत्सर्प्पणी आय तासके दुतिय समैमैं, लियो जनम त्यौं मर्ण अन्य समयमैं ॥ इम कालकल्पके समय सब, लगत लगत पूरण किये। एक काल प्रवर्त्तन जीवनैं, करत करत दुख भुगतिये ॥ ६२ ॥

इति काल प्रवर्तन।

छप्पै—अपर्याप्त लब्ध देह सूक्षम निगोद धर मिश्र करतावत भव धर मरे। फेर इक एक समय सब बधत बधत हो जब सो गिनै गिननहीं नो अधिक तिरयगगत इम सुगत है ॥ फुन समय सहस दस वर्ष मित तिते सुभव इम थित लहै ॥ ६३ ॥ फिर इकिक समय धर अधिक२ तेतिस जलनिध तक हीनाधिक नहीं गिनो नाकी लहन समजक। फुन तिम सरसब लहै जलध इकतीस सनैवत। अंत्र महूरतमैं अमित भव लह किर नरगत फिर समै २ थित अधिक लह तीन पल्ल तक पूर्ण कर जो हीनाधिक सो ना गिनो अनुक्रम मित इति भव सुधर ॥ ६४ ॥

इति भौ प्रवर्तन।

छप्पै—भाव प्रवर्तन इम निगोदको सूछम तन लह। अलब्धि अपर्जसु ज्ञान अंकसु असंख भाग गह ॥ ज्ञानयुक्त इम मरे नंत भवमैं जो भटकै। वा निगोद बहु ज्ञानसो न थिणतीमैं

भटकै ॥ जो फिर निगोदका तन गहै। ज्ञान अंस इकर थचै ॥ इम लगत लगत बहु भव विषै। केवल ज्ञान लहै ॥ ६५ ॥

इति भाव प्रवर्तन।

दोहा—द्रव्य प्रवर्तन तैं कही, क्षेत्र अनंती बान।
तातैं क्रम भव भाव फुनि, नंत नंत गुणि मान ॥ ६६ ॥

चौपई—पंच प्रवर्तन ए भुपार, करी जीवने नंतीवार। सो मिथ्यात उदैसै जान, सम्यक लब्धि लह्यो नहि ज्ञान ॥ ६७ ॥ सोई लब्धि पंच परकार, थावरगतिमैं भ्रम्यो अपार। कर्म्म क्षयोपसम मंद कषाय। तब जिय सैनी पंचेंद्री पाय ॥ ६८ ॥ सोई षयोपसम पहली लब्धि, बहुरि विसोई सुनो बुध लब्ध। सुभ कर्मोदय पूजा दान, संयम सील जप तप व्रत ठान ॥६९॥ फुनि सुभ उदै सुगुरु उपदेश, ता कर तत्वज्ञान लियौ वेस। सोय देसना तीजी सुनौं, प्रायोगमन चतुर्थी सुनौ ॥ ७० ॥ सुकाल पाय महाव्रत धरै, पख मासादि सु प्रोषध करै। ता बल छीन करै बहु कर्म्म, कोडाकोडी थित रहै पर्म ॥ ७१ ॥ अंतम ए जानौ निरधार, च्यारुं लही अनंती बार। सो मिथ्यात उदयतैं कह्यौ, कारज कछू सिद्ध नहि भयौ ॥ ७२ ॥ फुनि मिथ्यात जबै अवसान, करनलब्धि लही तीन प्रधान। अधो अपूरव अनत्रत करन, चौथौ निश्चै सम्यक धरन ॥ ७३ ॥ तबही अनंतानु चोकरी, तीन मिथ्यात तुरत छै करी। चौथे ठाणै कीनो वास, लसम तीन आयुका नास ॥ ७४ ॥ मानुष विन जानौ चक्रेस, फिर नवमैं मैं कियौ प्रवेस। ताके भाग सु

नवके मांहि, छतीस प्रकृति सु नास कराहि ॥ ७५ ॥ पहलेमें सोलह कर क्षीण, पंच नीदमैं नष्ट सु तीन । नर्क पशुगति पूर्वी आन, इक वे ते चौइंद्री हान ॥७६॥ थावर आताप उद्योत विनास, सूक्ष्म साधारण ए नास । दुतिय अंसमे वसु निरवार, अप्रत्या चौ प्रत्याचार ॥ ७७ ॥ तीजै वेद नपुंसक चूर, चौथे नार वेद कर दूर । पणमे षट हासादिक हणी, छटै पुरुषवेद मर्दनी ॥७८॥

सप्तम क्रोध हनो संज्वलन, अष्टम मान हनो संज्वलन । नवमे छल संज्वलन विनास, फिर दसमे गुणठाणे वास ॥७९॥ विस संज्वलन लोभ चकचूर, रुद्र लंघ बारमै हजूर । तेरहवे अंसम षोडस हान, निद्रा प्रचला पहले जान ॥ ८० ॥ ज्ञान दर्शनावरणी जोय, पंचरु नव चव दे हनु सोय। इम छह त्रेसठि वारिम अंत, होय तेरमे मैं अरिहंत ॥ ८१ ॥ फिर द्वै भाग चौदमे जान, बहत्तर तेरै तित हान। असाता वेदनी सुघात, पंच वपु· बंधन संघात ॥ ८२ ॥ आंगोपांग त्रियुक्त दसष्ट, षट संस्थान संहनन पष्ट । पण पण रस व्रण वसु फासीय, दोय गंध सुरगत पूर्वीय ॥ ८३ ॥ इक इक अगुरु लघु उस्वास, इक इक पर अपघातक नास । इक विहाय इक असुभ सुगोन, इक प्रतेक थिर अथिर सु दोन ॥ ८४ ॥ बहुर एक शुभ इक दुर्भाग, इक सुस्वर दुस्वर इक त्याग । आदर विन इक अपजस कीच, इक निरमान गोत इक नीच ॥ ८५ ॥ हनी बहत्तर दुज आय, मनुष आयुगत जुग मनसाय । मनुष आन पूरवी एक, जात पंचेद्री नासी एक ॥ ८६ ॥ त्रस बादर परजाप्त

तीन, शुभग रु आदर गोत त्रिलीन। जसकीरत तीर्थंकर नाथ, ए तेरैं हनि सिवपुर वास ॥ ८७ ॥ पंच भाव जुत सो जयवंत, फिर चक्री पूछै विहसंत। ताकौ भेद कहो भगवान, तब जिन बोले अविरलि वान ॥ ८८ ॥ हे नृपेंद्र सुन भाव विसेस, पहले उपसमके द्वय भेस। समकित चारित उपसम रूप, छाइक भेद सुनौ नव भूप ॥ ८९ ॥ छाइक दर्शन छायक ज्ञान, छाइक सम्यक्चारित दान। छाइक लाभ भोग उपभोग, वीरज ए नव छाइक जोग ॥ ९० ॥ छयोपसम अष्टादस जान, मति श्रुति अवधि कुज्ञान सुज्ञान। मनपर्यय अरु दर्सन तीन, सम्यकचारित संयम लीन ॥ ९१ ॥ पंच लब्धि जुत ठारे भेद, फुनि उदीक इकिस विन खेद। वेद रु गति कषाय रु लेस, कुज्ञान मिथ्यात असंमय वेस ॥ ९२ ॥ असिध तीन परनामिक जान, भव्य अभव्यरु जीवत मान। इस विधि त्रेपन भाव सु संच, तिनमांही सिद्धनकै पंच ॥ ९३ ॥ छाइक समकित दर्सन ज्ञान, वीरज पंच एक परमान। इत्यादिक तत्वन व्याख्यान, फिर मुनिधर्म विशेष बखान ॥ ९४ ॥ श्रावक क्रिया विविध परकार, भाखी श्री जिन सब सुखकार। सुरनर सुनत मुदित असरार, देव दुंदभी बजै नगार ॥ ९५ ॥ अजितसेन चक्री गुणरास, जिन नुतकर आयौ आवास। नानाविध सुख भोग करंत, पूरव पुन्य उदै दिये संत ॥ ९६ ॥ कंचनमय सिंहासन चित्र, पंच रतनमय जड़ौ विचित्र। रश्मि सूर्यसम प्रभा अपार, इक दिन नृप तापै थित धार ॥ ९७ ॥ विष्टर प्रभाकंज दल जेम, नानावरण

विराजे एम। नृप कलिकावत्त सोहै मनो, चंद्र समान छत्र सिर बनो ॥ ९८ ॥ मुक्ति झालरी किरण लुनाय, मानों सुजस रह्यौ नृप छाय। दो तट चंवर भुपकै दुरै, मेर निकट मनु झरना झरैं ॥ ९९ ॥ चक्री मध्य चंद्रमावली, सभा बनी तारामंडली। नरनारी मन नैनक मोद, लख लख विगसैं करै प्रमोद ॥ १०० ॥

भूप अनेक आय नुत करैं, चक्री चरण मुकट निज धरैं। मानों कंवल अंजुली क्षेप, अथवा मणदुतिसे भूलेप ॥ १०१ ॥ इत्यादिक सोभा गुण गेह, मानों दूजो सक्रो एह। सभा लोग सब विबुध समान, आगै और सुनों व्याख्यान ॥ १०२ ॥ ताही समय सभा मध्य एक, आयो हस्ती बली विशेख। क्रीडा करै अधिक विहसाय, चकृत भये सभा जुत राय ॥ १०३ ॥ पकरो याही भूप इम कह्यौ, तब केइक जोधा उमह्यौ। देख पराक्रम गए पलाय, ठाडो एक सूर हरषाय ॥ १०४ ॥ ता संग लीला करी अघाय, पकरो चहै सुघात चुकाय। कुंज रवि बहु लीला करै, चोट चलाय मृत्य नहीं करै ॥ १०५ ॥ घणी देरमें गह सुंडाल, नृपके तट आयो ततकाल। सूर जोर कर थुत उचरी, लीजे राय आय यह करी ॥ १०६ ॥ लंबोदर लख हरष्यो राय, देखत ही गण गयो पलाय। तब राजा चिंते मन मांहि, यूं ही सब जग जाय पलाय ॥ १०७ ॥

ढालबीर जिनंदकी—जीव जगत बनके विखैजी, भ्रम तन आवे वोर। जनम जरामृत अगनि सैजी, पावै दुख चिर घोर रे भाई ए संसार असार ॥ १०८ ॥ बसो अनाद निगोदमें जी,

काल लब्धि कर गौन। कर्म क्षयोपसमतै लहीजी, थावर त्रस पसु जोन रे भाई। बध बंधन भयकार ॥ १०९ ॥ फिर तित पाप कियौ घनोजी, तावस नरक मंझार। सो दुख जाने केवलीजी, सह्यो अनंती वार रे भाई यह जानौ निरधार ॥११०॥ निकसौ कर्म संजोग सूं जी, लहै नरगति कुल नीच। कर अग्यान तप सूं भयोजी, विबुध सुरगके बीच रे भाई। सुंदर सुगत मंझार ॥ १११ ॥ नारि रिद्धि भोगादि सुखजी, पय पर सेव नियोग। मरनसमैं मुरझाय है जी, माला आयु संजोग रे भाई। करत सु हाहाकार ॥ ११२ ॥ दधि दो कोडा कोडिमैं जी, जो सीझै तुझ काम। नातो फिर है थल लहै जी, जो निगोद दुख धाम रे भाई। ऐसे सुगुरु उचार ॥ ११३ ॥ पाय जबतै नरक लहजी, पुन्य दीर्घ तै स्वर्ग होय बराबरि पुन्य अघजी। तब लह मानुष वरग रे भाई, तामैं दुख अपार ॥ ११४ ॥ मात पिता रज वीर्य सूं जी, उपजौ गर्भ मंझार। मात असन जो निगलौ जी, सो तै लियौ अहार रे भाई। तल सिर चरन उचार ॥ ११५ ॥ जंती तार ज्यू खेंच है, जूं सुनार जग मांहि। जन मत सो दुखतै लह्यौ जी, फुनि बालकपन मांहि रे भाई। मूत पुरीष मझारा ॥ ११६ ॥ हस्त सुमर मुखमैं दियौ जी, लाल बहै असराल तरुन पनै मद मदन सू जी। भयो मत्त उनहार रे भाई स्व पर तियन विचार ॥१७॥ वृद्ध पनै तन कम्प है जी, शिथल होय सब अंग। केशवरण सब पलट है जी, मृत्यु आवे ता संग रे भाई। ए दुख नैन

निहार ॥ ११८ ॥ औरे विपत अनेक है जी, सर्व सुखी ना कोय। कोई इष्ट वियोग सूं जी, कोई अशुभ संजोग रे भाई। कोई दीन निहार ॥ ११९ ॥ काहु दालिद घेरियोजी, काहु तन बहु रोग। काहु कलहारी तियाजी, अलि कानी सुत रोग रे भाई। भाई रिपु उनिहार ॥ १२० ॥ किस हीके दुख प्रगट है जी, किस ही उर दुख जान। कोई सुत विन नित झुरैंजी, होय मरै दुख ठान रे भाई। दुठ संतति दुखकार ॥ १२१ ॥ किह विध सुख हो जगतमैं जी, पुन्य उदै जा जीव। सुक्ख सदा तिनकै नहीं जी, यूं जग त्रास लखी बरे भाई। सब दीसै दुखकार ॥ १२२ ॥ जो सुख जगत विखैं हुतैं जी, तौ जिनवर क्यूं त्याग। काहेकूं सिव साधते जी, कर व्रतसै अनुराग रे भाई। देखो हृदय विचार ॥ १२३ ॥ सत कुधात भरो सु तनजी, अस्त नसा पल रक्त। पीव वीर्यतु चेतै मैठो जी, नव मल द्वार संयुक्त रे भाई। झर उपघात निहार ॥ १२४ ॥ नाक कान दग मल मुख जी, श्रम जल विष्टामूत। इम असुचि छिन येह है जी, तौ पण नाथिर भूत रे भाई लागो विखै विकार ॥ १२५ ॥ पौषत तौ दुख देत है जी, सोषत सुख उपजाय। दुरजन देह सुभाव समजी, मूरख प्रीत उपाय रे भाई। तप कीजै सुखकार ॥ १२६ ॥ इम चक्री चितवन करत जी, बन पत सभा मंझार। ताही समै सु आइयौ जी, हस्त जोड उच्चार रे भाई। गुण प्रभु सुन सुखकार ॥ १२७ ॥ क्षीमंकर उद्यानमैं जी, आयौ सुन हरखाय। संब सहित

चंदन गयो जी, जाय लखो मुनिराय रे भाई। करि आवर्तन सार ॥ १२८ ॥

चौपाई–हस्त जोडि थुत थुत करने लगो, गुरु पदाब्जमै द्रग अलि पगो। धन धन ध्यान ध्येत गुण धाम, जगत पूज इव गुण प्रभु नाम ॥ १२९ ॥ अष्ट द्रव्य सूं पूज मुनिंद, विनै सहित बैठो सु नरिंद। प्रश्न करै नृप वृषकी आस, गुरु रवि वचण किरण परकास ॥ १३० ॥ धर्म भेद द्वय श्रावग मुनी, ता विस्तार सुनो नृप गुनी। श्रावग धर्म सु पूजा आदि, जाय जिनालय कर न्हौनादि ॥ १३१ ॥ नये वस्त्र धोए नित चीन, तिनैं पहर ले भांड नवीन। सुष्क मंज कर अगनित पाय, ज्यूं कूपादिक तैं जल ल्याय ॥ १३२ ॥ विनय सहित प्रभु न्हवन सु करै, पूजन द्रव्य धोय फुनि धरै। स्थापनादि कर जज्ञ विधान, अंत विसरजन करै सुजान ॥ १३३ ॥ उज्वल वणज करै विन हिंस, क्रियाकोस तैं लख बुध हंस। वींधो अन्न न भख्य है कदा, दोय दाल जे विदुल जु सदा ॥ १३४ ॥ दही मही संग खैवो नांहि, दुदल मेवादिक या मांहि। फुनि मिष्टान मिलो ही खाय, अंत महूरत सूक्षम थाय ॥ १३५ ॥

उक्तं च–गाथा इक्षु दही संयुक्त भवयन्त समुत्थमाजीवा। अंते महुत्त महे तम्मा भणंत जिण णाहु ॥ १३६ ॥

चौपाई–सब जीवनसैं मैत्री भाव, साधर्मी लख हर्ष बढाव। रहै मध्यस्थ मिथ्याती देख, दीन दुखी पै करुणा वेष ॥ १३७ ॥ दान देय फुनि वित्त समान, धर्मातमसे वात्सल ठान। या विधि श्रावग क्रिया विशेष, कही बहुरि फुनि तपसी भेख

॥ १३८ ॥ थावर त्रसकी पालै दया, भूल न असत चवै श्रुत कथा। सुपन मात्र ना करै संजोग, चोरी और नारीको भोग ॥ १३९ ॥ तिल तुस मात्र परिग्रह नांहि, निसदिन मगन रहै निज मांहि। इत्यादिक मुन कियो उचार, तब नृप पुत्र लियो इंकार ॥ १४० ॥ जितशत्रुको सोंपि सुराज, आप विचारौ आतम काज। चक्री हस्त जोडि सिरतान, मुनतैं मांखै मधुरी बान ॥ १४१ ॥ हम बूझे भवदध मंझार, हस्तालंबन देह निकार। तुम समरथ नही दूजौ और, बारबार नमहुं कर जोर ॥१४२॥ भव समुद्रसैं काढनवती, रतन तरे झ दिक्षा भगवती। शिव कन्याकी दूती युक्त, या आदरै मिलावै मुक्त ॥ १४३ ॥

इम गुरु वचन हिये धर लियो, अंबर त्याग दिगम्बर भयो। धरे महाव्रत दुद्धर पंच, तेरैविध चारित सब संच ॥१४४॥ करन लगौ तप काय कलेस, सिंहनक्रीडत आदि विशेष। पालै वृष दसलाक्षणी सार, रतनत्रय आचरै उदार ॥ १४५ ॥ ग्यारै अंग पचि भयो पार, पक्ष मासमैं लेय अहार। काय कषाय छीनकर मुनी, इकल विहारी विचरैं गुनी ॥ १४६ ॥ अत्रकंप आदि रिध सोय, केवल विना त्रिषष्टी जोय। तप बल सिद्ध भई ते सर्व, इत्यादिक गुण जुत विन गर्व ॥ १४७ ॥ कियो विहार मुनी सब देस, तारे भवजन दे उपदेस। विहरतर आये कहां गगन तिलक पर्वत है जहां ॥ १४८ ॥ दर्सन ग्यानचरण तप सार, आराधन आराधी च्यार। अंत समाधिमरण तिन कियो, स्वर्ग सोलमें इंद्र सु भयो ॥ १४९ ॥

अथ स्वर्गलोक महिमा वर्णनं।

चंद्रकांत माणी विद्रुम निसी, इंद्रनील माणि पन्ना तिसी। पुष्कर पीत सुरतनन मई, नानावरण भूमि निरमई ॥ १५० ॥ रात दिवसको भेद न जहां, रतन उद्योत निरंतर तहां। श्रेणिक प्रश्न करै तब एव, आयु तनी संख्या किम देव ॥ १५१ ॥

दोहा—गोतम भाखै भूप सुन, ज्यूं मानुष तन मांही।
अहिकाठै इक ठौर ही, लहर चढै सब ठांहि ॥१५२॥
तैसैं ही नरक्षेत्रमैं, रात दिवस वरतंत।
ताहीतैं संख्या सकल, लोक मांहि निवसंत ॥१५३॥

चौपाई—मणि कंगूर कंचन प्राकार, तुंग सु कमलाग्रह उनहार। औंडी परखा सजल तरंग, हंस हंसनी विचरैं संग ॥ १५४ ॥ नक्र चक्र मछ जलजंत, तीर तीर पाद पसवनंत। बने पौल उन्नत कलसंत, तोरन जुक्त धुजा लहकंत ॥ १५५ ॥ गृहपंक्ति रतनन चित्राम, ऐसे स्वर्गलोक पुर धाम। चंपक पारजात मंदार, असोक मालती करुनागार ॥ १५६ ॥ फूले फूल ही महकार, चैत वृक्ष दाडिम सहकार। ऐसे स्वर्ग रचाने बाग, देखत नैन बढै अनुराग ॥ १५७ ॥ विपुल वापिका सोहै सार, निरमल नीर सुधा उनहार। कंचन कमल मई छविवान, मानक खंड खचित सोपान ॥ १५८ ॥ फुनि सरवर निर्मल जल पूर, तिन तट रूंद सुरी सुर भूर। चकवा श्रीखंडी कारंड, पक्षनि मनुगुण गाय अखंड ॥ १५९ ॥

दोहा—कामधेनु सब गाय तित, सुरतरु तरु सब जोय।
रत्न सु चिंतामण सकल, दिवसम जगमैं न कोय ॥१६०॥

चौपाई—गान करै कहीं सुरसुंदरी, वन वीथी बैठी रस भरी। बीन मृदंग ताल झल्लरी, मधुर बजावै गुण आदरी ॥ १६१ ॥ जिन श्रुत लययुत करै उचार, तथा इंद्र गुण वरणै सार। सक्र सुनत धर हर्ष अभंग, कहीं देवगण वनिता संग ॥ १६२ ॥ लीला वन विचरै मन चाय, मंडप लता सु गिरिपै छाय। पुष्प सेज रच क्रीडा करै, हर्ष सहित आनंद उर धरै ॥ १६३ ॥ मंद सुगंध है नित वाय, पुष्परयण रंजित सुखदाय। आंधी मेह न कब ही होय, ताप तुसार न व्यापै कोय ॥ १६४ ॥ रितुकी रीत फिरै नही कदा, सोमकाल सुखदायक सदा। छत्रभंग चोरी उतपात, सुपने नाहि उपद्रव जात ॥ १६५ ॥ ईत भीत भय चाल न होय, वैरी दुष्ट न दीसै कोय। रोगी दोषी दुखिया दीन, वृद्ध वैस्य गुण संपत हीन ॥ १६६ ॥ बढ़ती अंग विकलता कही, कु विभचार स्वर्गमैं नहीं। सहज सोम सुंदर सरवंग, सम आभर्ण अलंकृत अंग ॥ १६७ ॥ लक्षन लक्षित सुरभ शरीर, रिद्ध सिद्ध मंदिर मन धीर। कामसरूपी आनंदकंद, कामनि नेत्र कमलनी चंद ॥ १६८ ॥ वदन प्रसन्न प्रीत रस भरे, विनय बुद्ध विद्या आगरे। यों बहुगुण मंडित स्वयमेव, ऐसे स्वर्ग निवासी देव ॥ १६९ ॥

ढाल दोहामैं—ललित वचन लीलावतीजी, शुभ लक्षन सुकमाल। ललना सहज सुगंध सुहावनीजी, यथा मलती माल

ललना, तिह सोभाको बरनवै ॥ १७० ॥ सील रूप लावन्य निधिजी, हाव भाव रस लीन। ललना सीमा शुभग सिंगारे कीजी, सकल कला परवीन ललना तिह सोभाको बरनवै ॥ १७१ ॥ नृत्य गीत संगीत सुरजी, सब रस रीत मंझार। ललना कोविद होय सुभावसैं जी, स्वर्ग खंडकी नार। ललना तिन शोभाको बरनवै ॥१७२॥ पंचेंद्री मनको महाजी, जे जगमें सुख हेत। ललना तिन सबहीको जानियोजी। स्वर्ग लोक संकेत ललना, तिह शोभाको बरनवै ॥ १७३ ॥

चौपाई—देव लोक महिमा असमान, सुन्दर अच्युत स्वर्ग सु थान। तहां सतांकर नाम विमान, तित उतपात सिला सुखदान ॥ १७४ ॥ कोमल मीडन पुष्प सरीस, तहां जन्म धारो सु ईस। उपजो संपुट गर्भ मंझार, तेज पुंज सुंदर अविकार ॥१७५॥ मानो जल धर पटल प्रचंड, प्रगट भयौ जुदा मनी दंड। अथवा प्राची दिसा मंझार, ऊगो बाल सूर्य उनहार ॥ १७६ ॥ एक महुरतमैं सो तवै, संपूरण तन धारी फवै। किधौं रतनकी सिज्या त्याग, सोवत उठो कवर बडभाग ॥ १७७ ॥ सप्त धात मल वर्जित काय, अति सरूप आनन सोभाय। मणि करीट माथे जगमगै, कानन कुंडल ससि दुति भगै ॥ १७८ ॥ कंठ कंठिका हियरे हार, खग चल मध्य जु गंगाधार। कटि कटि मेख जुत किंकनी, मेर गिरदजू रिख सोहनी ॥ १७९ ॥ भुज भूखन भूषित भुज सोय, कर केयूरि

सोहची जुत सोय। अंगुरिनिमध्य मुद्रिका ठनी, पगमें जन जुत मन किंकनी ॥ १८० ॥

दोहा—अंग अंग इत्यादि बहु, सब आभरण धरंत।

भूषणांग मनु कल्प तरु, भूषण जुत सोहंत ॥ १८१ ॥

चाल छंद—क्रम क्रम दिस देखै सारी, दग कोर कान तग धारी। चकृत चित हुवो तामा, मैको आयो किंप धामा ॥ १८२ ॥ अहो को उत्तम ऐ देसा, सब संपत थान विसेषा। मणि जडित कनक आगारे, दीसे सुर अपसर सारे ॥ १८३ ॥ अति तुंग महल दुति हो है, मध सभ मंडप मन मोहै। विस्तर अदूभुद ए ठामा, मनो मेर सिखर अभिरामा ॥ १८४ ॥ अनुपम ए निरत कराई, मनगीत श्रवन सुखदाई। विलावन्न तरोवर नारी, दध लहर यथा उनहारी ॥ १८५ ॥ एइ तुंग करी मद मातै, बण अस्व खडे हिननाते। कंचन रथ भृत दल आवै, मो प्रत ए सब सिर न्यावै ॥ १८६ ॥ सब हर्ष भरे मुझ देखै, फुनि विनती सुंदर पेखै। जे जै रवि कर विहसाई, कारन जानौ नहि जाई ॥ १८७ ॥ इर जाल तथा सुपनाहै, कै माया भ्रम उपनाहै। मचवायो चित कराई, पै निरणै हो कछु नाई ॥ १८८ ॥ तिस थान सचित सुर ज्ञानी, मन बात अवधि सूं जानी। वच भनै जोग सिर नाई, संसै हर श्रवन सुहाई ॥ १८९ ॥ हम अरज सुनौ सुर राजा, सुर जन्म सफल सब आजा। हम भए सनाथ अवारा, प्रभु जन्म हमारा सुधारा

॥ १९० ॥ रवि उदय सरोज सुखंडा, विगसै जिम भाग प्रचंडा। इम नंद वृद्ध देऽसीसा, चिर राज करौ सुर ईसा ॥ १९१ ॥ हे नाथ ए उत्तम ठामा, दिव सोलमें अच्युत नामा। जग सार लखको एहा, सद भोग निरंतर गेहा ॥ १९२ ॥ तुम इंद्र भए इस थान, व्रत पूर्व सुभव फल जान। सब सुर ए दास तुम्हारे, परवार सुजन ए सारे ॥ १९३ ॥ ए सुंदर मंडल नारी, तुम आय सचह मनु हारी। एमइकी लावनि खाना, सब सुरि इन मानै आना ॥ १९४ ॥ उर जान महलए स्वंगा, चमु छत्र चवरस पतंगा। धुज विष्टर आदि मनोग, सब संपत ए तुम जोग ॥ १९५ ॥

छपै—अवधिज्ञानतैं इन्द्र जान सव तसु वचनांतर। मैं पूरव तप कियौ कर्म दंडे वृष तसकर ॥ सव जीवनकौ अभैदान दिय अपने सम लख सह उपसर्गहै, धीरज यो मोहादिकको पख। कर काम विषम वैरी सुवस ॥ फुनि कषाय वन जालियौ, जिन आन अखंडत सीस धर। निरदोष चरनप्रति पालियौ ॥ १९६ ॥ इमसे यौ जिन धर्म्म तासु फल लह्यौ थान युज। दुरगत पाप निवार कियो तिन इंद्र आनभुज ॥ सो अब सुलभ नांहि भोग संजोग पथ लहै। राग आग दुखदाय चरन जल विना नगल है ॥ सो सुरगतिमैं कारण नही व्रतकौ उदै ना या विषै। हा सम्पककौ अधिकार है, मल संकादिन जा विषै ॥ १९७ ॥ कै जिनवरकी भक्ति और दीखै न धर्म इत। इम विचार जिन भजन हेत इर उठौ प्रियन युत ॥ सुधा वापि कर

न्हवन गयो जित मणिमय जिनघर। रतन बिंब वंदे सु भक्ति-युत सीस नवाकर॥ ले द्रव्य अष्ट पूजा करी, पाठ पढ़ो थुत हर्ष कर। फुनि चैतवृक्ष जिनबिंब जित, उछव कीनो तहां सुवर॥ १९८॥

सवैया ३१–ऐसे बड़ो पुन्य कियो फेरि निज लक्ष गही भोग भुंजे सुलोकोत्तम सहजही। प्रथम संठान रूप वैक्रियक सुलक्षन मृदु गंध वपुगण सहजही॥ पलक न लगै मल नख कचप सेव न जरा चिंता रोग सोग सोग भय सब भजही। कलेस अलप मृतु यामैं इरक न एक अणमादि आठ रिध तासु सिद्ध कजही॥१९९॥ स्वर्ग सुखकी अपार कथा कौन सुधी कहै सुंदर विमान बैठ नमपथ इछत जीवैं मरे, जिन भौन कभी कुलाचलाद्रपै दीपोदध असंख जु तामैं कविगछत। वर्ष वर्ष मांहि तीनवार नंदीसर जाय पंचकल्यानक जिन नमि सम लछत॥ और केवलीके दोय कल्यानक पूजैं आय निज कोठ थिर जिनवानी सुन इछत॥ २००॥ सभा सिंहासन बैठ हर देव सुर प्रति हित उपदेस करैं तत्व वृषमन है। जे सुर सम्यक् विना तप बल देव भये तीनै धर्म वच भासै श्रद्धाकु करन है। इत्यादि अनेक विधि महा सुभ संचै सुर दर्स ज्ञान मणिखनि चारित्र नग्न है। वृष वासना संयुत कर पुन्य फल भोग कवि सुन देवी गान लख नृत गन है॥ २०१॥ सिंगार सुरस लीन हाव भाव जोवैं कभी हास कथा वन क्रीडा सुर संग कर है। नाना विधि विलास यौं कर दिन प्रति सुखद धर्मे मगन

तनु तीन तुंग करि है॥ बाईस सागर आयु ग्यारे मास सविले सास बाईस हजार वर्ष गये असन कर है। सुधामैं डकारले धमनमै त्रप्त होय षष्टम नरक ताईं औध वैक्री कर है ॥२०२॥

दोहा—असंख्यात सुर सेव पद, सुरद्रिग कंज दिनेस।
यूं पूरव कृत पुन्य सू, भोगै भोग सुरेस ॥ २०३ ॥

गोतमस्वामी यौं कहै, सुणि श्रेणक वर राय।
कहां इंद्र अहमिंद्र पद, जन्म मरै फिर आय ॥ २०४ ॥

जैनधर्म नृपकी धुजा, लोक सिखर फरकंत।
गुण भद्र गुरु संग्रहौ, सुनतु लाल हरखंत ॥ २०५ ॥

इति श्रीचंद्रप्रभचरित्रे चतुर्थभवसोळम स्वर्गे इन्द्रपद प्राप्ति वर्णनो नाम सप्तम संधिः समाप्तम् ॥ ७ ॥

अष्टम संधि।

दोहा–वंदों श्री सर्वज्ञ पद, गुरु गुणभद्र मनाय।
जिन नग मुख द्रहतैं प्रगट, गंग सारदा माय ॥१॥
नमन करूं मन वचन तन, हस्त जोडि सिर न्याय।
गौतम गणधर यों कहै, सुण श्रेणिक मन लाय ॥२॥

चौपाई–अब सो देव तहां तैं गछ, ताको भेद सुनों ही वछ। दीप धातुकी खंड गनेह, विजय मेरतैं पूर्व विदेह ॥ ३ ॥ सीतातैं दक्षण सोहंत, देश मंगलावती वसंत। सब विध मंगल पुरण धाम, वर मंगलावती यौं नाम ॥ ४ ॥ तहां महीधर उन्नत लसै, नदी तिरंगत मानों हसै। नाना वृक्ष फले मन हरै, देव आय जित क्रीडा करै ॥ ५ ॥ लता साख पुष्प महेकंदै, सुरी सुमन चूंटे गह गहै। गूंथे हार धरै पति कंठ, हर्षत भई तुरत उतकंठ ॥ ६ ॥ भोगातर सुर सु गावंत, नृत्य सुरी लख सुर हरषंत। तित वल्ली मंडफ अति घने, सुमन सुगंध साथ रेठने ॥ ७ ॥ तहां खेचरी खग क्रीडाय, दृढ आलिंगन चुंब कराय। रतिकी खेद प्रस्वेदित अंग, मुक्ताफल सम झलक अभंग ॥ ८ ॥ मंद सुगंध वहै सुचयार, रतिको प्रसम हरन सुखकार। करैं विहंगम केल अपार, सुंदर शब्द करै उच्चार ॥ ९ ॥ मानो पंथीजन ही बुलाय, जल पीवो फल भयो अघाय। इत्यादिक तिस देस मंझार, सोभा और अनेक निहार ॥ १० ॥ तहां रत्न संचयपुर पुरी, निज छवि

करि सुरपुर छवि दुरी। तुंग कोटपर बाजलपूर, मानों दधपुर गिरद हजूर ॥ ११ ॥ रतनपोल शुभ तोरन खेंचे, विसद सदन विध नामनो रचे। ठौर ठौर रतनन चित्राम, रतनसंच सत्यारथ नाम ॥ १२ ॥ सघन बाजार गली सांकडो, जिनमंदिर जुत सुतियन लडी। तिनमैं उत्सव नितप्रति करै, नर नारी देखत मन हरे॥ १३ ॥ महिमा पूर्व विदेह जु करी, सो सबही इत जानों सही। पुन्ययोग सबही सुख धाम, राज करै सु कनकप्रभ नाम ॥ १४ ॥ कनक समान देह दुत धरै, लक्षन रतन जहां मन हरे। सत्य कनकप्रभ चंद्र समान, नृप क्षत्रगण सेवै आन ॥१५॥ ताके कंचन माला वाम, कंचन देह सुगुण मणि धाम। रोहणी रति रंभा उनहार, कनक माल इव सत्य उचार ॥ १६ ॥ श्री जिन जज्ञ अनुंकुश धरै, व्रत तप शील दान विस्तरै। भोग करै मन वंछित एम, इंद्र सचीवत सोहै जेम ॥ १७ ॥ भोग मगन कछु जान न परै, दिन सम एक छम छुर गरै। एक दिना निस अंत मंझार, सुपने सुंदर देखे नार ॥ १८ ॥ तब ही अच्युतेंद्रसौ चयौ, तासु गर्भमैं आवत भयौ। गर्भ वृद्ध लख सुखित नरेस, कवळ खिलै ज्यूं लखत दिनेस ॥ १९ ॥ पूरण मास सु दिन शुभ वार, तब ही पुत्र जन्म अवतार। जननी जनक घन्न उचरै, मंगलाचार बधाई करै ॥ २० ॥ सुंदर महला गावै रली, बाजे बाजे अति मंगली। दान दियौ नर पति हरषाय, जाचक लोग अजाची थाय ॥ २१ ॥ टेर जोतसी भाखौ लग्न, परे ऊंच ग्रह नीच सुमग्न। दिन दस

राय बधाई करी, विविध पूज जिनकी विस्तरी ॥२२॥ पद्मनाम तसु संग्या धार, पद्मानन सुंदर अविकार। नामनाल कीरत संयुक्त, पद्मनाम सत्यारथ उक्त ॥ २३ ॥ दिन दिन बाळ बढ़े जूं चंद, मात पिता मन होत अनंद। हृदयकिरण शुभ लछमी गेह, जिन रवि लखत प्रफुल्लित देह ॥ २४ ॥ क्रम क्रम करि सिसु भयौ कंवार, पढ लीनी विद्या सब सार। भयो तरुण जोबन मद लीन, राज श्रिया ब्याही परवीन ॥२५॥ स्वयंप्रभा सुप्रभा वपु चंद, कोमल अंग अधिक मकरंद। नवयोवन दंपति सुकुमार, सब रुत भोग भोगवै सार ॥ २६ ॥ तिन दोनोंके पुन्य पसाय, सुर्णनाभ सुत उपजौ आय। एम कनकप्रभ नाम नरेंद्र, पुत्र पौत्र जुत सुखि अमंद ॥ २७ ॥ इक दिन घटा भई अंधियार, मानौ निस छाई अधिकार। घन गरजैं मनौ दुंदभी घुरे, बज्ज खिवें मनौ धुज फरहरे ॥ २८ ॥ जलकी वृष्ट भई असराल, जूं जिन जनक सु करत निहाल। सब ही पुरजन आनंद कंद, भयौ अधिक जूं कमलनि चंद ॥ २९ ॥ मेघमाल थकि उगौ सूर, मानौ प्रात भयौ तम दूर। गोधन रुके दिये मुकलाय, रंभ करै मुखनैं अघाय ॥ ३० ॥ महकी धेनु वत्स चूघंत, अंतर प्रीत सु प्रगट करंत। पंक भई पुरमैं अधिकाय, वृद्ध व्रष सहक फंसि दुख पाय ॥ ३१ ॥ फुलवारी देखन नृप चल्यौ, मगमें बैल कीचमैं ढलौ। ताहि देख नृप भयौ उदास, त्यौं ही सब जग होय विनास ॥ ३२ ॥ इत्यादिक सुभ भावन भाय, तब ही बनमैं मुनि उट आय। श्रीधर नाम

सु व्रत संयुक्त, ताकौ नमन कियौ विश शुक्त ॥ ३३ ॥

दोहा—धर्म वृद्धि मुनवर दई, लीनी सीस चढाय।
विनय सहित बैठो नृपत, इष्ट साधि पद मांहि ॥ ३४ ॥
पुत्र मित्र मंत्री त्रिया, पुरजन परजन संग।
हाथ जोडि विनंती करै, धारै भक्ति अभंग ॥ ३५ ॥
प्रश्न करत प्रभु धर्मकी, कहिये भेद बखान।
तब श्रीमुन भाखै सु इम, सुनौ भव्य दे कान ॥ ३६ ॥
धर्म भेद द्वै जानिये, अनागार सागार।
पंचेन्द्री मन वस गहन, पंच महाव्रत धार ॥ ३७ ॥
सोई मुनिवर धर्म्म है, फुनि श्रावक सुनि भेद।
सो मानुष तिरजंचमैं, अनगति मांहि निखेद ॥ ३८ ॥

चौपाई—मैत्री मुदित दया माधिस्त, चारौ धरैं सुबुध प्रसस्त। काहुको दुख वांछै नांहि, सब जीवन सूं मैत्री आहि ॥ ३९ ॥ सो मैत्री प्रमोद फुनि धरै, हरष सहित जिन भक्ति सु करै। जे संजमादि अधिक गुणवंत, लख सुन कर हो हरष अत्यंत ॥ ४० ॥ भूख रु प्यास सीत रोगादि, ताकरि पीडित जीव अनादि। तिनै देख करि करुणा करै, सो कारण हिये विस्तरै ॥ ४१ ॥ जो शिक्षा दायक नहि जोग, देव धर्म गुरु निंदक लोग। तिन सू राग द्वेष नहि करै, सोमाधिस्त भावना धरै ॥ ४२ ॥ ए संसार शरीर अनित्य, अरु निज चितवनमैं दे चित। सो दीक्षाके सनमुख होय, पंच महाव्रत धारै सोय ॥ ४३ ॥ ताकौ भेद कहु सु वखान, नर नायक सुनिये दे

कान। मन वच तन प्रमाद जुत रहै, विन विवेक निस दिन भ्रम गहै॥ ४४॥ प्राणी प्राण घात हो नित्य, सोई हिंस्यो जानौ मित्त। झूठ वचन मण सोय अलीक, विन दिये ले सो चोरी ठीक॥ ४५॥ तिय मिलाप कर सेवै जोय, व्रत अब्रह्म कहावै सोय। ममता भाव परिग्रह मांहि, इनकौ त्यागि सु व्रत लहांहि॥४६॥ इक माया अरु फुनि मिथ्यात, अग्र सोच ए तीनों घात। सल्य रहित सोइ व्रतवंत, इम अनगार कह्यौ भगवंत॥ ४७॥

दोहा—राग सहित घरमैं वसै, करै धर्म बहु भेद।
　　सरधा जुत जिन पद जजै, सो भवि भ्रमण उछेद॥ ४८॥

कवित्त—जो जिनकौ अभिषेक करै नित, ताकौ न्हवन मेरपै होय। जल सूं बहुरि जजै श्री जिन पद, धोय कर्म मल उज्वल होय॥ चंदन सो पूजै जिन नायक, भव आताप मिटावै सोय। अक्षत सूं प्रभु जग्य करै, नित अषय पद पावै भवि लोय॥४९॥ पूजा करै पहुपसूं जिनकी, मार मार घर सहज सुब्रह्म। चरसूं पूजै क्षुधा विनासै दीपग सूं लहि केवल पर्म॥ धूप दसांगीसै वसु विध दह, फलतै फल पावै उत्कृष्ट, अर्घ चढाय लहै अनर्घ पद, जो जयमाल भनै धुन मिष्ट॥५०॥ ताकी जयमाला सुर गावैं, जो थुन करै तासु थुन इन्द। करै सु नृत्यारंभ जिनागे ता आगै नाचै सु सुरिंद॥ जो प्रभु सुनस सुसुर सूं गावै, ताहिसु जस गावै सुरराज। जो जिन आगै तूर बजावै ता घर देव दुन्दभी वाज॥ ५१॥ जो जिनवर आगार करावै पावै स्वर्ग सु देव विमान। जो जिनबिंब करावै सो नर, हो है श्री जिन

पिता महान ॥ जो जिनन्दकी करै प्रतिष्ठा, ताही प्रतिष्ठा करै सुरेस। जो जन करै सकृत विधपूर्वक, सो निश्चै ही है सु जिनेस ॥ ५२ ॥

दोहा—बिंब प्रतिष्ठा जो करै, सो तिय हो जिन मात।
जाजे सीविधि आचरैं, तैसो ही फल पात ॥ ५३ ॥

चौपाई—यह सु सराग धरम विध जान, फिर कछु रागसु उपशम ठान। तब ही अणु प्रतिग्या धरै, ग्यारै भेद तासु विस्तरै ॥ ५४ ॥ प्रथम सुदंसण पडिमा नाम, समकित शुद्ध धरै गुणधाम। इक जल बूंदमें जीव असंख, तामें शंका करै सु रंक ॥ ५५ ॥ जप तप पूजा दानरु शील, करकै वांछा करै कुचील। रोगी आदि अरुचि सु दृढ़ धरै, मूढ देखि दुरंग छा करै ॥ ५६ ॥ मिथ्यादृष्टिकी परसंस, वा अस्तुत करहै बुध घुंस। ए पण अतीचार त्यागंत, सातौं भय विन सो दगवंत ॥ ५७ ॥ दूजी व्रत प्रतिमा कही, बारे भेद तासुके सही ॥ प्रथम अहिंसा अणुव्रत दक्ष, जंगम जीव सर्वथा रक्ष ॥ ५८ ॥ पण थावर हिंसा कछु वर्त, जामें यतनाचार प्रवर्त। ताके अतीचार है पंच, जो त्यागै सोई व्रत रंच ॥ ५९ ॥ बन्ध सु रस्सादिकसै बांध, लकडी चाबूक अधिक साध। तामूं मारै वध पुन छेद, नास करण इत्यादिक भेद ॥ ६० ॥

अधिक प्रमाण धरै वो भार, अति भारारोपण सु निहार। अन्य पान त्रण मने करेह, अन जल रोध कहावे यह ॥ ६१ ॥ दूजो असत त्याग व्रत अणो, दया पाले

जो झूठ वि भणी। और भांत ना बोलै रंच, ताके भी दूषण है पंच ॥ ६२ ॥ जो झूठो देवे उपदेस, ए मिथ्योपदेसको भेस। लुकी बात को करै प्रकास, सो रहुवा व्याख्यान सुभास ॥ ६३ ॥ कागद मांहि झूठ ही लिखै, अथवा झूठी साखि सु अखै। कूटक लेख क्रिया तीसरी, बहुरि धरोहर राखै धरी ॥ ६४ ॥ ताकू नटै व कमती देह, नास प्रहार कहावै एह। मुख दिग अधर भ्रूक अवलोय, मरम जानि फुनि भाषै सोय ॥ ६५ ॥ सो साकार मंत्र है यहै, फुनि अस्तेय अणुव्रत गहै। तृण लकडी सर वापी कूप, जल ले बिना दिये हे भूप ॥ ६६ ॥

अरु बिना दिये न लेवै रंच, ताके अतीचार भी पंच। चोरीको देवे उपदेस, फुनि राखै उपयोग विशेष ॥ ६७ ॥ ऽस्तेन प्रयोग प्रथम ये जान, दूजो नाम दाहृत दान। चोरी वस्त मोल कूं लेय, फुनि नृप अज्ञा उलंघि करेय ॥ ६८ ॥ राजातिक्रम नाम विरुद्ध, फुनि मानो न मान हिन अद्ध। अधिक लेय अरु दे अस्तोक, प्रति रूपक विवहार अवलोक ॥ ६९ ॥ खरे दर्व मैं खोटो दर्व, सो मिलाय कर वेचै सर्व। इनको त्याग अचौरज ग्रहै, अतीचार विन श्रावग वहै ॥ ७० ॥ चौथो ब्रह्मचर्य अणुव्रत, पर दारा त्यागै सब नित्य। स्व दारामैं तोष गहाय, प्रोषध दिवस हु रात्र तजाय ॥ ७१ ॥ पर्व दिवसमैं सेवन रंच, ताके अतिचार भी पंच। पर विवाह करवावै जोय, पर विवाह करणा ये दोष ॥ ७२ ॥ तुरिका नाम कुसीली नार, परिग्रहित कोई भरतार। अपरगृहीत वेस्यादिक जान,

तिन प्रति गमन न करि बुधवान ॥ ७३ ॥ लिंग जोनि बिन अंग स्पर्श, सो अनंग क्रीडा ही दर्श। बहुरि कामके अधिक प्रमाण, काम तीव्र है ताको नाम ॥ ७४ ॥ नित प्रति इन पांचनमैं भाव, सोई भव वेस्या हे राव। इनि कूं त्याग सीलव्रत धरे, सो लघु ब्रह्मचर्य अनुसरे ॥ ७५ ॥ पंचम परिग्रह अणुव्रत नाम, करे वस्त मरजादा ताम। सो प्रमाद वस वीसर जाय, लोभ उदै वा अधिक बताय ॥ ७६ ॥ स्यामल पुत्र नाममैं रहै, ताको नाम धारि करगहै। ताके अतीचार है पंच, खेत्र वास्तु इक दोनौं संच ॥ ७७ ॥ खेत्र सुखेत बाग इत्यादि, वस्तु महल घर बैठक आदि। हिर्ण स्वर्ण दोनौं इकवार, हिरन्य सुरूपादिक व्यवहार ॥ ७८ ॥ स्वर्ण स्वर्ण धन धान्य सु एक, धन गो महषी आदि अनेक। धान्य साल्य आदिक जो नाज, दासी दास दोऊ इक साज ॥ ७९ ॥ दासी चेरी दास गुलाम, कूप कपास रू सेसम नाम। तथा भांड भाजन आमर्ण, वस्त्रादिक सब संख्या कर्न ॥ ८० ॥

अधिक बढावै नाही रंच, अतीचारसो त्यागे पंच। पंच अणुव्रतको ये लहे, पचीस अतीचार गुर कहे ॥ ८१ ॥ तीन गुणो व्रत सुण सूपार, प्रथम सु दिग्व्रत इम निरधार। च्यारि दिशा फुन विदिशा च्यारि, उर्द्ध अधो दस करै समार ॥ ८२ ॥ इनकी संख्या श्रावक संच, ताके अतीचार भी पंच। प्रथम सु उर्द्ध अधिक मरजाद, पर्वत पै चढनो सोवाद ॥ ८३ ॥ अधो सु कूपादिकमैं पठै, त्रियै त्रियग कंदरमैं पठे। लोभथकी संख्या

दिस वृद्ध, करै चतुर्थ यही छित वृद्ध ॥ ८४ ॥ फुनि मरजाद करी जो भूल, ए दिग्व्रत तणे पणशूल। बहुरि देश व्रत संख्या धरै, देश नगर बन नग तरु करै ॥ ८५ ॥ तेहसैं आगै जाय न रंच, ताके अतीचार सुन पंच। भूप्रमाण से बाहर वस्त, मगवावै भेजै रु समस्त ॥ ८६ ॥ प्रथम आन इन याको नाम, प्रेम प्रयोग दुतिय दुख धाम। अन्य पुरुषकू दे उपदेश, तुम यै करो लाभ है वेस ॥ ८७ ॥ हमरे जानेकी आखरी, तातै बैठ रहे निज घरी। शब्द नाम संख्या भू बाहर, जनको शब्द सुनाय उचार ॥ ८८ ॥ खांसी अरु खंखार जु करै, ताकर निज समस्या विस्तरै। तुर्य नाम रूपाअनुपात, रूप दिखावै सब विख्यात ॥ ८९ ॥ सय्या भूमि वाज्य नरजोय, हस्त चरण सिर आदिक सोय। फुनि प्रमाण भू बाहर जने, कंकरादि छेप तिनकने॥९०॥

भेजै पत्री आदिक रोज, पत्र आयेको वांचै चोज। पुद्गल छेपा पंचम जोय, दिगव्रत अतीचार लख सोय ॥९१॥ फुनि जामैं कछु नाही सिद्ध, नित प्रति होय पापकी वृद्ध। अनरथ दंड तासुको नाम, पंच भेद ताके दुख धाम ॥९२॥ इककी जीत एककी हार। यो भण दोष प्रधान्य निहार, हिंसाकौ उपदेश जु करै, सो पापोपदेश दूसरै ॥ ९३ ॥ तरु साखा फल पत्रसु हवै। जल सींचै फुनि भूमइ खनै। विना प्रयोजन अगनि जलाय, सो प्रमाद चर ना दुषदाय ॥ ९४ ॥ तपक कुंत असि दंडसर चाप, कसी कुदाल कुठार सुपाप। विष काटा रस्सी फांसादि, इन कू मांगी देय नसादि ॥ ९५ ॥ जो देवै

सो हिंस प्रदान, फुनि पंचमसु अशुभ श्रुति जान। कथा सुनत है रागरु द्वेष, क्रोध मान छल लोभ विशेष ॥ ९६ ॥ संग्रामादिकमें अति प्रीत, सो कुश्रुत नमणो सुनमीत। वा हिंसक पसु पाले नांहि, स्वान मोर मंजार सुकांहि ॥ ९७ ॥ लोहा लाव अम गुड़ तेल, जिम कंदादि वणज सब ठेल। ए सब त्याग करै गुणधाम, अनरथ दंड व्रतीए नाम ॥९८॥ ताके अतिचार है पंच, त्याग करै सोई व्रत संच। हास्य सहित नारी जो देय। नीच ऊंचको भेद न लेय ॥ ९९ ॥ सो कंदर्प प्रथम अतिचार सुनौ कोन कुचको विस्तार। हास्य सहित गाली विमनै, देह कुचेष्टा भी फुनि ठनै ॥ १०० ॥

अरु मोखरय्या बहु बकवाद, ढीठपणासे करै अगाद। अथवा अस मिष्ठादिक कर्न, विना प्रयोजन इत उत फर्न ॥१०१॥ बिना विचार काज सब करै, चौथो अतिचार सो धरै। स्वान रु पान वसनाभूषना, मेले करे प्रयोजन बिना ॥ १०२ ॥ पंचम अतीचार सो थक्य, उपभोग रु भोगा नर थक्य। ऐसे तीन गुणव्रत दोष, पंद्रह त्याग करै बुध कोप ॥ १०३ ॥ बहुरि च्यारि सिष्या व्रत धार, बीसों अतिचार निरवार। प्रथम सु सामायक व्रत करै, राग दोष तज समता धरै ॥ १०४ ॥ प्रात मध्य संध्या त्रय समै, एक दोय त्रिमहुरत पमै। ताके अतीचार पण त्याग, मन वच काय अन्यथा लाग ॥ १०५ ॥ सामायकमैं थिर ना रहै, दोष लीन प्रण घान्य सु लहै। फुनि उछाहसूं नाही करै, अनादार चौथे सो धरै॥ १०६ ॥ प्रती-

क्रमण आलोचन आदि, भूल सु जाय पढ़े कर याद। स्मृति उप स्थापिना अंत, पांचों अतीचार तज संत ॥ १०७॥ अष्टमि और चतुर्दशी दिना, प्रोषध धरै सुगुरु इम भना। जिन मंदिर वा भूमि ममान, द्वादस षोडस पहर प्रमान ॥ १०८ ॥ विन देखे विन झारे धरा, धरै उठावै कर सांथरा। प्रोखध धर बैठे इक ठौर, देखि सुजीव बचाय बहोर ॥ १०९ ॥ सो प्रति वेखन अरथ निहार, सु कोमलोख करन तें झार। पीछी आदि प्रमर जन सोय, सुजुग अभाव करै सठ जोय ॥ ११० ॥

सो उत्सर्ग प्रथम ही भणा, भूमें मल मूतर क्षेपणा। वा जिनपूजादिक उपकर्ण, पूजाद्रव्यक पढ आमर्ण ॥ १११ ॥ विना लखे भू धरै उपाव, सो आदान दूसरो भाव। बहुरि बिछोणादिक सांतरा, सो सर ओपक्रमण तीसरा ॥ ११२ ॥ क्षुधा तृषाकर पीडित होय, प्रोषध वैश्य क्रियामें जोय। काल हर्ष बिन पूरा करै, तूर्य अनादर दूषण धरै ॥ ११३ ॥ बहुरि क्रिया नहीं राखे याद, फुनि २ भूल करै सो याद। सो संस्मृत नुप्स्थापन जान, पंचम अतीचार ए मान ॥ ११४ ॥ भोगुप-भोग करै परमान, सो तीजो सिख्याव्रत जान। एकबार भोगै सो भोग, बारबार भोगै उपभोग ॥ ११५ ॥ स्वादरुस्वाद लेय रुपेय, ए च्यारोंको भोग कहेय। बनता पट भूषण गृह आदि, ए च्यारौंपभोग मरजाद ॥ ११६ ॥ इनको करै प्रमाण जु सोय, जम अरू नेम जान विध होय। जो प्रमाण कर आयु प्रबंध, सो जमरूप कह्यौ भगवंत ॥ ११७ ॥ फुनि दिन वर्ष

पक्ष अरु मास, सो विध नेम जिनेश्वर भाष। ताके अतीचार वज पंच, प्रथमतु नेमि सचितको संच। ११८॥ भूल माखै विस्मरन मन जान, सचित अचित मिल द्रव्य प्रमान। जो कूले सो मिश्र निहार, तीजे पचलादिसु विचार। ११९॥ सचित मांहि धर भोजन खाय, सो पचित निछेप बताय। फुनि चौथेसु अभिरक बदेक, भषे अजोग वस्त अविवेक॥१२०॥

अथवा कामोद्दीपन आदि, जो त्यागे सो बुद्ध अनादि। पंचम कह्यो दुष्काहार, वस्तु गरिष्ट तजै सु आहार॥ १२१॥ पक्क अपक्क कछु इक होइ, दुखसै पचै तचै बुध सोय। चौथो शिष्याव्रत ए जान, अतिथ संविभाग पावान॥१२२॥ जाकै तिथको नाहि विचार, सो अतिथ मुनवर अणगार। ताकूं दे भोजन गुणधाम, अतिथ संविभाग गुण नाम॥१२३॥ ताके अतिचार सुनि पंच, सचित द्रव्य पत्रादिक संच। तामैं भोजन मुनकौ धरैं, सो सचित निछे पाधरै॥ १२४॥ अथवा सचित वस्तुसे ढांक, सो अप धान्य दुतिय मुनि भाक। परको द्रव्य लायकर देय, वा परकूं आग्या सु करेय॥ १२५॥ पर विपदेस तीसरो एह, बहुरि दान आदर विन देह। ना दातासू ईर्षा करै, सो मात्सर्य तुर्य भ्रम धरै॥ १२६॥ काल लंघि फुनि भोजन देय, पण कालातिक्रम सुमपेय। इनिकौ त्यागि धान जो करै, निरतिचार व्रत्य सो धरै॥ १२७॥

दोहा—कहि इक चौथे व्रतमैं, समाधमरण व्रत सार।
ताको भेद सु कहत हो, दर्शनादि विध चार॥ १२८॥

चौपाई–दर्शनके गुण चितमें धरै, दूषण जान सकल परहरै। ध्यान विचारै पंच प्रकार, धरे जीव विन कोन विहार ॥१२९॥ मूल भेद तेरह चारित्र, उत्तर भेदसु कहे विचित्र। तप बारह विधि ही निरधार, ए चौ आराधन विचार ॥ १३० ॥ मृत्य निकट आए सो धरै, ताके अतीचार परहरै। शक्ति समान आप अनुसरै, अरु विशेषको चिंतवन करै ॥ १३१ ॥ जीवनिकी वांछा सुन आदि, मरण चाह दूजै गुणसादि। जीवत मरण संसय होय, दो विधि दोष बखाने जोय ॥ १३२ ॥ मित्रन संग क्रीडा चितवै, सो मित्रानुरागी ही फवै। पूर्व भोग भोगे सुमरे, वर्तमानमें वांछा धरै ॥ १३३ ॥ सो सु सुखान बंध है तूवे, बहुरि अगामी काल जु सये। तिन भोगनकी वांछा करै, सो निदान पंचम विस्तरै ॥ १३४ ॥

दोहा–दर्शनादि सल्येषना, तक चौदह परसिद्ध।
अतीचार सत्तर कहे, लख सर्वारथ सिद्ध ॥ १३५ ॥
व्रत धारै दूसण विना, दुतिय प्रतिग्यावंत।
सो व्रत प्रतिमा दूसरी, सुण तीजी विरतंत ॥ १३६ ॥

चौपाई–सब जीवन सूं मैत्री करै, राग दोष तज समता धरै। एक स्थल बैठे स्थिर चित, ए विधि करै समायक नित्य ॥ १३७ ॥ अतीचार बतीसों टार, तासु भेद सुनियो भ्रतार। विनय रहित जु नमस्कारादि, क्रिया करै सु अनादार आदि ॥ १३८ ॥ पुनि विद्या मद उद्धत सजै, क्रिया अशुद्ध करै तनुजे। अति नजीक प्रतिमा सनमुखे, कर समायक प्रतिष्टा चखै

॥ १३९ ॥ करतैं जंघदा विनुत करै, सो प्रती पीडित चौथी धरै। पाठ समायक पढते भूल, या सुधि पठ संसय मन झूल ॥१४०॥ पढ़ौ पाव अक नांहि पढ़, ऐसे मन चंचल सु करेह। अथवा का यह लावो करै, दोष दुला यत पंचम धरै॥ १४१ ॥ कर अंगुल अंकुस सम धरै, भाल सुलाय नमन जो करै। षष्टम अंकुस दूषण जोय, करकट लाय सकुच तन होय ॥ १४२ ॥ कछप सप्तम दूषण पाय, करकट लाय शरीर हलाय। मछलीवत चंचल अति करै, सोमछली व्रत अष्टम धरै॥ १४३ ॥ सामायक करते हो धाम, लग संकलेस होय परणाम। मनो दुष्ट नवमो फुनि दसै, काय दाबि दृढ़ कर मन दसै ॥ १४४ ॥ संबोधन ग्यारम भय लखै, सुर नर पशु तनो भय वै रखै। आप सुथिरन धर्म फल चाहि, गुर संग भय तैं करै अथाय ॥१४५॥ विभवी दोष बारमो होय, संगम दिच निमित्त कर सोय। पर मुखतैं निज महिमा चहै, गौरवर्द्ध तेरम श्रम इहै ॥ १४६ ॥ इन्द्री सुख चह मान बढाय, अपन माहा तम सवै दिखाय। गौर वयसो चौदमो मान, नित अतिचार पंद्रमो जान ॥१४७॥ निज औगन लोपै इम करै, गुरसैं छिप सु समायक करै। फुनि गुरु आज्ञा विना सु छंद, कर षोडस प्रति नीत सुमंद ॥१४८॥ युद्ध कलह आदि कछु भाव, अन जीवनतै करै अथाव। सो प्रदुष्ट सत्रमो जान, फुनि तर्जित अठारमो मान ॥ १४९ ॥ धर्म भाव विन अविनय धरै, जुत प्रमाद गुर बाहर करै। इम लख फुनि तज मोने सु मनै, शब्द दोष उनीसमो ठनै ॥१५०॥

गुरु अविनय पाषंड न मान, माया माय हिलतसो जान। फुनि इकीसमो त्रिविलित दोष, जो ललाटमें त्रिवली पोष ॥ १५१ ॥ अथवा उदर त्रिवलि कर भंग, फुनि बाईसमो कुञ्चित संग। करतें सिर छिप तन संकोचि, फुनि तेईसमो दृष्टि सुमोचि ॥ १५२॥ गुरु वा अन्य लखे सुघ करै, विनय सहित अनि दृष्टि जु परै। जित प्रमाद स्वइच्छा जोक, मन तन चंचल दिस अवलोक ॥ १५३ ॥ फुनि गुरु बुद्धि मुनी ना लखै, मुद निज रूप समृदु तन लखै। मन तन चल अदिष्ट चोवीस, कर मोचन फुनि दोष पचीस ॥ १५४ ॥ लब्ध दोष छवीसमो चेत, संघ अन्य जन राजी हेत। पीछी ग्रंथादिक परिचाह, अब्ध सताईस सुण नरनाह ॥ १५५ ॥ षट्कर्मोंपर्ण गृहतने, प्रापति हेत समायक सने। ग्रन्थ अरथ विचार बिनजेह, काल लंघ हिण ठाईस एह ॥ १५६ ॥ फुनि जल दीसै पाठ जु पढ़ै, अथवा बहुत कालमें पढ़ै। पढ़ पढ़ भूल रु जुत परमाद, उद्यत चूल सु उनतीस लादि ॥ १५७ ॥ मूकेवत जू हूं हूं करै, द्रग अंगुलनतै संग्या धरै। मूक सु दोष तीसमो सोय, फुनिक तीसमो दादुर होय ॥ १५८ ॥ मेख सोरवत पाठ सु करै, एक स्थल थिर धुत उचरै। नुत पादादि मिष्ट सुर पोष, परम निरंजन चूलित दोष ॥ १५९ ॥

दोहा—दोष बत्तीस निवारिये, करै समायक शुद्ध।

सामायकप्रतिमा सुधर, त्रितीय पद अविरुद्ध ॥ १६० ॥

कवित्त—फुनि सप्तमी त्रोदसीके दिन, प्रथम जिनेन्द्र चै कै

कर भक्त। ग्रंथ सुनै फुनि मन वच तन, देकर मध्यान समय इकभुक्त, फिर मसान वा जाय जिनालय, सोलै पहर मुनी सम ध्यान ॥ इम पौसध नौमी पंद्रस दिन, असन आदि दे मुनको दान ॥ १६१ ॥ अथवा दुखित भुखितकू दे, फेर आप करई भुयवान। इह उतकिष्ट जाम द्वादस मधि, चलन हलन किरिया बिन मान ॥ जघन जाम वसु थिर पद्मासन, वा खडगासन सु अचल जु मेर। इम चौथो पद धारक श्रावक, सुन पंचमकी विध फेरि ॥ १६२ ॥ कूप वापतै जल नहीं ल्यावै, कच्चा जल वरतै ना भूल। कोंपल पत्र वकल वल्ली, कंदमूल तरु फल अरु फूल ॥ भोग निमित्त वा औषध कारण, छेदन भेदन व्यंजन आदि। कर तै छिवैन अंगरस परसै, सूंघै नाहि सचित इत्यादि ॥ १६३ ॥

दोहा—आप करे न कराय अन, अन करतै ननमोद।
मनतैं वचतैं कायतैं, सचित त्याग मल सोद ॥१६४॥
विषयभोग इंद्रियजनत, विषसम जानै सोय।
घरमैं मुनिसम भाव ग्रह, पंचमपद अवलोय ॥१६५॥
रात्रभुक्त तज षष्टमी, ताको कथन सुनेय।
दिन कुशील निसभुक्त तज, तब नृप प्रश्न करेय ॥१६६॥
दिन कुशीलसे निसभखै, पंचमतक प्रथमाद।
गौतमस्वामी यूं कहै, सुनि श्रेणिक अहलादि ॥१६७॥

चौपई—मानी डिंभ अहंटी जोय, निज श्रुत भण परनिंदक सोय। व्रत असंतोक घोर बहु कहै, पर मन रंज सुधन ठग लहै

॥ १६८ ॥ ऐसे कुटल मिथ्याती घने, तिनकी गणती कहां लौं गिने। जे को तत्वज्ञान कर हीन, अरु जिनमारगमैं परवीन ॥ १६९ ॥ मिथ्यादिक समदिष्ट प्रजंत, व्रतकू ग्रहण करै बुधवंत। विषय कषाय तजै सुभ भजै, कोई मास पक्ष तिथ तजै ॥ १७० ॥ केई त्यागै आयु प्रजंत, केई निसको असन तजंत। केई जलको त्याग सु करै, केई दिवस तनौं अनुसरै ॥ १७१ ॥ तौ कैसे करहै व्रत वंत, कनक रूप जानौ निश्चंत। फुनि पंडित अरु ज्ञानी जोय, ऐसे जीव तुछ ही होय ॥ १७२॥ काज महंत करै तुछ कहै, सो परमातम सुर थल लहै। तातैं व्रत तौ नग ही रूप, दोस सहित भाखौ जिन भूप ॥ १७३ ॥

छप्पै–रात्र सोपवावी सुपक अन्नादि धोवै, जल गालप इत्यादि दोस निस भोजन होवै। राग भावतैं अंग निरखिवा हास्य कतूहल, करै सपरसन देह बहुरि मर्दन करि हिलमिल, ए दिन कुसीलके दोस सब, त्यागै सो बुधवान नर, निस भुक्त त्याग षष्टम यही, परतग्या धारो सुवर ॥ १७४ ॥

चौपाई–सप्तम ब्रह्मचर्य ए नाम, इतस्त्र नारि तजै गुण धाम। सप्त कुधात भरी विणगेह, नव मल द्वार श्रवै नित एह ॥१७५॥ मास मास प्रति सूद्र समान, तीषण थिरीभूत ना जान। तातै सील गहै जुतवार, पेत आडित्रत नव निरधार॥ १७६ ॥

उक्तं च कवित्त–तिय थलवाप प्रेमरस निरखत, देई प्रीत भाषत सुष चैन। पूरव भोग केल रस चितत गरवाहार लेत चित चैन ॥ कर सुचि तन सिंगार बनावत त्रय प्रयंक मध्य

सुप सैन। मनमथ कथा उदर भर भोजन, ए नव वाड सील मत नैन ॥ १७७ ॥

चौपाई–ए नव दूसण त्यागै जोय, शुद्ध शील धारै नर सोय। सोई सप्तम प्रतिमावंत, दस विधि ब्रह्मन चिह्न धरंत ॥ १७८ ॥ महापुराण सुद्रिष्ट तरंग, तामांही दस ब्रह्मन अंग। तहां देखि करियौ निरधार, ग्रंथ बढनतैं भैने उधार ॥१७९॥ अंतराय भोजनमैं सात, पढय सु त्यागै बुद विख्यात। कोडी आदि अस्त निरजंत्व, दुतिय पल लख मुक्ति तजंत ॥१८०॥ रुधिर असन मय जियमृत टीक, पंचेद्री मल मूत्र पुरीष। ए पंचम फुनि षष्टम चर्म, तजी वस्तुको असनम मर्म ॥ १८१ ॥ अंतराय सातौं ए त्याग, तब भोजन भुंजय बड़भाग। सतरै नेम चितारै जित्य, इकीस गुण धारै शुभ चित्त। १८२ ॥

दोहा–ए सप्तम प्रतिमा धनी, फुनि अष्टम सुन राय।
नाम त्याग आरंभ है, पापारंभ विहाय। १८३ ॥

चौपाई–वसुपद धारि उदासी भव्य, शिव वांछी चितत कर्तव्य। जैसे तस्कर खीर चुराय, लायौ कुटंब हेत सुखदाय ॥ १८४ ॥ फिरयौ पंच थालमैं थाप, मात तात सुत तिय फुनि आप। फिर भण रूखी बिन मिष्टान, गयो लेन परजन सुखदान ॥१८५॥ पीछे तुरीय क्षुधा वम खाय, फिर मिजमान गयौ इक आय। पंचम थाल सुताहि जिमाय, एतेमैं सो मठा ल्याय ॥१८६॥ देखै तो भोजनना हाल, खोजत पूठ भयो कुतवाल। तीन दिवसको भूखो चोर, गह तलवर बांधो सु मोर ॥ १८६ ॥

फुनि मारो कीनी बेहाल, सब कुटंब मानौ ततकाल। तैसे महारंभको पाप, नरक विषै बूडै मो आप ॥१८८॥ इम विचार कर साखी पंच, अबको भार पुत्र सिर संच। आप एकांत हुवो सुखराय, असन हेत टेरै तैं जाय ॥ १८९ ॥ अपने भवनन अन्त सु कही, कछुक परिग्रह रखी संग्रही। फिर नौमी परिग्रह त्यागंत, तामैं ग्रह ममताको अंत ॥ १९० ॥ थल एकांत तिष्ट सुख सेय, प्रथम दिवस नौते तसु गेय। असन करै अपने घर तथा, अथवा अन्न भोज सर्वथा ॥ १९१ ॥

कवित्त–दसमो अनुमत त्यागी श्रावक पापारंभ न देय कराय। असन मात्र भी मान न नौता भोजन समय बुलायो जाय ॥ जो कोई टेरै ता घर जीमै विन नौते ये निश्च ज्ञान। एकादस प्रतिमा धारकके दोय भेद भाखे भगवान ॥ १९२ ॥ इक क्षुल्लक इक ऐलक जानो क्षुल्लक ऊंच नीच कुल मांहि। नीच कुलीमैं दोय भेद है सपरस अपरस सूद्र कहाय ॥ सपरस सूद्र छिये नहीं निंद्य। अपरस छिये जग करै गिलान ॥ इम भंगी चंडाल चमाररु कोली भील इत्यादिक जान ॥ १९३ ॥ जाट धोबी दरजी बढई फुनि नाई लोध तंबोली आदि। असन समय श्रावक घर जावै, आंगन तक इनकी मरजाद ॥ भक्तिवंत दाता इनि टेरैं, आगै जाय न पात्र दिखाय। लख कुघात विजात सुदित दे तत्र और घर व्रती रुखाय ॥ १९४ ॥ एक दोय वा पंच घरनतै असन लेयकर भुंजै सोय। पात्र न राखै ऊंच कुली जो भुंजै भोजन थालमैं जोय ॥ इक पट धरै पछे वरतिनपै

नासीनी अति मोटी नांहि। राग दोष भाव कर वर्जित सो क्षुल्लक कहिये जगमांहि ॥ १९५ ॥

गीताछंद–ऐलक लंगोटरु ग्रंथ पीछी कर कमंडल सोहना। सो नगन विन इकीस परिसह सहै, मुनि सम मोहना ॥ फुन खडा होय सु असन करहै बनवरसिया धीर है। वर तीन कुलको होय उपजो सो ऐसी पदवी गहै ॥ १९६ ॥

दोहा–ग्यारै प्रतिमा इम कही, किरिया त्रेपन और।

गर्भान्वय आदिक सकल, गृही धर्म सिर मौर ॥ १९७ ॥

इम सुन द्वै विधि धर्मको, कियौ सकल विस्तार।

सुन वैराग्यौ कनकप्रभ, नमन कियौ ततकार ॥ १९८ ॥

चौपाई–इम वृष सुनि निज पद थापि, नयौ कनक प्रभु मुनकौ आप। भव वनमें प्रभु भ्रम्यौ अपार, हस्तालंबन देहु विकार ॥ १९९ ॥ तव मुनने निज आग्या करी, विन दीक्षा धरि भवदध तिरी। तव संयोग भाव प्रवट्यौ, अंवर त्यागि दिगम्बर भयौ ॥ २०० ॥ भये मुनीश्वर बहु नृप लार, गहि चारित तेरै परकार। कनक नाभि आदिक जे और, श्रावक व्रत धारे गुन कोर ॥ २०१ ॥ दुद्धर तप धारै विप मुनी, धरै धरम दशलाछन गुनी। हिम ग्रीषम पावस तिहुंकाल, सहै परिसह गण गुणमाल ॥ २०२ ॥ इकल विहार जु पवन निसंग, ध्यान मेरवत निश्चल अंग। शुकल ध्यान वस घाती चार, घात सु केवल मुकर मंझार ॥ २०३ ॥ लोक अलोक चराचर

सर्व, झलकै जु हस्तावल दर्व। केवल मार्तंड जुत रश्म, मिथ्या मोह पटल कर भस्म ॥ २०४ ॥ धर्मामृतकी वृष्टि करंत, भव चात्रगकी तप्त हरंत। विहरे देस अनेक प्रवीन, अन्तम जोग निरोध सु कीन ॥ २०५ ॥

दोहा—सिद्ध थान इक समयमैं, लियौ कनक प्रभदेव।
श्रेणिक सो तुमको करौ, चिर मंगल स्वमेव ॥ २०६ ॥
तिहुं गुणभद्राचार्यनै, कह्यौ संस्कृत मांहि।
भवजन हीरा सुन हरष, अष्टम संधि मांहि ॥ २०७ ॥

इति श्रीचंद्रप्रभचरित्रे पंचमभव पद्मनाभनरेन्द्रपद प्राप्त वर्णनो नाम अष्टम संधिः समाप्तम् ॥ ८ ॥

नवम संधि।

दोहा—वंदौ शांति जिनेश क्रम, शांति कर्म करतार।
शांति करौ सब जगतमें, शांति शांति दातार ॥ १ ॥
शांति हेत गुणभद्र गुरु, करत कथा विस्तार।
गौतम स्वामी यों कहै, सुनि श्रेणिक निरधार ॥ २ ॥

छन्द वसंततिलका—श्रीधर मुनींद्र तट राय अणुव्रतधारे, वंदे पदाब्ज नर नायक घर सिधारे। हर्ष नरेश वर साधु सुदर्श लाइ, सो कंच पित्त सु वियोग करंति नाइ ॥ ३ ॥ कांवार सोभिवर देखत जाय राजा, अंबादि वृक्ष लखि सिह करेन्द्र भाजा। कल्हार वल्लि जल पूरित ताल सोहै, इन्द्रादि देव तिरअंचन रादि मोहै ॥ ४ ॥ आरूढ़ नाग परसेन सु संग आवे, छीरैं दुफेन समचोर ढरंति जावैं। सिरछत्र धारि जस उज्वल चंद्र पर्म, राजेंद्र मध्य इव सोइ जु इंद्र सर्म ॥ ५ ॥

चौपाई—बाजे दुंदभि बजे अपार, भटगण वृद्ध बलि उचार। नृत्य होत आनंद समेत, जाय लखी तब नगर सुकेत ॥ ६ ॥ मानो चपला झल झलकाय, इंद्रपुरी सम पुर सोभाय। सुनी नगरमें सुन नृप भयौ, अपने सुतको राज सु दियौ ॥ ७ ॥ सो यह आवत अब हि कुमार, देख न चले सकल नर नार। आप अपनो सब काज विहाय, मानो प्रलय उदधि उमहाय ॥८॥ पंच लोग ले भेट अपार, जाय सुन जर करी भूपार। नमस्कार करिकैं थुति भखै, नृप आनंद दृष्टि करि लखै ॥ ९ ॥ धीर

दिलासा सबकूं देय, गये नगर मांही गुन गेय। राजभिषेक कंवरको किधो, सब पंचननै नृप मानियो ॥ १० ॥ मंत्री चांवन कों मिलाय, चमू सहित दियो सिरोपाय। अपनी आज्ञा सब पै करी, फिर दिग्र साधन मनमा धरी ॥ ११ ॥ मारू बाजे तब बजवाय, दधि सम फौज लई संग राय। मगर मछ सम है गजराज, रथ धुज जुत मनु बने जिहाज ॥ १२ ॥ चंचल अश्व तरंग समान, पायक झक सम अप्परमान। बाजन धुन मनु दधि गर्जना, चलो भूप आनंद धरि घना ॥ १३ ॥ पूरब दिशके देश अपार, जीते कंवर भुजाबल धार। सोभा हेत कटक सब संग, फिर दक्षण दिस चलो उमंग ॥ १४ ॥ जे बलवंत मान धन लिये, तिनकूं अपने सेवक किये। फुन पछिम दिशके भूपाल, वस किये न्यायो निजभाल ॥ १५ ॥ फिर उत्तर दिस रिपु सिर मौर, ते सब जीते निज बल कौर। तिन तैं भेंट लेय भूपाल, कन्या रतनादिक सु विसाल ॥ १६ ॥ घर आयो नृप हर्ष विसेस, करै राज इक छत्र नरेस। सीता निषध मध्य भूमंड, ताकी आज्ञा फिरै अखंड ॥ १७ ॥ इक दिन सभा मध्य महाराज, बैठो सोहै जूं सिरराज। तब ही बन-पालक सो आय, प्रतीहार सूं कहै सुनाय ॥ १८ ॥ विनंती एक करो नृप कनै, तब चर जाय सभामैं भनैं। महाराज वनपति थित द्वार, आज्ञा द्यो तो ल्याऊं हार ॥ १९ ॥ सुनि नृप तुरत दियो आदेश, तब किंकर आयो सुद्ध भेस। वनपालककैं कहियो आप, आवो हुमैं बुलावै राय ॥ २० ॥

गीताछंद–तब चलौ आनंद धार माली भेट धा नृपकों नयौं। मन शिवंकर उद्यान माही साधु श्रीधर आवयौ॥ ता तप तने परभावसे फल फूल षटरितुके फरे। इकबार ही सब वृक्ष सूके फुनि सरोवर जल भरे॥ २१॥ दुठ जे विरोधी जन्म जीव सुप्रीत आपसमें करैं। फुन अंध निरखें मूक बोलै बधर सुन आनंद धरे॥ तसु तन सपर्सन करि पवनसो लगै कुष्टी तन विषै। सो होय कंचन सम वपु तौ और महिमाको अखै॥ २२॥

दोहा–कर परोक्षि चंदन नृपति, वस्त्राभरण उतारि।
दिये लिये माली मुदित, डंका नगर मझार॥ २३॥

चौपाई–दियौ लोक सुन हर्षित भये, सजि २ आय रायको नये। पुर परजन सेना ले लार, हय गय रथ सुकपाल मझार॥ ॥२४॥ चढि चढि चले सकल नरनार, आगैं बाजनकी झणकार। मानों इंद्र अखारे युक्त, चल्यौ जात नृप हर्ष संयुक्त॥ २५॥ सुनके देख सवारी छोर, जा सिर न्याय दोय कर जोर। कर नमोस्तु बैठे जन भूर, ना अति निकट नहीं अति दूर॥ २६॥ धर्मवृद्ध तब मुनवर दई, सुनि नृप मन संसय उपजई। धर्म नेम काको मुननाथ, ताको भेद कहो विख्यात॥ २७॥

दोहा–साधक है सुन राजई, जीवदया सोधर्म।
जीवदवे प्रभु है नहीं, दया कहनसो भर्म॥ २८॥

कवित्त–दया विना न पुन्य अघ दोनों, पुन्य पाप बिन परणति नांहि। परगति विन सब सुरग नरक भ्रम अघ शुभ

फल जिय तिनको लाइ॥ भू जल अगनि पवन गगन मिली पंचभूत आतम ठहराय। मिल गुड छालिम सक्ति मदिरा है त्यूं चैतनकी शक्ति कहाय॥ २९॥ भोग छोड जे कष्ट सहै अति परगत हेत तपस्या धार। ते चिंतामण पाय वगेलव काग उडावन हेत गंवार॥ केई एक ब्रह्म ही माने जल थल अगन पवन पाषान। तरु आदिक सब एक ब्रह्ममें दूजा अन्न न कोई जान॥ ३०॥

केई क्षणभंगुर ही भाखे, छिण छिणमें जिय आवे और। केई इक करता ही मानै नये नये जीव बनावे और॥ केईक मोष विषै आतम जो तसु, औ तारक है अगमांह। केयक ग्यान रहित शिव मानै ग्यान उपद जुत जग भरमाय॥ ३१॥ इत्यादिक भ्रमरूप कहत जग दे दृष्टांत पुष्ट सु करे। सो सब संसय दूर करो मुनि नृप वच सुन साधु उचरे॥ जीव विना संसय काकै नृप, ए पुदगल तन है जड रूप। तिन देखन जाननकी शक्ती, शक्ती गहै सोई चिद्रूप॥ ३२॥ जगवासी पुद्गलके संग सू राग रु दोष भावकूं गहै। ताकर हिंस्या झूठ तस्करी, फुनि कुशील परिग्रह बहु चहै॥ पापारंभ करै इत्यादिक ता फल नर्क मांहि सो जाय। तथा दान सील तप संयम ता फल स्वर्ग मांहि उपजाय॥ ३३॥

छपै—और कथा इक सुनौ भूप जो श्री जिन भाखी। जीव पुन्य फल पाय सत्य परगतकी साखी॥ सुनत करो निरधार दीप जम्बू दक्षण भूत। तहां आदि जिन भये रिषभ विष कर्म-

भनि हुव ॥ तिन भरत आदि सत सुतनको राज दे दीक्षा धरी। नृप सहस चार ता संग ही जिन ध्यान भक्तितै आदरी ॥२४॥ धरो ध्यान षटमास मौन गहि आतमें रत। नार अनुज नम विनय करै तुव राजसु जाचत॥ ध्यान तने परभाव धनिदको आसन कंपत। तुरत आय तिन दियो राज पग चल जुत संपत॥ जो स्वर तिथि तौ देखने आय राय तिनको किये। इम जीव पुन्य फल परगति निश्चै करि नृप धरि हिये ॥२५॥ क्षुधा तृपादि परीषह आये सहन असमरथ। प्रभु सुत पुत्र मरीच दीचके मारगमैं रत॥ तिन दण्डी मत कियो वकुलके अंबर पहरे। वन फल भख जल पीय जटा सिर नख वढायरे॥ इम कुमति चलायो दुष्टनैं मर सप्तम नरकै गयो। इम जीव पाप फल परगति, हे नृप निश्चै धरि हियो॥ २६ ॥

दोहा—पाप पुन्य फल परगती, नास्तिक मति कहंत।

सो एकांत मिथ्यात पख, मूरख जन धारंत ॥ २७॥

कवित्त—फुनि जे एक ब्रह्म ही मानैं, सर्व जगतमैं ताको रूप। सो वह निर्मल जगत सहित मल, कैसै ताकी शक्ति सु भूप॥ जो सब जग इक रूप कहत है, केथक दुखी सय केइ सुखी। अरु सब एक रूप ही होते एक दुखी होते सब दुखी ॥ २८॥ एक सुखी तैं सब हीको सुख होता नृप निश्चै करि एह। एक मरेतैं सब ही मरते इक जनमतैं सब जन्मेह॥ जन्म जरामृत तन मन धन दुख रोग सोग जुत जग जन सर्व। इनसैं रहित सु परम ब्रह्म है, पावै क्यूं या कहै जुत गर्व ॥ २९ ॥

दोहा–यौं ब्रह्मवादी कहत हैं, सो सब मिथ्या ज्ञान।
　　तास पक्ष तज भूप अब, करि जिनमत सरधान ॥ ४० ॥
　　छपै–फुनि हे नृप इक तनमैं आतम खिण खिणमैं अन। जे मानै तिनकौ अब कहिय तछे न देन ठन ॥ अथवा पुत्र पौत्रको जन्मरु मात तात प्रत। कैसें यादि रहो खिणमे जीव अन्य भूत ॥ जो याद रहे तो मत वृथा ए निश्चय करि होय थाप। क्षिण यादवन जहन असत जग, कोन देय हासल सु नृप ॥ ४१ ॥
दोहा–यह खिणकमती झूठ सदा, जगत रीत इख रीत।
　　दोनों ही ते जान नृप, अनेकांत ग्रह मीत ॥ ४२ ॥
　　कवित्त–केई करता वादी मान तन ये नये जीव करे भगवान्। अरु ताहीकी इच्छा हो जब तब संघार करत है जान॥ ताकौं कहिय तहै सुन भाई, बालक कैसी लीला ठान। प्रथम सु नाना खेल बनावे, पाछे ताकौ हनै अग्यान ॥ ४३ ॥ जगमैं जो जाकूं उपजावैं सो ताकौं कहिय तहै तात। फिर वाको संघार करे सो सुतकी हत्या करै विख्यात ॥ राग भये जब पैदा करि है, दोष भये जब करे संघार। राग दोष जुत देवन कहिये, करै हरे ये खेद अपार ॥ ४४ ॥ देव खेद जुत कैसे माने, जगवासी वत ताकौ रूप। कुंभकार जो कलस बनावै ठसक लगै कोई फूटै भूप ॥ तो वह भी अति खेद सुमानत, क्या तासम दुख वाकै नांहि। एक सुजीव हते सो पापी, घने हते से कौन कहाहि ॥ ४५ ॥ अर जो वाको पाप न लागै धर्म दयामैं

क्यों भाषंत। जो इक पैदा करै प्रभु ही तो क्यों ब्याह करै बुधवंत॥ तो सब सेवा ताको करहैं सुत चाहै सो देय तुरंत, जैसी जाकी भक्ति सुजानै तैसी ताकी भाइ करंत॥४६॥ फुनि जो करता जीव बनाए पहलै कछु थाय अरु नांहि। जो कछु था तो कौन अधिकता बहुरि कहो कछु थाही नाहि॥ तो काकी प्रति जीव बनाये ताको भेद कहो समझाय। अरु करताको करता को है, फुनि जो स्वयं सिद्ध बतलाय॥ ४७॥

दोहा—तो करतापन हो वृथा, फुनि करता जु कहाय।
स्वयं सिद्धपन हो वृथा, इक पछतैं भ्रम थाय॥ ४८॥
करता हरता जीवका, कोय न जगमें भूप।
जो करता हरता कहै, सो मिथ्या भ्रम रूप॥ ४९॥

सवैया ३१—केई अवतार वादी मोक्ष भये आतमकौ फेरि अवतार मानै ताकौ कहियत है। अपना बनायो सब जत सुत सुता सम तात ही कुवात भख्यौ तन लहियत है॥ माताको रुधिर पिता वीरजतैं उतपति माता जो चिगल गिलौ हार गहीयत है। सर्वांग सकुचित उष्णताकी बाधा महा कष्ट सेती जन्म ऐसै दुःख सहियत है॥ ५०॥

कवित—महा मल सहित रहित परमातम कैसै यामें ले अवतार। अथवा सुतके पुत्र भयौ जू, ऐसै कहत न मूर्ख गवार॥ कहोकजगकू असुर देय दुख ता रक्षाकौ ले अवतार। तो पै राक्षस किन उपजाए, ताके मनै करो निरधार॥ ५१॥ अरु जो काहीनै उपजाए प्रथम, बुद्धि कहो थी अबा दूर। अरु जो

पैदा हुये सुद्ध थे, पाछे जगमें भये सुकूर ॥ तिनके हतन हेत अनचाकर भेजन जोगहु ते निरधार। निज आए तै को महंत पन, क्रिया क्षुद्र सम जग अवतार ॥ ५२ ॥

छप्पै-कोयक जगमें करै कुकर्म गहै नृप ताकौ। बंदीखानै देव तुछ जल अन्य सु चाकौ ॥ कर फुरमायस बहुत द्रव्य दे छुटौ सुदातैं। फिर कोई कहै किहांई फुनि कहै सु वातैं ॥ मैं ह्वायन जाऊं फिर कदा कोटि द्रव्य जो आवही। फुनि मरण होय तौ यह भलौ मृत्युसे अति दुख तित लही ॥५३॥ त्यों॰ा राग रु दोष ताहि करिकै सु जीव यौ। गह्यौ मोहनी कर्म भूपनै काराग्रह दियौ॥ सतगुरुको उपदेश पायकर जपतप संयम। सुकल ध्यान परभाव लह्यौ केवल सु अनुपम॥ फिर हर अघा॰ि शिव थान लहि परमातम निजमें सुखी। सो फिर उतार जगके विषै लेकर क्यों होवे दुखी ॥ ५४ ॥

दोहा—जो शिव आतमकूं कहै, लै जगमैं औतार।
ते मिथ्याति जगतमें, भ्रमै भूप निरधार॥ ५५ ॥

सवैया २३—ग्यान विना शिव मानत केयक ग्यान उपाधि कहै सठ ऐसे। अन्न पदारथ जानन सक्ति सु सोइ उपाधि जाल हर जैसे ॥ ग्यान अभाव होय सिव पावत अगनि विना कुधात सुख तैसैं। ता भवकूं कहिये सुन भो बुध ज्ञान विना जिय भाषित कैसे ॥ ५६ ॥ अन्न पादरथ जानन ज्ञानसु आतमका सु सुभाव प्रसिद्ध। ग्यान अभाव अभाव सु आतम अगनत ताई विना न सिद्ध ॥ दीपक हर प्रकास विना जिम

आतमज्ञान बिना सु विरुद्ध। जो गुण नास गुणी विनसै सत्ति नास गुणी गुण केम सुबुद्ध ॥ ५७ ॥

कवित्त–तुछ ज्ञानी थोरोसो समझै, तातैं ताको तुछ सुख जान। जो विशेष ज्ञानी बहु समझै, तातै ताकै बहु सुख मान ॥ मति श्रुत अवधि मन पर्यय जेता जेता अधिक सुज्ञान। तेता तेता अधिक सु जानत, अधिक अधिक सुख तेम प्रवान ॥ ५८ ॥

सोरठा–कथा और चित्राम सुनै लखै समझै नहीं। हम सम मूढ न आन, ऐसे मनमैं ही दुखी ॥ ५९ ॥

सवैया ३१–द्रव्यके वसेत तुछ देखन जानन मांहि राग दोष भाव होय सो उपाधि मानियै। राग दोष विना जाको केवल सुबोध महा तामैं झलकै सु आय समेमैं प्रमानियै ॥ अतीत वरत भावी तीनौंकालके सु द्रव्य ताके गुण परजाय नंतानंत जानियै। ऐसो है सुग्यान जाको ताको नास हो न कदा ऐसो शिववासी देव निश्चै उर आनियै ॥ ६० ॥

दोहा–ज्ञान रहित शिव जीवको, कहै मूढमति राय।
तातै ए सरधातना, गहो जैन सुखदाय ॥ ६१ ॥

चौपाई–इक इक पछतैं सब भ्रम रूप, अनेकांत तै सब सत भूप। ताको भेद सुनो मतिवंत, जो समझे सो सम्यकवंत ॥ ६२ ॥

कवित्त–जगमैं वस्तु ना थिर सब नासै, यातै नास्तिक भी सब जान। क्षमादिकमैं जीव एकसा सोई नक्ष कह्यौ भगवान ॥

एह नय अशवाद सत्यारथ, फुनि छिण छिणमें पलटै भाव। अक्ष अमरूप हो प्रणमै एह नय पिणक मत्त सतराव ॥ ६३ ॥ कर्त्ता कर्म और नहि दूजो, नाम गोत्र आयु इत्यादि। नइ नइ परजाय सु धारै एह नय कर्त्तापण है स्यादि ॥ तीर्थंकर चक्री हर प्रतिहर बल संकेस जन्म औतार। एह नय युक्ति कही अवतार रु ग्यान रहित शिव इम निरधार ॥६४॥ या तनमें मन राग दोष जुत जानन ज्ञान शक्ति निरधार। जबतक ऐसो ग्यान धरै जिय तब तकही भिरमें संसार ॥ सो उपाधि माखी जिन नायक याको नास भयै भौपार। यो नृप ज्ञान विना शिव जानी, समझै नाहीं मूढ गवार ॥६५॥ ऐसो जीव चतुर्गति माही, भटकै पाप पुन्य फल भोग। सो अनादि कालतैं भूपति नंतानंत जन्म संजोग ॥ तातैं सत्यारथ मारग गह, जो सुर सुफल है सहज नियोग। अनुभव भ्यास करै शिवपद लह नातर फिर निगोद संजोग ॥ ६६ ॥

चौपाई—फुनि ए पुद्‌गलीक सब लोक, दीखै दग सूं गुरु अस्तोक। सक्ष अद्र समै धर्मा धर्म, काल अकासादिक ए पर्म ॥ ६७ ॥ पुद्‌गल अणुकर्म वर्गणा, देखै अन्यनि केवली विना। जीव अनादितै पुद्‌गल संग, मोहित राग दोष मय अंग ॥ ६८ ॥ मन वच तन जोगनसूं करै, तातै कर्माश्रव विस्तरै। सो दो विध सुभ पुन्य सरूप, असुभ पापमैं जानो भूप ॥ ६९ ॥ इक कषाय जुत सो सांपराय, इर्यापथ इकसो अकषाय। पंचेंद्रीनिकु दे सुक लाय, चौ कषायमै प्रवृत कराय

॥ ७० ॥ अव्रत पंच मांहि परणवें, अरु पचीस किरया नही फवे। सव उनतालीस भेद सुजान, सांपराय आश्रवके मान ॥ ७१ ॥

दोहा–संसय कर कोऊ कहै, क्रिया भेद कहो कोन।
श्रीहरिवंस पुराणमैं, देख लेय बुध मोन ॥ ७२ ॥
उयत भावन मूं जु इक, मंद भाव सु एक।
जाण अजाण पणे इकिक, भाव रु बल इकएक ॥ ७३ ॥
लखे तीव्र मंदा अवे, ए छह विधि सु जोय।
जैसो बीज सु बोइये, तैसो ही फल होय ॥ ७४ ॥
आश्रव भावन शक्तिता, जीवाजीवक होय।
भिन्न हुए आश्रव नहीं, निश्चै जानो सोय ॥ ७५ ॥

सवैया ३१–पापके आरंभको विचारै फुनि समगरी जोडि तिप कारजकूं करतन भांतिजी। फुनि मन वच तन तीनो जोग लगाव करतरुकाम वन कर्ता कुसरातजी ॥ क्रोध मान माया लोभ तासिके उदेसै आवै, आरंभादि तिननकूं तिगुण करातिजी। नव मनादिक भए क्रतादिकसै सत्ताई क्रोधादिकसेती वसु पत जो विख्यातजी ॥ ७६ ॥

छप्पय–आश्रव भेद वसु सत एही, निसि दिन आवैं ता रोकनके हेत मालके मणिका मावे। वसु सतक हैं जिनराज निसाको पाप जु रोकै ॥ प्रातकाल की जाय दिवस अंधसंख्या सोकै। ए सिष्या श्रावककों कही विन जाप होय विधि बंध फुनि इक्यकि बहु भेद पर ज्यूं आश्रव तिहु बंध ॥ ७७ ॥

कवित्त–सो आश्रव है दोय भेदको इक परवर्ति निर्वर्ति सु एक। लिखि चित्राम क्रिया इत्यादिक खेती फेर मिटावै टेक॥ सो प्रवर्ति निवर्ति कषाय सूं क्रोधादिकके वसतै होय। बहुरि निक्षेपा च्यारि भेद हैं ज्यौंकी त्यौं थापै इक जोय॥७८॥ द्वितीय औरकी और सुथापै, तीज करै उतावल जान चौथै भूले करै इक नाही, च्यारि निछेपे ए परमान॥ जुग संजोग बाह्य आभ्यंतर अग्रहके संग आश्रव होय। त्रिनिसर्ग मन वच कायातैं, सब ग्यारै विधि आश्रव जोय॥७९॥ नीके तत्व अर्थकूं जानै, जो पूछै न बतावै ताहि। तत्त प्रदोष नाम है याको, दूजो निन्हव सुण नर नाह॥ दर्सन ज्ञान तथा तिन जुत जो ना परसंस करत सुहाय। तथा ग्रंथ मांगो नहि दे है जोग पुरुष सू दगा कराय॥८०॥

दोहा–निन्हव दोषको अर्थ यह, भ्रमै नंत संसार।
　　मूक होय ग्यान न फुरै, मातसर्य त्रय सार॥८१॥

कवित्त–जाको सुबुधि सुधी पै आवै, पढन हेत ताकूं इम अखै। कहा पढै तु बुद्ध हीन है. भली वस्तुको देख न सकै॥ व्रखमैं विघन करै दुसण तु, रिदेय अमाता पंचम आहि। गुणी पुरुषकी विनय न करि है, नागुण करै कहै गुण नांहि॥८२॥

दोहा–एह उपाधि है षष्टमो, इन सु छहुतै जान।
　　ज्ञान दर्शनावरणको, आश्रव भण भगवान॥८३॥

पद्धडी–दुख सोक आताप विलाप, चार मारन दुखकारी वच उचार। इन छहतैस्त पर कहा राव, दुठ असद वेदनीकर्म आव॥८४॥

छप्पय–प्रथम भूत अनुकंप दया पालै षटकाया, दुतिय दान परधान व्रतीकुं दिय सुख पाया। त्रय सराग संयमी छठे गुणठाणाधिक है, जिय रक्षा षटकाय इंद्रि मनको वसि रख है॥ कर जोग सु मन वच काय, थिर क्रोधादि तजनसौ छांति। सो इन पांचनतैं जानिये, हो सद वेदा भव पांत ॥ ८५ ॥ प्रथम केवली दुतिय शास्त्र त्रिय संग मुनादिक, तुर्य अहिंस्या धर्म पंचमै स्व २ भवनादिक। इन पांचोको अर्थ औरको और बखानै, दर्श मोहनी कर्माश्रवसो निश्चै ठानै॥ फुनि तिव्र कषायके उदयलिय, हो प्रणाम कारज करै। सो कर्म चरित्र सु मोहके, आश्रव कारण विस्तरै ॥ ८६ ॥

चौपाई–बहु आरंभ परिग्रह घना, सो नरका युष आश्रव भना। माया पशुगति आश्रव करै, अल्पारंभ परिग्रह धरै ॥८७॥ तथा सहज कोमल परणाम, सो मनुषायुष आश्रव धाम। सील व्रत एको नहीं धरै, सो च्याऊं गति आश्रव वरै ॥ ८८ ॥ श्राग संयमी श्रावक जाती, द्वितीय असंयम सो समकती। अकाम निर्जरा तीजे जान, इच्छा बिन जपतप बहु ठान ॥८९॥ सहै परीषह कोमल भाव, तप अग्यान सु बाल कहाव। इनि पांचनितै सुर गति लहै, मन वच तन त्रिय चक्र सु रहै ॥९०॥

दोहा–इठतैं और सु और कहैं, साधरमी सु जोय।
विषमवाद सो असुभ ही, नामाश्रव विधि सोय ॥९१॥

सोरठा–जोग सरल त्रिय रीव कहै सत्यको सत्य ही।
साधर्मी मूं प्रीत शुभ नामाश्रव विधि लखो ॥ ९२ ॥ निर्मल

कर परणाम सोलहकारण भावना जो भावै बुधग्राम, सो तीर्थंकर पद लहै ॥ ९३ ॥

अडिल्ल–परकी निंद्या अपन बड़ाई कहत है, अपने गुनपर औगन प्रघट्यो चहत है। अपने औगन परगुनको जो ढांकहै, नीच गोत्रको आश्रव ताकै भाख है ॥ ९४ ॥

चौपाई–अपनी निंद्या पर थुत अखै, अपने गुणपर औगन ढकै। निज नय चलै गुणीकों विनै, निज बुध तप बहु मदन हि ठनै ॥ ९५ ॥ उच्च गोत्रको आश्रव यही, अन्तराय आश्रव सुन सही। धर्म काजमें विघन सु करै, बहुरि सु दान भक्ति विस्तरै ॥ ९६ ॥ तीन सु पात्र कुपात्र सु एक, भोग कुभोग सु आश्रव टेक। ए आश्रव भाख्यौ जिनराय, अब सुन बन्ध भेद नरराय ॥ ९७ ॥

गीता छन्द–मिथ्यात अव्रत फुनि प्रमाद कषाय जोग सदीवजी। बन्ध कारण कहे जिनवर इन सहित जो जीवजी ॥ पुद्गल प्रमाणे रूप आवै करमको जो गहत है। सो बंध प्रकृति सु आदि चवविध आप जिनवर कहत है ॥९८॥ सो जाननेकी शक्तिसे कै मति श्रुतादिक विध पणं। फुनि देखनेकी शक्ति रोकै दर्शनावरणी भणं ॥ है सोइ नवविध चक्षु द्रगतैं अचक्षु मन इंद्री तुरी। फुनि अवधि केवल चार ए विध पंच निद्रा संग धरी ॥ ९९ ॥ जो अल्प सोवै श्वानवत्, सो करम निद्रा जानियै। फुनि बहुत सोवै सम दरिद्री, निद्रा निद्रा मानियै ॥ बैठो सु सोवै अर्द्ध मुद्रित, द्रग कछुक श्रुति प्रचला। फुनि सोवते कर चरण हालै, राल वह भषै प्रचला ॥ १०० ॥

दोहा-शोल उठै कारज करै, नींद न छांडे रंच।
स्यानगृद्ध सो नींद है, देखन शक्ति संमुच ॥ १०१ ॥
जास उदय दुख सुख लहै, जीव सुद्धय विधि जान।
सोइ वेदनी कर्म है, कह्यौ वीर भगवान ॥ १०२ ॥

चौपाई-कर्म मोहनी दो विधि ख्यात, दर्श मोहनी तीन मिथ्यात। चारित मोह कषाय पचीस, मिली दोनो सु भई अठवीस ॥ १०३ ॥ च्यारूं गतिमें थित जो धार, सोई आयु च्यारि परकार। आयु कर्म याहीको नाम, प्रकृति तिरणवै फुनि विधि नाम ॥ १०४ ॥ गति कहिये च्यारूं गति च्यार, जाति एकेन्द्री आदि निहार। पंच भेद फुनि पंच शरीर, आंगोपांग आदि त्रिय धीर ॥ १०५ ॥ जैसे जहां चाहिये चिह्न, तैसे तहां होत ये भिन्न। सो निर्माण करम इक संच, पंच बन्ध संघातन पंच ॥ १०६ ॥ जैसो तन तैसो बधान, फुनि संघतन तावत मान षट संस्थान सषट संघनन, वसु सपर्श पंचरस घरन ॥१०७॥ दोय गंध विधि पंच जु रंग, जो आगै तन होना संग। सोई आनपूरवी जान, च्यारि प्रकार सुगति सम मान ॥१०८॥ जाके उदय न भारी देह, अगुर सोय फुन लघु सुन लेय। जाके उदय न हलवो होय, पुनि अपघात सुनो अवलोय ॥ १०९ ॥ कूप बावडी पर्वत सिंधु, सरता अगनि विषै पड अंध। विख भख कर रु शस्त्रतैं घात, इम निज मरण करै अपघात ॥ ११० ॥

एम उपद्रव परकूं करै, वांत्रना आपेकूं अनुसरै। जाके

उदय होय ये बात, सोई प्रकृति कही परघात ॥ १११ ॥
जाके उदय तेज तन होय, प्रकृति अताप कहावै सोय।
जाके उदय देह उद्योत, सोई प्रकृति कही उद्योत ॥ ११२ ॥
जाके उदय होय उछास, सो उछास प्रकृति मुन भास। जास
उदै नभमैं गम करै, सो सुविहायोगति विध वरै ॥ ११३ ॥
इक तन समंधी इक जीव, सो परतेक प्रकृतकी सीव। इक
तनमैं बहु जीव वसंत, सो साधारण प्रकृति कहंत ॥ ११४ ॥
जाकै उदै ये इन्द्री आदि, लहै सोई त्रिस विध मर जाद।
जासु उदै तन लहै इकेंद्र, सो थावर विध कहै जिनेंद्र ॥ ११५ ॥
जास उदै हो सबकू भला, सोई सुभगे करमकी कला। जास
उदै लग सबकूं बुरा, सोई दुर्भग विधि विस्तरा ॥ ११६ ॥
जास उदै सुकंठ पिक बैन, सोई सुसेर प्रकृत सुख देन। जास
उदय वच समखर काग, सोई दुसुर प्रकृत फल लाग ॥ ११७ ॥
जास उदै तन सुंदर लहै, सो सुभ प्रकृति उदयको गहै। जास
उदय तन होय विरूप, सोई असुभ प्रकृतिको रूप ॥ ११८ ॥
जास उदय तन सूछम लहै, सोई सूछम प्रकृति सु गहै। जास
उदै बादर तन लहै, बादर नाम प्रकृति सो गहै ॥ ११९ ॥
जास उदय लहै सब परजाय, सो परयापति प्रकृति सु भाय।
जास उदय लहै कम परजाय, सो अप्परजापति तन पाय ॥ १२० ॥

जाके उदय सुथिरता लहै, नाम कर्म इम सो स्थिर गहै।
जास उदै थिरता नही होय, प्रकृति अथिर सु कहावै सोय
॥ १२१ ॥ जास उदै बहु आदर मान, सोई आदर प्रकृति

प्रमान। आदरमान न कोई करै, जास उदै सु अनादर धरै॥ १२२॥
बिन खाचे जगमैं जस होय, जास उदै सो जस विधि जोय।
बहु धन खरचै जस नहीं रंच, जास उदै सो अजस विधंच
॥ १२३ ॥ जास उदय कीरत प्रघटंत, सोई कीरत नाम कहंत।
जस कीरत दोनों इक रूप, ताके भेद सुनो हो भूप ॥ १२४ ॥
तुछ देसमैं जस प्रघटंत, कीरत दूर देस फैलंत। नाम उदय
तीर्थंकर होय, सो तीर्थंकर प्रकृति विलोय ॥ १२५ ॥

नाम कर्म ए प्रकृति तिरानु, अब सुन गोत्र भेद दो मानु।
ऊंच वंसमें जन्मसु ऊंच, नीच वंसमें नीच ही सूच ॥ १२६ ॥
अंतराय विधि पंच प्रकार, प्रथम दान नहीं करै गवार। अंत
सु राय दान विघ यहै, उद्यम करै न कौड़ी लहै ॥ १२७ ॥
लाभ अंतराय विधि सोय, स्वाद सुगंध वस्त घर होय। भोग
न सकै भोग अंतराय, पट भूषण रामादिक राय॥ १२८ ॥
सो उपभोग छतै नहीं भोग, अंतराय सोई उपभोग। जास
उदय उद्यम बलराय, फुर न सकै सुवीर्य अंतराय ॥ १२९ ॥
जाकै अनंतानुका उदा, ताकै सम्यक होय न कदा। उदय
अप्रत्या जाकै होय, श्रावक व्रत धर सकै न कोय ॥ १३० ॥
प्रत्याख्यान उदै आवरै, सो मुनिव्रत कबहु ना धरै। उदय च्यार
संज्वलन जु होय, यथाख्यात चारित नहीं कोय ॥ १३१ ॥
दोहा-ज्ञान दर्शनावरण जुग, जुग मिथ्यात अधीस।
नींद पंचत्रय चोकड़ी, सर्व घात इकीस ॥ १३२ ॥

संज्वलन चारि हास्यादि नव, ग्यान दर्स चव तीन।
अंतराय पण अद्दस इक, छवीस देस हण चीन ॥१३३॥
घात सैतालीस नीच दुख, नर्क आव इक एक।
संस्थान संघनन वर्ण, पंच पंच रस टेक ॥१३४॥
नर अन पसूगति पुरवी, दोय दोय वसु फास।
गंध दोय इंद्री तुरी, अप्रसस्य गत जास ॥१३५॥
अथिर अप्रजतुछ, साधारन थिर अपघात।
असुभ दुर्भग दुसर अनादरो, अजस पापमई सत्य ॥१३६॥
एक शतक जानिये, पुन्य प्रकृति अठसट्ठ।
देव मनुष्य पशु आव त्रय, सातावेदिक ठट्ठ ॥१३७॥
ऊंच गोत्र सुर नरगति, आनपुरवी दोय।
इक निरमान रु स्वास इक, पंच पंच सुन सोय ॥१३८॥
बंधन संघात रु तन वरन रु रस पचीस।
इकत्रस अंगोपांग त्रय, इक सुभ जुग गंधीस ॥१३९॥
वसु फर्स इक अगरु लघु, एक पंचेंद्री जात।
आदि ठान संहनन इक, इक बादर विख्यात ॥१४०॥
प्रत्येक सथिर परजाप्त जस, अताप उद्योत प्रघात।
सुसुर सुभग आदर तीर्थ पुन्य प्रकृति विख्यात ॥१४१॥
ठैंतर जीव विपाककी, बासठ देह विपाक।
क्षेत्र विपाकी चार है, च्यार सु सुभव विपाक ॥१४२॥
आठ कर्मकी प्रकृति, एक सतक अठ तार।
प्रकृतिबंध या विध कह्यौ, थितबंध उपरि निहार ॥१४३॥

उत्तमाद त्रय बंधपर, प्रकृत उदय सो आय।
सो विपाक फल अनुभवै, तिमख्याना दिल हाय ॥१४४॥
करम उदयकूं भोगते, एक देस छय होय।
एक देससे निर्जरा, बंधनुभाग है सोय ॥१४६॥

अडिल्ल–असंख्यात परदेस जीव केईक कपै। पुगल अनंतानंत प्रमाण भिन लिखे ॥ सो प्रदेस ही बंध जिनेस्वरने कहा। आश्रव काजु निरोध सोई संवर महा ॥ १४६ ॥

दोहा–तप आदिकतैं कर्म छय, सोइ निरजर जान।
शुद्ध आतमा होय तब, सोई मोक्ष प्रमाण ॥१४७॥

चौपाई–इत्यादिक मुनि धर्म बखान, राजा हर्षित भयो प्रमान। पिछले भव सब पूछत भयो, मुनि विस्तार सहित कहि दियो ॥ १४८ ॥ श्री ब्रह्मा आदिक भव तनौं, सुनि नृप मन संशय ठनौं। मोकों कैसे है इतबार, प्रतिछेद कछु करौ उचार ॥ १४९ ॥

सोरठा–दसमें दिन गज आय, करै उपद्रव नगरमें। तातैं हे नरराय, करि निश्चे सब कथनकों ॥ १५० ॥ केइयक मुनि व्रत धार, केइक श्रावक व्रत धरो। कैइक समकित धार, यथा जोग्य सबने गहो ॥ १५१ ॥ फिर वंदन मुनिराय, करकै नृप घरकू चलै। आनंद हर्ष बढाय, बाजे भेरि निसान ठय ॥ १५२ ॥

चौपाई–नगरमांहि कीनो परवेश, निसदिन सुखमें जाय विशेष। दशमो दिवस पहुंतो आय, तब ही गज मायो दुखदाय ॥१५२॥ कालवरण मुसलोपम दंत, गंडमूल पै अली भ्रमंत। मद धारा मनु बरषाकाल, जंगम गिरसम मनुज मबाल ॥१५४॥

कंपत अंग फिरावत सूड, महावृक्ष पाडै जूं झूड। गिरसमकोट रुढाये पोल, मेर शिखरसम महल अमोल ॥ १५५ ॥

हाटन पंकतिको बाजार, ढाव तवनकू करै हाकार। जिह दिसकू गज भागो जाय, तिह दिसके सब लोक पलाय ॥१५६॥ वारणके चक्के जो परौ, सो जम मंदिरकू अनुसरौ। रक्ष रक्ष कह भागे जाय, नृपके आंगन बहु जन आय ॥ १५७ ॥ पूछै राय कहा यह भयौ, तब लोकनने सब कह दियौ। तब ही सबकूं धीर बधाय, आप ही गजके सनमुख जाय ॥१५८॥ घनी देर तक क्रीडा करी, गजकी घात चुकाई भरी। कृष्ण वस्त्रकी गेंद बनाय, हथनीकी संज्ञा सुकराय ॥ १५९ ॥ कुंजर सनमुख फेंकी भूप, सूंघन लागो देख अनूप। मानौ करनी पौंहची आय, कंधे चढ़ो दाब नृप पाय ॥ १६० ॥ मुष्ट प्रहार भालमैं देय, फेरो गज मद रहित करेय। सौंप महावतकूं गज साल, बंधवायो गजकूं भूपाल ॥ १६१ ॥ महीपाल नृपको गज हुतो, बंध तुडाय आइयौ हुतौ। नृपनैं तुरत ढूंढायौ ताहि, पाई खबर अजुध्या मांहि ॥ १६२ ॥ पदमनाभ नृप गंह बांधियौ, दूत बुलाय रु समझा दियौ। आदित प्रभुकौ कीनौ विदा, पदमनाभ पै भेजौ तदा ॥ १६३ ॥ जा प्रतोलिये ते उचार, महीपालको दूत दुवार। अग्या द्यो ल्याऊं तुम तीर, नृपनै कहा सु ल्यावौ वीर ॥ १६४ ॥ तुरत आय लेय कर गयौ, दूत विनय सूं नृपकू नयौ। धन्न सुवंस धन्न भुजबली, दंती पकडि दियो सांकली ॥ १६५ ॥

निज प्रतापतै छिती वस करी, नृप अनेक सिर आग्या धरी। कोस देस सेना अधिकार, तातैं तुम सबमें सिरदार ॥ १६६ ॥ महीपाल नृप राजन ईस, हजारों नृप न्यावे सीस। ताको करी भूप यह जान, तुमकूं यादि किये बुधिवान ॥१६७॥ बहुत भेट अरु गज ले चलो, नमस्कार करि ताते मिलो। सो करहै तुमसे सनमान, करो राज निह कटक आन ॥ १६८ ॥ नृप सुत दूत वचन सुन जबै, क्रोधवंत ह्वै बोल्यो तबै। जो तेरे नृपमैं बल भूर, चढि आवो लैके सब सूर ॥१६९॥ रणसंग्राम करो सो आय, जो जीते सो गज लेजाय। नातर हमरी आज्ञा वहो, देश तजो कै सिर न्या रहो ॥१७०॥ इम कह दूत दियो कढवाय, तुरत दूत निज पतपे जाय। नमस्कार करि कह्यो हवाल, सुनकर त्यार भयो महीपाल ॥ १७१ ॥ सरवघात औषधकी खान, वेल वृक्ष पद्म अपरमान। ऐसो भूभृत है मण-कूट, ताके तले भूमिसम घूट ॥ १७२ ॥ तिह रण खेत ठरायो राय, पद्मनाभ रणभेरि दिवाय। सजकर चलो चमू ले संग, झरण झरण रथ चले अभंग ॥ १७३ ॥ तरुण तुरंग जुपे धुज जुक्त, मानो देव विमान सु उक्त। जंगम गिर सम वारण स्याम, मानो सुर कुंजर अभिराम ॥ १७४ ॥ चंचल हय हिन हिन कर घनो, गत मृदंग पौन सुत मनो। तिनके खुरन उठी रज जई, दिस दिस अंधिकार भई भई ॥१७५॥ भूकंपित करते चर चले, नाना शस्त्र हस्त धर भले। चक्र रु कुन्त धनुष सर गदा, भिंडमाल मुदगर परघदा ॥ १७६ ॥ सक्ति तुपक क्रोचं असि

दंड, इत्यादिक आयुध परचंड। नेक छोहनी दल ले रास, पोहचे मण कूट सुपास ॥१७७॥ मकराव्यू रच्यो भूपाल, मगर-मच्छ सम सेना डाल। महीपाल वी सजकर चलो, हय गय रथ पायक ले भलो ॥ १७८ ॥ मगकी सोभा लखते जाय, बन परिवत सरिता सुखदाय। नेक छोहणी दल ले लार, ताको भेद सुनो विस्तार ॥ १७९ ॥

सवैया ३१—एक रथ गज एक तीन घोडे पांच प्यादे आदि पत दुजे सेना सेनमुख सार है। चौथे गुल्म वाहन सु पांचमें पतन छठे चमू सप्त अनीकनी आठवे सु धार है ॥ तिगुण तिगुण आठो फिर दस गुणो कर आठसे सतर इकीस हजार है। तेते गज छसेंदस पेंसठहजार अस्व, प्यादे साढेतीन सतलाख नोहजार है ॥ १८० ॥

दोहा—आकर मण कूटाद्र तट, चक्राव्यू रच सार।
　　फिर जुग सेना लडत है, करत परस्पर मार ॥ १८१ ॥
　　जय रवजसको जिम गयो, हेत सुलोचन जुद्ध।
　　तैसे ही उनको हुयो, गजके हेत विरुद्ध ॥ १८२ ॥
　　जुद्ध बहुत दिन तक भयो, को कवि करे बखान।
　　महीपालको सीसवर, छुनो स्वर्णप्रभ आन ॥ १८३ ॥
　　सोका कायो नृपतिको, पद्मनाम लइ जीत।
　　वाके सुतको राज दो, फिर घर आयो मीत ॥ १८४ ॥

चौपाई—विष्टरस्थ इक दिन दरबार, विवुध सु मध्य सक्र इव सार। अखिल सु भूप भेट धरनमें, पदम सुनाम भूर बल-

पमैं ॥ १८५ ॥ रणकी कथा चली तिहवार। तब भूपने इम उचार। देखो पुन्य भयो जब गोन, महीपालसे लइ जम मोन ॥ १८६ ॥ तौ अरु क्षुद्रतनी को कथा, मोहित जीव भूलियो वृथा। संपति विपति लिये सुख सोग, जोबन जरा संयोग वियोग ॥ १८७ ॥ इत्यादिकसु अथिर सब जान, सर्ण बिना जिय होय हरान। जगवासी पर निज कर गहै, तू तिहुंकाल अकेलो रहे ॥ १८८ ॥ अरु चिन मूरति रूपी देह, सात कुधात भरी चिन गेह। या संग रागादिक कर सेय, विषय कषाय सु आश्रव एइ ॥ १८९ ॥ तज रागादि गहै निज धर्म्म, सो संवर सुनि निर्जर पर्म्म। तप बल कर्म्म खिरै दुखदाय, लोक सरूप यथास्थित भाय ॥ १९० ॥ तू है ज्ञान सरूप सदीव, ताको जानन दुर्लभ जीव। इह विचार मन भयो वैराग, पद्मनाभ राजा बड़ भाग ॥ १९१ ॥ महीपाल पुत्रादिक जेह, तिनसे छिमा करी गुण गेह। सुवर्ण नाम सुतको दे राज, आप चले वन दीक्षा काज ॥ १९२ ॥ विहरत आये श्रीधर मुनी, तिनतट जा नृप संस्तुत ठनी। धन्य दिगंबर अंबर बिना, पावस हिम ग्रीषम रितु गिना ॥ १९३ ॥ सुर नर पशु अचेतन कृत्य, सो उपसर्ग सहो तुम सत्य। धीर मेर सम निहचल अंग, शस्त्र बिना जीत्यौ सु अनंग ॥ १९४ ॥ अंतर राग दोष छल कोह, मान लोभ मत्सर हन मोह। इत्यादिक जीते मुनिनाथ, सिर न्याऊं जोडूं जुग हाथ ॥ १९५ ॥ दुखसागर संसार असार, तातैं काढ करौ भवपार। तब मुनि कहै सुनौ नर नाह, नर भव

गयो मिलै फिर नाह ॥ १९६ ॥ तातै दस दिष्टांत अवार,
कहुं सुनो जो जानौ सार। जाके सुनत होय वैराग, धर्म विखै
बाढ़ै अनुराग ॥ १९७ ॥

दोहा—चोला फासा धान्य त्रय, इत रतन फुनि सुम।
चक्र कूर्म जुडा सु नव, परमाणु दस क्रम ॥ १९८ ॥

अथ चौला दिष्टांत।

सवैया ३१—चक्री पै चोलक भुक्त मांगै ताहू पूछे नृप, जैसो होय तैसो देवै भेद सो बताईये। जाचक कहत ऐसे मुकटादि आभूषण, सुंदर वसन झीने मान दे पराईये॥ चावलादि भोजन मनि छत थानेकूं देवै आप और पटराणी आदि पै दिवाईये। छहों षंडवर्त्ती भूप मंत्री सेना सेठ आदि सब परजाय भिन्न तैसे ही कराईये ॥ १९९ ॥

दोहा—पय यह मिलनो कठिन अति, होतौ अचरज नांह।
ताही तै नरभव कठिन, गयो मिलै फिर नांह ॥ २०० ॥

अथ फांसा दिष्टांत।

कवित्त—इक पुरस तक पोल पोलन, प्रतग्यारै ग्यारै सहस सुथंभ। थंभ थंभ प्रति छनवै बैठक, बैठक प्रतज्वारी जुत झिम। खेलै तिनमें इक ज्वारीन, पत सब ज्वारिनितैं इम उच्चार। मम फांसा गेरुं जो जी तूं जीतो धन सब देह अवार ॥ २०१ ॥

दोहा—मानी सब तक फेंकियो, फांसा पुन्य वसाय।
लहै जीत अचरज नहीं, गयो न नरभव पाय ॥ २०२ ॥

अथ धान्यक दिष्टांत।

जैसे एक महान नृप, सब परजाको अन्न। गर्त मांहि इकठो कियो, फिर इम कहो सवन्न ॥२०३॥ अपनेर अन्नको, कर पिछाण ले जांहि। ए बातै मिलनी कठिन हो, तो अजरज नाहि ॥ २०४ ॥ पण मानुष भव अति कठिन, गयो न आवै हाथ। जसे रतन समुद्रमैं, फेंकि मूढ़ पछतात ॥ २०५ ॥

अथ द्युत दिष्टांत।

कवित्त—इक पुर पण सत पौल, पोल प्रतिपण सत द्युत साल प्रति साल। इकिकमैं पण सत खिलै, नित वैदस दिस गए विसाल। फिर उन मिलन कठिन अति जानौ, मिलै पुन्य वस सब सु कदाचि। तो अचरज नहि कठिन मनुष भव, गया न फिर आवै जिन वाच ॥ २०६ ॥ इति ४ ॥

अथ रतन दिष्टांत।

दोहा—द्वादस चक्रीके रतन, जे सब पृथ्वी काय।
दैवजोग होई कठे, तौ अचरज मत ल्याय ॥२०७॥
पण मानुष भव अति कठिन, गयौ न पावै फेर।
जैसे तरु ते फल गिरै, नांहि मिलै सो फेर ॥२०८॥

अथ स्वप्न दिष्टांत।

कवित्त—काहु नृप कीने द्वय विसत थंभ थंभ प्रति चक्र सु एक। इकक चक्र सहंस आरे जुत कोर कोर प्रति छिद्र सु एक॥

तिन चक्रनको घुमट फिरावे, परे पुतली सुंदर एक। नार रूप सो फिरे चक्र सम तान धर्मैं मोती जुट एक ॥ २०९ ॥ चक्र चक्र प्रति इकक कोर व्रण, व्रण ढिग चिन्ह कियो बुधवंत। बुद्ध विसार वतीर चलावे भयो दिष्ट जलमैं निरपंत ॥ चिह्न छिद्र सबमैं सिर निकसत वे सिरको मोती वीधंत। यह बात अति कठिन जगतमैं हो तो अचरज नाइंत ॥ २१० ॥

दोहा—पण मानुष भव अति कठिन, गयो न आवै हात।
जैसैं जो बनके गये, कामीजन पछतात ॥२११॥

अथ कुरुम दिर्शांत।

चौपाई—उदध स्वयंभूरमण मझार, इक कछवा दीरघ तन धार। निज तन चर्म विखे व्रण पाय, सहंस वरसमैं रवि दरसाय ॥ २१२ ॥ फिर उस व्रणमैं देखो चहै, सूरज दृष्टि कभू ना लहै। पै यह कठिन मिलै विध जोग, नर भो गयो न मिलै संजोग ॥ २१३ ॥

अथ जूडा दिर्शांत।

पूरव दिस जूड़ा दधतीर, कीली पछिम दिसमैं वीर। पय वह मिलै तो अचरज नांहि, नर भव गयो न फेरि लहांहि ॥२१४॥

अथ परिमाण दृष्टांत।

अडिल—चक्रवर्तको दंड रतन चव हाथ सों, तिस परमाणू पिरैं मिलै किह भातसों। फिर परमाणू मिलै सर्व अचरज नहीं, नरभव गयो न आवै श्री जियो कही ॥ २१५ ॥ इति ॥

चौपाई—कथाकोस आराधन सार, तामें दस दिष्टांत निहार।
इम दुर्लभ यह नर परजाय, यातैं यत्न करौ नृपराय ॥२१६॥

उक्तं च कवित्त—ज्यू मतहीन विवेक बिना नर साज उतंग जु ईंधन ढोवै। कंचन भाजन धूर भरे सठ सार सुधारस सू पग धोवै॥ वो हित काग उडावन कारन डार महामणि मूरख रोवै। यो नरदेह दुर्लभ सुपाय विसय वस होय अकारथ खोवै ॥ २१७ ॥

दोहा—इम मुनने वरनन कर्यौ, बढौं अधिक वैराग।
नृप सुनके मनमें गुणे, दिछाको अनुराग ॥२१८॥
फिर मुनवरको नमन कर, भयौ दिगम्बर धीर।
पंच महाव्रत धारकै, भयौ सुगुण गंभीर ॥२१९॥
सो मंगलके हेत ही, वरतो श्रेणिक राय।
तुमरै अरु सब भव्वनकै, गोतम एम कहाय ॥२२०॥
इसो कह्यौ गुणभद्र गुरु, उत्तर नाम पुराण।
कवि दामोदर भाष इम, चंद्रप्रभ पुराण ॥२२१॥
ता संस्कृतकूं देखिकै, अथवा भाषा और।
हीरालाल सु चीनवैं, सु कवि सुधारो पोर ॥२२२॥

इति श्रीचंद्रप्रभपुराणे पंचमभव पद्मनाभमुनिव्रतग्रहणवर्णनो नाम नवम संधिः समाप्तम् ॥ ९ ॥

दशम संधि।

छप्पय छंद–वन्दों श्री जिनवीर तासकी दिव्य ध्वनिमें, खिरो सु गणधर इंद्र भूत भण दृष्टवादमें। सो गुणभद्र उचार ग्रंथ उत्तर सुर वचमें, कवि दामोदर कह्यौ संस्कृत चंद्र चरितमें। सो वीरनंदि कह्यौ काव्यमें, भाषा हीरा करत है। श्रीपद्मनाम मुनिराज, तप सक्ति समान सु धरत है॥ १॥

चौपाई–सो बारे विधि कह्यौ जिनंद, अनसन ऊनोदर गुणवृंद। व्रत परसंख्या रस परित्याग, विविक्त सय्यासन वैराग॥ २॥

दोहा–तन कलेष पट वाजु तप, फुनि अन्तर पट वर्ग।
प्राश्चित विनय वैयाव्रत, स्वाध्याय व्युत्सर्ग॥ ३॥

चौपाई–ध्यानादिक सुन अर्थ अवार, जैसो जिन शासन विस्तार। इक दिन आदि बरस लग करै, चार प्रकार असन परहरै॥ ४॥ सो अनसन ऊनोदर फेर, पौण अद्ध चौथाई हेर। एक ग्रास अथवा कण एक, करै हार बहु धरै विवेक॥५॥

दोहा–कृत कारित अनुमोदना, मन वच तन कर त्याग।
नव कोटी सुध भक्त इम, करै साधु वड भाग॥ ६॥

चौपाई–घृत दधि दूध तेल मिष्टंच, लोन एक द्वै त्रि चव पंच। छहौं त्याग इम भोजन करै, रस परत्याग सुत अनुसरै॥ ७॥ एक दोय घर नर वा नारि, ऐसे वसन इहसो अहार। बनै तो लेय नहीं तौ त्याग, सो व्रत परसंख्यात पराग॥ ८॥

सुना घर कंदर गिरसीप, बसकांतार विशेष मुनीस। या विन संघ इकाकी जान, सो विवक्त सिज्या सनमान ॥ ९ ॥ हिम ग्रीषम पावस रिततनी, सह समभाव परीसह गुनी। काय कलेस सोई जुत भेद, यह तप बाह्य तने छह भेद ॥ १० ॥ अब अंतर तपके सुन राय, प्राश्चित भेद आदि नव थाय अलोचन प्रतिक्रमण रु मिश्र, फुनि विवेक व्युत्सर्ग विश्च ॥ ११ ॥ छेद परिशेप थापना, अब इन अर्थ सुनों बुध जना। आलोचन गुरुके ढट जाय, ताके दस दूसण छिटकाय ॥ १२ ॥

छप्पय–उपकरणादिक भेट देय निज सक्ति छिपावे, अन्न न लखं सु दोष लोपना दीर्घ जनावे। पण प्राश्चित भय हेत दीर्घकूं लघु बतावे, गुरु सेवा नित करै दोसकूं कहन कहावे। गुरु कलकलाट मैना सुनै प्राश्चितमें संसय धरै, छेदं समानक साघ पै अन प्राश्चित लख अनुसरे ॥ १३ ॥

चौपाई–ए दस टालक है निज दोस, विनय नम्रता जुत गुण कोस। दंड देय सोई परवान, लेय करै तैसे बुधवान ॥ १४ ॥ जैसे पटकै लागो मैल, धोए शुद्ध होय विर फैल। मंजी आरसी उज्जल जेम, प्राश्चित लिये शुद्ध मुनि तेम ॥ १५ ॥ लगा दोसको जुत परमाद, सामायक जुत करै सु याद। सो मिथ्या हो इम वच भनै, सो आलोचन प्रथमहि ठनै ॥ १६ ॥ प्रतीक्रमण सु पाठ फुनि पढै, तुछ दोस कोउ ताहूं कढै। सो दूजे तदुभय तीसरे, आलोचन प्रतीक्रमण सु करे ॥ १७ ॥ सो तीजे तदुभयकर यादि, तुर्य अन्न जल उपकरणादि। हो संसर्ग दोष जुत तजे, सो विवेक प्राश्चितको सजे ॥ १८ ॥

तनोत्सर्ग व्युत्सर्ग सु पंच, अनसनादि षष्टम तप संच। सु-षठावन इकदिन पक्षमास, दिछा सो सप्तम छिद भास ॥१९॥ संग बाह्य कर पक्ष मासादि, सो परिहार अष्टमयसादि। आदि छेद दीछा फुनि देइ, छेदोस्थापन नवमो एइ ॥ २० ॥

सोठा–जुत प्रमाद जे दोस सल्य अवस्था अन्य तज। रहै मूजाद गुण कोंप, उज्जल भाव प्रकासि है ॥ २१ ॥ सो प्राश्चित धारंत, विनय भेद फुनि चार मुनि। ज्ञान दर्स चारित, फुनि उपचारसु अर्थ सुन ॥ २२ ॥ मान रहित थिर हेत, ग्यान ग्रहन अभ्यास कर। ग्यान विनय इम चेत, संकादि दूसण विना ॥ २३ ॥ तत्त्वारथ सरधान, दर्स विनय फुन चर्ण सुन, ग्यान दर्स जुतमान, चारण त्रिवै सब भान मान ॥२४॥

दोहा–आचार्यादि प्रतक्ष जो, तिनै देख उठ गछ।
सनमुख कर जुग जोडकर, विन उपचार प्रतछ ॥ २५ ॥
वापरोक्ष गुण सुमरि करि, करि उरवचन बहु भक्ति।
मन वच तंतै होइ सो, ज्ञान चारण सुध युक्त ॥ २६ ॥

चौपाई–विनय यम वैयावृत सुनो, दसविध सुर गुरु जुग मुनो। तपसी सिख गिलानगण कुली, सच साधु मनोग्य महली ॥ २७ ॥

छप्पय–जिनतैं व्रत आचरे सोई आचारज जानो। जिनतै पढै सु ग्रंथ सोई उवझाया मानो ॥ पख मास दुपवास करै बहु तपसी सोहैं सिष्याके अधिकार पठन आदिक सिख जोहै ॥ जो रोगादिकतैं छिन तनने गिलानि फुनि गण सुनौं। मुन

होय बड़े पर पाटके, निज गुरके सिष कुल गिनो ॥ २८ ॥
रिषधारी सो रिषी अच्छरस करै अतीसो। मनपर्यय अरु अवधिज्ञानकूं धरै मुनि सो ॥ त्यागै घर सामान सोई अनगार कहिज्ज। चारि भेद इम मुनि समूह सो संग भणिज्जे ॥ फुनि साधु दिठ तवहु दिनन लोक मान सु मनोग्य है निज मान त्याग तिन टहल कर सो वैयाव्रत गुरु कहैं ॥ २९ ॥

दोहा–वाचन पूछन चिंतवन, आमनाय उपदेश
पंच भेद स्वाध्यायके, अर्थ सुनो नरेश ॥ ३० ॥

छप्पय–ग्रंथ दोष बिन पढ़ै पढावै देय सुवाचन। भरम हरन दृढ करन हेत पूछै सो पूछन ॥ जान यथारथ रूप द्रव्यको चिंतवन प्रेक्षा। शुद्ध घोषनो पाठ सोइ अम्नाय प्रतिछा ॥ व्रष कथा आदिको ग्रहण करे सो धर्मोपदेशवर। इम स्वाध्याय तपकूं करै फुनि व्युत्सर्गसु तप सुकर ॥ ३१ ॥

दोहा–दस विधि परिग्रह बाह्यको, अंतर चौदह भेद।
नेम तथा जम रूप तज, सो व्युत्सर्ग अभेद ॥ ३२ ॥
जो पूछै उत्तर यही, धन धान्यादिक बाज।
जो लीनो महाव्रतमैं, फुनि हारादिक साज ॥ ३३ ॥
सो दसलक्षिणी धर्म्ममैं, प्राश्चितमैं प्रति पक्ष।
दोपन हेत रु तप विखै, कह्यो समान सु लक्ष ॥ ३४ ॥
फुनि तप ध्यान सु षष्टमो, आरतादि विधि च्यारि।
सोलै भेद संयुक्त ही, प्रथम कीयो उचार ॥ ३५ ॥
चौपाई–विध संस्थान ध्यान विध च्यार, प्रथम नाम

पिंडस्थ निहार। फिर पद

प्रसस्थ ॥ २६ ॥ अ

मुनिवर पेख। पं

नम रूप ॥ २७

छप्पय-

तासर म

ंच

इन इन्द्रकी

॥ भेद पिंडस्थ

मध्यलोक सम गोल क्षीरद

। इक कमल सहस दल चितै मुनिजन

दीप जंबू सम जानो, मन अलि तावै

मानो। सो कंज तनी तापै थपै विहरतविसत

निज रूप पढ़ावै तासु पासो चितैं रागादि विन ॥

दोहा—अडिल विन अनुभौ करै, पृथ्वी तत्व सरूप।

यह पिंडस्थ सु अंग है, मन तरंग विन

इति पृथ्वीतत्व

कवित—मनमैं चितै

प्रमान। घन

काव्य–स्वस्तं वर्णिकार यों फेर कंचन सद प्रज्वलित मंत्र अनाहतसै, प्रगट अग्नि घग २ प्रबलित अक्ल अष्टदल भस्म करै स्वयमेव सांति द्वय। यह पिंडस्थ सुज्ञान त्रिय गुण अग्नि-तत्त्वमय ॥ ४२ ॥

इति अग्नितत्व।

सुर विमान मुनि रचै ता समै ध्यान लगावै। चलै पवन परचंड बहै तिरछी सुहलावै॥ घन सम गर्जे अत्यंत कर्मरज सीत सुहावै। सकल छार सु उडाय फिर शांति होजावै ॥४३॥

सोरठा–पवन तत्त्व इम जान, अंग तुरिय पिंडस्थ यह। अब सुन गगन बखान, पंचम अंग सु ध्यानको ॥ ४४ ॥

इति पवनतत्त्व।

कडिषा छंद–धातु विधि कालमारूप सुविकार विन निर्मल देह जिम सिद्धि मोहै। एम चितवन करै थापि त्रिष्टगु तन अतिम चौंतीस प्रतिहार्ज जो है॥ पुन्य फल प्रकृति सब इंद्र तित सेव करि जयकार चहुं ओर हो है। एम पिंडस्थ त्रिय पंचमी सो करै जासु चंचल सुमन ठौर हो है ॥ ४४ ॥

इति आकाश तत्त्व।

दोहा–मन निरोध जिह पंच विधि, कह्यौ ध्यान पिंडस्थ।
जातै थिर मारग सधै, आगै सुनौ पदस्थ ॥ ४५ ॥

इति पिंडस्थ ध्यान।

कवित–बारन अंक ध्यान सिद्धादिक षोडस सुर थापै दल कंज। नाभि मध्य अ आ इत्यादिक फिर हिरदै चौबीस दल कंज॥ कु चु टु तु पु सवर्ग पचीस ए किरणका दिप थापित

जाय। फुनि मुखकमल सुदल वसु जापर य र ल व स ष स ह दलप्रति थाय ॥ ४६ ॥ मंत्रराज धारे मध्य वरण ह्रींकार सु इक थापै सर अंक। द्वादसांग वानी प्रगटै जब श्रुत दधि तीर लहै सु निशंक॥ उदर पत्र जुत कवल सु ध्यावै जपत जाप सुख रुचि आनंद। खांसि स्वास तिव्रागन कुष्ट रु उदर विकार नरहै जलंद ॥ ४७ ॥

काव्य—मंत्रराज ह्रींकार जान फुनि हिरदयमैं धरि जप तप कर मनह। ऊन कछु जिन समतै वर ग्यान बीज गह ध्याय होय जिन जगजन नमतै जन्म अगनिको मेघ जपो इक वर सुख पमतै ॥ ४८ ॥

कवित्त—इस साधनकी विधि जानो ता मध्य रूप अब चल जाके ताको ध्यान करै तिव ध्यावै फिर मुख अंबुज तालव रोक फुनि निकसत तहां सुधा झरत है नेत्र पत्रपै दर्श वहोर ॥ अलक चाद ग्रहमंड विदारै कर विहार रवि मंडल फोर ॥ ४९ ॥ ससितै दुति अति तित रहै उछलत विधिको तम हर भव भ्रम महान। फिर सो आवै भ्रुजथलपे पूरक कुंभ करे चक ठान पवनाभ्यास ॥ सिष कर साधै पूरक जहां पवन खैंचाय। कुंभक अचल सुतन भर बैठै रेचक सौ दीजै निकसाय ॥ ५० ॥

दोहा—पवनतत्व ध्यानत गह, मंत्र अनाहत तंत्र।
　　कुंभक कर सो चितवे, जानै विधि सर्वत्र ॥ ५१ ॥
　　फुन षोडष दल कमल सम, कवल किरणका मध्य।
　　ह्रींकार ससि सम लसै, ता मुख अमृत वृद्ध ॥ ५२ ॥

चरपै ध्यानी मुन लखै, फिर ध्यानी है ताहि।
श्रेय प्रदक्षुण कमल दमल, नम मऊ छारै ताहि ॥ ५३ ॥
कवित्त–फिर जुग जुगपै आय विराजे अधिक जोत ताकी प्रघटाय। नमै सुरासुर विश्व तत्त्वको दीपसु विद्या लहै अघाय॥ है सर्प्प विष ध्यानी ध्यावै इम पट मास सु धुम्र निकास। सुखतैं देखि प्रतिक्ष जतीसो फुनि रुछु दिन बीते इम मास॥५४
दोहा–अगनि फुनि रु प्रतिक्ष जिन लखै होय आनंद।
पण कल्याणक फिर लखै, भव्य कमल सु दिनंद ॥५५॥
प्रगट स्वयंभू जानसो, निद्रा मोहि विनास।
भवसागरसै पार ह्वैय, मुक्ति सिला पर वास ॥ ५६ ॥
सिद्ध अर्थ ह्रींकारको, कह्यौ ग्रंथ व्याकर्ण।
बुधजन साधै सिद्ध करि, मठ नहीं समुझै वर्ण ॥ ५७ ॥

इति ह्रींकार।

कवित्त–परम तत्त्व नाम अर्हंको चितैं आदि करै फिर ध्यान। होइ मुक्ति फुनि चन्द्र रेखसम रवि दुति जन्म मरण सब हान॥ अथवा अलक सु अग्र भाग सम चितै निश्चल ह्वै इक चित्त। अष्ट सिद्ध अणिमादिक प्रगटय जो को मुनि ध्यावै इम नित्य ॥ ५८ ॥
दोहा–लछमी हो है वृद्ध अति, सकल सुरासुर सेय।
शिवपद लहै चौगति वमैं, अर्ह ध्यान धरेय ॥ ५९ ॥

इति अर्ह मंत्र।

छप्पै–सुर षोडसमै आदि अकार अनाहत मंतर। चन्द्र रेख सम तुछ दिस रव समरत अन्तर॥ वा जिहाज चढि भये

धार भये संसार सिंधुतैं। शांत भाव भये बाल अग्रपम ध्याय युद्धवैं ॥ फुनि करि चित्त निश्चल विषय तज जगको जोत मह सु लख। इम ध्यानत अनमादिक लहै, दैत्यादिक सेवै प्रतख ॥ ६० ॥

इति अकार मंत्र।

प्रनवनाम-ॐ मंत्र दुष्ध ज्वाला कुमेरसम, श्रुत उद्योत प्रकाश करणको दीप अनुपम। हे पवित्र फुनि शब्द रूपको उतपति कारण, सुर व्यञ्जन कर वेष्ट कमलमध हिये सुधारण ॥ थिर भाल रेख सषि सम झरत सुधाकर भवनको अगनि। सुर देव इन्द्र पूजित सकल तत्व महान् प्रभा धरन ॥ ६१ ॥

सोरठा-पांच शतक कर जाप, फल पावै उपवास इक। लख निरजन सम आप, करैं सिथल विध बन्धको ॥ ६२ ॥

छप्पै-महामंत्र महाबीज महापद हिमरितु ससि सम। रचे तरंग कुंभक कर चिंतै फुनि सिंदुर जिम ॥ वा मुगा सम सर्वं जगतकूं छोभ करत है। स्थंभन हेत सुपीत स्याम विद्वेष धरत है ॥ वसकरण हेत ध्यावै सुरंग सेत चितवैं शिव अरथ। इम ॐ वरणको ध्यान कर परमेष्टी वाचक अरथ ॥ ६३ ॥

इति ॐ मंत्र।

चौपाई-नमस्कार जो पंच परमेष्ट, करैं मंत्रको ध्यान सुनेष्ट। सब जग जनको कारण पवित्र ससिसम स्वेत कमल वसु पत्र ॥ ६४ ॥

छप्पै-मध्य किरणका मांहि णमो अरिहंताणं धर। पूरव

दिशिके मांहि णमो सिद्धाणं फिर कर ॥ दक्षण दिसके मांहि णमो आइरियाणं ख़र ॥ पश्चिम दिसके मांहि णमो उवझायाणं भर। णमो लोए सव्वसाहूणं उत्तर दिसमैं थाप है ॥ फुनि सम्यक् दर्शनाय नम अगनि विदिश मांहि गहै ॥ ६५ ॥

दोहा—सम्यक् ग्यानाय नमः, नय रितु वे दिसि मांहि।

सम्यक् चारित्रायनमः, वायवदि दिसा ठांहि ॥ ६६ ॥

फुनि सम्यक् तपसेनमः, थावै विदिश इशान।

एही मंत्रपरभाव करि, पावै मुनि शिवथान ॥ ६७ ॥

छपैय—मंत्र तने परभाव रहित अघ सुधी तरं जग। कष्ट पडैं तब हो सहाय रक्षक सब ही जग ॥ करै हजारो पाप करि हिंसा बहु पहली। अंत भाव सुष जपै पसू पावै सुर गैली ॥ तिन कथा पुराननमैं घनी मन वच तन सुष सुन जपै। सो हार करत उपवास फल ए महिमा याकी दिपै ॥ ६८ ॥

दोहा—मुनि महंत तपके धनी, च्यार ज्ञान धारंत।

ते महिमा नहि कहि सकै, तौ अनकिम भापंत ॥ ६९ ॥

इति नमोकार मंत्र।

गीता छंद—अर्हत् सिद्धाचार्योपाध्यायसर्वसाधुभ्यो नमः। इम षोडसाक्षर मंत्र जप सत उभिक प्रोषधि फल पमः ॥ अरिहंत सिद्ध षडा कि त्रिष सत मंत्र जप प्रोषधि फला। जप असि आउ सा सतिक चव जो होय प्रोषध इक फला ॥ ७० ॥

इति षोडश फुनि षट फुनि पंच अक्षर मंत्र।

चौपाई—अरिहंत च्यार वरणको मंत्र, च्यार पदारथ देय

तुरंत। कामार्थादिक तावत जाप, ऐक व्रत फल पावै आप ॥७१॥

इति चतुराक्ष मंत्र।

दोय वरणको मंत्र जु सिद्ध, ताको जपत लहै सिव रिद्ध।
कह्यो मुनीश्वर श्रुतमें सार, जग कलेशको नासनहार ॥ ७२ ॥

इति दुवाक्षर मंत्र।

दोहा–पैंतिस षोडस षट रूपणि, च्यार दोय इक वर्ण।
सात जाप ए नित करै, सोलहै सुर शिव भर्ण ॥ ७३ ॥
एक वरण मैं प्रण वहै, मंत्र और बहु जान।
विद्यानुवाद पूरव विषै, गणधर कियो वखान ॥ ७४ ॥
बीज वर्ण साधन क्रिया, चमतकार लौकिक।
स्थंभन मोहन वसिकरण, उच्चाटन तहकीक ॥ ७५ ॥
मंत्रण फल उपवास इक, कह्यो सु रुचिकैं हेत।
निश्चै कर सुर सिव लहै, अधिक कहा इम चेत ॥७६॥
ए पदस्थको रूप ही, कह्यो सुमन थिर काज।
परमनाभ मुन गहत निज, थिर आतम पद राज ॥७७॥

इति पदस्थ ध्यान।

कवित्त–मुनि रूपस्थ ध्यान विध ल्यावैं, सर्व कुदेव सेव जिनराज। नन्त चतुष्टय वंत शतिंद्र जु करैं सेव नाना विध साज ॥ समवसरण लक्ष्मी कर मंडित ताको ध्यान करैं इक चित्त। तनमय होय सो सुर शिव पावै सो मुनिवर पद वंदौ नित्य ॥ ७८ ॥

इति रूपस्थ।

कवित्त—तप विन जो जगमें जिय थंभन मोहन उच्चाटन फुनि मार। चेटक नाटकादि मंत्रणको साधै तो ते मुनी उच्चार॥ सिद्धाक्षरके मंत्र इत्यादिक तिनसे रिद्ध सिद्ध सब होय। अणिमादिक इनितै मति रोकै रूप रहित ध्यावै अवलोय॥ ७९॥ आकुल रोग विकार रूप तन रहित सहन परम रस गेहि। त्रिभुवन व्यापी पुरुषाकार सु तुछ घाटि चर मांस सु देह॥ सिद्ध रूपको ध्यान करै इम तावत निज आतम फुनि ध्याय। तनमय होय छाडि दुविधा करूं पातीत ध्यान इम भाय॥८०॥ दोहा—वचनकोस सनमति चरित, अर ग्यानार्णव जान।

तिनमें कह्यो विशेष ही, यां तुछ कह्यो वखान॥८१॥

इति रूपातीत।

इम बारै विध तप करत, पद्मनाभ मुनिराय। फुनि तप नाना विधि तपत, सो सुन श्रेणिक राय॥ ८२॥

छप्पय—तपलक्षन पंकित सुमेरु पंकित विमान जुग। चल विमान मुक्तावली जिनगुण संपत जुग॥ वर्द्धन आचाम्ल वसु करम हरन चारित्र सुद्ध फुनि जुगब सर्वतोभद्र। त्रिमण वर रत्नावलि गन॥ मिरदंग मुर्ज मध वज्र त्रय शांति कुंभ व्रपचक्र जुग। फुनि रुद्र वितरण वसंत इक दिपमाला अष्टानक सुजुग॥ ८३॥ चक्रपाल दुपहरन पैंतीस नमोकार वर। नंदीश्वर कल्यान सीलसुख संपत विधिकर॥ चौवीसी सम्यक्त भावना पच्चीसी कृत। चौवीसी तीर्थेस षोडश कारन दशलक्षण व्रत। श्रुतग्यान पंच अरु लब्धि विधि। सिंह निष्क्रिडित

खुगमधर ॥ फुनि इत्यादि वस्तु अधिक सत । जिनभाषित व्रत सफल कर ॥ ८४ ॥

अथ वचनकाय मद्ध सिंहनिष्क्रीडित व्रत विधान।

उपवास १, पारना १, उ० २, पारना १, उ० १, पा० १, उ० ३, पा० १, उ० २, पा० १, उ० ४, पा० १, उ० ३, पा० १, उ० ५, पा० १, उ० ४, पा० १, उ० ६, पा० १, उ० ५, पा० १, उ० ७, पा० १, उ० ६, पा० १, उ० ८, पा० १, उ० ७, पा० १, उ० ९, पा० १, उ० ८, पा० १, उ० ७, पा० १, उ० ८, पा० १, उ० ६, पा० १, उ० ७, पा० १, उ० ५, पा० १, उ० ६, पा० १, उ० ४, पा० १, उ० ५, पा० १, उ० ३, पा० १, उ० ४, पा० १, उ० २, पा० १, उ० ३, पा० १, उ० १, पा० १, उ० २, पा० १, उ० १, पा० १, सारे उपवास एकसौ पैतालीस १४५। पारने बत्तीस ३२। सर्व दिन एकसो सतंतर १७७ मांहि व्रत पूर्ण होहि है।

इति व्रत विधान।

चौपाई व्रत अरु तप बलके परभाय, उपजे रिद्ध सुनौ मन लाय। बुद्ध औषधी तपबल चार, रसविक्रिय क्षेत्र क्रिय सार ॥ ८५ ॥ प्रथम सुबुद्ध अठारे लीज, केवल अवधि मनपरजय बीज। कोष्टरू भिन्नरु पादनुसार, दुरा स्पर्शन बसुमि विचार ॥ ८६ ॥ दूरा रसनरु दूरा घ्रान, दुरा श्रवन एकादश ज्ञान। दूर विलोक चतुर्दस पूर्व, प्रत्येक सुबुद्ध चौदमी सर्व ॥ ८७ ॥

निम्मल ज्ञानवाद बुद्ध प्रज्ञ, दस पूर्वरु अठारमी अन्य । अब इनके गुण भिन्न २ सुनों, सुन बुद्ध बढै पाप सब हनों ॥ ८८ ॥ छहों दरव गुण पर्जय वर्ते, तीनलोक तिहुकाल प्रवर्त । करमैं आवल सम लख जोय, केवल बुद्ध कहावे सोय ॥ ८९ ॥ गति आगम भव बात जु कहै, पूछे विना भेद ना लहै । कहै सुजब कोउ पूछे तास, अवधि बुद्ध या विधि परकास ॥ ९० ॥ तीन भेद ताके पहिचान , देस परम सरवावधि जान । देशावधि सुदेस इक कहै, छेत्र एक परमावधि लहै ॥ ९१ ॥ दीप अढाईको व्याख्यान, करै सु सर्वावधि बल ठान । मनपर्ययतैं निर्मल बुद्ध, सबके मनकी जानै सुद्ध ॥ ९२ ॥ रुजु विपुलमति भेद सु दोय, सरल सुभाव रिजुमती जोय । सूधी टेढी सब मन लखै, विपुलमती मुन बरसत अखै ॥ ९३ ॥

सोरठा—परमा सरवावद्ध विपुलमती केवल चतुर । लहै सु तदभवसिद्ध, होनहार आगैं रत्र ॥ ९४ ॥

चौपाई—पढत एक पद बहुपद लहै, बीज बुद्धको फल है यहै । एक श्लोक अर्थ सुन ग्रंथ, लह सर्वार्थ कोष्ट बुध पंथ ।९५॥ नोवा राजो जन दल चक्र, देस२ जन वचन सु वक्र । मने एक वर सबको जान, खोस भिन्न श्रोत्र बुद्धिवान ॥९६॥ आद अंत इक पद सुनै, ग्रंथ अरथ जानै अरु भनै । वासक ग्रंथ कंठतैं कहै, पादनुसार सातमी यहै ॥ ९७ ॥ फरस आठ गुण फरस अंग, रिष धारी मुनको सु अभंग । दीरघ द्वीप अढाई लहै, लघु जोजन नव वसु गुण कहै ॥ ९८ ॥ फुनि रस

पंच अढाई द्वीप, होहै प्रघटसु कहुं महीप। रिष धारी तट सब सुन मेव, दूरा रसनरिद्ध बल एव ॥ ९९ ॥

सोरठा–नासा विषै सुगंध, वा दुरगंध लहै सकल। ढाई द्वीप प्रबंध दूर घ्राण बल रिष दसम ॥ १०० ॥

गीता छंद–सुर सप्त दूराश्रवण बलतै सुनै ढाई दीपकी। दूराविलोकन तैल खेपण रंग त्यौं जुसमीपकी ॥ दस पूर्व ग्यारै अंग फुनि पढि पढै अर्थ बखानहै। रोहणादिक पंचसत लघु सप्त सतक महान है ॥ १०१ ॥

दोहा–क्षुल्लकादि सब आयकै, हावभाव जुत मान।
करै सुथिर रहै ध्यानमें, दसपुर वारिष थान ॥१०२॥

पद्धड़ी–चौदह पूरव अरु अंग सब, विन सम पढ़ै अरु भणै भव। सो द्वादसांग श्रुत ईस साध, चौदह पूर्वी तेरमि अराध ॥ १०३ ॥

दोहा–संयम चरित विधान सब, विन उपदेसे जान।
दया दमन चख घोर तप. यह प्रतेक बुधमान ॥१०४॥

चौपाई–इंद्रादिक जे विद्यावान. आवै वाद करण धर मान। सब मद गलै इकत्तर सुनै वाद बुद्ध सोलम सुध सनै ॥१०५॥ तत्त पदारथ मंयमदर्व, अनंत भेद लघु गुरु तिन सर्व। द्वादशांग वानी विन कहै, प्रज्ञा बुद्ध सतरमी यहै ॥ १०६ ॥

दोहा–अंतरीक्ष भू अंग सुर, व्यंजन लक्षन छिन्न।
स्वप्न मिलै सब जानिये, अष्ट निमित्तन अन्न ॥१०७॥

चौपाई–रवि ससि ग्रह नक्षत्र तारादि, तिनको उदय अस्त

प्रश्नादि। तीन वर्त भावी शुभ अशुभ, जान कहे फल अंतरिक्ष सु शुभ ॥ १०८ ॥ द्रव्यादिक जे भूममय छिपी, सर्व बतावै शाखन लिपि। भूमिकंप फल वरतै जिसो, भूमिनम्मत दूपरो इसो ॥ १०९ ॥ नर पशु अंग उपंग जु लखै, तथा फरस सब दुखसुख अखै। वैद्यक सामुद्रिक अनुसार, करुणाकर भाखै उपचार ॥ ११० ॥ यही अंग तीसरो नाम, सुनौ चतुरथी सुर अभिराम। खग चौपदकी भाषा सुनै, होनहार भावी सो भनै ॥ १११ ॥ नखसत तिल मस्से लछमनादि, सामुद्रिकतैं जुदे अनादि। तिन फलको शुभ अशुभ बखान, व्यंजन अंग तनौ इम ग्यान ॥ ११२ ॥ श्रीवत्सादिक लक्षण लखै, अष्टोत्तर सत संख्या रखै। करपद परत शुभाशुभ कहै, लक्षन अंग कहावै यहै ॥ ११३ ॥

काव्य—छत्र भंग दुति सस्त्र प्रहाररु आसन कंपन राखक सुरनर चरित चमूचल मूखक कंठन। अंग भंग पट हुक पह्यो आदि विनासै, यह छिन अंग सुदेष सुभासुभ " सुभासै ॥ ११४ ॥ सकल पदारथ जगत तनै ते स्वभाव' करि विचार सुभ असुभ तासुफल सब परघट भाषै' निमित्त भाष सब संसय मेटै, सो अष्टादस बुधि सुभेटै ॥ ११५ ॥

॥ इति श्री ...

दोहा—चिटमल आमय ...

सुनिये ...

अडिल–मुनिकी विष्टा लगै रोग सबको हरे, निर्मल होय शरीर रिद्धि विटगुण धरे। दांत कान मल नाक तनों लग गद्द हरे, करै धातु कल्याण सकलमल रिध धरे॥ ११७॥ रोग सोग दालिद् जुत मानहु हीन है, होत छुवत हो सांति आम गुन यह लहै। श्रम जल मैं रज लगै अंग सुषदुष हनै, जल्ल रिद्धि यह नाम चतुरथी मुनि भनै॥ ११८॥ मूत्र थूक षंषार राल मुनिकै अनै, फरसदेह दुष हनै सुष्प छुल्लक फनै मुनि तन फरस समीर लगै जग जननकै, दुष नासै सुष करै अंग रिध गुरुनकै॥ ११९॥ अहि काठो विष पियो होय काहू जना, मुनि दिठरे नसाय दष्ट रिध गुण मना। मुनिको विष दे कोउ न व्यापै मुख लरै। वाक्य सुन विषअम जननको परहरै॥ १२०॥

दोहा–सर्पादिक तिन वास लह, मुनितट रह न कदापि।
रिद्धि महा विष गुण यही, कहै जिनेश्वर आप॥ १२१॥
सबै औषधि रिध यही, भाषी अष्ट प्रकार।
अब बल रिद्धि त्रिविध सुनो, मन बच तन बल धार॥ १२२॥

गीता छंद–दुर श्रुतावरणी विधि छयापसमते सु अंतरमुहूर्तमैं। वर अर्थ समझै मन विषै सब द्वादशांग सु सूर्तमै॥ बिन खेद मन बल ज्ञान एही वचनतैं फुनि भाषि है। फुनि वचन बलतैं पठय तन श्रम नाह तन बल राष है॥ १२३॥

दोहा–त्रिविधि रिद्धि बल एक ही, सुन तप रिधविध सात।
घोर महत उग्गरि दिपत, तप्त घोर वृम ष्यात॥ १२४॥

गीता छंद–सो श्मसानमैं जोग रुचिहं करै थिरवर

मुनिवरा, श्री पद्मनाभ सु लहीत प्रबल घोर रिध यह गुण धरो। व्रत सिंहक्रीड़ित आदि इकसत्र आठ क्रम २ सब करे, उपवास मौनंतराय पाले महत रिध यह गुण धेरे ॥ १२५ ॥

कवित्त–अनसन इक बेला अरु तेला अष्टनक फुनि पक्षरु मास, बरष आदि मुनि करें आयु तक उग्र उग्र इम रिद्ध निवास। करत घोर उपवास मुनी बहुघटै न क्रांति तनन दुर्गंध, यह तप दीप्त रिद्ध मुन धारे। पद्मनाभि मुनिवर गुण सिंधु ॥ १२६ ॥ करै आहार निहार न करैहै तप्त लोहपै जैसे नीर, सूक जाय नहीं पीर होय कछु तप्त रिद्ध पंचम तप वीर। अतिचार विन पद्मनाभ मुनि घोर गुणा यह षष्टम रिद्ध, दुस्सुमादिक होत कदाचित तो क्रियकी कहा प्रसिद्ध ॥ १२७॥

दोहा–घोर ब्रह्म यह गुण धरै, रिद्ध सात तप येह।
सुन रस रिद्ध स पंचमी, षट विधि है गुण तेह ॥ १२८॥
आसन विष फुनि दृष्ट विष, घृत पय श्रावी होय।
मधु श्रावी अमृतश्रवी, इन गुण वर्णूं जोय। १२९॥

गीता छंद–दुर असन विष मिश्रित सु मुनिको देय जो दुठ भी धरै। सो घटत विष विज होय रस जुत परम स्वादु सु विस्तरै ॥ यह असन विष वर रिद्ध जानी दिष्ट विष फुनि लषत ही। तब अपनको विष जायहो है सुष्टषटरस संजुत ही ॥ १३०॥ जो देय रूखो अन्न मुनिको कर स्पर्शत घृत चवै इम रिद्ध घृत श्री वीरगुण यह त्योंही पयश्रावी फवै ॥ फुन मधु गावी तैं मधुर ह्वै अमिरश्रावी तै लहा। अमृत समान सु होय भोजनको सुरम गुरु इम कह्यौ ॥ १३१ ॥

दोहा–यह बरनी रस रिद्ध विरध, सनौं वैक्रिया जोय।

एकादस विधि नाम इम, अनुमा महिमा होय ॥१३२॥

लघुमा गरिमा प्रापती, प्राकामित ईसत्व।

वसत्व अपरघात नव, ध्यानंतर रूपत्व ॥ १३३ ॥

काव्य–अनुसम तनकूं करै कवलकी नाल सुमंदिर, पैस रचै दल चक्रवर्त समधर वपु अंदर। यह अनुमा रिध चरित बहुरि महिमा सुन लिज्जै, लख जोजन जिम मेर तुंग समदेह कार जु ॥ १३४ ॥

गीता छंद–तन रचै हलवो पवन हुवै पा समान न जगतमैं। लघुमा धरै गुण यह रु गरमा वज्रतै भारी पमैं ॥ बैठो धरापर मेर फरसै सूर्य आदिक जोयसी। वर रिद्ध प्राप्तीके सुगुण ये सुणो प्राकामत जिसी ॥ १३५ ॥ भूपै चलै जिमजल विषै जल पै चलै जू भूमपै। जिन देहतैं सेनादि रचहै पचमी रिध यह थपै ॥ सुन करै जिय मैं जो हुलासि मत्रि जगकी प्रभुता धरै। पत तीन लोक सु आप मानै यहै ईसत गुण वरै ॥ १३६ ॥

चौपाई–नर पसु अमरादिक वस करै, यह वसत्व रिध अष्टम धरै। विषम गिरनपै गगन समान, चलै अप्रतीघात रिधवान ॥ १३७ ॥

पद्धडी छंद–सब देख सुनै वच अदश्श रूप, सो अत्र ध्यान मुनि रिद्ध कूप। सुर नर पसु समकर रूप नेक, कामीत्व रिद्ध गुण यही टेक ॥ १३८ ॥ यह रिद्ध वैक्रिया रुद्र भेद, मुनि

कही बहुर सुन क्षेत्र भेद। है प्रथम अछी नम हान साथ, दूजै सु अछीन महा बलाय ॥ १३९ ॥

कवित–जा घर मुनि अहार ले तादिन चक्री दल जीमै नहीं टूट। ऐसी अधिक रसोई हो है, रिद्ध अछीन महान तूटे ॥ जहां जतीस्वर करम विनासे, चार हात सो भूम प्रवान। कोटक सुर नर पशू समावें, रंचक कष्ट न होय सुजान ॥१४०॥

दोहा–यहै अछीन महालय, कही क्षेत्र रिध दोय।
क्रिया रिद्ध सुन दोय विध, चारन नभ गत जोय ॥१४१॥

सोरठा–चारण बहुविध सादि, जल जंघत तुप होय। दल फलसे नभादि, अब इनके गुण सकल सुन ॥ १४२ ॥

गीता छंद–वर भूमि वत जल पै चले मुनि जल न फरसै देहकूं। वर रिद्ध जल धारी सुसुपा विधि लरे श्रमण सुदेहकूं ॥ सो चलै भूसे अधर चतुरांगुल सुपद मासन मुनी। वरनाम जंघाचारणी रिध यह सुगुण श्री जिन भनी ॥ १४३ ॥ जो कवल नालको तार सूछम पै चले धरि ध्यानवा। तसु तंत जीव न होय बाधा तंत चारन मानवा ॥ फुनि चलै साधु कुसुम पर ज्यों कुसम चारन रिध यही। फिर पत्र पै चालै न हालै पत्र चारण गुण यही ॥ १४४ ॥ मुनि बीज ऊपर चलै त्यों फल चारनी षष्टम भनी। वे वेल पै चाले सेनचारी इम भनी ॥ वे सिखा अग्निपर चलै निहस कमन तन ना छुदै। सो अग्न चारन अष्टमी यह बहुर नभगामी कहै ॥ १४५ ॥

दोहा–ऊभे पदमासन दुविध, चलै अकास मझार।
यह नभगामी दोय विधि, क्रिया रिद्ध हम चारि ॥१४६॥

जेते चेतन अंस है, ते ते रिद्धि सुदक्ष।
सत्तावन गुण आठके, मैं भाषे बुध तुछ ॥१४७॥
इम रिष धारी असनकूं, जाय ग्रहस्तीके गेह।
एक दोषके हेत ही, तासै असन करेह ॥ १४८ ॥

चौपाई–एक धनुष आयामरु व्यास, पर मत भोजन साल निवास। रिष धनी तहां भोजन करै, पंचाश्चर्य देव विस्तरै ॥ १४९ ॥ तादिन ऐसी अतिसय थाय, चक्रवर्त दल तहां समाय। विगत तिष्ट जीमैं नहीं भीर, होई अटूट रसोई चीर ॥ १५० ॥

दोहा–पद्मनाभ मुननै लही, तप केवल सब रिद्ध।
अब भावै सब भावना, सोलै कारण सिद्ध ॥ १५१ ॥

चौपाई–पंचवीस मल वर्जित जोय, दर्स विशुद्ध कहावै सोय। मन वच तन वासा तुर सुद्ध, पद्मनाभ मुनिवर अविरुद्ध ॥ १५२ ॥ दर्सन ज्ञान चरित्र उपचार, तथा साव गुण वय अधिकार। तिनकी विनय करै मन लाय, दुतिय भावना यह सुखदाय ॥ १५३ ॥

कवित्त–काष्ट पाषाण लपी कृत त्रिय विध मन तन तै कृत कार्तनुमोद। तासु गणै अठारे ही है, पण इन्द्री सों गुणयै सोद ॥ नव्वे द्रव्य भाव तै गुणियै इकसो असी रु चार कषाय। ताह्य गुणे सात सत विशति याविधि नार अचेतन भाय ॥ १५४॥ सुरी नरी पशुणी कृत कारित अनुमोदन गुणो नवलीस। मन वच तनसैं गुणे सताईस पण इन्द्रीतै, सत पैंतीस ॥ द्रव्य भाव

होवै सत्तर चव संख्यासुं सहसन अस्सी। फिर सोले कषाय सूं गुणियै सतरै सहस दोष सत विसी ॥ १५५ ॥

चौपाई–चेतन यह रु अचेतन कहे, सब मिले सहस अठारै भये। अतीचार इम रहत जु सील, धरे भावना त्रितीय धीर ॥ १५६ ॥ अंग पूर्व आदिक श्रुत सार, पढ़े पढ़ावै विविध प्रकार। करै निरंतर ग्यानाभ्यास, पद्मनाम चवथा गुण रास ॥ १५७ ॥ धर्म रु फलमैं अति प्रीत, लखतरचानस ईम चीत। तन धन जोबन राज रु भोग, इम विचार संवेग नियोग ॥ १५८ ॥ दान करै निज सक्ति समान, चार भेद वा परिग्रह दान। वा धर्मोपदेस शिव हेत, यही भावना षष्टम चेत ॥ १५९ ॥ नाना विध तप करै मुनिंद, सो तपसी भावन गुण वृंद। मद पीडित जोग है समाध, तिनकी भक्ति सु साधु समाधि ॥ १६० ॥ बाल वृद्धि अरु रोगी मुनी, तिनकी टहल करै जो गुनी। वय गुन नून न करै विचार, सो वैयाव्रत नौमी धार ॥१६१॥ अतुल चतुष्टययुत अरिहन्त, ता नामाक्षर सुमरै संत। अथवा भक्ति वंदना करै, पद्मनाम यह दसमी धरै ॥ १६२ ॥ पंचाचार सूर जे धरै, सिष्यन चरित सु मल परिहरै। जिन वच अर्थ लेय शुभ रचै, पद्मनाम तिन भक्ति न मचै ॥ १६३ ॥ विद्यादायक विद्यालीन, पाठक बहुश्रुत जुत परवीन। विनय भक्ति जुत ताकी करै, बहुश्रुत भक्ति बारमी धरै ॥ १६४ ॥

अडिल–श्री जिनभाषी अर्थ सु गणधर गूंथयो, गर्भ तत

भवि संशय हरख जू थावौ। तहां भक्ति जु रत रहै प्रवचन की
तेरही, सुन आवश्यक भेद पदम सुन हेरही ॥ १६५ ॥

दोहा–समता पुन वंदन करै, प्रतीक्रमण प्रतिष्ठान।
पदम कायोत्सर्ग धर, यही चौदमी जान ॥ १६६ ॥
तपगुण ग्यान रु रिद्धतैं, प्रगट करै जिनधर्म।
सो मारग परमावना, धरै पन्द्रमी पर्म ॥ १६७ ॥
चपारि संग जिनधर्म सूं, गउ वत्स इम प्रीत।
वरतै सोलम भावना, यही जिनागम रीत ॥ १६८ ॥
दरस विशुद्धी एक ही, पंदरमैं इक ओर।
जो ए दो विभाव है, हो तीरथ सिर मौर ॥ १६९ ॥
पदमनाम भावै सकल, बांधो तीरथ गोत।
धर्म धरै दशलाक्षणी, जो जिनमत उद्योत ॥ १७० ॥

गीता छंद–विन दोष दुरजन देय दुख बहु बंध बहु दुठ
वच कहै। जो होय समरथ सहै सब नहीं क्रोध उत्तम क्षमथ
है ॥ मद अष्ट पायक निरभिमानी यहै मार्दव धर्म है। मन
जोय चिंतै सो कहै मुख कहे तन सू काज वहै ॥ १७१ ॥
जगसो न मायाचार धरि है धरम आर्जव इम कह्यौ। जो
स्वपरहित इम वचन भाषै सत्य अमृत सम लह्यौ ॥ मिथ्या न
भाषै भूलकै सो सत्य धर्म बखानियै। परद्रव्यमैं नहीं
लोभ जिनकै सोय शौच प्रमानियै ॥ १७२ ॥ जो मन रु
इन्द्री वस करै फुनि दया त्रस थावर तनी। इनै सोय
इस संयम कह्यौ अरु सुनो जो विधि पठनी ॥ गुरु स्वपाक्ति

पूजा लाभ सब तज तप सु नाना विध करै। फुनि दान दे चौ विधि जतिनकूं दुष्ट विकलप परहरै॥ १७३॥ वर यह त्याग रु बाह्य दसधा कह्यौ परिग्रह भेद ही। अंतर हु चौदे भेद त्यागै धर्म आकिंचन यही॥ लख बडी माता लघु पुत्री नार वय सम बहन है। सो तजि विकार सु वरत है मुनि ब्रह्मचर्य सु गहन है॥ १७४॥

चौपाई—धर्म अंग इम धारै सोय, पद्मनाभ मुन चीक रु दोय। सहै परीसह नाम सु कहुं, अर्थ सहित जो श्रुतमैं कहुं॥ १७५॥

काव्य—छुधा तृषा हिम उष्न दंस मंसक नगनारत। श्री चर्यासन सैन दुष्ट वच बांध रु मारत॥ जाच न लाभ न रोग फास त्रिण तथा जनित मल। मान न आदर प्रज्ञ ज्ञान बिन दर्स सहत मल॥ १७६॥

दोहा—ए बाईस परीसहै, कह्यौ नाम सुन अर्थ।
सहै साधु तिन पद नमूं, सो पावै परमर्थ॥ १७७॥

ढाल दोहामें—अनसन ऊनोदर करत, पक्ष मास दिन बितजी। जो नहीं भिक्षा विधि बनै, सीख सिथल तनकी तजी; अम त्रिन मुनि सह भूखजी॥ १७८॥ परवस पर घर असन ले, प्रकृति विरुध देह प्यासजी। पितको परितु उष्नमैं, नैन फिरै सहे श्रासजी; धन २ मुनि सहै प्यासजी॥ १७९॥ हिमतमैं जन थरहरै, तरु दाहै घन वृक्षजी। पवन प्रचंड सीरी वहै; सरत रित ढिग तिष्ठजी; धन धन मुनि सहै सीतजी॥ १८०॥

आंत जले भूख प्यास सूं, तन दाझै लग धूपजी। पवन अगनि सी उष्न रितु; गिर तापै चित कोपजी, धन धन मुनि गरमी सहै ॥ १८१॥ डंस मांस माखी सरप, बिछू इरगज स्यालजी। रीछ रोज आदिक निष्ठुर; दुख देवै विकरालजी, धन्न सहै डंसादि जे ॥ १८२ ॥ बहु विषयांतर बाज्र फुन, लाज नगन किम होयजी। दीन जगतवासी पुरुष; धन २ श्री मुन सोयजी, भय विकार बिन बाल सम ॥ १८३ ॥ देस काल कारन लहै, होत अचैन अनेकजी। तहां खिन्न हो जगत जन; कलमलान थिर नेकजी, इम आरत सहै धन मुनि ॥१८४॥ हर पकरे प्रलय अहि दलमले, दीन होय लख सूर बहु। ऐसे जन जग डिग-मगे; प्राय पवन त्रिय वेद सहु, धन्न अचल मुन मेर सम ॥१८५॥

कोमल पद भू कठिन पै, धरत न बाधा मानजी। चय कर भू सोधत चलै, वाहन याद न आनजी। जो चरयामन दुख सहै ॥ १८६ ॥ शुद्ध मसान गिर खोहरे, निवसै सुच भू देयजी। निहचल रहै उपसर्गमें, जड चेतन कृत पेखजी; धन्न निषध्या मुन सहै ॥ १८७ ॥ घर सोवत मृदु सेजपै, मृदु तन भू अति कठिनजी। तित पौढत कंकरादि चुभ, कायर होना कठिनजी; सैन परीसा मुन सहै ॥ १८८॥ जगत हितू दे सुख सबै, तिन लख कहै दुरवचन इम। छाने तप भेषी सु ठग, यह मारो अघ करण इम; पोढै वच खिम ढाल सु ॥ १८९॥ दुठ मारै बिन दोष मुनि, फुनि बांधै दृढ़ अगनिमें। तहां न क्रोध बिच कृत मुने, समरथ हो पर बन्धनमें; धन मुनि बध बंधन

सहै॥१९०॥ घोर वीर तप करत ही, भयो खीन अति देहजी। औषध अन जल ना चहै, प्राण जाय पण तेहजी; धन्य अजाची साधुजी ॥ १९१ ॥

भक्ति समै इकवार पुरमें आवै घर मौनजी, जो नहीं भिक्षा विधि बनै। खेद करै मुनि तो नजी; सहै अलाभ घन घन जती ॥ १९२ ॥ रुधर बात पित्त कफ जनित, दुख दारुण सहै सूरजी। उपचार न चहै निज मुने, तनसू विरकत भूरजी; धन्य गुरु थिर नेममें ॥१९३॥ तृण कांटे दिठ कांकरी, पथ चुभ रज उड़न पढ़तजी। द्रगमें सर समपीर है, परस करन निज कढ़तजी; यों तृण फरस सहै रिषी ॥ १९४ ॥ जाव जीव तज न्होन जे, नगन धूपमें सोखरे। चलै पसेव रज उड़ पड़े, इम लख उत्पल परहरे; सहमत सुश्रमण धन ॥ १९५ ॥ चिर तपसी गुण बुद्ध निधि, तिन युत जनता करतजी। तौ न मिलन मन मुन करै, सहै अनादर सुरतजी; ऐसे गुरु पद नमत हूं ॥ १९६ ॥ तर्क छंद व्याकर्ण निधि लंकारादिक पागजू, जा सुध लख वादी विलख। हर धुन सुर गज भागजूं, सो विध धरि पै मान बिन ॥ १९७ ॥ सुध चारित्र सु पालते, बीतो है बहु कालजी, अवधि रु मन परजय पणम; ज्ञान न हुओ हालजी। यों न कमी विकलप करै ॥ १९८ ॥ मय चिर घोर सु तप कियो, अबहु न रिध अतिशय भई। तप बल सिद्ध है मुनि प्रथम, सो सब झूठीसी भई; यों कदाच न मन धरै ॥१९९॥

दोहा—धन धन मुन ए सहै जे, सोय अदर्सन जीत।
तिनके बन्दों चरण जुग, जूं होवै वह रीत ॥ २०० ॥

कवित्त—प्रज्ञा ज्ञान वरनीतैं दर्शन मोह अदर्शन धार। अंतरायतैं हो अलाभ फुनि चरित्र मोह नव नारत नार॥ निषद्या अक्रोस याचना मान सनमान सात दे कष्ट। बाकी जिनकै फुनि इक मुनिकै उदय उनीस कही उत्कृष्ट॥ २०१॥

सोरठा—चरजा आसन सेन, इन तीनौंमैं एक ही। इक छिन उष्नसु लेन, इन तीनौ विन जानियौ॥ २०२॥ पदम-नाम जो साध, साढे सैंतिस सहस मित। सब ठारैं परमाद, तिन संख्या मुनियै अबै॥ २०३॥

ढंकेत छप्पय—तिय धुन भोजन राज चारे शृङ्गार वरै सठ। भोड परिग्रह कलह देस संगीत सुरी रट॥ पर पीडा पर ग्लान रू पर अपवाद रू चुगली। रसक काव्य पशु वचन कहै सद्‌-भाषा मय ली परगुन ढक पर पाखंड मन क्रषारम्भ कटुक वचन फुनि देस काल विवहार विधि निज गुन इम विकथा सुख॥ २०३॥ विकथा रूप पचीस बहुर पणवीस कषायन। गुणतैं छस्सै सवापांच इंद्री सोगुन॥ पौणेचार हजार पंच निद्रा सु गुणिये। सहस पौणे उन्नीस नेह रू मोह सु मुनिये॥ साढे सैंतीस हजार सब भेद प्रमानिये। छट्ठे गुण ठाणो लो कहै पद्मनाम सब हानिये॥ २०४॥

चौपाई—उत्तर गुण चौरासी लाख, पदमनाम भौर गुरु साख। तिनको भेद लिखूं सुन सार, जू पूरब श्रुतमैं निरधार॥ २०५॥

छपै—अव्रत पंच रु चौरकषायरत अरत दुगछा, भय मद

और मिथ्यात दुश्रुत मन वच तन इछा। पिसुन प्रमाद इकीस गुणे अतिक्रम वितक्रम, फुनि अतीचार अनाचार भये चौरासी सब मुन ॥ फुनि काम बा। दप तै गुणे, चिता इक दरसन चहै। त्रय दीर्घ सास तुरिका मज्वर द्राह देह पंचम यहै ॥२०६॥
दोहा–असन अरुच फुनि प्रसन सठ, अष्टम क्रीडा हास।

जीवन नव संदेह फुनि, शुक गिरे दस रास ॥२०७॥

छपै–वसु सत चालीस भए बहु दस गुणी विराधन। आद तिय संसर्ग चहुर दूजे तिय मंडन ॥ से वैराग सयुक्त सर सले भपन श्रवन सुन। गीत वजित्र सुगंध लेय संचैर न इम नैव फुनि ॥ वसु अर्थ ग्रहण नव सैन मृदु दसमै कुशील संसर्ग। सब आठ सहस अरु च्यारिसैं गिण भये सकल एवर्ग ॥२०८॥ आलोचन दस दोष तिनै कृत कर्म उचारे। तिनसै गुनकर भये सहस चौरासी सारे ॥ नव प्राश्चित फुनि दस मुनी सावद्य युक्त जे। तिनै मिथ्याती भाष करै गुर निराकर्ण जे ॥ गुन इन दसतै वसु लाख फुनि चालिस सहस्रकू फिर गुनै। दस धर्म सु लाख चुरासी सब उत्तर गुन ए मुन मुनै ॥ २०९ ॥

चौपाई–करै उचित आहार विहार, बन गिर गुफा मसान निहार। शुद्ध भूमिमैं कर अस्थान, इकलविहारी पवन समान ॥२१०॥ करै अहार मुनीस्वर जहां, पंचाचरज करै सुर तहां। द्वादसांग श्रुत दध गंभीर, बुध जिहाज चढिकै मुन धीर ॥२११॥ गुरु खेवटिया संगत लहा, पार भये तौ अचरज कहा। गुरु सेवातै शिवपद लहै, वदमाव अधिक और को कहै ॥ २१२ ॥

काय कषाय करी अति छीन, शुभ संयम सम भाव सु लीन। राग दोष सब दीने चीर, जै जै पद्मनाभ मुनि धीर ॥२१३॥

गीता छंद-सो ध्यान जा बनमें धरै मुनि विपत सब ताकी टलै। सूके सरोवर जल भरे रितु षटके तरु फल फले ॥ सिहाद जात विरोध जे सब वैर तजियारी करैं। सो सकल मिलकै करैं क्रीडा प्रीत आपसमें धरै ॥ फुन राग तन धन ममत बिन मुन धरैं मैत्री सबनथैं। सो लीन आतम दान बिन फुनि अनाकुल किम गुण कथैं ॥ २१४ ॥

चौपाई-मरना निकट जबै जानियौ, सबसैं छिमा भाव ठानियौ। दूषण बिन फुन अंग समेत, दर्शन ज्ञान चरण तप चेत ॥ २१५ ॥ इनकुं भावै फुनि भावना, जो भावत आतम गुणासना। इम भावत भावत तन त्याग, लह्यौ वैजयंत बड भाग ॥ २१६ ॥ तित उतपात शिला दुतिमान, सो चढ़ै अन्तर्मुहूर्तमैं जोवन वान। रतन तुल्यते उठी देव, दिशा देख आश्चर्य करेव ॥ २१७ ॥ दिव्य लक्ष भूषित सुर जान, मन दिगहर सुम पुंज समान। तातैं अवधि ज्ञान उपजेव, तब सब लख्यो पूर्वभव भेव ॥ २१८ ॥ चारित वृक्ष फलौ बहु भाय, जैनधर्म सेवा मन लाय। ताही मैं फिर निश्चै करो, सो विचार उर आनंद भरो ॥ २१९ ॥ कर स्नान पट भूषण साज, पूजा कर न चलौ सुर राज। रतन जडित श्रीजिनवर थान, प्रभा पुंज रवि रस्म समान ॥२२०॥ क्रौडो सूरजतैं दुतिवंत, श्री जिनबिंब देख हर्षंत। तिन गुणमैं अनुरागी भक्त, गीत नृत्य बाजित्र सजुक्त

॥२२१॥ अष्टप्रकारी पूजा करी, महा महोछव उर विस्तरी। फिर
हुव करि निजथानक आय, हर्ष सहित निज सौज गहाय ॥२२२॥
थित तेतीस दध लेश्या शुक्ल, इक कर देह धात विन शुक्ल।
तेतीस सहस वर्ष गतिहार, साढ़ पक्ष उस्वास विचार ॥२२३॥
तीनलोकमें श्रीजिन मन्द्र, वा त्रिकाल कल्याण जिनेन्द्र। मुनि
केवलि हुए है होय, निज थलनमें अवधि बल जोय ॥ २२४ ॥
लोक नाडिताबता विक्रिया, शक्ति धरै न करै सो क्रिया।
आपसमें मिल सुर अहमिंद्र, करै तत्व चाचा गुण वृन्द ॥२२५॥
यों वहु सुखमें बीत्यो काल, जानत नांह देव सु कवार। तिति
सुख कथा कथन को कहै, कोट जीभसूं अन्त न लहै ॥२२६॥
दोहा—गणी कहै मगधेस प्रति, पुन्य समान न कोय।
　　या भव जस परभव सुखी, क्रमक्रम शिवसुख होय ॥२२७॥

　　ता प्रति अंगनमें सुनी, कहवे आए सोय।
　　गुणभद्राचारज कही, हीरालाल अवलोय ॥ २२८ ॥

इति श्रीचंद्रप्रभपुराणे षष्टमभववैजयन्त पदप्राप्तिवर्णनो नाम
दशम संधिः समाप्तम् ॥ १० ॥

एकादश संधि।

दोहा–महासेन कुल कुमुद शशि, नम लक्ष्मी उदियंत।
भव चकोर इक इक निरख, मुद्ध मुखबालछिन हंस॥ १॥

कवित्त–आ जन्मादि करे मण बरषा कनमय रचि मय जडित प्रसाद। जन्म होत कनकाचल न्हावे तांडव नृत्य करे अहलाद॥ शास क्रमाबुंज कौं नुत करतैं अमंडल मुण मुकट शु माल। तित नख रस्म लगत अति प्रगटायो उद्योत जूह वन्धन नाल॥ २॥

दोहा–ऐसे चन्द्र जिनेन्द्र नमि, तिनके पण कल्यान।
वरणो गुणभद्र कथित, पूरव ग्रन्थ प्रमाण॥ ३॥

चौपाई–एही जम्बूद्वीप महान, आरज खंड मनोहर थान। तामें कासी देश विशाल, ताकी शोभा अधिक रिसाल॥ ४॥ ग्राम खेटपुर पट्टण दुर्ग, करवट संवाहन सम सुर्ग। पद पद पुर पंकति पेखिये, उवट स्थानन कहुं देखिये॥ ५॥ धन कन कंचन भरे असेस, निवसे जैनी विसद विसेस। दया धर्म पाले सबजना, ऊंचे जिन मन्दिर बहु रचना॥६॥ बनमें फिरदे सरता क्रूर, गाम नगरमें आनों भूर। नर नारी नित पूजन जाय, हर्ष रहित बहु पुन्य कमाय॥ ७॥ करे विहार केवली जहां, भू निरवाण लसे अति तहां। चार प्रकार देव तित आय, करे वंदना मुदित अवाय॥ ८॥

कवित्त–जल अगाध जलचर जुत सरता वहै तीर मुनि ध्यान

वंत। झरना झरै गिरनके सिरपै खड्गासन सोहंत महंत ॥ दुर्ग धाम सम सुंदर कंदर तित एकाकी थित अनगार। नन्दन वन सम विपन रहसै अति, ताकी सोमाको नहीं पार ॥९॥

चौपाई—तहां विटप बिरवा अरु बल्ल, तिनके नाम सुनो तरुगल्ल। अरण्ड तुसी कञ्ज तो नाल, कर्ण लाय सुन हे भूपाल ॥ १० ॥

काव्य—कमरख करपट कैर कैथ कटहर किर मारा, केरा कौंच कसैर कंज कंकोल कल्हारा। कुंद करौंदा कदम किकर कचनार कनेयर, कुमुद कटूंबर कणहि केवरा करना केसर ॥ ११ ॥ खिरनी खैर खजूर खिरहटी खारख खेजर, गौंदी गौरख पान गुंज गूलर गुझ गोझर। चंपा चिर भट चूच चिरौंजी चोल चवेरी, चन्दन चीठ जायफल जामन जंझ जवेरी ॥ १२ ॥ जनुहारा जान्दा जवत्री जाई जुहिल, या सब काय न बैर चैत बढ़े डाक्झ इल। महुवा मौल सिरी मुच कंदा मरु वामो खरु, तूत तबोल तमाल ताल तारी तिंदु तरु ॥ १३ ॥ अर्जुन अगर अनार अडू अंजीर अरठा, अमली अंड असोक अल्लू अंगुर सुमीठा। पाकर पील्हू पील पीपली पाट पतंगी, पांडल पिलूखन पक्क पलास पद् माखरु पुंगी ॥ १४ ॥ सौना सेवल साल सिर ससी सो सिव सालर, इम सर तट तरु बेल जुक्त फल फूल मनोहर ॥ धान अठारै जात और बाखर सब ही है। साटन वाड अपार जंत्रमैं पेलत मोहै ॥ १५ ॥ दादुर मोर चकोर पपैया फुनि पिक्क कपिक्क, नीलकंठ चंडोल कठिया तूती

बकसुक। मैना सारस लाल हस लाली पचांनन, फील सुरह इयरोज भरो इत्यादिक कानन ॥ १६ ॥

चौपाई- तीतबु कांग पृथ्वी सर्वत्र, तासम सोभा नांहि अनत्र। चन्द्रपुरी नगरी तहां वसै, मानों सुंदर नारी लसै ॥१७॥ सित महलन पंकित अधिकार, तिनकी रस्म रही विस्तार। ऐसे सदनन आकर महा, सत्य चन्द्र पुरी नाम सु लहा। १८॥

कवित्त-परखा जल उज्जल अति मानौं, कांची दाम धरै कटि थान। कोट चोट चादर सम सोहै, दरवाजे आम रासिमान ॥ तुंग बुरज कुच सम उर थान' कंचन कलस नैन समजान। कंगुरे दांत निकाल हंसत मानो स्वर्ग लोकक्रू सारत ठान ॥१९॥ धुजा हस्तसे कहै दूर रहो तुझ मैं वसे अव्रती सर्व। शिव पद साधनकी समरथ विनतातैं क्यूं धारत तु गर्व॥ इत्यादिक अन्योन्य उक्तकरि युक्ति सहित सोहै यह पुरी॥ ताकि सोभा देखनकौ नित आवत है सुर गुण जुत सुरी ॥२०॥ ता पूरब दिसमैं सुर सरिता वह सुमानौ। हिमवन सुता गौरव रणं जल अंग जु सोहै चंचल तरंग भाव संजुता॥ चपल नैन ऊष मोन नाम समफुन दोतट दुकूल अदभुता। बने बराम न्हानके ललित सु मानो रचे देव विधि-जुता ॥ २१ ॥ फैन हांस जुत बाहु जंत जल धुज ऊचाय पट अंगुरी मोर। नृत्य करत मनो सौर गान जुत सबै रिझावे नर पसु कोर ॥ दोनो तरफ तथा- सुर नमैं देख देख हरषै सु बहोर। जार नार समेद आलिंगन आवै जो सु न्हान या ठौर ॥ २२ ॥

चौपाई–ऐसी गंगा तट सो बसै, राजा भवन मध्यमैं लसै। तुंग महल जिन मंदिर बने, वीथी सघन चोहटा बने ॥ २३॥ चित्रन चित्रत जन मोहंत, देस देसके जन आवंत। नाना वनज करे मन चाय, सब ही सुखी मनो सुर राय ॥ २४ ॥ सुव विख्यात मनो सुव क्रांत, औरु अनेक गुन नगन पांत। महासेन नृप नृपगन मनी, नभ इष्वाक कुलमैं दिन मनी। २५ ॥

दोहा–सेना बहु अरु बल अतुल, महासेन द्रव सत्य।
और सुगुन मन खान नृप, बुद्ध बिन कहन अकत्थ ॥ २६॥

चौपाई–कासपगोत्र सिरोमन जान, थिर नगद्ध गंभीर विमान। रवि प्रताप सोम ससि जयो, घन कर बनिद देख नख रह्यो ॥ २७ ॥

कवित्त–क्षिमा प्रभत्व सौर्य नहीं तो सम नान भोगा कर घन लाह। देह घन नित प्रत सुर तरु सम सब जनको मोहै नर नाह ॥ वीर श्री क्रीडा ग्रह नृपको वृक्ष स्थल दीरघ सोहंत। और सुगुन जे नृप नमै भाखे जिनवर पिता समन कहुं अंत ॥ २८ ॥

छपै–तानृपकै तिय घनी पट्टरानी सबै, पर नाम लक्ष्मना श्री रु नाग कन्या सम सुन्दर। गुन मन खान महान् सुनान, लछन मंडित तिय गुण मुख मझार वेदमैं भाषित पंडित। सो सब तिय उपमा जोग वर, नव जोवन कोमल सु तन वसन। भूसन भूषत करन तासमको है अनघरन ॥ २९ ॥

दोहा—जाके निपकर गाढ भय, बदन रह्यो है सोय।
तोभी अरि चूक्यो नहीं, आय गह्यो कच होय ॥ ३० ॥
स्वर्नवर्न जिम कर्नजुग, सत्त वचनके सर्ण।
स्वर्नसियं मनुसूत्र है, भूपति सुनी भर्न ॥ ३१ ॥
जास मधुर सुन सुनत ही, को कल सोचै चित्त।
स्यामल ही बनमें बसी, अजहु न आई मित्त ॥ ३२ ॥
जाके वक्षस्थल विषै, मन पवित्त कुच पीन।
मार भूपके हरनको, दुग्रम गढ समकीन ॥ ३३ ॥
गहरी नाभ सरोवरी, पूरन जल लावन्य।
काम करीके केलको, विधना रची सरन्य ॥ ३४ ॥
मैन महलके थरनको, रंभाके उर थंभ।
जिनकी दृढता देखकै, दाके रंभा थंभ ॥ ३५ ॥
पद्म २ जिम देखिके, लज्जित भये सु पद्म।
तब ते पृथी छाड़िकै, जाय बसे जल सद्म ॥ ३६ ॥

चौपाई—इम दंपति जोबन आरूढ़, क्रीड़ा करै मन इच्छित गूढ़। कभी विपन सर सरिता तीर, कभी बागमें जावैं धीर। ॥ ३७ ॥ तालमृदंग नरनार समेत, नृत्य गान लख हर्ष उपेत। इधर उधर डोलत मन चाय, नृपति पगलायो जब धाय ॥ ३८ ॥ तरु असोक फूलो अरु फरो, जूं जिन संग सोक सब हरो। फिर रानी आगे पग धरो, फूलो बकुल तरुनपै करो ॥ ३९ ॥ फूलो फलोक कुरुव वृक्ष, माता लिगनते त्यों दक्ष। जगमें माता उत्तम जोय, क्यों न फलै फूलै तरु सोय ॥ ४० ॥ इम

कर क्रीड़ा वरकूं चले, परमानंद सुषोदध मिले। जो इनके सुष वरन दक्ष, को ऐसी बुध धारे लक्ष ॥ ४१ ॥ नवयौवन दंपति सुकुमार, भोगें भोग पुन्य फल सार। एक दिना सो प्रथम सुरेस, अवधिज्ञान चितो मुद भेस ॥ ४२ ॥ धनद प्रत: इम वचन वषान। वैजयंत हर तजे विमान, जम्बूदीप भरथ छित वसे, आरज खंड सु पूरव दसे ॥ ४३ ॥ चन्द्रपुरी नगरी भूपार, महासेन लक्ष्मण सुनार। अष्टम जिनवर होसी सही, आयु मास षट बाकी रही ॥ ४४ ॥ तापुरकी सोभा अति करो, पंचाश्चर्य मणादिक भरो। हरकी आज्ञा मान कुबेर, धार सीस करजोड़ि सुफेरि ॥४५॥ सुत कर चलो सु आयो कहां, मंदाकिन तट ससिपुर जहां। कनकमई माणि जड़ित सुपान, रहित सुपंक पंक प्रफुलान ॥ ४६ ॥ सूक्ष्म अमिय सम जलकर भरी, ऐसी परषा ओंडी करी। कंचनमय अति रम्म सुवर्ग, पंच वर्ण माणिक जुत द्रुगे ॥ ४७ ॥ जगत तिमर हरमानो हंस, मंगल दर्व पौलि उर ध्वंस। मध्य भाग जिन मंदिर करो, सहस कूट कण माणीमय नरो ॥ ४८ ॥ राजभवन अति सुंदर रचो, हाटकमय रतनन कर पंचो। इन्द्र नील माणिक हुं प्रवाल, कहुं पन्ना कहुं पुष्कर लाल ॥४९॥ कहुं हीरा सम स्वेत विलोक, फैली किरण लियो नभ रोक। इन्द्र धनुष सम सोहै रंग, पणवो अथिर ए सुथिर अभंग ॥ ५० ॥ ऐसी आपण हणो बजार, सकल वस्त आकर सुनिहार। हेममई सु रची मेदनी, मणिमय चित्र बहु सोहनी ॥ ५१ ॥ रचना प्रथम हुती अति घनी, तौ एक

धनदभक्त अति ठनी। जो प्रभुको वैराग है लयी, तौ भी सुथिर करै सुर रयी ॥ ५२ ॥ ऐसे रचक कीयौ नृतकार, मात-तातकुं आनंद धार। साढे तीन कोड़ि यह बार, साढे दस दस दिन प्रति सार ॥ ५३ ॥

दोहा–नभसूं आवै झलकती, मणधारा इह भाय।
स्वर्ग लोक लछमी मनु, सेवन उतरी माय ॥ ५४ ॥
अम्बु करण जुत गंध ही, बरसै कुंकुम रंग।
नभ गंगा आई किधौं, सेवन मात उमंग ॥ ५५ ॥
बरषै सुरतरु सुमन ही, नृप आंगण सुखदाय।
मकरध्वज जिन सर्ण लहै, मनु नाचै हरषाय ॥ ५६ ॥
नभमैं सुर दुंदुभि धुरै, वृषसागर उनहार।
तथा जनावै जगतकुं, इतले जिन अवतार ॥ ५७ ॥
सकल अमर जै जै करै, मानौ एम बखान।
जो सुज जै जिनराजकू, सो ऐसो हुय आन ॥ ५८ ॥
या विध पंचाश्चर्यवर, होत महा नृप भौन।
तिनकी महिमा को कहे, लखै सुजाने तोन ॥ ५९ ॥

चौपाई–एक दिवसमांही त्रियवार, मण बरषावै धनदकुंवार। सिंहद्वार आवे जे जना, सो ले ले मणि जावै घना ॥ ६० ॥ सब अर्थीजन तृप्त सु भए, फेर मांगनेसे थक रहे। भए कुबेर समान सु लोग, इंद्र समान भोगवै भोग ॥ ६१ ॥ अवधि विचार गर्भ दिन जान, षट देवी टेरी मुद ठान। पद्मादिक द्रह वास निहार, रूप संपदा अपरजकार ॥ ६२ ॥ श्री ह्री

धीर्ते कीर्ते बुध लक्ष, तिन बुलाय हर करे प्रत्यक्ष। ससिपुर महासेन नृप त्रिया, नाम लक्ष्मणके अब प्रिया ॥ ६३ ॥ ले अवतार वसुप जिनवरो, ताकी गर्भ सोधना करो। यह नियोग तुमकूं सुख हेत, सुनके चली हर्ष चित चेत ॥ ६४ ॥ कर जुत हर आज्ञा धर माल, स्वर्गलोक तजि आई हाल। वसै चंद-पुर नगर सु तहां, लावनभरी क्रांत तन महा ॥ ६५ ॥ चूड़ा-मन माथे जगमगे, देखत चकाचौंवसी लगे। कानन कुंडल ससि रविजिसो, नथ मुतियन बिच मानक लहसो ॥ ६६ ॥ ज्यूं कुज शुक्र गुरु मध सोह, कंठ कंठका देखत मोह। सुरतरु सुमन दाम उर धरी, अति सुगंध दशदिश विस्तरी ॥ ६७ ॥ कुच मध हार मणन लुंवाह, खग चल मध्य जु गंग प्रवाह। धवना कुलि तनी रमै नेम, रव दुति सम मण झलकत एम ॥ ६८ ॥ भुज बंधन जुत भुज जुग लसै, जिनघर जुत जूं खग गिर लसै। मण कंकण जुत कर जुग सोह, घूल साल जू रस्म समोह ।६९॥ अंगुष्ट नामिका मध्य तर्जनी, छापक निष्टादिकमें ठनी। मानो भूषणांग तरु एह, कटकटि मेखल रुण झुण गेह ॥ ७० ॥ जंबु वेदिका मानो यही, गिरदाकार वेढ़ि कटि रही। चलते पग नूपर ठणकार, लख द्रग मोह श्रवण सुखकार ॥ ७१ ॥ अंग अंग सब सजो सिंगार, मानो नभ दामनि अवतार। आय सभा मधि नृपथित पीठ, ज्यूं उदयाचल पै रवि दीठ ॥ ७२ ॥ सुमन सु छेप भक्त जुत अखें, आप सची जननी पद लखें। तव नृप आज्ञा दे तत्कार, कारण फूल सम

श्रवण सुधार ॥ ७३ ॥ रत्न विभूषित माता गेह, जे जया दिक्क कर बहु भेद। आगे जाय लखी उदयंत, जिन जननी चित्र चित-वंत ॥७४॥ चवर उभय दिस डोलत नार, मानो नभ गंगा अवतार। विसद पवित्र माय तन धरै, सो फुनि जठर सोधना करै।७५॥ स्वर्ण मई ले द्रव्य सुगंध, ताकर उदर कियो सुच सिंधु। सेवा और अनेक प्रकार, करै मातकी हर्षि सु धार ॥ ७६ ॥ केल विनोद करत दिन रैन, मासषष्ट सुखमें गति चैन। निमष मात्र भी ज्ञान न धरै, एक दिना सुखमें अनुसरै ॥७७॥ पुष्प-वती जब राणी भई, मनो रेण जुत कवलनी थई। कर चतुर्थ सुंदर असनान, तिसमें कर सिंगार महान ॥ ७८ ॥ रतन पलंक मध्य निवसंत, जूं विमानमें सची लसंत। करत सैन माता जामंत, अद्भुत सोलै सुपन लषंत ॥ ७९ ॥

अड़ो जगतगुरुकी ढाल—ऐरावत सम स्वेत मद धार जुत मानो, रूपाचल नग जेम झरना झर अभिमानो ॥ अलि छायो भई स्याम, घटाघन गरज असो। लछन लछत सोय लषो, जननीगज असो ॥८०॥ विकटानन कटि, छीण मृदु केसावलि सोहै। चल रसना दृढ़ दाढ़, स्वर्ण वर्ण मन मोहै ॥ स्याम सुक्ल संयुक्त, इन्द्र नीलमण कणमें। जडा भरण जिम सोई, लखो इम हर सुपननमें ॥ ८१ ॥ सरद इन्दु सम कांति, खनत सो भूमि खुरनतैं। चपल हलावत शृंग कंध, अति स्याम अलिनतैं ॥ उछलत करत ढकार मनो, उपदेश करै है। गहो हमारो नाम तुरन ससि पुत्र वरै है ॥ ८२ ॥ नागासन थित पीठ, कनक-

कलस जुग धारा। गहत सूंडसे देव देव, ता सिरपर धारा॥ ज्यौं सुर गिरपर सांझि, फूली धन गरजत मानो। या सूचत है पूर्व जनम मंगल अधिकानो॥ ८३॥ इम कमला तुरि माय, लखी फुनि जुग फूलमाला। झंकित भृङ्ग सुगन्ध, फैल गई दिग आला॥ मानौं विधना आय दाम, रूप धर गावै। जिन गुण श्री अवतार लेय इम टेर सुनावै॥ ८४॥ सर्व कला जुत सौम मंडित रूप अविकारं। लख तम दम दिस जाय, ज्यूं समीर घन टारं॥ निज मरीच संजुक्त शानिज सुख जुत मोती। सप्न आरसी माहि लखत माता इम सोती॥ ८५॥

प्राची दिस सम नार कुंभ लिप्त संदूग। सिर धर मंगल रूप चक्रबिंब मानो पूग॥ उदयाचल पय पेख कुंकम तिलक सु मानो। किरनारे जुत नक्त तमहर माल निज मानो॥८६॥ कुच सम कणमय कुंभ कंचुकी रतन जरे है। हस्तांबुज मुख छुक्त पयसम सुधा भरे है॥ तथा न्हवन घट जेम भा अष्टम विख्याता। निज तन सोभा जेम लखे सुपनेमैं माता॥ ८७॥ जुग झख सरमै तरंत ललित मनोहर मानौं। जग पदमाके नैन भ्रमन उलरूप समानौं॥ श्रुत जलमै प्रतिबिंब ध्वजसम चंचल पेखी। वा अंश निज अछ अछ चिना इम देखी॥८८॥ अमिसम करत पूर रोमावलि छव छायौ। कीरत महक समीर मदन तन फरस मिटायौ॥ काम विथा सम ताप, कनरंग सम तन लछन। जठरत त्रिवली श्रेणि हंस, नृप रमत ततछन॥ ८९॥ औंडो ज्यौं निज नाभ, सर देखो इम माता। फुनि मधि फैनिक, लोल तन मोरत हर-

खाता॥ बिंदु छलन कर ठाय, मीना खरत सुभावे। सोर गरज जुत नृत करत, दधि लख हरखावे॥ ९०॥

जंबु तनुज मय पीठ मणि न जडो किरनारी, छायो ज्यूं इर चाप सुर गिर सम ऊँचारी। जुग दिस चवर सुधा रमनो निझरना सोहै, पुत्र जन्मको सूचि लखो जननी मन मोहै॥ ९१॥ रतन जड़ित कलि धोत मई सु विमान देवको, तम हरता ज्यूं सूर किरण चिलके तनको। किंकनीर विजू प्रात चढतो यो चल आवे, लखो ते रंमै मात सुपनेमें सुख पावै॥ ९२॥ निकसत षोडसी कोर ज्यों प्राची मार्तंडा, वाजिन मन समान सुचि माणिक मणी मंडा। सर्प स्थान सुभ मूर्च्छ सुत असु पात्र समरनी, लखो फणी सागार निज मंदिर समजननी॥ ९३॥ पंच रतन मय राशि मेरु चूरु वत ऊंची, प्रभा पुंज दिग पूर इन्द्र धनुष मनु सूची। किधों सु जिन गुण राशि बाल छन व्यंजनसी, पुन्य पुंज सम पेख सुरनर द्रग रंजनसी॥ ९४॥ प्रजुलित ज्वाला जाल उठत सिखा ऊरधको, आगे जिन शिव जायता मंगल सूचनको। मानो सुत जस मूर्ति काल मधून विना है, षोडषमय लख माय अग्नि सिखा सुपना है॥ ९५॥

दोहा—इम स्वप्नांत रु स्वर्णमय, तुगानन परवेश।

मंगल मंगल रूप लख, सुख तद्‌गन विन लेश॥ ९६॥

गीता छंद—फुनि घुरे दुंदुभि घोर घन सम मोर सम कुरकट नचे। दे बाहु सम बाजू उठावत ग्रीव मोरत तन रुचै। सो

गान सम उच्चरित शब्द सु सुनत निद्रा जन तजी। ज्यूं दिव्य धुनि प्रभुकी सुनत भवि निकट मिथ्या गिलतजी ॥ ९७॥ तब मधे जोत सुमंत उडगण कछु लसै कछु नाहिजी। ज्यूं होय तीर्थंकर उदै पाखंड गण छिप जायजी ॥ फुनि चंद मंद उदोत होहै मात ससिमुख देखके। ज्यूं कमलनी कामि सु हिरदा मुद्रित हो रवि पेखके ॥ ९८ ॥ अब प्रातकी फूली सु लाली जु पलास बसंतमें। अथवा जिनागम सुनत भविजन हर्ष लाल उरंतमें ॥ तब ही सु जिन सम रवि उदै लखि भविक मन मुद्रित खिले। मिथ्यात सम घू घू सुघूमैं प्रभा जिन सम बच मिले ॥ ९९ ॥ जब कमलमें बंध भृ खुले ज्यूं जीव श्री जिन धर्मसं। तब देखि घाट सुघाट पंथी लोग चाले समस्त ॥ अरु जेम जिन धुन सुनत सूझे स्वर्ग शिव मारग यथा। धरि ध्यान मुनि श्रावक सामायक करें सब शुभ विध यथा॥१००॥

तब सब सखी मिल मंगलीक सु गीत गावे चावसू। मानो धरम दधि गरजकी ध्वनि होत आनंद भावसूं। इम सुजस सुनि सो उठी माता नैन मुद्रित इम लसै, जुत कंट कमल निसांतमैं जु कछु कवि मसत हुलसे ॥ १०१ ॥ उठकर सामायक प्रात किरिया गंध जुत उबटन लियो, तन किया मंजन न्हवन सुंदरि फुनि विलेपन वपु कियो। मेरु चूलीवत तिलक दियो भालमै ससि सम दिपै, मंगल विमान समान मांग सिंदुर कुंकम का लिये ॥१०२॥ फुनि सुभग सहज सुनैन मैन सु बान सम चल चपलसे। तब तहां अंजन दियो, सुन्दरी तीरजूं पछ जुत

लसै। फिर अलक मुक्ता जुत किये भूषन यथावत महकती, बहु मोल कोमल वसन झीने धार तनसो लहकती ॥ १०३ ॥ सुभ सखी संग सु लेय चाली संग अमराजू सची, जाहर अघोर सम सभा मध देव पति निज मन रची। महासेन देवी आवती लख हर्ष अर्द्धासन दियो, कर जोडि जुत करि भाव तिष्टी भयो आनंदित हियो ॥ १०४ ॥ फुनि सीस न्याय रु विनपूर्वक प्रश्न कीनो नाथजी, हम स्वप्न सोले गजादि कलरव आज होत प्रभातजी। तिन सबनको फल कहो कैसा सुनत फुरियो अवधजी, तसु ज्ञान बल ते कहै नरपत सुनो देवी विविधजी ॥ १०५ ॥

छन्द पद्धडी—जिम कुंद इन्दु नृप दंत पंत, तसु रस्मि प्रकाशित वच भनंत। हे गज गमनी निस गज विलोय, सित यस जुत सुत जगपति सुहोय ॥१०६॥ हे सुरूप धरालय वृषभ रूप, वृष रति गतिको धारी अनूप। हे छीन कटी सम हरि निहार, सुत अतुल अनंती सक्ति धार ॥ १०७ ॥ हे पदमाक्षी पदमा निहार, जुत न्हवन तास फल सुनि अवार। सुत जन्मोत्सव जुत न्हवन इंद्र, ले जाय करै सुर जुत गिरिंद॥१०८॥ निज तन सुगंध सम सुमन दाम, पोइ करमैं लटकत लखी बांम। तातैं सुगंध तन दुविध धर्म्म, भाषै सुपुत्र तुव होय पर्म्म ॥१०९॥ हे ससि वदनी ससि तेजु सांत, मिथ्या तम हर गुण किरण पांति। धर्मामृत तैं जगत प्रहर्ण, हे रवि क्रांति रवि जुक्त किर्ण ॥ ११० ॥ निसमै लखने ते होय पुत्र, हनि

अत्यान्तर मोहांध शत्रु। हे मत्सस्थी विन मत्स देख, तो सुत तजि भोगोपभोग सेय ॥१११॥ हे घटस्वनी जुग घट निहार, या फल निधि नाय कहो कवार। हे सर लाभे सर कंज जुक्त, सुत धरै सुलछन हो निरुक्त ॥ ११२ ॥ तृष्णा आताप विना सुभाय, फुनि औगन कूं कर यह प्रताप। हे सुगण मणाकर धीर गम्भीर, निज धुनि सम गर्जित समुद छीर ॥ ११३ ॥ यातैं दधि सम गम्भीर बुद्ध, पर तार तरै संसार अब्ध। हे उर्द्धासन लख सिंह पृष्ट, सुर असुर नमै तोहि पुत्र इष्ट ॥ ११४ ॥ जाको सिंघासन सकल सेय, फुनि सुर विमान आवत लखेय। सबमैं उत्तम पंचोत्र जोय, तजिकै जयंत आगर्भ तोय ॥ ११५ ॥ भूभेद निकसि अहि भवन जोय, तो सुत भव पिंजर तोर सोय। जावै सित फुनि हे सुगुण राशि, तासम देखी वै रतन राशि ॥ ११६ ॥ ता फलत सुगुण मण रासि पुत्र, हो है निश्चै जाणो निरुक्त। हे निकलंकै निर्धूम अग्नि, ताफल एह सब विघ करै भग्न ॥ ११७ ॥ सुभ ध्यान धनंजय तैं प्रजाल, केवल रवि सम लहै जुन किनाल। फुनि स्वप्न अंतगज मुख मंझार, तातैं तुव निश्चै गर्भ धार ॥ ११८ ॥

दोहा–लक्षमणा देवी स्वप्न फल, सुन रोमांचित भूर।
 सुवचन जल सिंचित कियो, उगे हर्ष अंकूर ॥११९॥
 चैत्र अमर पंचम निसा, अन्तनुराग निचंत।
 वसे गर्भ जिम बाध विन, यथा सीपमैं मुक्त ॥१२०॥

चौपाई—बसै गरभमैं मिल सदीव, ज्यौं घटमैं नभ मिल अतीव। श्रम विन जननी दीपै अत्यंत, ज्यूं दर्पण जुत मूर्त्ति लसंत ॥ १२१ ॥ तब जिन पुन्य पवन वस हले, मौलि नए सुर आसन चले। चिन्त देख इन्द्रादिक देव, चौ विध ज्ञान अवधि बल भेव ॥ १२२ ॥

कडका छंद—आज जिनराज अवतार लियौ गर्भमैं। सक्र आनंद उर धर विचारो ॥ देव गिर वान सु विमान चढि चले संग परवार जै जै उचारो। गर्भ कल्याणके हेत पितु सदनमैं आय पित मात विष्टर चढाए। कनक मय कलस ले न्होन उनकौ कियौ महा उछाह बाजे बजाए ॥ १२३ ॥ गान जुत नृत्य किये गम मधि वर्त ये प्रणामि जिन ध्यान धरि देव सारे। भेट पूजा भली न्याय सिर थुत गिली धन्य जैयंत सु विमान द्वारे ॥ गर्भ अवतार लिय भव्य सु पवित्र किय साध सु नियोग हर घर सिधाई। देव गण मन विखं चित जिन गुण रखे रुचिक वासनि सुरि हरि बुलाई ॥ १२४ ॥ आय नुत करि कहौ जो सु आज्ञा वहौ सोय हम करै हम अरज कीनी। सुनत गिर वान सुख खान हम जाय जिन मात सेवा करौ तुम नवीनी ॥ पूर्व-वत भेद कहौ सुनत सब हर्ष लहौ सुरनरपति जुत राहो हुकम आई। सोम पुर पत नई हुकम ले घर गई मातकु लखि नई थुत कराई ॥ १२५ ॥

छंद कुसुमलता—आई भक्ति नियोगनि सब ही विविध विभा झल झलकंत। दामनिसी दुति हंसगामिनी पग नूपर ठण-

ठणकंत ॥ अंग अंग भूषण सब साजैं समर धुजा लह लह लहकंत नंद्रम दिस पूरी तन पराग फुनि सुमन दाम मह मह महकंत ॥ १२६ ॥ विजया वैजयंति जैयंती अपराजिताऽरु नंदा जान। नंदोत्तराऽरु आनंदा फुनि नंदवर्द्धना आठ सु मान ॥ पूरब दिस वासनि करी झारी पूजा द्रव्य लिए खडी येय। माता निकट विनयपूर्वक ही कहै कछु आय सहम देय ॥ १२७॥ आदि स्वस्थिता बहुरि पूर्वका प्राणीध यसोधरा सु गिनिए। लक्ष्मीमती रु कीर्तिमती फुनि रुचिका वसुंधरा बसुए ॥ दक्षिण दिसा रुचिक गिरवासनि मणीमय दर्पण लिये जु हातसो। जिन जननीकूं दिखलावे सेवा करैं सु नाना भांति ॥ १२८॥ इलासुरी प्रथ्वी पद्मावती तथा कांचना नमकाहेर। सीता और भद्रका ए वसुमाता सिरपर छत्र सु फेर ॥ मुक्ति झालरी संजुत सोहै मानौं ससिनि क्षत्र संयुक्त। ए पछिम दिसवासनी जानौ फुनि उत्तरदिश सुनो जिनुक्त ॥ १२९ ॥

गीता छन्द—वर लंबुसा फुनि मिश्र केसी पुंडरीकणी वारुणी, आसा रुडी श्री फुनि धृति वसु ए भणति उर धारणी। ते जक्त माताके वपू पै चमर ढोरत सब खरी, फुनि ताहि गिर की चौ त्रिदिसमैं ओर है सुन चत्र सुरी ॥ १३० ॥ चित्रा कनक चित्राऽरु त्रिपला तुर्य सुत्रा मणि यही, ते मात तट सुदकर विनै सुगात सुन्दर ए सही। फुनि त्रिदिसमैं अरु रुचिका और रुचिकोज्वला है, फुनि त्रितीय रुचिको माऽरु रुचि कोत्तमा चौथी मिला है ॥ १३१ ॥ ते दीपका उद्योत कर है

सेव बहु विध आरता, फुनि आदि विजया वैजयन्ती जयन्ती अपराजिता। ए विदिस वासनी जानैं चामैं मिल आठजी, विद्युत कुमार नमैं सुसुखरा करै सेवा ठाठजी॥ १३२॥ फुनि सु माला मालनी अरु सुवरणा गुण पदमी, सुवर्ण चित्रा पुष्प चूला चूलिका वती पदमी। ए सर्व पंचास पट श्री आदि मिल छप्पन भई, मैं और बहुती नाही जानूं मात सेवैं सुख भई॥ १३३॥

छंद कुसुमलता—कोई उबटन मलमल न्हावै कोई अलक संवारै। कोई मांग भरै दग अंजन कोई तिलक सु धारै॥ कोई तनकैं गंध लगावैं कोई भूषण साजै। कोई पट पहरावै बहु विधि जिन जननी मन राजैं॥ १३४॥ कोई भोजन करै तयारी कोई पान चबावै। कोई सिरपर छत्र सु फेरै कोई चमर दुरावै। कोई सिंघासन पर थापै कोई दर्पण दिखलावै॥ कोई गूंथ मनोहर माला आनि सुगंध पहरावै॥ १३५॥

कोई भेट करै सुरतरुके फल फूलादिक ल्यावै। कोई जलक्रीड़ा कर रंजै कोई सुन्दर गावै॥ कोई नृत्य करै बहुविधिसूं कोई साज बजावै। कोई सुन्दर सुर आलापै कोई तान सुलावै॥ १३६॥ कोई देवी दीपक बालै कोई सेज बिछावै। कोई माता पांव पलोटै पंखा कोई हलावै। कोई सुखमंजन करावानै को दतोनी देवै॥ कोई पग पखालै कोई पटसु पूंछै सेवै॥ १३७॥ कोई आंगण देव बुहारी कोई फरस बिछावै। कोई गंधोदिक छिरकै फुनि सुमन कोई बरसावै॥ कोई चीरण

फूल समेटै मंदिर बाहर डारै। कोई दान देय मंगल जन, कोई अस विसतारै॥ १३८॥ कोई हांस विलास कतूहल करि, करि मात रिझावै। कोई काव्य कथा रस पोषत, सुन माता हरषावै॥ कोई पंच रतनकूं चूरै, पूरै चोक सु कोई। कोई मणि रज रचै, सांथिया देख २ मनमोई॥ १३९॥

कवित्त—कोई माता रक्षा कारण बंध देत दश दिस पढ मंत्र। सवाधान निश दिन आयु धग है कोई कोट रचै कर जंत्र॥ करत उपद्रव छुद्र असुरको ताहि निवारण हेत विचार। तथा भक्ति वसि करि है देवी, नाना विध सेवा निरधार॥ १४०॥

दोहा—या विध सेवा करत नित, वन क्रीडादिक जेय।
रिध वैक्रिया पर भाव सूं, नवैं मांस गुण गेय॥ १४१॥
गूढ अर्थ शब्दादि क्रिय, नाना प्रश्न सपोष।
करैं सुरगंन मात प्रति, काव्य श्लोक शुभ गोष्ठ॥ १४२॥

अथ देवी प्रश्न, माता उत्तर।

कवित्त छंद—कौन देव देवन पत माताको, शुभ उपदेशै विनदोष। गुरुन गुरुको सब दरसी, कौन सुधी छालिस गुण कोष॥ को सरवग्य सरबकू देखे, कौन अठारै दोषनहंत। कौन पंचकल्याणक नायकको शिव मगदाता अरिहंत॥ १४३॥ तीर्थंकर—निराकार आकार धरै कोवै सब देखै उनै न कोय। ध्रौव्योत्पाद धरै न धरैको, हानि वृद्ध बिन फुनि युत होय॥ निरगुण सुगुण सहितको जननी, कौन सुधित बिन थित आरंभ॥

उरध अधो चलन बिन समरथ, समरथ बहु छिव पति निवसंत ॥ १४४ ॥ सिद्धि-ग्रन्थ बिना बहु ग्रंथ धरैको जगत विरुद्ध सुद्धको मान । मौन बिना को भीख धरत है बिना आस आसा अधिकाय ॥ धन बिनको धन जुत सर्वोत्तम को बिन सेव सेव निज तत्त्व। को बिन घर घर आतमके जुत को बिन जोग है जोगी सत्त्व ॥ १४५ ॥ शाप-चारित्र भार उपल पमजा बिन जा बिन भव्या भव्य न होय। धन बिन धन सर्वोत्तम है को शिव तरु वर अंकुरस कोइ ॥ श्रमण भूषण भूषणको है जा बिन भव आवली न नास। जास प्रहादि वसे तुम सो दर सुरी प्रशंसैंमा द्रिग भास ॥ १४६ ॥ सम्यग्दर्शन।

जाकर तीन लोक पत पूजे तीन लोकमैं महिमा जास। जा बिन चेतन अंप नहीं इक जातैं लोका लोक प्रकास ॥ जा बिन जगमैं मूढ़ कहावे जा जुत पंडित मान प्रवीन। को निज गुण सो जननी भाषे ता प्रघटे लइ मुक्ति नवीन ॥ १४७ ॥ सम्यग्ज्ञान।

जो निश्चे तद् भव सिव जावे जा बिन सिव पावे न कदापि। जाकर सम्यक आधिक जूं कन भूषनमैं मन आय जा बिन ॥ निर्मल सो मल युत है जाजुत मलजुत उज्जल होय। जाको सुर चाहत सो प्यारे जग तो दासी कृपा होय ।१४८॥ दोहा-जा बिन मुनि श्रावक क्रिया, वृथा होय सब भाय।
कौन इसो जगमैं सुनौं, सो तुम मैं सुखदाय ॥१४९॥ विवेक।
दधी स्याही मोक्षकी, उलटी दुर्गति दाय। आद बिवेक

सद जन प्रिय, सो मुन प्यारी थाप ॥ १५० ॥ समता।

आदांकन पाले सुजग, मध्यांकन छयकार। अंतांकन सब जग प्रिय, को दग भूषण सार ॥ १५१ ॥ काजल।

कल्याणक उछव विषै सुरनर भक्ति सुधार। वा आधीन जन सुजसमैं काको करे उचार ॥ १५२ ॥ जप ॥ रमैं बहुतमूं जार सम, वासू रमै जो कोय। के औरमूं ना रमैं, नारि नारि बिन कोय ॥ १५३ ॥ शिव ॥

इति प्रहेलिका।

अथ प्रश्नोत्तरमालिका।

छंद चाल–तुमसी तियको जिन जावे, मटकौ जग निसैक खावै। को कायर अक्ष न जीतैं, पंडित को चलै सुनीतैं ॥ १५४॥ दुश्चार कुमग इन तेवे, सठको विषई जग जेते। को सदन चारु साधै, को कुनर न धर्म अराधै ॥ १५५॥ को धन्य तरुण व्रत धारै, को धृग व्रत भंग निहारै। को जीव हितु सदबोधा, को जीव रिपुगन क्रोधा ॥ १५६ ॥ सुपवित्र कोन तज लोभा, को मलिन पाप जुत छोभा। को नर पसु समरन विचारै, को अंध जु नांहि निहारै ॥ १५७ ॥ गुरु कुगुरु असुर सुर जानी, कोवधर सुनन जिनवानी। को मूक साच नहीं भाषै, को सुमन सरल चित राखै ॥ १५८ ॥ को तुंड हस्त नहीं देवै, को पंगु सु तीर्थन सेवै। को रूप सील भृङ्गारै, को विरूदसील परिहारै ॥ १५९ ॥ को नित्र सुधर्म दिढावै, को शत्रु सुपनै हटावै। को सरण जीव परमेष्टी, इत्यादिक प्रश्न जु श्रेष्टी ॥ १६० ॥

दोहा—करै तिने जुत सुरांगना, उत्तर देय विचार।
लक्ष्मीदेवी सहज ही, चतुर सुगुण आगार ॥ १६१ ॥

सोरठा—पुरुष रतन उर वास, क्यों न ग्यान अधिको लहै। ज्यूं प्राची दिस मास, उदै भान पहली समै ॥ १६२ ॥ तीन ग्यान गुणवान, निवसै निर्मल भ्रूणमैं। ज्यूं मणि दीप महान, फटक महलमैं जगमगै ॥ १६२ ॥

कुसुमलता छन्द—त्रिवली भंग न उदर मनोहर तीन कोट मनुगाजै। श्री जिनधर्म विषै सुमार धिन जु दर्प्पण गिर छाजै ॥ जननी कल्पलता कुच मंजरी, सुमन भार न सहारैं। तौ फल परम भार किम सह है इम नाजुक तन धारै ॥ १६३ ॥ पीत वरण नहीं देह मातकी स्थन विटली नहीं स्यामा। लम्बे उष्मन स्वांप सुगंधित ना आलि सगुण धामा ॥ अरु चिजैं भाई होय न जननी मणि दुति सम तन सोहै। झांकि समान गर्भमें बालक अधिक रसिप मनमोहै ॥ १६४ ॥

छन्द चाल—सुरवल्ली सम छवि वंती, हसि मंद कुसम फूलंती। अब होय सुफल फल वेटा, इम पूरब पुन्य सुभेटा ॥ १६५ ॥ सुरराज वचन उर धेवै, सचि अहि निस हर्षत सेवै। अमरी जुत अलख सु मावै, पूरब वत नग दरसावै ॥ १६६ ॥ फुनि पंचाश्चर्य अनूपा, घर महासेन वर भूपा। कर धनिद महा सुखदाई, सुखमैं निसि दिन वीत्‍ई ॥ १६७ ॥

गीता छन्द—मय वेद नाम न कही सुपिये गर्भ मंगल यौ महा। सो करौ मंगल सचनको श्रीचन्द्र प्रभु गौतम कहा ॥

सुणि भूप श्रेणिक अंग पुलकित पुन्य महिमा इम लखी। ताकी परमपर देखि गुरु गुणभद्र संस्कृतमैं अखी॥ १६८॥

दोहा—या विध जे मंगल लखै, धन्य पुरुष जग सोय।
भाखै हीरा आम यह, कवि ऐसो दिन होय। १६९॥

इतिश्री चन्द्रप्रभुपुराणे जिनगरभावतारपश्चमंगल वर्णनो नाम एकादशम संधिः संपूर्णम्॥ ११॥

द्वादश संधि।

कवित्त—इंद्र सुरासुर मुनि खग नरपति ध्यावत मन वच तन कर जाकौ। ज्ञातन रश्मि लगे हो उज्जल बाझरु अंतर ध्यान सु ताकौ॥ ऐसे चंद्र जिनेद्र कमावुंन मो उर ताल करो सोभाकौ। फैली तासु सुगंधि मनांतर ताप कुबुद्ध हरै कवितांकौ॥ १॥

चौपाई—सुनि श्रेणिक आगै मन थंभ, कहुं जन्म मंगल आरंभ। रहसरलीमैं निस दिन गए, गरभ मास जब पूरण भये॥ २॥ पूस चंद्र पडिमा तिथ दच्छ, जोग इंद्र अनुराधा रिच्छ। प्राची दिश समान लक्षमणा, महासेन उदयाचल भणा॥ ३॥ तित जिन रवि यो रत्नागार, मध्य लोक सम भवन मझार। तीन ज्ञान किरणावली जुक्त, त्रिभुवन कवल प्रकाशन उक्त॥ ४॥ तेज पुंज जिन सित जिम चंद, बुद्ध सुखाब्द कर जगतानंद। सर्व लोक भयो शोभित रूप, करकट घर मनौ

नाचे भूप ॥ ५ ॥ घरा सखी सब हर्ष विचार, ताकर चलत भई सु निहार। नृत्य करत मानौं पुर नार, वस्त्राभरण किये शृंगार ॥ ६ ॥ श्री तीर्थंकर जन्मो जबै, पुण्य पुंज मणि पुंज फबै। तीन लोक आनंद तरले, जिम बसंत बिनस्पति खिले ॥ ७ ॥ स्वजन लोक इम हर्ष अमंद, चन्द्रोदये जूं कमलनी बृन्द। दश दिश निर्मल फटिक समान, आंधी रज घन बिन नभ जान ॥ ८ ॥ मंद सुगंध वहै दुखहार, पवन तरुण जूं पात्र सिंगार। छेप द्रुमांजली मुदित नचंत, हर्षे सभा मनौं गुण कांत ॥ ९ ॥ सुरतरु सुमन चवै स्वयमेव, जन्मत जजै मनौं जिनदेव। कुसम सुगंधित दसौं दिश भयो, मानौं हर्ष बांट सबौं दयो ॥ १० ॥

दोहा—एक महूरत नरकमैं, सब जिय चैन लहाव।
　　ज्यूं रणमें पट फिरतही, राउ त्याग समभाव ॥ ११ ॥

चौपाई—अब जिन पुन्य पवन वस हले, चौविध सुरन आसन चले। मानौं कहै लखो बुध थोक, जिनवर जन्म भयो भुवलोक ॥ १२ ॥ तुमै उचित नहीं उच्च स्थान, मुकट नए मनो सारत ठान। करो नमन जिन जन्म परोख, यही भक्ति दे निश्चय मोख ॥ १३ ॥ अकस्मात सुर दुंदभि बजु, अनहद मधुर सिंधु जूं गजु। कल्प वास घर घंटा घुरै, मनौं सुग्न प्रति इम उच्चरै ॥ १४ ॥ साधन चलो जन्म कल्याण। उदय भए सूरज भगवान। जा दरसे छूकै भव नीर। अब सारस तजि मयै शरीर ॥ जोतिष घर हर नाद अपार, मानौं कहै न लावो

वार। सब व्यंतरन घर पटह पटंत, मनो जिन जन्मोत्सव सूचंत ॥ १६ ॥ भवनालय प्रति पूरी संख, मानो सबकूं कहत निसंख। रहो जनम जिनवर भयो आज, याते मौलि पीठ चल राज ॥ १७ ॥ लख चिन्हादिक चकत थाय, पीन पुञ्ज जू तुल भू भाय। अवधि विचार जान जिन जन्म। जू दर्पणमें छवि बिन भर्म ॥ १८ ॥ प्रलय सिंधु सम हर्षितवंत, चलनेकूं उद्यम सु करंत। हर इशान रु सनतकुमार, त्रिय महिंद्रक ब्रह्म निहार ॥ १९ ॥ लांतव महाशुक्र सहश्रार, आणत प्राणत आरण विचार। अच्युत ग्यारै इंद्र प्रतिंद्र, सब परिण जुत दुतिसु दिनंद ॥ २० ॥ नानाविधि वाहन सजि चढे, ते जिनभक्ति सलिल उमढे। हर्षांकुर बढन गुणधाम, मिल सब आए प्रथम सुधाम ॥ २१ ॥ चली सेन सप्तांग सु एम, लहर जलधको सं हे जेम। अश्व वृषभ रथ गज गंधर्व, नृत्यकुपत्य सम चमू सर्व ॥ २२ ॥ इक इक सेनामें कछ सात, प्रथम तुरनिकी सप्त विख्यात। लक्ष चौरासी कछमें आदि, दून दून सप्त तक साद ॥ २३ ॥

छप्पई—प्रथम कुंदके कुसम क्षीरसागर फेनोपम। द्वितीय बसंती तप्त हेम बालार्क केसर सम ॥ त्रितीय लाल पावाल गुज गुलम पमल समहै। चौथी हरित सुकाग रंग पन्ना सम सोहै ॥ पण अंजन राठरकेत सम, षष्ट कपूरी तुछ जरद। सित कंठ इंद्रमणि नील फुणि, इकइकमें बहु रंग हद ॥ २४ ॥

दोहा—सौ करोड अरु कोड पट, अडसठ लक्ष प्रमाण।
संख्या सब अश्वन तनी, लिखी देख जिनवानि ॥ २५ ॥

छप्पै—चालतुरी गत पवन प्रिष्ट अति पुष्ट सुभग मुख। तुच्छ श्रवण ज्यूं मेर उद्ध, थिर भाल उच्च लख ॥ दग नीलोत्पल नाल सम दंत इन्दु दुति। ग्रीव धनुषकी अष्ट उर्द्ध कूं केसावलि जुत ॥ मृदु चिकने चमकै किरण रवि पुंछ सुरह सम चल चवर। कलगी पलाण मणि स्वर्ण मय दुमची लगाम पण रतन जड ॥२६॥ पग पैजणी झुणकार हार मणी किंकणी हिममय। मोहरी हाटक जड़ी रतनमय श्रवण चवर लय ॥ चढ़े विबुध सुववंत कांत रवितणामरण जुत। करि सिंगार हथियार लिए सुर वृक्ष दाम जुत ॥ अति महक रही दशहु दिशा सब तान रहे सिर छत्र। हय उच्छात ही सत मनहरे सुर ऐसे जान सर्वत्र ॥ २७ ॥

गीता छन्द—फुन रंग संख्या पूर्ववत सब सेन दूजी वृषभकी। तिन सुभग मुख कट पूंछ कंधे जूं नगारो उलटकी ॥ फुन शृंग खुरकन धुन घनाद्ध जु अधिक पट भूषण लसे। सब त्रिदश तिनैं हैं सवार सुभगति जिन हिरदय बसैं ॥ २८ ॥

दोहा—लूम्बै श्रवणमें चंवर, चुडामण जुत भार।
गलघंट घूरे जू दुन्दभि, वृषभ सुरूप उनहार ॥ २९ ॥

गीता छंद—फुन चालते परवत समानो भाद्र घन सम मद झरै। वसु गंध फैलो पवन श्रवणत ननताल सम हालत सिरै ॥ चंचरीक अति महकतै झंकार हं धुन सुन करी। तब बीज सम गरजै उठावै सूंड नाचै जूं सुरी ॥ ३० ॥

सोरठा—झूलवणी मखतूल कार चोम मुतियन झलर। चमक करण अनुकूल अंबारी कण मण त्रिय ॥ ३१ ॥

दोहा—कंचन मणि माणिक जडित, बुखदब सम गल घंट।
अश्व वृषभ गज पशु नहीं, माया देव करंट ॥ ३२॥

चौपाई—रवि रथ सम रथ सातों वर्ण, छत्र चमर धुज किंकनी भर्ण। तिन मध बैठे सु रजूं मैण, विविध विभाजुत तर्जित सैन ॥ ३३ ॥ पंचम सेना सुनो बखान, नृत्य कारसो सात विधान। तामे बाजे चार प्रकार, ततरु वितत 'घन' सुषर निहार ॥ ३४ ॥ तत सु संतारादिक जुत तार, वितत मंढे तु चपट सुनि हार। घन कासीके पट तालाद, सुखर फूंकके पुंगि तुराद ॥ ३५ ॥ देव दुंद इव बाजे बजे, देव सुरी संग नाचत रजे। फिर कीले तनकर मोरंत, विगपत उछल तान तोरंत ॥ ३६ ॥ ग्राम मूर्छना जुत सुर ताल, गावे सरस गीतकी चाल। समे जनम मंगल सुनिहार, नव रस पोखत मधुर उचार ॥ ३७ ॥

अथ नव रस नाम।

दोहा—सिंगार हास करुणा, त्रय रुद्र वीर रस पंच।
फुनि भय सात रु चपलता, नवमें धीरज संच ॥ ३८ ॥

चौपाई—राजा अर्द्धराज महाराज, अरू समान भूचर खग-राज। तिन गुण वीर्य गुंथ पदमाय, प्रथम अणी इम नाचत गाय ॥ ३९ ॥ अथ मंडली मंडली फुनि महा, मंडली सत्रिय जस गुण गहा। रचि गावत नृत्यत इम दुती, सुण त्रिय चमूं नृत्यकी गति ॥ ४० ॥ तीन खंडपति विसयरु करा। चतुराई गुण जस विस्तरा। वा चकी गुणनिधि भण लक्ष, नृत्यत सक

दिखलावत दक्ष ॥ ४१ ॥ नवत्रा लोकपाल गुण कला, विश्वेरु ब्रह्मचारी सुर मिला। कल्पातीत तने सुरराय, तुरी चमू नाचत दिखलाय ॥ ४२ ॥ सद्गुरु मुनि गुण सब गहै, सह उपसर्ग स्वर्गपद लहै। श्रीशादिक उपरि थित ठणी, तीन गुण गूंथ नचै पण अणी ॥ ४३ ॥ चरमशरीरी गणधर वली, अंत कृतोऽसर्ग केवली। तिन गुण महिमा गूंथन चित, षष्टम समासु एम लसंत ॥ ४४ ॥ चौतीस अतीशै जुत अरिहंत, प्रातिहार्य सु चतुष्टय वंत। समवशरणादिक तिन गुण गूंथ, सप्तम अणी नाचै अदभूत ॥ ४५ ॥ इम नृत्यकी फुनि गायन भेद, सुनो साधक छाविन भेद। गावै सुर गंधर्व सुधार, सो गंधर्व शास्त्र अनुसार ॥४६॥ बाजे है गंधर्व शरीर, फुनि उतपत्य सुणो हो धीर। बीण बांसरी नृत्य निहार, फुनि स्वरूप है तीन प्रकार ॥ ४७ ॥ सुर फुनि पद अरु ताल निहार, मुख्य भेद सुर दोय प्रकार। एक बैन अरु एक शरीर, लक्षण अरु विधान सुण वीर ॥ ४८ ॥

गीता छंद—अनुव्रत सुर अरु ग्राम, वरणरु अलंकारु मूर्छना। फुनि धातु अरु साधारण, आदिक बहुत बैन सु रुच्छना। फिर जात वरणरु सुसुर ग्रामैं, स्थान साधारण क्रिया। जुत अलंकारादिक सरीर, सु दूसरो सुर इम लिया ॥ ४९ ॥ फुन ताल गत बाइस, जुत गंधर्व संग्रह इम करै। इकीस मूर्छन जुक्ति गावै, थल उनंचासनुसरै। अरु नामतै सुर खरज उपजै, सोर महषी सम कहा। सो प्रथम कच्छा मांहि गावै, एही सुरमैं सुर महा ॥ ५० ॥ उपजै हियातै

रिषभ सुर घन धार सम अति सोरजी। गंधर्व गावैं अनी दूजी, मय सुधार भरो रजी। फुनि कंठ से उत्पत्य सुर, गंधार अज उनहारजी। सो ताहि सुरमैं गावते, सुर त्रिय चमू सु निहारजी ॥ ५१ ॥ फुनि तालुतै उत्पत्य रवि, मंजार वत मध्यम तुरी। ते समामें गावत चाले, गंधर्व प्रघटत चातुरी। फुन पंचमो सुर जेम हर, रवि गावती पंचंम सभा। गज गर्जि सम धैवत सु सुरमैं, गाय है षष्टम सभा ॥ ५२ ॥

दोहा–सुरनिखा दई मगजतै, उतपति कोकिल मान।
सप्तम कक्षाके विषै, गावत चले सुजान ॥ ५३ ॥
तीस रागनी राग षट, एक एक सुत आठ।
अर इनको परवार सब, गावत सुर जुत ठाठ ॥ ५४ ॥
इम षष्टम फुनि सातमी, सातों रंग सु केत।
हंस मोर गज हर वृषभ, चिह्न इत्यादि समेत ॥ ५५ ॥
निज निज कक्षामैं पतक, चले जात हित हेत।
जै जै रवि उचित सकल उछरत हर्ष उपेत ॥ ५६ ॥
शस्त्र वस्त्र आभरण सजि, विविध निपुण सोहंत।
आय सभा प्रथमेंद्रकी, माहि सुकेत फरंत ॥ ५७ ॥

चौपाई–टेरौ नाग कवार सुरिंद, रचि ऐरावत लाय गयंद।
सो निर्जर असवारी जात, सुन हर जलपन प्रमुदित गात ॥५८॥

कड़का छन्द–फील वैक्रिक रचो लक्ष जोजन कचो मंद गति मंद मचो गिर जु छाजे। वदन सत वदन प्रति रदन वसु रदन प्रति सर सु इक सरन प्रति कुमुद राजे ॥ सतक पण-

बीस गिनि कुमुद प्रतिकमल जिण संख पणवीस भिन इकके कंजा। पत्रसत आठ लछन घत देवी कुरूत्र कोट सतवीस पव मिल रंजा॥ ५९॥ साज बाजत ठठाहस्त अंगुरी कटा मोर पग अटपटा नृत्य करती। वक्र सिर कर जटा सुगन्ध मृदु पुल छटा भ्रमत दिश दग कटा चित हरती॥ नील पट जूं घटा दमक विद्युत छटा कनक सम तन लटा गान करती। करत जिन थुन रटा गाय गुण परगटा राम कलि दुर ठटा हरष घरती॥ ६०॥ नाग सुर आनयो लाय इम इम चयो हुकम तुम नोदयो सोई लीजे। सुनत हर हरषयो देख चकित भयो धन्य घन इम चयो बहुरि कीजे॥ लोक दिग्पाल सचिनाल सुंडाल चल चढत इन्द्रादि दस जात देवा। सुरगतें उतर सो गगनमें आय तित चन्द्र रवि जोतिसी पंच भेवा॥ ६१॥

चौपाई—किन्नरादि व्यंतर बहु जान, इक इकमें दो दो हर मान। किन्नरमें किन्नर किंपुरुष, द्वितीय सत्पुरुष महापुर्ष ॥ ६२॥ तीजे महाकाय अतीकाय, तुर्य गीत रत गीत रुषाय। मानभद्र फुनि पूर्णभद्र फुनि पूर्णभद्र, जषन इंद्र जाण ये भद्र ॥ ६३॥ भीम और महाभीम सुभूप भूत पत सरूप प्रतिरूप। पिशाचनमें काल महाकाल, सोले हर व्यंतर गुणमाल ॥६४॥ अरु तावत प्रतेंद्र गणेस, फुन भवनेन्द्र सुनो नृप वीस। चमर विरोचन जुगम सुरिंद्र, भूतानंद रु धरणानंद ॥ ६५॥ वेण २ धारी तर श्रेष्ठ, गुणपूरण अरु पूर्ण वसेष्ट। जलप्रभ अरु जल-कांत सुरेस, घोष रु महाघोष पवनेश ॥ ६६॥

गीता छंद—फुनि सप्तमैं घन कारमैं इन्द्रेश अर हरिकांत। फिर अमितगति अरु अतिवाहन उदधिमैं अतिकांत॥ अरु अगनि सिष फुनि अगनिवाहन दीपकार सुरिन्द्र। फिर दिग्कुमारन माहि वेलंचित प्रभंजन इन्द्र॥ ६७॥

दोहा—भवनपती ए बीस हर, तावत चले प्रतेंद्र।
सब संख्या सत इन्द्रकी, सुणि श्रेणिक भूपेंद्र॥ ६८॥
भवन पती चालीस ए, व्यंतरराय बत्तीस।
ससि रवि पसु पती नरपती, कल्पईस चौवीस॥ ६९॥
इंद्र समानक आद दस, जात सहत परिवार।
निजनिज कक्षा सप्त सज, चले हर्ष उर धार॥ ७०॥

छपै—वाहन विबुध प्रकार रचे सदन विमान सुक। लाली मोर मराल गरुड़ पारे बावत्तक॥ कुरकट सारस चील लाल बगला भरंड धरु। बुल बुल मैना चिरा कठैया गुरसल गिर घरु॥ अज महिष सिंह चीता गिदर साबर रोज बराह है। कपि रीछ खच्चर मंझार मृगस्वान वृषभ कर हास गय॥ ७१॥ भेड बघेरा सूवा व्याघ्रसे ही घर गैंडा। सार दूल लंगूर सरभ अष्टा पद मैंडा॥ नक्र कुरम माछला आद चल थल नभ चर सब। केनर सुप पसु देह पक्षु मुख नर तनको फब॥ इत्यादि सकल सजि सजि चढे विविध विमादि गूपूर छवि। मुद गान बजावत गरजते उछर करत जै जै सुरव॥ ७२॥

दोहा—आए ससिपुर निकट सब, फेरी पुर त्रिय दीन।
वन वीथी बाजार नभ, रोकि सुरी सुर लीन॥ ७३॥

चौपाई–नृप आगणमैं आए सुरेस, इन्द्राणीकूं दे आदेश। जाय प्रसूत स्थल जिन ल्याय, सुन आज्ञा चाली उमगाय ॥ ७४ ॥ शुभ प्रसूत गेहमें जाय, चक्रत चित इकटक द्ग लाय। बाल सूर्य जुत प्राचीमात, उदयाचल सिज्जा स्थित ख्यात ॥ ७५ ॥ प्रभा पुंजरु दामनी दंड, देख मुदित द्रग कुन लय खंड। श्री आवर्ति देय नुतकार, धन्य धन्य माता जग सार ॥ ७६ ॥ तुम ही पुत्रवती नहीं और, सो सब भ्रमें सहै दुख घोर। रूप रतन खोवै तैं वृथा, आगममैं तिनकी बहु कथा ॥ ७७ ॥ तीर्थंकरकी जननी माय, यातैं नमूं नमू हरषाय। धन्य धन्य जिनवर तुम बाल, तौ पण अतिसै वृद्ध विसाल ॥ ७८ ॥ जैसे रवि दरसत तम फटै, त्यौं तुम दरसन तैं अघ हटै। नमूं नमूं तोहि मंगल कर्ण, जै जग उत्तम जै जग सर्ण ॥ ७९ ॥ धन्य जन्म मेरो भयो आज, जिन पद फल लीनो महाराज। शुत करदे निद्रा सुखमई, मा ढिग धर सु माया मई ॥ ८० ॥ कोमल पान सपर्से जिनंक, प्रमुदित रिद्ध पाय जू रंक। चली पलोमजा ले सिसु पेष, हरष उदधि वृद्धो सु विशेष ॥ ८१ ॥ आगै २ मंगल द्रव्य, लिये जाय देवी बहु सर्व। जै जै नंद वृद्धि उचरंत, जाय शक्र कर दियौ तुरंत ॥ ८२ ॥ प्रथम नमस्कार कियौ इंद्र, हस्त जोडि शिर न्याय सुरिंद्र। धन्य २ देवनके देव, हम भव सफल भयौ कर सेव ॥ ८३ ॥ नैन चकोर निमेष पसार, चंद्र वरण जिन रूप निहार। लख २ तृप्त सुरेन्द्र न थयौ, तब हजार द्रग हरकर लियौ ॥ ८४ ॥

छकित रह्यौ जिनवरकी वोर, आस पास देवनकी कोर। ले उछंग जिनवर प्रथमेद, सची सहित आरुढ़ गयंद॥ ८५॥

तब ईसान इंद्र जिनसीस, छत्र सेत जस पुंज सरीस। धरी मुक्त झल्लर युत मनो, सेवै सरि रिप जुत कर घनो॥ ८६॥ सनतकुमार महेंद्र सुरेन्द्र, चवर करैं दो तर्फ जिनेंद्र। जूं अति हिमवन गिर दो ठांव, रोहितास्य हर दीन प्रवाय॥ ८७॥ सेस सुरेंद्र सु जिन चहुं ओर, जै जै शब्द करै घनघोर। कोलाहल हुओ अधिकाय, वधर भई दस दिसा सुराय॥ ८८॥ तब सौधर्म्म स्वर्गको राय, सारत करी सुवाइ उचाय। चलो मेरु गिर देर न करौ, सुर संघट दधि सम विस्तरो॥ ८९॥ चले गगनमें मगन अपार, अमरांगन च्यार प्रकार। विबुध विभा भूषित घन घान, नाना चेष्टा करत महान॥ ९०॥ बाहु सफलन करतक तान, केइ उछरत केइ हंसत महान। केई बजावत दुंदभि नाद, केई गान करैं सुर साद॥ ९१॥ केई अमरी नचे अपार, फिरकी लेवै हाथ पसार। पग कटि अंगुरी ग्रीवा मोर, मान मूर्छना तान सुतोर॥ ९२॥ केई परस्पर जल पण करै, केई श्री जिन जस उच्चरै। कुचित सु निरख जिनकी ओर, हम रथचर इय त्रुप वन कोर॥ ९३॥ गए जोतिसी पटल उलंघि, पहुंचे मेरु सुदर्शन शृङ्ग सहस निननवै ऊरध भाग, पांडुकवन तरु सहित पराग॥ ९४॥ गोल मध्य चूली चहुंवोर, च्यार जिनालय अकृत अडोल। सुर विद्याधर चारण आय, जजैं नमै ते मन वच काय॥ ९५॥

च्यारि विदिश सिल च्यारि विचित्र, तीर्थ न्हवणहैं परम पवित्र। पांडुकसिला दिशा ईशान, धनुषाकार कही भगवान ॥ ९६ ॥ ऊंची योजन आठ अथाम, सतक व्यास पचास ललाम। सित फटकोत्पल सम चंद्रर्द्ध, सोहै सिद्धशिला सु स्वर्द्ध ॥ ९७ ॥ मध्यभाग सिंघासन चाप, मूल पंचसत विस्तर आप। तावत तुंग अर्द्ध विस्तार, उरध दिसकण मणमय सार ॥ ९८ ॥ झारी कलस आरसी छार, धुजा बीजणा सथिया चवर। मंगल द्रव्य धरे उत्कृष्ट, दोय दुतर्फ और लघु प्रष्ट ॥ ९९ ॥ मंडफ रचो विविध परकार, पक्षा थंभ रंग उनहार। स्वर्णमई रतनन कर जरी, ऐसी मेर कोलय विस्तरी ॥ १०० ॥ उपर तनो चंदोवा सार, पंच रतनमय स्वर्णाकार मुतियनकी झालरि झलकंत, हीरा हार मची विइसंत ॥१०१॥ ऊपर धुजा हलत मनो नचै, प्रथम जु सिंहासन कह्यौ सचै। ता ऊपर श्री जिनवर थाप, पूरब मुख पद्मासन आप ॥ १०२ ॥ दक्षिण स्थविटर प्रथमेंद्र, उत्तर दिश ईशान सुरेंद्र। लोक पाल चहुं दिसी थित हेर, सोम और जम वरुण कुबेर ॥ १०३ ॥

छपै–फुनि थापे दिगपाल दशौ दिश पूर्व थित। अगनि२ दिसि काल सु दक्षन नैऋतनै रुत ॥ पछिम दिसमें वरुण पवन वायव दिस ठाणो। उत्तर दिशा कुबेर दिशा ईशान ईशानो ॥ धरणेंद्र अधो दिश उर्द्ध फुनि सोम स्थित रक्षा करै। सब विविध भांति आयुध लियै सावधानहैं विस्तरै ॥ १०४ ॥

चौपाई–छीरोदध तक मारग रचौ, हेम मई माणिक

कर धर्चो। यूं कुबेरकूं हर फुरमाय, सुनके रची अधिक धनराय ॥ १०५ ॥

दोहा—मेरु सुदर्शन तैं कही, पंचम सिंधु प्रजंत।

हेम रतनमई पेडिका, सुर नर हर मोहंत ॥ १०६ ॥

चौपाई—सहस आठ घट कंचनमई, रतन जड़े संख्या जिनवई। कनकमई कवलन मूंढके, मुक्ति माल उरमें झक्झके ॥ १०७ ॥ वसु जोजन ऊंचे अध व्यास, आनन एक अकुल्यम भास। हाटक कीटि कटिन पै धरे, देख सुरेस हर्ष उर भरे ॥ १०८ ॥ चंदन कर चर्चित हर करे, कलस सुवास दिग विस्तरे। सब सुर गण तब एकह बार, कुंभ उठाय चले ले लार ॥ १०९ ॥ हाथों हाथ ल्याय भर नीर, कोलाहल हूवो गंभीर। सुर कृत फूलन वर्षा भई, नृत्य गान बाजन धुन ठई ॥ ११० ॥

छंद संकर—पट निसान मृदंग भरी संख हर नादाद। सुर बजावें श्राण तूखदा दिगंतर मरजाद ॥ शृङ्गार जुत मुद सुरी संघट प्रघट रस नृत ठान। हाव भाव रु मान लय जुत मूर्छना ले तान ॥ १११ ॥

चौपाई—तुंबर नारदादि जुत नार, गावें गीत श्रवण सुखकार। अमरी अमर हरष उर छाज, मंगलीक सब बनो समाज ॥ ११२ ॥ जय जय नंद वृद्धि इकवार, भई धुनाब्ध गर्ज उनहार। ताह समैको करै बखान, निज दृग देख सो धन जान ॥ ११३ ॥ सहस अठोत्तर कर हर थाहु, भूषण भूषित अधिक सुहाउ। मानो भूषणांग तरु एह, बहुरि मंत्र पढि घट

कर लेह ॥ ११४ ॥ मानो भाजनांग सुर वृक्ष, न्हवन करण विधिमें इह दक्ष। तीन बार कीनो जयकार, सब कुंभनकी ढारी धार ॥ ११५ ॥ फुनि ईशानादिक सब देव, निज २ भक्ति करै बहु भेव। भरि भरि कलस छीरदधि नीर, ल्या ल्या ढारें स्वामि शरीर ॥ ११६ ॥ सो जलधार अधिक विस्तरी, मानो नभ गंगा अवतरी। कित सत जाए सिसु कित धार, यह अनंत वीरज गुण सार ॥ ११७ ॥

दोहा—जो धारासूं गिर शिखर, खंड खंड हो जाय।
सो धारा जिन सीसपै, फूल कली सम थाय ॥ ११८ ॥

चौपाई—जिन तन फरसत शीत काय, जल कण उछल मनो मुसकाय। फास जिनांग सु अघविन भई, क्यों न उदकूं जावे नहीं ॥११९॥ जिन दिगनार सजो सिंगार, बिंदि धविंद जल ऐम निहार। कण जल उछर स्वर्ग न वपु परे, मानो सधन पवित्र सु करे ॥ १२० ॥ सो जल फैला मंडप मांहि, विखर रहे जहां कवल अथाह। वह चाले इम उपमा धार, ज्यूं महान पंकति उनहार ॥ १२१ ॥ ता धाराको बह्यो प्रवाह, मनों मेरु प्रति उज्जल थाइ। करै समस्या सबको पोय, गंधोदिक जल लावै जोय ॥ १२२ ॥ क्यों न शोभ विन निर्मल लसै, नेक जन्म कृत अघ सब नसैं। श्री जिन न्हवन न्हवनोदक सुरताय, भाल नैन उर कंठ लगाय ॥ १२३ ॥ सक्र सची सुर आनंद भरे, जथाजोगि सब कारज करे। परदक्षण दीनी बहु भाय, वारंवार नए सिर न्याय ॥ १२४ ॥ फिर जल गंधाक्षत चरु फूल, दीप

धूप फल कियो समूल पूजा करी सु उकत ठान, सुरनर सुखदा मुक्ति निदान ॥ १२५ ॥ सुर असंख सब हर्ष सु भरे, निज निज भक्ति प्रगट नित करे। बहुरि सची पूंछो जिन देह, करि सिंगार सु नाना भेद ॥ १२६ ॥

अडिल्ल—घसि गोसीर रु कुंकम गंधित अलिमची। जगत तिलकके तिलक कियो तब ही सची ॥ जगत मौलिसिर मौलि धरो तब इन्द्र रणी। जगत चूडामणि सीस सज्यो चूड़ा-मणी ॥ १२७ ॥

सोरठा—छिद्र किए जिन श्रोत्र, वज्र सुई ले प्रोमना। या संसै प्रश्नोत्र, वज्जरखूं वज्जर भिंद ॥ १२८ ॥

अडिल्ल—ससि सूरज उनहार पराए कुंडला। निर अंजनके नैननमें अंजन घला ॥ कंठी कंठरु हार रहै गंगा मनो देवछंद इन नाम सहस बसु लडि तनो ॥ १२९ ॥ भुजबंधन भुज मांहि करे करमें लहसै। पोहचे घल मणिबंध छाप अंगुरी निवंधे ॥ कटि कटि मेखल पग पायल जुत किंकनी रुणझुण पैजन करे कनकमय जुत मणी ॥ १३० ॥ भूषण जिन तन पाय अधिक-सोभा लहैं। झांकि पाय ज्यू फटक अधिक दुतिकू गहै ॥ इंद्रानी पहराय वस्त्र सुरगन तणे। फूलमाल धरि ग्रीव महिक अलि रवि ठणे ॥ १३१ ॥

दोहा—अंग अंग आभरण जुत, ए उपमां तिहकाल।
सुरतरु सम प्रभु सोहिए, भूषण भूषित डाल ॥ १३२ ॥
अब इंद्रादिक करत थुत, तुम लखि आरति गोन।
धन्य आप औतार प्रभ, दीपक सम त्रिय भौन ॥ १३३ ॥

छंद त्रिभंगी–मिथ्या निस चंगी कुप धन जंघी चोर कुलिंगी सो लूटे। तुम जन्म प्रात जो हो न तात दुख पाय प्रजा सौ क्यौं छुटे॥ मोगद ग्रीस जीव विलक अती वा एह अनाद संसारीजी। सो दुख मेटन राजचंद तुम दयानिधान जगतारीजी॥ १३४॥ भ्रम अंधकूपमैं परे जीव तिन काढन समरथ ना कोई। तुम वचन रज्जु गह ले उधार अब तुम समान प्रभु तुम होई॥ तुम सहज पवित औरनकूं करहो ज्यूं ससि निज सुत सज्जन करंत। तिनस्मान निर्मल बाह्यांतर निज हित निर्मल ग्हौन ठनंत॥ १३५॥ स्वयं बुद्ध देवनके देवा जगपत जग रक्षक जगतान। बंधु निकारण गुणदधि पारण हमसे कि जो मुनन लहात॥ तुम तारण तरणं शिव सुख करणं असरणं शरणं अतिसै कोस इम गुण बहुरि नाम संख्या विनवे वरणूं जु कुछक निर्दोष॥ १३६॥

छंद चेंडी—महासेन कुलचंद नमस्ते, लछमीचंद अनंद नमस्ते। सुपदधि वृद्धि करेहि नमस्ते, शांतिदाय जग श्रेय नमस्ते॥ १३७॥ भ्रम नासन अवतार नमस्ते, हमसे भृत सुपकार नमस्ते। रवि विन तम वयूं जाय नमस्ते, किमपञ्ज बिग साय नमस्ते॥ १३८॥ त्रैलोकेश महात्म नमस्ते, सर वग्यं सुभात्म नमस्ते। अमल स्वासतो शुद्ध नमस्ते, निर विकल्प अविरुद्ध नमस्ते॥ १३९॥ सिद्ध प्राप्ति निरदेह नमस्ते, सुनिरांतक निरकेह नमस्ते। सिद्ध निरंजन शुद्ध नमस्ते, निहकलंक गुण वृद्ध नमस्ते॥ १४०॥ निरालंब निरमोह

नमस्ते, निरमलात्म निरक्रोह नमस्ते । मिभ्रन निरहंकार नमस्ते, अतिक्रियेन विकार नमस्ते ॥ १४१ ॥ दोष सुरजविन शांत नमस्ते, शिव अभेद गुण पांति नमस्ते । निरजनि रंग निकार नमस्ते, निराकार लप मर्म नमस्ते ॥ १४२ ॥ त्रिकुल प्रभ निरवेद नमस्ते, निरुपम ज्ञान अभेद नमस्ते । विराग धीर जिन श्रेष्ट नमस्ते, अव्यय सर्वोत्कृष्ट नमस्ते ॥ १४३ ॥ गोचर ज्ञान निसंग नमस्ते, केवल प्राप्त अभंग नमस्ते । मह पूज्ञात्म अमंद नमस्ते, जगत सिषर सुष छंद नमस्ते ॥ १४४ ॥ गुण संपज्ञ्यनिशुद्ध नमस्ते, ओघ विरोध गुणाढ्य नमस्ते । अजर अमर सुविशुद्ध नमस्ते, अमय अक्षय अविरुद्ध नमस्ते ॥१४५॥ ब्रह्मा चुत अमूर्त नमस्ते, विश्नु प्रजापति मूर्त नमस्ते । अनूपम ईश अजेय नमस्ते, विश्वनाथ विन नेह नमस्ते ॥१४६॥ अनंत अप्परमान नमस्ते, बोध रूप युतिमान नमस्ते । सकलाराध जितात्म नमस्ते, निस पर्म्यो अमयात्म नमस्ते ॥ १४७॥ नित निरमल दगज्ञान नमस्ते, जगत पूज जगमान नमस्ते । अदीन अहीन असर्ण नमस्ते, अलीन अछीन असर्ण नमस्ते ॥ १४८ ॥ महादेव महावीर्य नमस्ते, महासेन महावीर्य नमस्ते । गुणभद्रेन्द्र मुनेन्द्र नमस्ते, हीग भवनृप वृन्द नमस्ते ॥ १४९ ॥

दोहा—च्यारि ग्यान धारक गणी, लहै न नाम गुण पार ।

हमसे तुछ धी किम लहैं, नाम माल उर धार ॥१५०॥

चौपाई—प्रघटचंद्र प्रभहर धर नाम, सब देवन मिलि कियो प्रणाम । जन्मोत्सव हर हद सर धानं, लख सम्यकू धर अप्पर मान

॥१५१॥ देव सकल मिलि जै जैपूर, रोमांचित तन हर्षांकूर। गजारूढ़ हर ले निज गोद, पूरन रीत अधिक परमोद ॥ १५२॥ निज२ वाहन सब सुर चढै, आनंद लहर सुखोदय बढै। ताल मृदंगरु भेरि निसान, नृत्य गान जुत जन्म स्थान ॥ १५३॥ चले गगन मग मगन अपार, प्रभा पुंज रूपा उनहार। आए जय जय करत असेस, पिता भवन कीनों परवेस ॥ १५४॥ मण मय आंगनमें हर आय, हेम विष्टपे श्रीजिन थाय। महासेन नृप देखो नन्द, निरुपम छवि लख भयो अनंद ॥ १५५॥ माया नींद सुनीकर दूर जननी जागी सुख भूर, भूषण भूषित बाल दिनेस। भर लोयण लख हरख विशेष ॥ १५६॥ बाक जुगल सम दंपत तबै, पूरण भये मनोरथ सबै। सकजने तब सुद पितु मात, पट भूषण धर भेट विख्यात ॥ १५७॥ हाथ जोडि थुत कर इंद्राद्र, धस गगन तुम तुम दयाद्र। मात पूर्व दिस सम सुत सूर, किम बरनै महिमा तुम भूर ॥ १५८॥

संकर छन्द–धन धन्न नृप महासेन जिन घर जन्मियो जिन बाल, सुत्रिलोक मंडप शिखर चढ़ तुम कीर्ति बेलि विसाल। धन्य देवी लक्षमना जिन जाईयो जग राय, तिय त्रिलोक सिंगार जननी धन्य तुम अब थाय ॥ १५९॥

चौपाई–तुम सम जगमैं और न आन, जिन देवल सम पूज प्रधान। यों थुतकर हर हिए प्रमोद, बाल दिवाकर दीनो गोद ॥१६०॥ कही सकल पूरब ली कथा, मेर महोछव कीनो यथा। तब मिल नगर विषे भूपाल, जन्म उछाह कियो तत्काल ॥१६१॥

छन्द चाल—हरखतपुर जन परवारा, घर घर भए मंगल चारा। घर घर तिय गावें गीत, घर घर नृत होत संगीत॥१६२॥ बाजे मगंली बहु भेरा, लगे बजन सकल सुख देरा। जिन भवन न्हवन विस्तार, सब कर मंगल दातार॥१६३॥ छिरक्यो चंदन पुर मांहि, मणा साथिया सुघर रचाहि। जन्मोत्सवमें सब नारी, कर नृत्य गान विधि सारी॥१६४॥ घर घर तिय तूर बजावै, तंबोल बंटै हरखावै। सज्जन जन सब सनमाना, दानादि यथाविधि ठाना॥१६५॥ यह विध महासेन नरिंदा, कर सुत जन्मोक्ष अनंदा। भए पूरण सब जन आसा, दुख दीन न कोइ निरासा॥१६६॥

दोहा—उदै भयो जिनचंद्रमा, कुल नभ तिलक महंत।

सुख समुद्र वेला तजी, बढ्या लोक परजंत॥१६७॥

सोरठा—तब देवन जुत सर्व, आनंद नाटक हर ठ्यो।

गान करें गंधर्व, समय जोग बाजे बजे॥१६८॥

दोहा—पुत्र सहित परवार मिल, महासेन लख भूप।

पुष्प छेप दरसाय हर, प्रथम सप्त भव रूप॥१६९॥

पद्धड़ीछंद—फिर तांडव नामा नृत्य अरंभ। कीयो जग जन कारण अचम्भ॥ नट रूप धरयौ अमरेश। तब रंगभूमि कीनौ प्रवेश॥१७०॥ सिंगार सज्यो सब मंगलीक। संगीत वेद अनुसार ठीक॥ विधि ताल मान लय जुत उमाह। फेरै पग रंग सु अवनि मांहि॥१७१॥ पीह करमें सुर कर पुष्प वृष्ट। लखि भक्ति इन्द्रकी अति विशिष्ट। मोचंग मुरज वीणारु

ताल। बाजै अरु गावै गीत चाल ॥ १७२ ॥ किन्नरी करै मंगल सुपाठ। सब समै जोग बनियौ सुठाठ ॥ बहु भाय भ्रमै वच अंग मोर। करि अंगुरि कंठ कटि पग मरोरि ॥१७३॥

गीता छंद—तब नृत्य तांडव रस दिखावै सबनि अचरज कारजी। अदभुत सहस भुजकरी इस्नै भूषण जुत निहारजी ॥ सो चरण धरत चपल चल अति भूमि कंपै गिर हलै। फिर लेत चक्र फेरी मुकट भ्रम तास मण दुति झिलमिलै ॥ १७४ ॥ सो चक्रसो सोहै बगनिकी जूं मरहटी लसत है। छिन एक छिन बह रूप छिन लघु छिन गुरु तन करत है ॥ छिन निकट अरु छिन दूर जा छिन गगनमैं छिन धरनिमैं। छिनमैं निषतर बिस सिप छिन धसै जा अवनिमैं ॥ १७५ ॥ छिनमैं प्रकट छिनमैं अद्रस छिन वीर रस छिन रागमें। हर जालवत दरसाय निज रिध इंद्रने बहु भ्रागमें ॥ हर हाथ अंगुरिन नाम धर निज चक्रसी बहु भ्रम सुरी। फुनि बाहु थेरीपै केई नच उछर नभ तित अवतरी ॥ १७६ ॥ ते रूप मणकी खान भूषण झलक है अंग अंगमें। तिन कंजसे द्रग खिले मुसकत पुष्पगण मानो रमें ॥ सब नृत्य विषसम चरण धर चख फेर भाव दिखावती। बहुविध कला परकासि दामनिसी सुरी मन भावही ॥ १७७ ॥ तब नृत समै हर सुरतरु सम सुरलता वेढी तिया। हर एम उपमा युक्ति नाटक थान तिहुं जग सुख किया ॥ तिह समापति जिन पिता जिहपर भाव जन्मात सह जिन। अब नचै हर नट बाज हो तिस समै बुधको वर्णन ॥ १७८ ॥

चौपाई–मात पिताकी साख सुतबै, इंद्र सुरासुर गण मिल सबै। नाम चंद्रप्रभ गण थुत करै, बार बार नमि पायन परै॥ १७९॥ शख सुरी सुर सेवा योग, आप चले सुर साधन योग। चाले इंद्रादिक मुदि धार। जन्म-कल्याणक विधि विस्तार॥ १८०॥ बहु विधि पुन्य उपायौ जबै, पहुंचे निज थानक सबै। अब जिन बाल चन्द्रमा बढ़े, कोमल हांस किरण सुख कढै॥ १८१॥ इन्द्र हेत प्रभु अमृत सींच, दक्षण कर अगुष्टके बीच। ताहि चूस पय पानन करै, आनंद सहित वृद्ध वपु धरै॥ १८२॥ सुरग विषै सुरतरुकी साप, लटक रहे चहुंड गुरु भाप। तेजो वस्त्राभूषण भरे, सो सुर लाय भेट जिन करे॥ १८३॥ जिन सिसुकूं पहरावे सुरी, देष देष अति आनंद भरी। कभी सखी कभी माता गोद, कवि पालणो सहित प्रमोद॥ १८४॥ नरनारी गण मानक चोर, देखत नैन रहै जा बोर। हाथैं हाथ खिलावै नार, वय समान सुर रूप निहार॥ १८५॥

हंस मोर सुक अह गज स्याल, हय मृग स्वान परेवावाल। इत्यादिक प्रभुके अनुसार, क्रीड़ा करै हर्ष मन धार॥ १८६॥ कभ ही मणी आंगणमें फिरै, घुटलिन २ सब मन हरै। लोटैं कभी रतन मेदनी, मणी रज युक्त देह सोहनी॥ १८७॥ बाढ़े होय सु अटपटे पाव, धराधर तम नौकरणभाव। ताकौ प्रगट करै ए भाइ, सु मम भार सहारक नांइ॥ १८८॥ रत्न भीतमें निज छवि लखै, ताकौं पकरत मानो अखै। मिले सु

श्री जिनचंद्र जिन नांह, एक इलावत यूंठ दिखाय ॥ १८९ ॥ कमी यक जगपति दौरे जाय, मृग छालकूं पकरे आय। देव रूप धरि उछरत फिरे, कब ही जिन आगे अनुसरे ॥१९०॥

रतन कपूर धूमरे हाथ, लीला सहित जगतके नाथ। देवकुमारनके सो नाल, डारत भए होत खुसिहाल ॥ १९१ ॥ तब ही ये सब देवकुमार, मन संतुष्ट भए तिहवार। आप जन्मकू सफल गिनंत, तीन भवनमें ए गुणवंत ॥ १९२ ॥ या विधि उत्सव मंडित स्वामि, अष्ट वरषके हू गुण धाम। तब ही सहज अणोव्रत धरे, निज कुल रीत सकल आचरे ॥ १९३ ॥ नवजोवन हुये सुकुमार, जन्मत ही दस अतिसे धार। खेद रहित वपु पर्म पवित्र। तीर्थ प्रकृतितैं भयो विचित्र ॥ १९४ ॥ मानों खेद गयौ तन त्याग, कामीजनके आश्रय लागि। मल विन निज तन आन पवित्त, भाग गयौ नहीं रह्यौ कुपित ॥१९५

हार करै ना करे निहार, यह मल रहित पणो निरधार। इति पूछे रख संसै कोय, विन निहार संतति क्यौं होय ॥ १९६ ॥ ताको उत्तर यह लख सांच, मुत्र पुरीष न होय कदाचि। नार संग कृत वीरज श्रवै, तातैं संतति हो मुनि चवै ॥ १९७ ॥ रुधिर छीरवत स्वेत सरूप, जिन तन फरस भयो सुचिरूप। ज्यूं जल बिंद कवलदल संग, मुक्ताफल सम सोह अभंग ॥ १९८ ॥ सु समचतुर संसिथान सुधरे, आंगोपाग यथावत धरे। हीनाधिक न होय कदापि, ऐसो सुभग धरै तन आप ॥ १९९ ॥ वज्रवृषभ नाराचि शरीर, चरमास्तन या

वचमें कौरु। तन अखंड यातें अधिकाय, शस्त्रघात नहीं भेद्यो जाय ॥ २०० ॥

उत्तम रूप त्रिजगमें जोय, इकठे सब परमाणू होय। आय बसे तुम वपु अस्थान, यातै तुम सम रूप न आन ॥ २०१ ॥ हर ससि रवि खग नृप मन मोह, देखै इकटक हर्षित होय। ज्यूं सुचको चंद्रमा देख, त्रप्त होय नहीं थकै सुनेक ॥ २०२ ॥ जो त्रिभवनमैं सार सुगंध, सो सब मिली कीनो सनबंध। तुम तनको अति उत्तम जान। सहज सुगंधित देह महान ॥ २०३ ॥ कर पादादि अंगमें पडे, लछन अष्टोत्तर सत बडे। नौसे व्यंजन तिलभर सादि, पडे महलच्छन जन्माद ॥ २०४ ॥ मरन अनतर है वपु मांहि, व्यंजन पीछै प्रगट लहाय। लक्षन महातने सुण नाम, वरणन यथा कहे श्रुत धाम ॥ २०५ ॥

गीताछंद–श्रीवत्स संखरू पदम सुस्थक धुजा अंकुस तोरण, फुनि छत्र सिंहासन चवर जुग कलस मसि चूडामणी। अरु चक्र दधि सर नर त्रिया हर पाण अहिधर मोलजी। चांप सुर गिर इन्द्र गंगा मछ जुग रवि पोलजी ॥ २०६ ॥ फिर नगर वीणा बांसुरी कछप विमनरु बीजणं। अरु हाट पट फूलमाल मृजे घरा रूप क्रोषवणो। फिर धाम फल जुत दीप रत्नरू कार गोगृह गोपती ॥ स्वर वृक्ष कल्पलतारु निधि घन लक्ष देवी सरस्वती ॥ २०७ ॥ साल तरु असोक तारै पक्षराठ घरनि पही फुनि ऊरधरेखा प्रातिहारज मंगलाष्टक दरसही।

इम अठोत्तर सहस लक्षण पड़े प्रभु तन सर्वही। फुनि तीन काल तने त्रिजगपति भूपती सुर सबही ॥ २०८ ॥

दोहा—तिन सब बल इकठा करो, तिनसैं बहु बलवान।

यौ अनंत बल जिन विषै, भाषौ श्री भगवान ॥२०९॥

गीता छंद—मानौं त्रिजग बल सकल मिलके ढूंढ जगमें तुम लखौ। सब जगत आयुष तैं संघारे मोहि अब सरणौ रखौ ॥ फुनि वचन हित मित मधुर भाषै सहज सब सुखदायजी। मानौं सबनकू देत सिक्षा भणौ इम मन लायजी ॥ २१० ॥

चौपाई—ए दस अतिसय जनमति पाय, निज मित्रन जुत केलिकराय। कभी सुनै देवन कृत गान, अमरी कृत कभी नृत्य लखान ॥२११॥ कभी यक बाजी चढ असवार' है के निकसै नगर माझार। कभी बाग फुलवारी जाय, कभी यक बनमें केल कराय ॥ २१२ ॥ कभी तरी चढ़ि गंगा मांहि, देखै लहर तनै समुदाय। फिरत दान देवै मन चाह, मानौं जंगम सुर तरु राय ॥ १३ ॥ ध्योढ सतक कार्मुक तन तुंग, नख सिख सोभन रूप अभंग। स्याम सनिग्ध मृदु लम्बे केस, मानौं आतपात्र कियौ भेस ॥ २१४ ॥ सिम घोलागिर सिरके तटी, इंद्र नील मणि जु भा छुटी। तापर मुकट धरौ मन जड्यौ, कंचन मय देखत मन हरौ ॥ २१५ ॥ ताकी प्रभा पुंज चहुं ओर, फैली लखै मनौ जिन ओर। भाल लिखौ त्रिलोकको राज, अति उन्नत सुंदर छवि छाज ॥ २१६ ॥ भृकुटी सुभग रोम दुति मान, मानौं इंद्र धनुष रखौ तान। श्री मुख जंबुदीप समान,

भरतैरावत सम श्रवणान ॥ २१७ ॥ जुग रवि सम कुंडल मन हर्ण, नीलोत्पल जित जुत त्रिय वर्ण। द्रग मिलान मन मिलनों चहे, यातु दीपमें भरत जु लहै ॥ २१८ ॥ पडो नाक जूं इख्वाकार, मध कदाचि मरजाद निवारि। तीन अंक राम रूप अनूप, मानौ मण त्रिय हो इक रूप ॥ २१९ ॥ जूं इम धारे ताकी साख, ताकूं कहिये नाकरु साक। कोमल चिक उन्नत जुग गंड, मानौ कांत सरोवर मंड ॥ २२० ॥ मानौ लाली मिल त्रिय भौन, अधर अथेली गत गौन। करकै वसी पाय जिन सर्ण, सोहै अधिक कांति मन हर्ण ॥ २२१ ॥ रदनावलि जूं हीरापति, कुंद पूर्ण सीता सु निहंत। अधो गूढ़ चन्द्रानन पंक, कंठ बस्त त्रिवली सु निसंक ॥ २२२ ॥ पुष्ट कंध बाहु लबांय, जातु त्रिपत जुग जु सुझाय। भुजमें नव मण जुत भुज बंध, जू पग गिरपै कूट प्रबंध ॥ २२३ ॥ पौंइचे पहुंची मणि चपकडे, कुंडल कृत रतननयु जडे। बीर लछ कीडा स्थल वछ, श्रीवत्स लक्षण जुत लक्ष ॥ २२४ ॥ जग कमलाहु मानौ हार, उर सूं लगी बाइ गलडार। मृदु सनिग्ध जठर मनहर्त, नाम सुकूपद क्षणावर्त ॥ २२५ ॥ लंक छीन अति हर सम महा, कण मण मय कट मेखल तहां। मानौ दीप खेदका जान, उत्राक्षन है कोट समान ॥ २२६ ॥ गूढ़ नितंब सुभग सोहने, लिंग पताल जथो चितवने। जंघा पुष्ट महल जू थंभ, रोमावलिधुत मृदु सस्तंभ ॥ २२७ ॥ सुभग जानु पिंडी ढाकने, गूढ़ यथावत पंजे बने। वर पद अंगुरी

सुंदर सारु, नख मंडल परिखगण वास ॥ २२८ ॥ अंगार-रुतैं अधिक दिपंत, जुत मणिमय मुंदरी रतिवंत। अंगोपांग पुष्ट सब बनो, वज्रमई सुंदर सोहनो ॥ २२९ ॥

दोहा–चंद्रकांति तन अधिक, दुति अति उज्जल मनो एह।
सो इकत्र सिव तात्र जग, आइ वसी प्रभु देह ॥२३०॥
सिज्यासन वस्त्राभरण, भुक्ति विलेपन नान।
देव रचित सब ठाठ हैं, कहा लौं करू बखान ॥२३१॥
नर सुरको दुर्लभ जो, सो संभोग लहाय।
पूर्व पुण्योदित थकी, जानौ मन वच काय ॥ २३२॥
भाषे गुणगण सरलचित्त, रागदीप निर्मुक्त।
जे भवि हीरा इम करे, पुन्य विबुधा जिन उक्त ॥२३३॥

सोरठा-ते लइ जन्मकल्याण करैं, बाल लीला सु इम।
अंत लहै निरवान, और अधिक क्या वरणउ ॥२३४॥

इतिश्री चन्द्रप्रभुपुराणे गुणभद्राचार्यविरचिते जन्मकल्याणाक वर्णनो नाम द्वादशम् सर्ग संपूर्णम् ॥ १२ ॥

त्रयोदश संधि।

इन्द्रवज्राछंद—स्वयंभुवे भूतहितोदि वाक्यं, चंद्रप्रभं चंद्रिव अंत आख्यं। तदुविम्ब प्रघटो सुद्योत पूरं, समंतभद्राश्रम तास भूरं॥१॥ व्योइंकर सर्म सुजातत्राता, ऊरोजवासाकरसादि दाता। गुरुगणाख्यं गुणभद्र जैसें, सुचारइं तत्प्रित देख तैसें॥२॥

चौपाई—अथै कदाचित सभा मझार, त्रिविध विभा भूपित सुनिहार। उदियाचल सम विष्टर सीस, तेजपुंज सम दीसै ईस॥३॥ कनकम आतपत्र सिर दिपै, मुक्ता द्युति लखि शिष ससि छिपै। चंवर वाहनी दोनों ओर, ढोरें चवर धै उपमा कोर॥४॥ मेर दु तर्फ जु सीता आदि, फेन तरंग जुत अहलादि। सभा देव सम इर सम भूर, ता वरनैनै कौन बुध रूप॥५॥ देव देसके नृप गुणधाम, आय राय प्रति करें प्रणाम। रत्नादिक बहु भेट कराय, तिनकी सोभा कही न जाय॥६॥ नाना वर्ण वस्त्र हय फील, इत्युत नजर करन मो कील। नृप आनंद इष्ट सयुत, देखि सब अगर जे दूत॥७॥ द्वारपालकी आग्या लेय, आय सभा मधि पत्री देय। सीस न्याय कर संपुट नमैं, विनयवन्त कू ताही समै॥८॥ जगउ दूत सु विचक्षण तबै, सुनो देव मम वचन जु अबै। सुन्दर पुर पत्तन इक बसै, श्रुतकीरत राजा तहां बसै॥९॥ रिपु कुरंगको सिंह समान, कमलप्रभा सुता तासु जान। जीतत नाग सुताको रूप, लावनि कीर्ति जुक्त रस कूप॥१०॥ चतुर ज्ञानकी मूरत मनो, कला-

पूर्ण सर्वोत्तम गिनौ। सो सौभाग्य सहित जयवंत, ताकौ दियौ चहंत गुणवंत ॥ ११ ॥ त्रैलोक्य स्वर पूज महान, जितरव मेदु महा दुतिवान, चन्द्रप्रभसु तुम भूप। तस्यारथ आयौ बुध कूप ॥ १२ ॥ इमि सुन रोमांचित मुदि राइ, वच प्रमाणकर सिद्ध कहाय। वस्त्राभरण विविध दे मान, दूत विदाकर नृप गुणवान ॥ १३ ॥ रचौ विवाह चंद्रप्रभ तनौ, वस्त्राभरण विभूसत घनौ। देव जान सम शिवका करी, किंकणी जुत कणमय जरी ॥ १४ ॥ मंगल द्रव्य जुक्त फुल पार, मुक्ताफल देखत दृग हार। ऐसी सिवका ह्वो असवार, सुर नरेन्द्र सेवे दरबार ॥१५॥ चवर बीज सम फिरै दुतर्फ, छत्र फिरै सिरसेतजु बर्फ। मुक्ता झलरी जोत अमंद, जुत नक्षत्र जूं पूनिमचंद्र ॥ १६ ॥ सजेरथा स्वसमान तुरंग, खुर भिदग रज फर्सन अंग। युतलंकार मरुत गत बाल, घन सम गर्जे करै संडाल ॥ १७ ॥ मद धारा बरसे जुगमंड, मनौं चलै अंजन गिर मंड। चार चक्र जुत नाना वर्ण, सदन चले करत झण झर्ण ॥ १८ ॥ मंगल गीत गाय गंधर्व, तुंबर नारदादि सुर सर्व। नृतत अमरांग नर समरी, बजै मृदुंग ताल मल्लरी ॥ १९ ॥ तिन धुन कर गुंजत कंदरा, वस्त्राभरण विभूषित नरा। मंगलीक गावै सब नार, चली बरात होय असवार ॥ २० ॥

पौहची सुंदरपुर बन मांहि, सुनी भूप अति हर्ष लहाहि। पुर परजन ले संग नरेस, चलौ भूप जन संग विसेस ॥२१॥ पिता सहित चंद्रप्रभ जहां, नमन कियौ नृप जाकर तहां।

क्षेमकुशल पूछी विधि सबै, निविकर चले नगर प्रति तबै ॥२२॥ पुर सोभा नाना परकार, तोरण खैंचे सु घरघर द्वार । हर्ते वत्र जुत फटक समान, जल जुत घटवाले प्रतिठान ॥ २३ ॥ स्वर्ण रत्न वस्त्रादिक दर्व, ता जुत हाट पंक्ति है सर्व । चित्र विचित्र कियो बाजार, इन्द्र धनुषवत रम्भागार ॥ २४ ॥ कंटक धूल रहित सब गरी, पुष्प गंध जलाउंडि विस्तरी । पाटंवर जित तित विस्तार, नानावर्ण दिपै मनहार ॥ २५ ॥

नानावर्ण धुजा फरकंत, मानों मुदित नगर भासंत । कोट पोल महलन आरूढ़, महाजनाद जलपन कृत भूर ॥२६॥ जिन दर्सन अभिलाषी सर्व, इधर उधर दौरत तज गर्व। विविधतर बाजे मंगली, विस्मयवंत पुर स्त्री चली ॥ २७ ॥ सुत्र बुध भूल करत विक्रिया, कटिमेखल धरि कंठमैं त्रिया । हार धार कटिपै अनमार, सीसफूल लटकै जु द्वार ॥ २८ ॥ कंकन मुदरी पगमैं धार, बिछवे फेर करे कर साज । कज्जल तिलक द्रगन सिंदुर, घरकारज तजि चाली भूर ॥ २९ ॥ रोवत सिसु तज चली उमंग, किनहू मरकट लायो अंग । करधघ बांधत कोई चली, कोई केस समारत रली ॥ ३० ॥

कोई चाली जठर उघार, कोई मुख पर अंचलडार । कोई कंचुक बिन कुच खुले, कनक कुंभ सम सो जुग मिले ॥३१॥ कोऊ उच्च स्वर टेरत रहो, पीर रहो मम हाथ सु गहो। कूपो परको जलके हेत, गरुवा तजि बालक गहि लेत ॥३२॥ रुज बांधकर फांसत सोय, रोवत सिसु न सुनत सठ कोय । कुलका

काम त्याग सब नार, चंचल चली रूप उनहार ॥ ३३ ॥ सु सुरार्चित पद जिन तित समय, जुत बरात कर पुर आगमय । फटक भीत कंचनमय थंभ, उन्नत चित्र विचित्रारंभ ॥ ३४ ॥ रतनांगण फरकंत पताक, इम मंडफ रचियो नौं नाक । तित सुंदर पटी बग्गार, कर्पूरा गुरु खेय अपार ॥ ३५ ॥ पुष्पमाल लटकै चहुंओर, गंधत आय करै अलि सोर । कलस कनक मय वेदी जहां, बीद बीदनी तिष्ट तहां ॥ ३६ ॥ बाजे बजे विविध परकार, मंगलीक गावै मिलनार । दोषविवर्जित लग्न मझार, श्रुत कीरत राज हितवार ॥ ३७ ॥ कमल प्रभा सु दुहिता हस्त, जिन कर ग्रहन कराय प्रशस्त । अग्रावर्त करत दंपती, मेरावर्त जेम खगझती ॥ ३८ ॥ भूषण भूषित सुन्दर बात, कमलाभा कर गइ जगतात । मृदु नव तिये लहन सुद कोन, दंपति कीर्ति भई त्रिय भोन । ३९ ॥ दुदद तुरी रथ बहु चंडोल, पटा भरण जुत दिये अमोल । विविध सुभाजनक नयन जरे, बहु करंड रतनन कन भरे ॥ ४० ॥

दासी दासरु बहुती फौज, इत्यादिक दीनो बहु सौज । विनै सहित बहु भगति कराय, हस्त जोड रोमांचित काय ॥ ४१ ॥ इम कर विदारु घर नृप आय, चली बरात निशान बजाय । कूंच मुकाम करत सो आइ, नगर चन्द्रपुर बनके मांहि ॥ ४२ ॥ तित दरसनसो उठ जन सबै, करत महोत्सव नर सुर सबै । तोरणादि बहु सोभा कीन्ह, पुर प्रवेश कर जिन सुर मध्य ॥ ४३ ॥ करै सुरासुर जै जै शब्द, दुंदभि धुन जू

गाजे अष्ट। सो सुनि पुर तिया अचिरज वंत, घर कारज तजि चली तुरंत ॥ ४४ ॥ को घरटीको दुपक अहार, गंडक भुक्तन ताहि संभारि। चली तुरत कोई बालसवती, पिक वच मधुर मनोभारती ॥ ४५ ॥

कुंज बजार पोलि छत रोक, जहां तहां नरनारी थोक। कोई तुंग महलपै नार, लखि निमेष द्रग मुदित उचार ॥४६॥ जापर सुर वरसावत जाय, सुमन सुगंधित अलिगण छाय। सिर सितछत्र फिरे जिम चंद, ढरे चमर दो तर्फ अमंद ॥४७। वेष्टित सुरनर जैजेकार, पुन्यो ससिनें अति दुति धैर। जा जन्मादि भई मणिवृष्ट, सो नृप सूनु देख सखी दृष्ट ॥४८॥ रथारूढ़ श्री चन्द्रकवार, अरु शिवका मैं वधू सवार। कला पूर्ण लावण रस कूप, पीनस्तनी सरूप अनूप ॥ ४९ ॥

दोहा—पूर्णचन्द्र नृप तनु जतन, मधू किरणका रूप।
विधना जोग मिलाईयो, उपमा रहित अनूप ॥ ५० ॥
धन्य नार यह जगतमें, वर पायो तीर्थेश।
भाग बडो याको त्रिजग, पूजत भई विसेस ॥ ५१ ॥

छपै छंद—करवायो जिनधाम विविध सोभा जुत उन्नत। तथा मूर्ति जिन स्वर्ण रतनमय लक्षण लच्छत्त ॥ वा दग मनकूं मोहनि केले द्रव्य जजे जिन। भोजनादि चव दान दियो चौसंघ प्रतै इन ॥ व्रत धार अहिंस्यादिक महा करो विविध तप जैनको। सब कांति कीर्ति गुण पूर्ण यह ऐसी छब नहीं ऐनको ॥ ५२ ॥

चौपाई—नगर नार इम करती बात, निज अवास पहुंचे सुभ गात। सो विचित्र रचियों भन देव, इच्छ दान दियौ बहु भेव ॥ ५३ ॥ सब नारिनको उपमा जोग, विविध विभा भूषित सु मनोग। त्रिजग तिया तें अधिक सरूप, रति रंभा किम रोहणी रूप ॥ ५४ ॥ ऐसी वधू पाय शशि स्वामि, भोगे भोग यथा रत कामि। पंच इन्द्री मन जनित सु जेइ, भोग निरंतर भुगतें तेइ ॥ ५५ ॥

सोरठा—पूरव पुन्य विपाक, दंपति पुन्य प्रभाववें। सुत भयौ जु पति नाक, संग्यावर चंद्राभ वर ॥ ५६ ॥ कर जन्मोत्सव तास, सुखसागरमें मगन जिन। दो लख सहस पचास, पूरवकाल कमार पण ॥ ५७ ॥

पद्धड़ी छन्द—तब इन्द्र आय ससिपुर मंझार, धुज तोरणादि रचि विभा भार। कर मंजन सजि पट भूषणादि, प्रिष्टोन्नत मणिमय मा मृजाद ॥ ५८ ॥ तत्रस्थ चन्द्रप्रभ नारियुक्त, जग रक्ष काज लपि पूर्व उक्त। पितु राजभिषेक सु करके बार, तब कियौ कतूहल अमर नार ॥ ५९ ॥ नृत्यादि गान सुर दुंद नाद, सुर पुष्प वृष्टि अलि जुत जलाद। सुरभि कृत दिगमन प्राण हार, सुरनर इस्योत्सव द्रग निहार ॥ ६० ॥

चौपाई—चार प्रकार चमूं लै संग, कर दिगविजय अंग अभंग। सब भूपन इकठे ह्वै कियौ, सु महामंडलेस पद दियौ ॥ ६१ ॥ रोग जात जेते जग भीर, अनावृष्ट अति वृष्टिरु कीर। टीडी मूषक स्वपर दलादि, नहीं उपद्रव चोर

मयादि ॥ ६२ ॥ फलफूलादि अन्न बहु जोय, सब रितुके इक रितुमैं होइ। न अति सीत नहीं अति उष्न, सदा इक रीत रहै सब प्रष्न ॥ ६३ ॥ यह अतिसय जिनराज प्रसाद, भोग मगन दिन सरकी माद। काल जाय प्रभु जान न रंच, इक दिन सभा मध्य सुर संच ॥ ६४ ॥ सौ धर्मेंद्र सुअवधि विचार, भोग मगन जिन इम निरधार जू श्री रिषभ जगत प्रतिपाल, त्यौं चन्द्रप्रभु कर दरहाल ॥ ६५ ॥

सो वैरागी किहि विधि होय, करो उपाय अहो सुर सोय। धरम रुचि सुर हरषित नमो, होय कार्ज तुम अज्ञा चमो ॥६६॥ दियो याकै सासन उपदेस, तब उन कियो वृद्धको भेष। सख-लित पद सिर हलै जूं चक्र, सकुचितनु चांदतबिन वक्र ॥६७॥ इन्द्री सिथल कष्ट कर महा, प्रोढ सु इम झट आयो कहा। आय चन्द्रप्रभु सभा मझार, शीघ्र नमन कर जुग सिर धार ॥६८॥ गद२ बोलत तब मुख रुकी, लाल झरै छटा थुक थुकी। सुरगण श्रेपदाब्ज तुम तने, तुम सरणागत वत्सल सने ॥६९॥ भय निरमुक्त सूर बल धार, तुम सबकी कर हो प्रति-पार। जग रक्षक तुम दीन दयाल, इक पलतैं निसदिन मुह काल ॥ ७० ॥ विकटायु घसैं ग्रह सु आय, मम रक्षा कीजे जिनराय। हे त्रिभुवनपति दुठ मृतु ग्रषै, तुम बिन कोई न रक्षक लसैं ॥ ७१ । हे भवनेप सरण यो लही, दुरबल दीन सु मो सम नहीं। बन्धु बिवर्जित मात रु तात, सबसै अधिके तुम विख्यात ॥ ७२ ॥ षण मासादिनाकमें रख्य, तो बसुन्धराके

तक अलय । त्रिभुवनमें इमको बल धरै, तुम सरणागतकौं परहरै ॥७३॥ दुष्टन दंड नृपीको रक्ष, धरमराज इम जग पातक्ष । तुम दिगकाल गहै नहीं रखौ, क्यौं जु जगत मज मांतक अखौ ॥७४॥ इम सुन सब चक्रित चित भये, विश्वेस्वरतैं पूछत भये । लखौ अपूरव कोतुक एह, कौंहै हमरो हरो संदेह ॥ ७५ । तब जिनससि सु अवधिबल जान, पवयै भणे सुणो दे कान । प्रथम सुग्रिदसु आज्ञा पाय, धरम रुची सुर इह इति आय ॥ ७६ ॥

कवित्त–इम कहि भयौ विरक्त सु चितन भव थित अब तक कछुन निहार । लछमी हेतसु नाना छल बल करत जीव जग मांहि अपार ॥ पराधीन विषय न दुख बांछै तातैं तुम चेतन धिक्कार । हो सुछंद सुख भोग निरंतर आप सनातन येह निरधार ॥ ७७ ॥ श्री ब्रह्मानरेन्द्र श्री प्रभु सुरचक्री अजितसेन अचुतेंद्र । सागरांत सुख पद्मनाम नृप वैजयंतमें है अहमिंद्र ॥ इम बहुकाल भोगमय भोगे तोभी नेक न तृप्त लहंत । तो यह स्वल्प भोग नर भवके तातैं तृप्ते कोन महंत ॥ ७८ ॥ अक्ष विसै तन जोबनादि बहु विभो विनिस्वर इवं सब छन्द । अब्र पटल चपला रु ओस जल कंटक अणी रु फूली संद । छिद्र कुंभ फुनि अंजुलि जलजूं छि । २ छीन आयुतन सेस । त्रियै सहोदरादि रिथोपम तिन निमित्तसै करै कलेस ॥ ७९ ॥

दोहा–सब सीताग्र तुषार सम, इम अनित्य सुधी जान ।
क्यों न धरित सद व्रत गहै, जो साधन निरवान ॥८०॥

इति अनित्यत्व ।

कवित छंद—रिपु शुक्र तात प्रहो सुजीव यह तसु रक्षैको जगमें बली। जुं पंचानन दाड बीच मृग बाशु रहु एन वच है करी॥ माततात तिय पुत्र सहोदर मणि मंत्री पद व्यंतर हरी। तो भूपतिकी कौन बात है पंच परम गुरु सुमरण धरी॥ ८१॥ तातैं शुद्ध भाव सदगति हो मृतुसे राखन कौन समथ्य। गहन विपनमें डगर भूलि जुं भ्रमें जीव बिन धम्म अकथ्य॥ जन्म जरामृत मदादि पीडौ जीव सर्ण विन सह उपसर्ग। सुधी विचारिम सरण प्रमेष्ठी गहै लहै झट स्वर्ग पवर्ग॥ ८२॥

इति असरन।

एह अनादि संसार खार जल दुख पूरत तामें तु जीव। करम रज्जू कर गृहो भ्रमै ध्रुव पण विधि जग द्रव्यादि अतीव॥ व्रप विन निश्चय लहो न कदाचित चौरासी लखमें भटकंत। मुक्त न लही शुद्ध पद है जग तत्व संग रागादि गहंत॥८३॥

चौपाई—तातैं आश्रवतैं विधि बंध, तावसि निस दिन दुख सनबंध। इम को विद लख जगत स्वरूप, करै हेत शिव सु तप अनूप॥ ८४॥

इति जगतत्व॥ ३॥

कर्मोदयतैं चव गति मांहि, जीव एकलो आवे जाइ। कास श्वांसऽश्लेषम पित कुष्ट, निस दिन सहै आप ही कष्ट॥ ८५॥ सुर पति अहि पति नर पति मुख्य, सुभ कर्मोदय इकलो चख्य। छेद भेद छिद तन मन युक्त, पापोदय नरक निज मुक्त॥ ८६॥ क्षुधा तृषा शीतोष्णति मार, चेतन सहै

बहु गति धार। कर ध्यानाग्न करम बन भस्म, नंत चतुष्टय लहि निज रस्म॥ ८७॥

दोहा–इम इकलो निज जानिकै, सुख सनातन हेत।
विघ नासन व्रत आचरै, सुधी सहज इम चेत॥ ८८॥

इति एकत्व॥ ४॥

कवित्त छन्द–नगमें कनक दुग्धमें घृत जूं तिलमें तल काष्टमें वह्नि, त्यौं तनमय आतममें जानो जडहु चेतन चिह्न। तो पंचाक्ष विषै सब न्यारे बाल तरुण वृद्धादिक वृंद, सफल तरोवरपै विहंग सम, सज्जन मिलन न जानै अन्ध॥ ८९॥

दोहा–मैंमै कर सठ शोक सम, मोह कर्म बस धाय।
इम लखि सुधी ता नासकों, ध्याय निजातमराय॥ ९०॥

इति अन्यत्व।

या तन माहि सु हाड तीन सत बडी नसा नो सतक प्रमान, छोटी नसा जु सात सतक फुन मास डली जु पंचसत जान। नसा जाल चर्म मुल जु सोलै पलके रजू दोय तुच सात, सात कलै जारो मन संख्या अस्सी लाख कोट विख्यात॥९१॥ पलनलमास्तरक्त पीव मल चर्म मढो पर सप्त कुधात, नख कच श्रम जल श्लेष्म शुक्र रु मूत्र पुरीष सप्त उपधात। इम घिन गेह सब रवर सम सो व्रत विन सार न यामै कोय, क्षुधा तृषारु रोग कामाग्नी तासैं जलैं निरंतर सोय॥ ९२॥ याह सुगंध लगे दुरगंध हो ऐसे उनकूं पोष निरंत। तो फिर जरा आदि फुनि छीजै सो न कदाचित सुथिर रहंत॥ ऐसे तनमें सार तपादिक हैं भव्य निज अहि मणि जेम। इम तन

अशुचि सुधी लखि तुमरैं सिद्ध सिद्ध कारण करि प्रेम ॥९३॥

इति अशुचित्व।

सवैया ३१-कर्माश्रव सेती ह्वे भव दध मांहिनी, वज्र जल आवन सेती त्रिण जुत पोतई। मिथ्यात अव्रत जोग कषाय विषय अरु रागदोष मोहसेती असुभ उद्योत ही॥ राग दोष मोह विना सरलतैं सुभ होय इम लखि चित्तपन सुद्ध योग होत ही। मन वच काय सेती ध्यान धैन करै नित जा सेती करमहन लहे निज जोत ही॥ ९४॥

इति अस्रव।

कवित-आश्रवको रोकै सो संवर तेरै विधि चारित दस धर्म। बाईस परीषह त्रुप अनुप्रेक्ष पंचाचार गहै जो पर्म॥ संवर पोत विना नभ वा त्रुप तरै न पावै सुन्दर मोष। ऐसे जान चतुर शिव कारण संवर अंबर सजे अदोप॥ ९५॥

इति संवर।

रस दे पूरव वध खिरे सो कही निर्जरा दो विध होय। सविपाक है चारौं गतिमें अविपाक तप केवल जोय॥ कर्म नासि जिय वांछित पद लहै उरध गत विनलेप जु तुंब। पंडित जान सु करै जतन इम कर्म निर्जरा हेत सुलम्ब॥ ९६॥

इति निर्जरा।

पुरुषाकार लोक सब जानौ ऊरध मध्य अधो त्रियभेद। तामै भ्रमै सुजिय अनादिसे कर मन बंधो लहै अति खेद॥ इम नर नागर लख लोक स्थित करै विचार सुधी इम चेत। तप

संयंम आदिक बहु विध गहै लहै लोक प्रस्थित हित हेत ।।९७।।

इति लोकत्व।

भ्रमते भ्रमते भवसागरमें दुर्लभ चिंतामण नरदेह। तातैं सुथित काल कुल आयु सदीर्घ निरोग सुनत सदनेह ॥ साध संग सम्यक् रत्नत्रय अति दुर्लभ कारण शिव जोय। इम सुबोध नहीं लह्यो कदाचित ह्वै प्रमाद वस भटको सोय ॥ ९८ ॥

दोहा–इम दुर्लभ भवदध विषै, जान विचक्षण ज्ञान।

महारत्न निस दिन विषै, इच्छा करै सुजान ॥ ९९ ॥

इति सुबोध दुर्लभ।

कवित्त–पतित भवाब्ध जंतुको काढै धाप उच्च पद धर्म जिनुक्त। सो दु भेद यतिको दस विध है जो क्षमाद दे तद्धर मुक्त ॥ समता आप्तवृत्तिचिदानंद गृही धर्म दै नर सुर सौख्य। हन अघोघ तप ध्यान सुबल मुन आकरषती शिव श्रीतोष्म ॥ १०० ॥ ज्ञान चाण भूपण वृषते कछु दुर्लभ नांहि त्रिलोक मझार। व्रप बिन इन नर्थ नर जन्मसु अजागलस्तनपत बिन नार ॥ वृष युत मृतकसु जीवै जगमें वृष बिन जीवन मृतक समान। धर्म सु फलतै लहै मुक्त सुख सुधी जान, निस दिन मन आन ॥ १०१ ॥

इति धर्मानुप्रेक्षा।

इम बारा विध सारनुप्रेक्षा वैरागोत्पति मात समान, सो चन्द्र प्रभु चितत तावत अवधि ज्ञानसु रिधीस्वर जान। पंचम ब्रह्म स्वर्गमें जानो लोकातंक पाडौ सु विसाल, अष्ट प्रकार देव वहां वस है ब्रह्मचारी सुंदर गुणमाल ॥ १०२ ॥

सोरठा—सारस्वत आदित्त वन्हि त, अरुणरु अग्र फुन।
पष्टारिष्ट तुषित, व्याबाधाहिम सुर रिषी ॥ १०३ ॥

चौपाई—ज्यू इक वंश विषै बहुगोत, त्यों इनमें बहु भेद उद्योत। मुख्य आठ ए आए संग, जै जैकार करत मुद अंग ॥ १०४ ॥ सब पूरव पाठी बुधवंत, सहज सोभ मूरत उपसंत। वनिता राग हिए नहीं वहै, एक जनम घर शिवपद लहै ॥ १०५ ॥ तीर्थंकर विरकत जब होय, रहसवंत तब आवे सोय। और कल्यानक करै प्रनाम, सदा सुखी निवसे निज धाम ॥ १०६ ॥ प्रभुके चरण कमलकूं नये, सुरतरु पुष्पांजलि छेपये। गिरामदितनिः क्रम कल्यान, पर ससां सूचक बुधवान ॥ १०७ ॥ हाथ जोडि थुत सिष्या रूप, धन्य देव भूपनके भूप। धन्य सु तुम विचार उर धरौ, निज पर हेत विलम्ब न करौ ॥ १०८ ॥

जगन्नाथ साधुनके साथ, तीन ज्ञान जुत परम अबाध। परम सु दिव्य रूप गुण रास, मोह मल्लको करो विनास ॥ १०९
तुभ्यं नमो नमों जिनदेव, निज पर 'तारक' कहो स्वैमेव। धन विवेक यह धन्य सयान, धन यह औसर दया निधान ॥ ११० ॥ जानौ प्रभु संसार असार, अथिर अपावन देह निहार। इन्द्री सुख सुपने सम दीस, सो याही विधि है जग ईस ॥ १११ ॥ उदासीन असि तुम कर धरी, आज मोहसे नाथ रहरी। दहो आज सिवरवनि सुहाग, आज जगे भविजन सिर भाग ॥ ११२ ॥ जग प्रमाद निद्रारस होय, सोवत है सुध नाहीं कोय। प्रभु

सुनि किरण पयासै जबै, होय सचेत जगै जन सबै ॥ ११३ ॥

यह भव दुख पारावार, दुख्खल पूरत पारनवार। प्रभु उपदेश पोत धर धीर, अब सुख सू जै हैं जन तीर ॥११४॥ तुम तिरलोक हितु जग रक्ष, यह संसार चक्र प्रतक्ष। तामें जीव अनंत अपार, भ्रमें अज्ञान भाव निरधार ॥ ११५ ॥ तुमरे वचन हस्त अवलंब, भ्रमण तजै तौ कौन अचंभ। तुमरे नाम मंत्र परसाद, पद्यु उच्च पद लहै इंद्रादि ॥ ११६ ॥ तुमरे बोध नियोग पसाय, जूं अन्धरेमें दीप सहाय। ताकर सुगम विषमादिक परे, देख सुगम मगमें अनुसरे ॥ ११७ ॥ सिवपुर पोल भरन पर जहां, मोह महोर दिढ कीनी तहां। तुम बानी कूंची कर धार, अब भव जीव लहै भववार ॥ ११८ ॥

स्वयं बुद्ध बोधन समरथ्य, पै प्रतिबोध सुवैन अकथ्य। जू सूरज आगे जिनराज, दीप दिखावन है किह काज ॥११९॥ संयम जोग गृहन यह काल, वरतत है हे दीन दयाल। चतुर गति निजलोपम वर्ते, सत्यारथ ध्रुव तीर्थ प्रवर्ते ॥ १२० ॥ इम नियोग ओपर यह भाय, तातै करै वीनती राय। धरिये देव महाव्रत भार, करिये कर्म शत्रु संहार ॥ १२१ ॥ हरिये भरम तिमर सर्वथा, सूझै स्वर्ग मुक्ति पथ यथा। यूं थुत करत सुभाव दिढाय, बार बार चरनन सिर न्याय ॥ १२२ ॥

दोहा—इम थुतकरि जिन चरन नमि, निज नियोगकू साध।
देव रिषी निज थल गए, प्रभु गुण हिए अराध ॥ १२३॥

चौपाई—तिनके वचन सुनत जिनराय, मोह रहित हुए ए

भाय। जू रवितैं अंधियार नसाय, नेत्रज्ञानको तब भ्रम जाय ॥ १२४ ॥ तब ही सुर घर चतुरन काय, घटादिक बाजे अधिकाय। इन्द्रादिक लखि चकितवंत, तब सोचमतैं जान तुरंत ॥ १२५ ॥ सब स्वनारी सेनाकर युक्त, चतुरन काय देव युत भक्त। हरषानन पुरत वत चले, देखन तप कल्यानक भले ॥ १२६ ॥ सुर वनता नाचै रस भरी, गावै मधुर गीत किन्नरी। बाजे त्रिविध बजे तिह थान, कर अमर गण जैजैकार ॥ १२७ ॥ सब सुर गण वरसावत फूल, आय नये जिन पद अनुकूल। कंचन कलस भरे सुर राय, विमल क्षीर सागर जल ल्याय ॥ १२८ ॥

मुक्ति माल जुत सोभित सोय, रिष गण जुत जूं ससि अविलोय। चंदन चर्चित छाद दुकूर, जूं घन मांहि रस्म जुत सूर ॥ १२९ ॥ हेमासन थापे भगवान, उछव सहित न्होन विधि ठान। भूषन वसन सकल पहराय, चंदन चर्चित कीनी काय ॥ १३० ॥ वर चंद्राभ सुपुत्र बुलाय, ताकू राज दियौ जिनराय। तुम परजा करियौ प्रतिपाल, राजनीत धर्मज्ञ गुणाल ॥ १३१ ॥ अति हठसूं समझाई माय, लोचन भरे वदन बिलखाय। पिता पुत्र बंधव परिवार, बोधे वच वैराग्य उचार ॥ १३२ ॥ विमला नाम पालकी तत्र, देव रचित कन मय सर्वत्र। पंचरत्नमय रस्म निथार, मानौ इंद्र धनुष आकार ॥ १३३ ॥

तापै प्रभु हुए असवार, देव दुंदभी बजे नगार। मुक्त

झल्लरी जुत सिर छत्र, ससिसेवमनु सहित नक्षत्र ॥ १३४ ॥ गंग तरंगापम झिरु चौर, फली रस्म भयौ मनु भौर। चौंवा देव करें जे भूर, ना अति निकट नहीं अति दूर ॥ १३५ ॥ इस औसर प्रभु सोहै एम, मुक्ति वधू वर दुलहो जेम। ली उठाय शिंरा भूपेंद्र, सप्त पैंड फुनि त्यों दुव गेंद्र ॥ १३६ ॥ सुनासीर आदिक सुर सब्व, लेय चले हरषित फुनि भव्य। पोहचे विपन सघन तरु वेल, रचि मंडप जिह सुर कर केल ॥ १३७ ॥ फल सफलित बहु फूले फूल, दिगम करंद रहे अति झूल। सुद्ध सिलातल फटिक समान, चंदन चर्चित कर गिरवान ॥ १३८ ॥

सिवका सुर गण रपाये यत्र, नर सुर युत प्रभु उतरे तत्र। सुर पुनीत जो वर आभर्ण, तिह उतार गह आतम सर्ण ॥१३९॥ नगन भये यथा जात आकार, फुन पण मुष्टी अलक उखार। पद्मासन पूरव दिस वक्र, कर जुग सिर धर नम सिद्धचक्र ॥ १४० ॥ धर षष्टोपवास जिनचंद्र, कनक करंड केस धर इंद्र। जा छेपै क्षीरोदध मांहि, सर्वोत्कृष्ट जान सुर नांह ॥१४१॥ सहस भूप संग भए मुनेन्द्र, प्रात कृष्ण हर पोह दिनेंद्र। तब सब जानों जिन मत भेव, जैनी भए मिथ्याती देव ॥ १४२ ॥

दोहा—षट लाखार्द्ध सुपूर्व फुन, चतुर्वीस पुर्वांग।
एते दिन कर राज फिर, भए नगन सरवांग ॥ १४३ ॥

चौपाई—पटाभरण बर विन जिन देव, सुयथाजात रूप

है एव। श्री चन्द्रप्रभ सुमजिनेन्द्र, सुध फटिक तन दुति सु दिनेंद्र ॥ १४४ ॥ ध्यान रूढ़ अचल जूं अद्र, भूषित कृत गुणादि समुद्र। तुष्ट इंद्रादिक सुर तबै, अस्तुति करै सुप्रभकी अबै ॥ १४५ ॥

दोहा—गणीत रहित गुण तुम विषै, मानव वचन अकथ्य।
कौन सुधी तिहुं लोकमें, तुम गुण कहन समथ्य ॥१४६॥
सुत थापी तुम भक्ति वस, भणूं सुगुण जिनराय।
जूं सुरखुं पिक उचरै, आम्रकली परभाय ॥ १४७ ॥

पद्धडी छंद—हे नाथ सुगुण उज्जल सु तोहि, तिहुं लोक विषै विस्तरे सोय। तृष्णा विन तुम हुवे सुकेम, तृष्मातैं कीयो अधिक प्रेम ॥ १४८ ॥ अघराज लक्ष तुमने तजीय, तप अनघ लक्ष तुमने सजीय। किम विव निर्ग्रंथ सुभणै तोहि, यह देखत मम आश्चर्य होय ॥ १४९ ॥ अपवित्र नारिको तजो राग, मुक्त श्री सदच हो किन राग। तज अल्प सौज बहु सोज चाह, निरलोभ कुतः लोभी अथाह ॥ १५० ॥ तज विग्रह नाना विध असार, तुम धारौ नाना गुण अपार। तन अथिर तजन चहो सुथिर सिद्ध, कैसैं निग्रह तुम हो प्रसिद्ध ॥ १५१ ॥ तज तुछ बांधव सब जीव भ्रात, कैसे निर बांधव तुम कहात। इन कर्मारी प्रिय गुण महाष्ट, संभावी क्यौं कहिये सपाष्ट ॥ १५२ ॥ महाज्ञान महागुन बल महान, परताप सु तुम सम कोन आन। तह नमूं सुगुन धारी अनंत, ध्यानात्म लीन परमेष्ठी संत ॥ १५३ ॥ तीर्थेश नमूं जगनंद दाय, भव

मन मैं दर्शन देहुराय। इम श्रुत सुन कर सुरगण निरुक्त, निज निज थल पहुंचे हर्ष युक्त ॥१५४॥

दोहा–हिरदेमें धरि जिन सुगुण, सरल सुभावी जोय।
उज्वल नर भव सफल कर, देखलाल निज सोय ॥१५५॥

चौपाई–तदनंतर मन परजय ज्ञान, महुर्तांतरमें लहै भगवान। तप बल बहुर प्रतिज्ञा पूर, असन हेत उठे जग सूर ॥ १५६ ॥ चलत दृष्टि इत उत न पसार, जंतु विवर्जित भूमि निहार। जूडा मित इम ईर्या पंथ, धरा पवित्र करत निरग्रन्थ ॥ १५७ ॥ कोमल पाव कठिन भू मांहि, धरत धीर नाखे दल हांहि। जगकूं दर्स देत जिन सूर, सोम ध्यान सम मय गुण भूर ॥ १५८ ॥ पोंहचे नलिन सुपुरके मांहि, निरधन धनी विचारत नांहि। ग्रह पंकतिमें विचरत असैं, सोम भाव जुत ससि सम लसैं ॥ १५९ ॥ राहु दोष बिन लख नरनारि, अकस्मात सब अचरज धार। अहो लखो यह अदभुत चंद, या आगे रवि किरण सुमंद ॥ १६० ॥ जूं महतावी आगै दीख, नभ तज मानों आय समीप। महा दीप्त बहु पंथ विहाय, ज्ञानपयोनिध सुन्दर काय ॥ १६१ ॥ धीर मेरु वत गुणगण खान, नरनारी इम करत बखान। विहरत पहुंचे चंद्र मुनिंद्र, सोमदत्त नृप घर गुण वृंद, ॥ १६२ ॥ चंद जोति सम कीर्ति विथार, चिंतामणि सम भूप निहार। भयो रंक जूं तुष्ट नरेस, देख जगत गुरुको परवेस ॥ १६३ ॥ जिन चरणांबुज नमियो राय, हाथ जोडि भूमें सिर लाय। तिष्ट तिष्ट महाराज सु अत्र,

मम श्रावग कुल करो पवित्र ॥ १६४ ॥ प्रासुक नीर अहार सुदेव, भुंजो दोस विवर्जित एव। इम भण नृप ग्रहादरवित्त, लेय गयौ कर नौधा भक्त ॥ १६५ ॥

छपै-आदर जुत लेगयौ भवन पहली प्रतिग्रह यह। दुतिय उच्चस्थान काष्ट विष्टर पै थापह ॥ त्रितिय पद परछालि चतुर्थी पादार्चन गुर। पंच प्रनामि जुत भक्ति त्रिय ऐ सुध वच तन उर ॥ फुन नवम असन सुध भक्त नव दाता करै सुगुरु तनी। सो सोमदत्त नृप नै सकल हरष सहित परगट ठनी ॥ १६६ ॥

अथ सप्त गुण यथा।

चौपाई-प्रथम श्रद्धा दूजे बहु भक्त, तीजे निर्मल ज्ञान संयुक्त। मन उदार सो निस्पृह तूर, दया क्षमा सक्ति तिहु भूर ॥ १६७ ॥ ए सातौ गुण जुत नृप दात्र, दियौ लियौ विध जुत जिन पात्र। प्रासुक मधुर शुक्त क्षीरादि, दियौ तृसाक्ष करण मरजाद ॥ १६८ ॥ विसुध त्रिन ध्यान तप वृद्धि, कारन यह वांछा नहीं किध। चतुरांगल पादांतर थिरै, पान पात्र पारण इम करै ॥ १६९ ॥ भुक्त करत तन थिरता धरै, तनतै विविध तपस्या करै। तपतै ज्ञान ज्ञानतै मोक्ष, यह कारन करि असन निरदोष ॥ १७० ॥ तास पुन्यफल पंचाश्चर्य, नृप आंगनमें देव विसर्ज। दात्र कीर्ति सूचक सुर दुंध, बाजत इव मनोगाजत सिंध ॥ १७१ ॥ दाता सुजस त्रिजग विस्तार, सरद सुरभि व है मंद बयार। दिव

नारी अति आनंद भरी, लेय स्वांस इव उपमा धरी । १७२॥ सुमन सुगंध विष्ट सुर करै, अलिगण डंका उडत मन हरै । हर्षित नृत गान मनो करै, दाता तनो सुजस उचरै ॥१७३॥ विष्ट अमोल रत्न पणतनी, करै देव जय लक्ष इम भनी । धन्न सुपात्र दान धन एव, सुर गण करैं भूपकी सेव ॥१७४॥ नाप वृसदा फुन सब देह, सुरभि नीरको वर्षे मेह । मुक्ता-फल सम सोभित भए, नृप घर इम पंचाश्चर्य भए ॥ १७५ ॥ पात्रनमें महा पात्र जिनेश, धर्मतीर्थके कर्ता वेस । जगतमान दाता ए धन्य, श्री जिनवरको दियो सु अन्न ॥१७६॥ अहो दान यह परम पवित्र । दातु पातकूं वृषदा नित्य । धनको-पार्जन करै गिर हस्त, एक जीवका हेत प्रमस्त ॥ १७७ ॥ तामैं जे जन दान कराय, ता धन सफल भूप सम थाय । जाके घर न दान हो कदा, सो मसान सम है सर्वदा ॥ १७८ ॥ दात्र पातृ थुत इव सुर करी, फुन अनुमोदन जन विस्तरी । जगतसु मान दानतैं होय, नानारिद्धि लक्ष लहै सोय ॥१७९॥ सक्र रुचक्र भोग भू लाध, वा तद्भव सिवपदकी साघ । जूं बटबीज बोइयौ तुछ, सफलित सघन अमित अति उछ ॥१८०॥

छप्पै-ईष खेतमैं वृष्टि मेघ जल होय मिष्ट रस । नीब क्यारमैं पड़ो वही जल अधिक कटु कलस ॥ यौंही पात्र कुपात्र दान फल जान विचक्षण । दाता भोग कुभोग भूमि सु लखै है ततछन ॥ जो दाता प्रथम जिनेन्द्रको, सो तद्भव लहै मोक्षपद । इम जिनकु दान सु दे प्रथम, ताकी महिमा कोन हद ॥१८१॥

चौपाई–छालिस दोष विवर्जित मुक्त, बत्तीस अन्तराय निरमुक्त। हुवो शुध जिमको इम हार, तब सुन प्रश्न करै भू पार ॥ १८२ ॥ ताको भेद सु कहो असेष, इंद्रभूत कहै सुण मगधेष। प्रथम सु छालिस दूषण भेद, जाके सुनत मिटै भ्रम खेद ॥ १८३ ॥

दोहा–प्रथम गृहस्ताश्रम जुको, पण सूना कहु नाम।
परडी उखली मजनी, नीर रसोई धाम ॥१८४॥
ताजुत सहज सु अट विव, पिंड सुधतो वाज्ञ।
हिंस्या कर षट कायकी, आरंभ सो अघ त्याज ॥१८५॥
व्रती सु तन सूना करै, परको दे उपदेस।
कर ताकी अनुमोदना, नाहि करै लवलेस ॥१८६॥
मनतैं वचतैं कायतैं, यह कारज अति निंद।
करै सु व्रत कर हीन जे, निसदिन रहै सु छंद ॥१८७॥
छालिस दूषणतैं जुदे, यह अध दूषन जान।
मूलाचार ग्रन्थमें, गुरवट केरु बखान ॥१८८॥

चौपाई–मुनिका नाम लेय जो करै, सो उद्दम दूसण परहरौ। गुरु आए लख आरम्भ करै, दोष अध्या द्विसु दुजो धरै ॥ १८९ ॥ अप्रासुक प्रासुक जू मिलाय, तृती दो सो पूरत कहाय। अन लिंगन तै फर्स रु पोष, सु मुन गृही सु मीसर दोष ॥ १९० ॥ निज वा पर घर थापो पोष, रिषको मुक्त सु थापित दोष। देशादिक वा गुरके अर्थ, किये देय बल दोष अनर्थ ॥ १९१ ॥ हान रु वृद्धि कालको रूप, दोष दोष प्राभृत

विरूप। मंडफादका कर परकास, दोष सुप्राचीकीर्ण निवास ॥ १९२ ॥ शाणत्र रूप खरीदे जोय, भोजन दे कृत चवमो सोय। लाय उधारो दे अन्नाद, सोय प्रमार्य दोष मरजाद ॥ १९३ ॥ परकैला बदलाय सु देय, सो प्रावर्तक दोष कहेय। जो विदेसतैं आयौ देय, सो अभिघट बार मसु कहेय ॥१९४॥ बंधो खोल अरुढ कोउ धार, देय सु उद्भिन दोस निहार। श्रेणी चढ़ि ऊपरसूं लाय, देय सुमाला रोहन थाय ॥ १९५ ॥ नृप चौरादिककी भय मान, दे अछेद दूसन सिर ठान। अप्रधान दाता दे भुक्त, सो अनिसृष्ट दोष संयुक्त ॥ १९६ ॥ यह उद्गम दूषन वसु दूण, फुन उत्पादन षोडस सूण। धाय बालवत पोषै लाय, सो पहलौ धात्री अपराध ॥ १९७ ॥ जो मातावत किरया करै, सो आजीव दोस सिर धरै। भुक्त हेत गुरु जाय विदेस, ग्रहस्तोदित तित कहै संदेस ॥ १९८ ॥ सो विधिजुत दे मन कौ दान, ले रिष दूत दोष सिर ठान। अष्ट निमित ग्यानतै जान, करै सुभासुभ सगुरु बखान ॥ १९९ ॥ तासुन ग्रेही मुदित दे भुक्त, ले मुनि निमत दोष संयुक्त। वचन भनै वानीपक दोष, वैद्य भणौ सु चिकित्सा पोष ॥ २०० ॥ क्रोध करै सो क्रोधुतपादि, मान करै सु मान मरजाद। माया करै सु माया दोष, लोभ करै सु लोभको कोस ॥२०१॥ दाता सुजस भणौ गुन कोस, भोजनादि पूरब थुत दोस। अथवा भोजनांत थुति दात्र, करै सुदोष थुतांत कुपात्र ॥ २०२ ॥

काव्य—बहुविद्या दिखलाय चवै देंगे जग भूपाल, यो सुण सुदे

दान गृही सो विद्या दूसण। मंत्र देयवा साध गृहस्तीको कारज कर, मुदत गृही दे दान सु मुनमंतर धर दूसण ॥ २०३ ॥ रोगादि हरण स्रगार निमित्त दे द्रव्य रजतादी, मुदित गृही दे दान दोष सो चूर्ण युगादी। जेरस दोन कदाचि मंत्र सौं सो वस कर-है, मूल करम सोलमा दोस यह साधु धरहै ॥ २०४ ॥ अग्र क्रम कर उपजा कनाह यह अधिक्रम दूसण, वा तेलादिक लिप्त भांड रज छिप्त दुतिय हण। तथा सचितमें थाप असन क्षिप्त तीसरा, सचित अचित मिल ढक्यो असन दे पिहत नीसरा ॥ २०५ ॥

दोन अर्थ कर गोन देय सो संव्यवहरन, दायक असुचसु आप देय दायक पट वरन। अप्रासुक भूआदि मिलोदे मुक्तु-न्मिश्रत, पक अकपक मिलि गिले मुनी अपरणित सोघृत ॥ २०६ ॥ अप्रासुक लिय भांड धरो ले भुक्त लिप्त नव, मुन करतै गिर पिंड दसम परित्यजन दोस फव। उष्ण भुक्त जल सरद मिलै इत्यादि संयोजन, विरुद्ध परस्पर हार गरम जल सरद भुक्त अन ॥ २०७ ॥ उदर अर्धमें असन पादमें नीर समावै, यातैं अधिक सुदोष दुषट अति मात्र कहावै। अति तृष्ना कर असन ग्रहै सो दोष अंगारक, यह तेरम मल दोष चौदमा धूमन मांतक ॥ २०८ ॥ अति निंदा अति ग्लानि करत भोजन विरूप कह, मेरे है सु अनिष्ट करत संक्लेस ऐसे गह। सोले उद्गम उत्पादन सोलै चौदै मल, ए छालीस सब दोष टालि गिल असन सु उज्जल ॥ २०९ ॥

दोहा–अंतराय बत्तीस बिन, भोजन करे मुनिंद्र।
गोमय गणी सु इम भणे, सुन मग्धेस नरिंद्र॥ २१०॥

चौपाई–कागादिक खग बीट करंत, काकनाम अंतराय कहंत। अशुचि लिप्त पग सोय अमेध, वमन कर मुन छर्द सु भेद ॥२११॥ कहन करू भोजन इम कोय, अंतराय रोधक चत्थोय। निजपरकै लख अश्रुपात, अश्रुपात पंचम विख्यात॥ २१२॥ निज परकै लख रुधर रु राध, रुधर सु अंतराय षट लाध। रुदित उच्च सुरसि सुजन दर्स, गोडा नीचै हस्त स्पर्स ॥२१३॥ रुद परमर्स जानु शोध दोय, अंतराय आठमी होय। गोडा तक्र काष्टादि उलंघ, जानु परिव्यत क्रम यह भंग ॥२१४॥। नाभ तलै सिर करनी सरै, नाभ्यधो निरगमन सु धरै। तजी वस्तुकूं खायज भूल, प्रत्याख्यान सेवना सूल॥ २१५॥ निजपर कर जिय वध होकनै, अंतराय जिय वध गुर भनै। खगका-गादि लेजाय सु पिंड, पिंड हरण तेरम यह मंड ॥२१६॥ भुक्त करत करतैं पिंड गिरै, पाणित पतन पिंड सो धरै। भुक्तत करमैं जिय गिर मरै, पाणो जिय वध सो अनुसरै॥ २१७॥ भुक्तत पल पंचेन्द्रिको लखै, सो मासाद दर्स गुर अखै। हो उपसर्ग सुरादिक कृत, सो उपसर्ग सतरमी धृत॥ २१८॥ जुग पद बीच पंचेन्द्री गछ, अन्तराय पादांतर लछ। दाता करतैं भोजन गिरै, भाजन संपातन सो सिरै॥ २१९॥ निज तनतैं मल हो व्युत्सर्ग, सो उच्चार अन्तरा वर्ग। मूत्र श्रवै तो प्रश्रव नाम, भिक्षारथ भ्रमतै गुण धाम॥ २२०॥ चण्डालादि ग्रहमैं

परवेस, ग्रह अमोज्य परवेस निवेस। हो मूर्छादि पतन सुन देह, सो तेईसमी पतन गिनेह। २२१॥ उपवेसन बैठे गुरु खरे, दह श्वानादंस दंसिम धरे। सिद्ध भक्त कर भूम सपर्स, भू संसर्स अन्तरादर्स ॥ २२२ ॥ श्लेप माद पेपै जो साध, नष्टी बन छब्बिसम पराध। जो मुन जठरतैं क्रम नीसरै, क्रम निरगमन सताईव धरे ॥ २२३ ॥ बिना दियो तुछ गृहै जो जती, सोय अदत्त ग्रहनकी गती। निज परकै सुलगै हथियार, सो प्रहार उनतिसम निहार ॥ २२४ ॥ ग्राम दाहसापुर जु जलेय, पग दैंठा कछू मूंत लेय। किंचित ग्रह नसोई पादेन, फुन करतैं तुछ ग्रहन करेन ॥ २२५ ॥ अन्तराय ये कही बतीस, अरु कछु जादे सुनौ महीस। चंडालादि स्परसंन कलह, इष्ट प्रधान सन्यासी मरह ॥ २२६ ॥

दोहा—लोक निंद नृप भय तथा, संयम निर वेदार्थ।
इन कारन भोजन तजै, अन्तराय सामर्थ ॥२२७॥

चौपाई— इनके लछन रूप विशेष, मूलाचार ग्रन्थमें देख। इम भिक्षाकर बनकूं जाय, एकाकी सु ध्यान धराय ॥२२८॥ धारे पंच महाव्रत सुध, तासु भावना जुत अविरुद्ध। सुमत गुपत अनुप्रेक्षा धर्म, दस विध धारे विध गह पर्म ॥ २२९ ॥ विहरत पुर पट्टन ग्रामादि, गिर कंदर बन तट नद्यादि। नाना-देश सुगुण गण गहै, तिहुं कालाद्र परिसह सहै ॥ २३० ॥ यूं छद्मस्त सुमोन अरोय, पहुंचे इक्षुक बनमैं सोय। सुध सिलास्थ नागतरु हेठ, धर षष्टोपवास जग जेठ ॥ २३१ ॥ ध्यान धर्मतैं

रुजू विवेक, गह बांधौ मनक पशु वसेक। आरत रुद्रकूं ध्यान विहाय, धर्म सुकल ध्यावौ मन लाय ॥ २३२ ॥ महुर्तान्तर एकाग्र सुध्यान, प्रथम सुकल पदगह वसु ठान। अधिक अधिक कर उज्वल भाव, मोहादिकको विमद नसाव ॥ २३३ ॥ प्रकृति घातिया छयकृत चलौ, चढ नव दसम अंत इक मिलौ। दुतिय सुकल जो धारण धीर, लंघ ग्यारमो नग फुनवीर ॥ २३४॥ बारम अंत अंत कर घात, विधि चव प्रकृति संतालिस ध्यात। सो गुण रुजू मम प्रापत हेत, घण सुयणमें तुमें इम चेत ॥२३५॥

कवित्त—कब सुपात्रकूं दान चूं मैं, विधि जुत कब कर हूं थितहार। निरावरण तन ध्येन ध्यान युत, सुथिर गिरमसूम वसे विहार ॥ जब तक या इनभेतरे, चेतन कर नित यज्ञ दान विस्तार। जप तप सीलव्रत मुनगण भणजूं पर्व लह तुछ भवधार ॥ २३६ ॥

दोहा—जो कछु भव लह जगतमें, हो भूपेन्द्र सुरेन्द्र।
गौतम कह श्रेणक सुणो, यूं भण वीर जिनेन्द्र ॥२३७॥

इतिश्री चन्द्रप्रभपुराणमध्ये निःक्रमकल्याणक वर्णनो नाम
त्रयोदशम संधिः संपूर्णम् ॥ १३ ॥

चतुर्दश संधि।

कवित्त—यथाख्यात चारित्रकूं ढाली महाजीव कन विध मल जूंक। मुन सोनी ध्यानाग्नि प्रजाल सु सोधे सुधपयोग दे फूंक॥ विधमल दूर भयो तब आतम तप्त हेम सम सुध निकलंक। होय तेरमो ठाण सपरसैं सो वक्षेहं निमित्त निसंक॥ १॥

सोरठा—तीन मास छदमस्त, करे विविध तप चन्द्रप्रभ।
घाति करम अप्रशस्त, करके पल रव प्रगट्यौ॥ २॥

चौपाई—दिव्य परम औदारिक देह, सप्त धातमल वर्जित वेह। सुध फटिक सम तन परमाणु, भए सकल दुतिवंतसु भानु॥ ३॥

दोहा—जूं पारसके उपलसूं, फरस लोह गुण त्याज।
होय कनक दुतिवंत अति, त्यौं क्षुधात जिनमाज॥ ४॥

चौपाई—त्रितिय सुकल अरु तेरम ठाण, इक संग फरस रु प्रगट्यौ ज्ञान। अनुराधा रिष २ अलि फाग, सांझ समै लहियौ बड़ भाग॥ ५॥

पद्धडी—केवल मयूख युत मारतंड, तब फूलौ त्रिभुवन कवल खंड। तब अमल भई दस दिशा नार, जब त्रिभुवन पतिको इम निहार॥ ६॥

चौपाई—ता प्रभाव उछलौ जिनदेव, तनौ वपु ऊरध कू एव। रंडवीज जू सहज सुभाय, बंध छेद ऊरध कूं जाय।॥७॥ जगमें नंतपार सुख गेह, सो जिन बोध लह्यो सु अछेह। दर्स

ज्ञान सुख वीर्य अनंत, छायक दान लाभ सु महंत ॥ ८ ॥ भोग और उपभोग सु एव, केवल लब्ध लही नव देव। ता प्रभाव चव विध सक्राद, कम्प सुरासन वेमरजाद ॥ ९ ॥ मुकट नए अरु घर घर नाद, घटा ढोल संख सिंघाद। सुर तरु सुमन चवें बहु भाय, लख इत्यादि चिन्ह सुखदाय ॥१०॥ सूचक भए प्रभु केवल भेय, जानो अवधि विचार सुरेश। करे करम छय चंद जिनश, सिंहासन तैं उठ पग सप्त ॥ ११ ॥

पद्धड़ी–तब चले पाक सासन हरषाय, सब नमन करै मन वचन काय। इंद्रानी पूछे कहो कंत, क्यों आसन तज उठे तुरंत ॥ १२ ॥ किस कारण प्रभु न्यायो सु माथ, ताको उत्तर देहो सु नाथ। तब कहै मुदित सुर राज गाज, जिनचंद भये केवली आज ॥ १३ ॥

चौपाई–नम अष्टांग सुरासुर सेव, धनिद प्रते इरदे उपदेश। रच समोसर्ण जिनदेव, सजो विविध वाहन फिर एव ॥ १४ ॥ इंद्र हुकमतैं चलो धनेंद, आय नमो श्री चंदजिनेंद। रच समोसर्ण बहु भाय, देखत नेन थकित हो जाय ॥ १५ ॥ सुर सिल्पी रच सूत्रनुसार, सो समुश्रितको करे उचार। निज२ सेना सप्त प्रकार, अच्युताद आसो धूम द्वार ॥ १६ ॥ सजि ऐरावत जुत परवार, चढ प्रथमेंद्र चलो सुदधार। वस्त्राभर्न ते सज २ देह, पूजा द्रव्य हस्तमें लेह ॥ १७ ॥ चले विविध वाहन सुर चढे, तनाभर्न नानायुध मंढे। इंद्र धनुष वत रस्म प्रकास, मिले भवनत्रिक मध्यावास ॥ १८ ॥ और राछुर

विविध प्रकार, निज २ वाहन हो असवार। जुत परवार रु हरषत कवै, छह निमेष चक्र तहो तवै॥ १९॥

दोहा—समोशरणकी संपदा, लोकोत्तर विदु मोन।
वचन द्वार वरने तिसै, सो बुध समरथ कोन॥ २०॥

सोरठा—पेषत औसर पाय, धरम ध्यान कारन निरख।
लिखूं केव मन लाय, पढ़त सुनत आनंद बढ़े॥ २१॥

चौपाई—समभूले ऊँची कर एक, दिव्य भूमि चोखूंटी पेख। जोयन साढ़े आठ प्रमान, दिस प्रति वीस सहसं सोपान॥ २३॥ कनकमई मन जडित विचित्र, ऊपर धूली साल पवित्र। पंच रतनमय दुति विस्तार, इंद्र धनुषवत रस्माधार॥ २४॥ मानो प्रभु तन रस्म विचित्र, प्रभा पुंज यह बनो पवित्र। कहुं स्याम कहुं कंचन रूप, कहुं विद्रुम कहुं हरित अनूप॥ २५॥ समोसरण लछमीको एम, दिपै जडाऊ कुंडल जेम। विजियादिक चौदिस चव द्वार, ऐसे सब छतीस निहार॥ २६॥ चार कोट अरु वेदी पांच, इक इक दिस दर नव नव राच। वेदी अधो उर्द्ध सम मोट, अधो अधिक ऊरध तुछ कोट॥ २७॥ पोल पोल प्रति मंगल दर्व, इकसत आठ भिन्न २ सर्व। आठ सतक चौसठ इक पोर, नाट साल मत्र निधि दोऊ और॥ २८॥ प्रभु तनी कहो कापे जाय, यो लख दर मिलसे न कराय। पुष्प रतन फुन बंधन माल, बुर्ज कंगुरे कलश धुबाल॥ २९॥ इम इंद्रादिक श्रणि चढंत, हेमांगल मण कढे लसंत। इत्यादिक सोभा जुत पोल, द्वारपाल

भुन ध्वज भ्रतोल ॥३०॥ सदे विविध सुरवा आभर्न, रतन दंड कोतखि मन हर्न। प्रथम पीठ चौदिस थित रूप, आगे मान-भूमि सु अनूप ॥ ३१ ॥ प्रथम पीठ जुत सोलै पान, तिव त्रिय कोट कोट प्रति आन। चवर पोल खेंपे धुज तोर्ण, मान-स्थंभ मध्य इक सोर्ण ॥ ३२ ॥ चौदिस चार पदल बहु घैरे, तलै त्रि मेखलि सुरखी सिरे। वज्र रतनमय इकइक संग, दो दो सहस कम बहु रंग ॥ ३३ ॥ धुजायुक्त लख मानी जास, मान गले जू स्थंभ नास ॥ अत्रोपान चौदिस जिनबिंब, सुरनर नवैं तिनैं तजि डिंभ ॥ ३४ ॥ थंभर प्रति वापी चार, चारो दिस सोलै निरधार। थाल युक्त रतनके पाल, मणश्रेणिपे लिखे विसाल ॥ ३५ ॥ हंस मोर बक सारस चक्र, सुक कारंड चवे धुन वक्र। तीर तीर बैठक बहुधनी, क्रीडत सुर नर मन मोहनी ॥३६॥ वायं वायं तट दो दो कुंड, तिव स्नान सुर गण मंड। वस्त्राभर्ण विसद सज सोय, जल दर्व वापीमैं धोय ॥ ३७ ॥

दोहा-चैत्याले जिनके बहु, विदिस मांहि सोहंत।
तित इरन मयाते इसे, चैत्य भूमि त्रिकहंत ॥ ३८ ॥

चौपाई-अष्ट विधार्चा कर जिन मूर्त, इन्द्र चले आगे कर सूर्त। पट कोटा सुवर्नमय रखौ, नर वक्षस्य तुंग जिन अखौ ॥३९॥ दूनौ व्यास कुण्डलाकार, प्रभा पुंजस्य रत्नाकार। फुन खाई जल जानु प्रयंत, कवल खिलै रु चलैं जलजंत ॥४०॥ जिनार्च कर गंधा भनो, आगै बेल सघन वन भनो। सुमन

सुगंधित अलि रव चवै, फिरी दै जिन जस मनु चवै ॥ ४१ ॥ प्रभु तन तेज पुंज सम हेम, प्रथम कोट तन दुति ससि जेम। दरबुप कूट लाल कर ठाय, नचै मुदत मन जग लख आय ॥४२॥ मनमथ दुति व्यंतर दरवान, विमित सहित सु गदाधर पान। रोकै विनय हीनकू चेत, अग्र दुतर्फ गलीगम हेत ॥४३॥ तित नृत साल समग सुविनीत, सो रणथंम पटकमय भीत। तिप नीर तन सिखर बहु रंग, नच किन्नरि लावन्न तरंग ॥४४॥

छप्पै—प्रथम भूमकी गली आमुं साम्हं दर दोतट। चौंदिस षोडस इकेकू मांहि बत्तीस बत्तीस रट ॥ अरुपाडे प्रति सुरी नचै बत्तीस सर्व मिल। तीन सतक चौरासी सोलै सहस मधुर गिल ॥ सर्व सुरीसु जिन गुण गावती, फुनि मंदहास मुलकंत। ठप ताल मुर्ज बाजै सकल, मिलि सुर जुत मंधुर बजंत ॥४५॥

चौपाई—इन्द्र लषी इम सुरी नचंत, अग्र धूप घट जुग सोहंत। दर दर प्रति चव चवघट धूप, इकमत सर्व चवालीस भूप ॥ ४६ ॥ तित दस विध इर धूप खिपन्त, मनु धूवां मिस अघ भयवंत। पुन्य थकी अरघकुं जाय, फिर आगे चले हर-षाय ॥ ४७ ॥ चार बाग चारौ दिस मांहि, पूर्व अशोक सप्त पर्णाहं। चम्पक चूत नाम मव भूप, इन ही वृक्ष मूल जिनरूप। दिस प्रति सव सोलै लष इन्द्र, करी जज्ञ धर हर्ष अमंद। नाना वृक्ष फले फल फूर, मंद पवन जुत जलकन भूर ॥४९॥ अलि मकरंद दित मृदु धुन करै, मानो सुर जुत गानोचरै। सब तरु दल पन्ना सम फूल, लाल वरन हीरा सम मूल ॥५०॥

कोण त्रिचत्र वापी केइ गोल, पंच रतन तट जड़े अमोल। सब चुवीस पट पट चहु मांहि, रिषी सुरी तित नच तल पांहि ॥५१॥ लता भुवनमें छुटत फुंवार, जलकन उछल मुक्ता उनहार। कहुं तुंग गिर क्रीड़ागार, सुन्दर तन सुरसुरी अपार ॥ ५२ ॥ युत चित्राम बने सहु धाम, वा प्रेछाग्रह कहुं ललाम। रेणु पुंज कहुं सरन ग्रांद, कहुं वन लपो इंद्र अहिलादि ॥५३॥ ऊपरवत संख्या सब जान, और बहुत रचना तिह थान। वेदी गिरद वज्र मय जोय, अग्रग छजा भू लप सोय ॥ ५४ ॥ धुजा हेट सुंदर चौंतरे, मय मणवांस त्रिभणु विस्तरे। वंस उर्द्ध थित वस्त्र त्रिकोन, बहु अमोल दस चिह्न सुभोन ॥ ५५ ॥ सिख फुन हंस गरुड फुलमाल, हर गज मगर कमल गोवाल। चक्र सु दस इक इक सत अट्ट, इक इक दिस चौदिस संघट्ट ॥ ५६ ॥ चार सहस तीन सत वीस, सब बहु वरन बखान सुनीस। एक धुजा संग धुज लघु जान, इक सताष्ट सबते परमान ॥५७॥ चार लाख सतरे हजार, आठ सतक अस्सी निरधार। सुमन माल युत मोती माल, किंकनिरव मनु नृप जुत ताल ॥ ५८ ॥ मंद पवन गत हल मनु भास, आ जिन दर्स करो अघ नास। फुन लख भवन नासनी सुरी, आगे निरत करत रस भरी ॥ ५९ ॥ आगे रजितमई गढ त्वंग, मानो प्रभु सुजस सरवंग। गिरदा क्रित दे फेरी प्रशस्त, चौं दिस मणि मयद्वारोर्धस्त ॥ ६० ॥ कन घट जल जुत वारज छए, मुक्ति माल गल झल झलकए। ति न द्वार स्थित सुर मन्नेस, दैत छ[illegible] [illegible] वेस ॥ ६१ ॥

द्वारपाल फुल माल सुधार, तिन पतनी नाचे मनुहार। पूरव
वत संख्या नुत साल, फुनि घट धूप मुक्ति गल माल ॥६२॥
तिन सुर गणपे धूप विचित, धूंवा उठत मनु करत सु नृत।
अथवा पाप पुंज सुखलाय, धुवा रूप धरि दस दिस जाय
॥ ६३ ॥ आगे कल्पवृक्ष भूदेप, मध्य सिद्धारथ वृक्ष सुपेप।
चित्र अघोस्थ सिद्ध चहुं ओर, वस्तु विष जजहर नुत कर जोर
॥ ६४ ॥ फुनि वेदी आगे नव तूप, चौदिसमें छत्तीस अनूप।
वज्र चौकरां हेट त्रिमेष, तिन चौदिस निन मूर्त जु देष ॥६५॥
तित वसु विध मत्र हर हरषाय, पद्म राग मणि मय सोभाय।
तिन आगे सुर क्रीडा भार, चित्रनचित्रत लक्ष निहार ॥ ६६ ॥
आगे स्फटिक कोट चहुं पाय, प्रभु तन सु जस रह्यो यूं छाय।
चौदिस पोल पूर्व वत ठाठ, द्वारपाल पूरव दिस आठ ॥६७॥
विजय विश्रुत कीर्त विमल कर, उदय विश्व धुक नाम वीर्यवर।
वैजयंत सिव ज्येष्ट वरिष्ट, धारण अनंग याम्य अप्रतिष्ट ॥६८॥
दक्षन द्वारपाल सुर येह, सुन पश्चिम दिस देखे जेह। सार
सुधामा अमित जयंत, सुप्रभ वरुण अक्षोभ्य महंत ॥ ६९ ॥
अष्टम वरद सुहर्ष सुरचे, उत्तर दिश अपराजित अर्च। त्रिय
अतुलार्थक उदित अमोघ, अक्षय उदित कुबेर गुनोघ ॥ ७० ॥
पूर्ण काम अष्टम जु समस्त, रतनासन थित आसे हस्त। मंगल
मुकर दुवर्फ दुवार, तहां सप्त भव मध्य निहार ॥ ७१ ॥
तात त्रियै त्रय भावी एक, वर्तमान भव एम वसेक। दर्सन
कांक्षी हर प्रति जांहि, द्वारपाल दिखलावें ताहि ॥ ७२ ॥

तिन दर्पण जुत दिपै प्रतोल, दिसवंत सुर वे जय बोल। आगै लतारु तरु बहु जात, ता वनमें मंदिर बहु भांति ॥ ७३ ॥ वन वेदी जुत नृत्यावास, लोकपाल तिय नृत्य विलास। करत सु नव रस पोखत देख, आगै एक पिट फुन पेख ॥७४॥ मणिमय वापै तरु सिद्धार्थ, मूल बिंब सिव वज सर्वार्थ। सिद्ध हेत इर थुत फुन करी, तरु अनेक चौदिस वावरी ॥ ७५ ॥ रतन तुप द्वादस भुवनै, ता पूरत सुर नर मनहर्ने। वेदी जुत वापी चव जुदी, तित असनान करै जे सुधी ॥ ७६ ॥ पापरोग आवत सब नास, अरु पूरब वत भव तिह भास। इत्यादिक सोभा लख इंद, आगै चले सु परमानंद ॥ ७७ ॥

कवित्त—फुनि तिरलोक विजय जय जय आंगन रंग। धुजायुत अचो तोर्न मुक्ति झालरी युत अति सोहै पुष्पार्चित मण पंकज सोर्न ॥ कनरस लिप्त धरा नभ मममै सुमन सूरगण सम सोहंत। बहु सुखके निवास जिह मंदिर पूर्ण सुगा सुरनर मोहंत ॥ ७८ ॥ दान शील तप जप पूजा फल पुन्योदय लहि सुरगुरु मोष। तासै विमुख अघोदय लह दुप नर्के निवास सुनी बस दोष ॥ इम चित्रामन युत बहु मंदिर लपे पुरंदर सुरनर जिते। डरै पापतैं धर्म विषै रुच गहै ततछिन हो सुदि तिते ॥ ७९ ॥ स्फुरित मुक्ति झल्लरी जिनकै दिस जडे मन लसत जु सार। छुद्र घंटका जुत धुज हालत मंद पवनतैं रुग झुणकार ॥ लुबंत रतनमाल इव सोहै दधत रंग सममल झलकंत। धूपमें रुचि रु हरप अघतैं फुनि सोया मंडपकू निरखंत ॥ ८० ॥

दोहा–नाम श्री शिवखेम जय, मंगल-श्रय जयंत।
उत्तम सर्वार्थादिचतुर, अपराजित भाषंत॥ ८१॥
तीन लोकके जीव सब, यापुरमांहि समाय।
रंचक बाधा हो नहीं, जिन अतिसय परभाय॥ ८२॥
सुमन सुगंधित सुर चवै, मंडपको पर महकाय।
भृंग झंकारत ही फिरै, मानों जिन गुण गाय॥ ८३॥

कवित्त–सो तिरलोक विजागण मध्य रून पीठ मनोज्ञय लछमी मूर्त। तापर सहस थंभको मंडफ नाम महोदय सुंदर सूर्त॥ तित जिनवानी थित मनु मूरत सुयाम दिसा श्रुत केवलि अंधे। ता मंडफ तट चार अन्न लघु विस्तरर्द्ध हर जुत सुर लंघै॥ ८४॥

दोहा–तित पंडित अक्षेपणी, आद कथा कह चार।
तिन तट नाना भवनमें, चौसठ ऋद्धि उचार॥ ८५॥
मुनि भव श्रोता हेत ही, फुन नाना विध बेल।
मंडित हाटक तममय, पीठो परमव ठेल॥ ८६॥
जह्न दर्व सो इन्द्र भी, सुरगण युत जिन पूज।
दरब चढ़ो डांग चले, दर दू तर्फ निध मूज्ञ॥ ८७॥
तिनके रक्षक देव सब, दान दे मन इछंत।
प्रमद नाम फुन ग्रह विषै, कल्पांगना नचंत॥ ८८॥

अडिल–त्रिजयागणकी पूट विषै दस तूर हैं, लोकाकास समान अकार अनूप है। ताप्रथम उर्द्ध धुजायुत सुर लखे, निर्मल फटिक समान स्वेत श्रीजिन अखे। ८९॥ तिसमें

रचना लोक तनी दीसै इसी, जूं प्रतक्ष मुष लषै लेयकर आरसी। मध्य लोक चित्राम तूप मध्यलोकमैं, मंदिर गिर सम मंदर तूप त्रिलोकमैं ॥ ९० ॥ ता चौ दिस जिन बिंबज जे सक्रादजी, कल्पवास फुन तूप लषो अह्लादजी। तामै स्वर्ग समस्त तनी रचना महा, फुन ग्रीवक जो तूप ग्रीवक तहां ॥ ९१ ॥ फुनि अनुदिस जो तूप अनुत्तर जिह लषै, फुन विजयादि चतुष्क तूप संज्ञा अषै। तामैं सो सब प्रघट अबै त्यों पेषियो, सरवारथ सिद्ध तूप विषैं सो देषियो ॥ ९२ ॥

सोरठा—सिद्धरूप जो तूप, भव्य कूट फुन तसु कहै। सिद्ध मूर्त सु अनूप, अधोभाग चौदिस जन ॥ ९३ ॥

छप्पै-ताइन लषै अभव्य बहुरि प्रतिबोध तूप तित। दर्सत मिटै अज्ञान सु चिर रु सु ज्ञान लहत जित ॥ लोकाकार रु मध्य लोक सुर गिर रु स्वर्गमय। ग्रीवक अनुदिस चष्ट चतुक विजियादिक सप्तम ॥ सर्वार्थसिद्ध वसु भव्य नव। दसमो प्रबोध वर तूप ॥ जो निकट भव्य सो इन लषै। लह पार निकस भवकूप ॥ ९४ ॥ मानथंभ धुज तूप कोट नग क्रीडा मंदिर। सुरतरु चैत सिद्धार्थ पोलवेदी जिन मंदिर ॥ श्री मंडफ नृत साल विपन जिन तनतै ऊंचे। बारे गुणे प्रमाण पूर्व श्रुतमें इम रुचे ॥ फुनि सिंहासन तक कोटतैं फटिक भीत दुतिवन्त अति ॥ मित षोडस है मनु भावना। दिस चौ पारस तुरि लसत ॥ ९५ ॥

पद्धडी-फुनि विदिसमें तीन तीन, इम सभा दुवादस

भक्ति लीन। पहलीमें मुन वृष धर विचित्र, दूजीमें कल्प सुरी पवित्र ॥ ९६ ॥ तीजीमें अर्जिया तमार, चौथीमें सुर जोतसी नार। पणमें विंतरनी श्री समान, छट्टमेंस तिया घटम महान ॥ ९७ ॥ दस विधि भवनाधिप सप्त थान, अष्टम वसु विधि विंतर महान। नौमीमें जोतसी जोत रूप, षोडस सुरेस दसमें अनूप ॥ ९८ ॥ नर त्रिय जुत नृप ग्यारमें थान, केई सम्यक जुत केई व्रत वान। पशु जात विरोधी वैर छार, कर प्रीता स्थित बारम मंझार ॥ ९९ ॥ नाना विध वस्त्राभर्ण धार, जम्बू सुत मणमय जडे अपार। फूल माल युक्त फुनि भक्त लीन, ऐसे सुर नर नारी प्रवीन ॥ १०० ॥

अडिल–तिन कोठनकी भीत उपर थंभा बने, तिन पर मंडफ छयो अधिक सोभा सने। मध्य सिंहासन लखो त्रिमेखल जग मनी, प्रथम पीठ वैडूर्य रजमणि मय दुति जनी ॥ १०१ ॥

चौपाई—मोर कंठवत षोडस पान, मुन कोठाद प्रघट मय आन। इम ग्राहक सु अघोघ उपाय, अलि सम पगधू मदों जाय ॥१०२॥ तित पक्षे रुचु दिस सिरधार, धर्मचक्र जुत कोर हजार। रविसम क्रांत धर्णोनंत आठ, मंगल द्रव्य धरे जुत ठाठ ॥ १०३ ॥ इत सुर जायन आगे मच्छ, दुतिय पीठ वसु श्रेणी लक्ष। मेरु भृगोन्नत दुरि रवि जेम, तापै अष्ट धुजा चिन येम ॥१०४॥ चक्र वृषभ गजहर पक्षराट, माल कमल वस्तर ए आठ। रतन दंडयुत किंकनी सोर, जिन गुन गाम तुन चैइ लोर॥१०५ तापै तृतीय पीठ है और, झलकै मानक हीराडोर। रतन

जाल मय पैंडी अष्ट, अति निर्मल मनु दर्स गुणष्ट ॥ १०६ ॥ तापै गंधकुटी सु सुगन्ध, नाना महक भई तह संध। चव थंभा युत गुमटी लसै, ऊपर कलस झलक मनु हंसै ॥ १०७ ॥ मुक्त फूलपण रंभ मण माल, चौदिस तोरण खैचे विसाल। मध्य सिंहासन सिंघाकार, पाये चार विदिस निरधार ॥१०८॥ कनकमय जडो प्रभामय लसै, मानों जग लछमीकों हसै। तापै कमल सहस दल एम, प्रभा पुंज रव मंडल जेम ॥ १०९ ॥ तस्योपर चतुरांगल अत्र, अंतरीक्ष सोहै विन मंत्र। जगत पूज्य श्री चंद्र जिनेंद्र, वचन गम्य ना जिहा कविंद्र ॥ ११० ॥ जूं जग सिखर शिला जग मांहि, अंतरीक्ष सिद्ध स्थित थाइ। इम लख हर मुद चन्द जिनेष, सेव सुरासुर करै नरेष ॥ १११ ॥

दोहा—कंचन रतन मई सकल, देव वैक्रिया रूप।
समोसर्ण या विध रचौ, अतिसय श्रीजिन भूप ॥ ११२ ॥
रचौ चढै सुर इम कहुं, अन्न ठौर सब ठाठ।
रचौ जाहि नांहि कदा, यह भाषौ गुर पाठ ॥ ११३ ॥
सिद्धांत सार श्रुतके विषै, देख विसेष सुजान।
ग्रंथ वधनके भय थकी, थोड़ा कियौ बखान ॥ ११४ ॥

अथाष्ट प्रातिहार्य वर्णन।

सवैया २३—मंडफनै तरु छाय असोक विलोक तही सब सोकहनीसो। क्यौं न जिन ढिग नृत्य करै मनु पौन सु प्रेरत मोद मनीसो ॥ गुच्छन पै अलि गुंजत गान सु हालत कोंप लता नमनी सो। सो निकलंक मयंक ज्यौं भवताप हरौ जग मौल

मनीसो ॥ ११५ ॥ जोकन त्रिष्टर जाल जड्यो मण रम्य पराग खिली दिश नीसो। खेचन रामर भृंग जगो रव द्वादस पत्र सभा अरनीसो ॥ पंकज मध्य मयंक विराजित सो कलिकावत लोक धणीसो। सो निकलंक मयंक जयो भवताप हरो जग मोल मनीसो ॥ ११६ ॥ चौसठि चमर ढुरे इम जू रजताचल देवनकरनीसो। गंग तरंग तथा फेनोपम उज्जल वार फुंहार बनीसो ॥ गच्छत उरधकू इम जाचत ढार मयंक पजक्ष धनीसो। सो निकलंक मयंक जयो भवताप हरो जग मोल मनीसो ॥ ११७ ॥ सोहत चन्द्र समान त्रिछत्र सु धारत रूप त्रिधात्र घनीसो। मोतिन झालर लूंब अमोलिक सेवनि क्षत्र नयुक्त ठनीसो ॥ चंद्रप्रभु पासो फिरे प्रघटो त्रियलोक मएक धनीसो। सो निकलंक मयंक जयो भवताप हरो जग मोल मनीसो ॥ ११८ ॥ देह जिनेष तनी प्रघटो किरणांवल मंडल भाव रनीसो। दूषण रस्म समान दसो दिश देखन है जन्मांत रनीसो ॥ आरसिमें मुख पेम लखे भव सेवत जान मदंव मुनीसो। सो निकलंक मयंक जयो भवताप हरो जग मोल मनीसो ॥ ११९ ॥ मृत लखो मन मार हरो जग ढूंढत सर्ण फिरो धरनीसो। कोन रखे प्रभु चौर सुहार तजे हथियार ले सर्ण घनीसो ॥ रूप धरो कर विष्ट अधोमुख यों सुनमें जिनको सु मनीसो। सो निकलंक मयंक जयो भवताप हरो जग मोल मनीसो ॥ १२० ॥ मोह महा जग सूर दियो पट सुर्ग अधो मध एक घनीसो। दुर्जय शत्रु हनो तुम सो जब ध्यान असी गह शुक्ल अनीसो ॥

द्वादस कोट सढे यह बाजत जीत मनो पुर दुंदभनीसो। सो निकलंक मयंक ज्यौं भवताप हरौ जग मौल मनीसौ ॥१२१॥ चंद्र जिनेन्द्र तनी धुन दिव्य घनोघ समं भवताप हनीसौ। देस अनेक तने जनसोत्र सु खेत इखादिककी धरनीसो ॥ तत्र पडे जिम स्वात अनेक सुभाष हसी समझै सु मनीसौ। सो निकलंक मयंक ज्यौं भवताप हरौ जग मौल मनीसौ ॥१२२॥

दोहा—प्रातहार्य जुत जिन लखे, इंद्रादिक जुत सर्व।
हाथ जोड प्रणमें तहां, जजे मुदित ले दर्व ॥१२३॥
अमरांगन गन जुत सची, रतन चूर निज पान।
रचौ साथिया मंगली, तत्पर पूजा ठान ॥१२४॥

चौपाई—जंबू सुत झारी मनमय, तामैं भर तीर्थोद्भव पय दे जिन चरनाग्र त्रिधारं, भव जन्म जरामृत टारं ॥१२५॥ फुन तामैं भर घसि चंदन, जज चंद्रप्रभो कर वंदन। भवताप हरो हर वोले, अनवीधे मुक्त फलोले ॥ १२६ ॥ कन थाल भरे दुप दर्प, दे अख यशि चारु समर्प। ले सुर तरु पुष्प अपारा, पूजूं हन काम विकारा ॥ १२७ ॥ जजूं पिंड सुधा हम लेडं, हन दोष क्षुधा गुण गेहं। ले मनमय दीप उद्योतं, धौ ज्ञान जजूं नित जोतं ॥ १२८ ॥ ले धूप सुगंध दसांगं, खेऊं हन कर्म गनांगं। सुरतरुके फल बहु लीहो, शिव द्यौ पूजूं जिन जीहो ॥ १२९ ॥ पूजूं वसु विधि ले अर्घ, पद दे जिनचंद अनर्घ। फुन भव जषपाल पुरंदर, पद लखि तीर्थ करु तुष्ट खर ॥ १३० ॥

दोहा–तीन ज्ञान धारक विभुष, विनयुत हर महाराज।
कर त्रिभुत भक्ता स्तुति, जयो चंद्र जिनराज ॥१३१॥

भुजंगप्रयात–जिनाधीस सर्वज्ञदर्सी अनंत, पिता मात भ्राता तुही ज्ञानवंत। भवाब्धं सु तारे दे धर्मोपदेसं, जयो कर्म शत्रु सु पुंज सुवेसं ॥ १३२ ॥ वृषा धर्म कर्त्यं फलंगुर्मेदस्वं, परम सुख्य कर्ता इमे संकरस्वं। त्रिलोकेप संदोह वंदे क्रमाब्जं, महेसं परस्तुन नामात्र साब्जं ॥ १३३ ॥ सु ध्यार त्रिलोकं सुज्ञान त्रान्यं, तु विष्नुन प्राज्ञै सुखाकर्न अन्यं। चतुर्वक धर्म सुतीर्थं प्रबन्धं, सु ब्रह्मा बखाने नही तोस पर्थं ॥ १३४ ॥ सुरी नृत्त वीस्वं कदा चित्त डोलै, समीरात काले न मेरु हिलोले। वैरागी सु मज्ञीतुमेनात्र न्यान्यं, गुनाश्रंतु सर्वं सुधर्म निधान्यं ॥ १३५ ॥ निर्दोषोध लक्षं यथा यात रूपं, दसे आप रागं विजरसस्तु भूपं। न दोषं जगन्नाथ हेतु त्रिलोकं, तुभक्ति स्वतः क्रित सौख्यं विलोकं ॥ १३६ ॥ दुखी निंद्य दीर्घं लभेदं महीस्ते, मयंकं जिनेन्द्रं नमस्ते नमस्ते। यथा मृग त्रिपातुर्सु-पार्थं जलासं भवदुःखनासं तुमै श्रीवआसं ॥ १३७ ॥ सुनितं जु जीवे त्रिसंध्य अराधं, प्रभुस्तोककाले तुसादस्स लाधं। निरासंतु आसं शिवश्री सुपार्थं, तुमासं लभं जिन्नियोग समर्थं ॥ १३८ ॥ निकारन्तु ही बाधवेहं अनाथं, अनन्ती चतुष्टात्मये विश्वनाथं। अवांछित दातामनो विश्वामित्रं, त्रिपालो सिवश्री कही जो पवित्रं ॥ १३९ ॥

छंद माळनी–इति वदुन प्रामा करत सस्तुत समर्था, मनधर

सुन वृंदा ज्ञान प्राप्ते चतुर्था। इम थुत जुत कीनी स्वरपदां मोक्ष भक्ता। करथित निज कोष्टे सकदेवोघ युक्ता ॥ १४० ॥

चौपाई—ताही समय दत्त नृप नाम, आय प्रभुको कियौ प्रनाम। उर वैराग करे थुत सोइ, धन्न धन्य तुम जीत्यौ मोह ॥ १४१ ॥ यह संसार विपनके मांहि, जीव कुरंग भमै भय पांह। काल अहेडी पाछे लगौ, तुम सरनागत जनतैं भगौ ॥ १४२ ॥ भवदध धार नार दुख भरौ, तुम वड़वानल सम सो हरौ। शिवपुर मग अघ तसकर भर्म, लूटै विषय चौर धन धर्म ॥ १४३ ॥ तुम निरविघन पुचावन जोर, सारथ वाहन दूजौ और। यातैं नमू सु वारंवार, हमहुकु प्रभु [illegible] लार ॥ १४४ ॥ इम थुत कर फिर वस्त्र उतार, नगन रूप मुन मुद्रा धार। ता प्रभाव कर उपजो ज्ञान, मन परजय अरु रिद्धि महान ॥ १४५ ॥ और अनेक भए मुनराय, तिनमैं केइक गणधर थाय। केई श्रावक केई सम्यक रपा, केई अर्जिका केई श्राविका ॥ १४६ ॥

सोरठा—निज निज कोठे मांहि, यथा जोग्य वैठे जु सव। सव सव मन ए चाह, धर्म देसना जिन करै ॥ १४७ ॥

चौपाई—परके मनकी जाननहार, मन परजय ज्ञानी गनधार। तिनमैं दत्त नाम है मुख्य, सो सव मनको जान सरूप ॥ १४८ ॥ जिन सनमुख ठाढो करजोर, सीस न्याय कर प्रश्न निहोर। भो स्वामी त्रिभुवन पर मही, मिथ्या निस अंधियारी छई ॥ १४९ ॥ भूले जीव भ्रमैं तामांहि, हित अनहित कछु

सूझै नहिं। तुम अखंड दीपक अविलोप, ताविन तहां उद्योत न होय ॥ १५० ॥ कलुष धूम्र वर्जित विन तेल, कुनयवर्त्त एकांत सुठेल। पोनकुशादी गम्य न कदा, तुम बालार्क उदय सर्वदा ॥ १५१ ॥ तुम लप मिथ्यातम निस भगी, भव्य कमल-उर आनंद जगी। मोह केत छादत नहीं रंच, ज्ञान दर्सना-वरनी संच ॥ १५२ ॥ सो घन विन फुन अंतराय, तातत अस्त कदाच न थाय। ससि रव घरमें हो दुतिमन्द, राहु घन ग्रस रु अस्त सम्बन्ध ॥१५३॥ इन कर वर्जित सदा अमंद, अद्वितीये दीपक स्वछन्द। तुम चन्द्रप्रभ वचन सुरम्म, ता विन किम हो वैतम भस्म ॥ १५४ ॥ भव्य जीव खेती कुमलाय, तुम धुन वृष्ट विन जिनराय। मिथ्या वाणी वृष्ट चुमास, भव चात्र-भकी जाय न प्यास ॥ १५५ ॥ तुम धुन काया बानी विष्ट, भव सारंग पाय ह्वै पुष्ट। तातैं करुणानिध स्वयमेव, कर उपदेस अनुग्रह देव ॥ १५६ ॥

छं०। आनन जोग कहा ग्रहन त्याग न क्या करिये, नरक पशु सुर मनुप जोनिमें क्यों अवतरिये। अन्ध बधिर विन घ्राण मूक पंगु हो अघतैं, द्रव्य वंत धनहीन लिंग तीनोंको विधतैं ॥ फुनि किहि विध गुर लघु थित धरै भोगहीन भोगी अमित। फुन सुखी दुखी सठ कोन विधि, पण्डित रोगी त्रिना सुत ॥ १५७ ॥ विकल देह लहा, दुखी नीच कुल ऊंच कौन विध। किम भव थित विस्तरै छेद भव थित किम हो सिध ॥ कल्प विषै किम होय इन्द्र कैसै अहिमिंदर, चक्री हल अध

चक्रि समर किम हो तीर्थंकर। इम कर इत्यादिक प्रश्न सब, बरघ्यो उत्तर सु जिनेन्द्र, प्रश्न तुम वच सब संसै हरन, इम सुन मदलन दिनेंद ॥१५८॥ तब वानी बिन अंक विमल गंभीर सु जिनमुख, खिरी मेघकी महा गर्ज सम करन जगत सुख। तालु होठ विन फर्स वक्र सुविकार विवर्जित, सब भाषामय मधुर श्री जिनकी धुन सर्जित। इम यथा मेघ जल पर नचै, नीव ईखादि कर समई। तिम तथा सर्व भाषा मई, श्री जिनवानी पर नई ॥ १५९ ॥

श्री भगवानोवाच।

काव्य–छहो दर्व पंचास्ति काय तत सप्त सुपद नव। जगमें जानन जोग येह जूं जाय सु भ्रम सब ॥ सर्वोत्तम सिव वास फेर नहीं आवगोन जित। जो सिव कारन भाव तेई है ग्रह न जोग नित ॥ १६० ॥ जगत वास दुख रूप तहां भ्रमते दुख पै है। जो कुभाव संसार वृद्ध ते सब है यह ॥ नर्कादिक जे दुष्य पापको फल सब जानों। स्वर्गादिक जे सुष्य पुन्य फल सो अधिकानों ॥ १६१ ॥

दोहा–यह विध प्रश्न समाजको, यह उत्तर सामान।

अब विशेष इनको लिखूं, यथासक्ति कछु जान ॥ १६२ ॥

सवैया ३१–मूल द्रव्य दोय सु विशेष वन जीवाजीव इनिको फलाव सब त्रिलोक त्रिकालमें। चिद जीवाजीव जडहै

सामान रूप कह्यौ सब सत्य जिनमत अनेकांत स्यालमैं ॥ द्रव्य एक नया तम एक एक नय साथ भये बहु मतभेद उपाय अभालमें। ज्यूं जन्मांध जाने नाहिं गज रूप सर्वांग त्यौं एकांती गह एकांग एक पक्ष जालमैं ॥ १६३ ॥

काव्य–स्यादवाद जिन वचन हरन सबता विरोधकौं। सत्यारथ सुख देन हरन संसै विरोधको ॥ सप्त भंग सु सधै द्रव्य जावत जग मांही। सधै वस्तु निर्विघ्न दोस तब सर्व नसांही ॥ १६४ ॥

अथ सामान्य द्रव्यस्वरूप सप्तभंग सूं साधिए है।

सवैया ३१–अपने चतुष्टैकी अपेक्षा द्रव्य अस्तरूप परकी अपेक्षा सोई नास्त बखानिये। एक ही समै सो अस्त नास्त स्वभाव धरैं ज्यौं हैं त्यौं न कह्यौ जाय अव्यक्तव्य मानिये ॥ अस्त वहै नास्ताभाव अस्त अव्यक्तव्य सोइ नास्त वहै अस्ताभाव नास्त अव्यक्तव्य है। एक बार अस्त नास्त कह्यौ जाय कैसे तातै अस्त नास्त अव्यक्तव्य ऐसे करतव्य है ॥ १६५ ॥

सोरठा–जो कछु वस्तु सु द्रव्य है, है अवगाहन क्षेत्रसौं। नातन थितज मधव्य द्रव्य स्वरूप स्वभाव है ॥ १६६ ॥ यह विधिए एकांत पक्ष सु सात भंग भृगरूप मिथ्यात, स्याद्वाद धुज धरै। जैनमत तब मिथ्या भृम पक्ष नसात, स्याद शब्दको अर्थ कथंचित अह विष कुनय हरनको मंत्र। जूं रस करै कुधात कनक तूं, स्याद वाद नय सत्यन अन्त्र ॥ १६७ ॥

अथ सप्तभंगनयूं जीव द्रव्य साधिये है तैसे ही सर्वद्रव्य साधि लेना ।

चौपाई–द्रव्य अपेक्षा अस्त सु जीव, देह अपेक्षा नास्त सदीव । जब जिय देह संगता धार, सो नय अस्त नास्त इकवार ॥ १६८ ॥ अस्त अपेक्षा नास्त अभाव, नास्त अपेक्षा अस्त अभाव । क्यों कहे न जाय एक दर वेद, अव्यक्तव्य भंग है येह ॥ १६९ ॥ निश्चै है फिर कह्यो न जाय, अस्त अव्यक्त अपेक्षा थाय । निश्चै नास्त संग परजाय, कहे दोष लागै अधिकाय ॥ १७० ॥ तास अपेक्षा नास्त अव्यक्त, अस्त नास्त इकवर चिदसक्त । कहे दोष लागत है घना, अस्त नास्त अव्यक्तिम भना ॥ १७१ ॥ यौं ही सप्तभंग सुदर्व, सधत भिन्न भिन्न जे सर्व । या विध स्यादवाद नय छांह, साधो जीव जैनमत मांहि ॥ १७२ ॥ और भांति जे विकलप करैं, तिनके मत दूसन विस्तरैं । वा विवाद मेटनको राव, कहुं यथारथ द्रव्य सुभाव ॥ १७३ ॥

सवैया ३१–जोनसे पदारथको जगमें भाखे जु नाम सोई नाम निक्षेपा है । थापना दु भेदजूं अन्य द्रव्य नाम लेय अन्य द्रव्यकूं सु थापै सोई है ॥ अतदाकार ज्ञान विन खेद जूं कनिता मूरत कर थापिये सो तदाकार थापना निक्षेप ऐसे सुनि द्रव्य निक्षेपा । अगली सुपरजाय रूप आप परनवै सहज सुभाव ऐसो सोई द्रव्य निक्षेपा ॥ १७४ ॥

सोरठा–वस्तु तनो जु सुभाव, तालष प्रघट सु जानना। सो निक्षेपा भाव, सिद्धि द्रव्य इनतै जुदै॥ १७५॥ बहु रिचार पर शानतै, होय द्रव्य परवान। परंपरा लौकिक इक, श्रुत परविछनु मान॥ १७६॥

पद्धड़ी–जो परंपरा भाखै पुमान, सो परंपरा लोकीक जान। जो ग्रंथ मांहि कथनी पवित्र, सो आगमो परवान मित्र॥ १७७॥ जो प्रघट वस्तु सोई प्रतक्ष, फुन सुनो कहुं अर कहुं लक्ष। वा विना सुनो जानै सु कोय, निज ज्ञान मान अनुमान सोय॥ १७८॥

दोहा–बहुरि वस्तु नयसे सधे, मूल भेद नय दोय।
उत्तर भेद सु सत कहे, ताह कथन अवलोय॥ १७९॥

अडिल्ल–द्रव्यार्थक परजायारथक नय मूल दो, नैगम संग्रह जुग विवहार रुजु सूत्र दो। शब्द समभिरूढि अरु एवंभूतजी, उत्तर सप्त ए मूल मिलै न बहुतनी॥ १८०॥

चूलका छंद–नयको अंग सु लेयकर वस्तुकू बहु विकल्प लियै भाखै। सो उपनय त्रिय भेद घर सो विवहार विषै विधि राखै॥ १८१॥

चौपई–प्रथम नाम सद भूत विवहार, दूजै असदभूत व्योहार। त्रि उपचरित्र सदभूत विवहार, इम उपनय त्रिय भेद निहार॥ १८२॥ द्रव्यार्थिक नयके दस भेद, नाम अर्थ ताके विन खेद। कहुं देख नय चक्र सिद्धांत, जाके सुनत मिटै बहु भ्रान्त॥ १८३॥

काव्य–जिय करमादुपाध सैन्यारौ सुध सुगहिये । कहैं सिद्ध सम जेम जीव संसारी लहिये ॥ सो विघोपाध नृक्षेपे सुध द्रव्यार्थिक कहिये । नय द्रव्यार्थिक तनो प्रथम यह भेद सु लहिये ॥ १८४ ॥ गो नवयोत्पत सत्यरूप कर वस्तकु कहना । कह्यो जीव जूं नित्य दुतिय द्रव्यार्थिक गहना ॥ सोय वयोत्पत गौण सत्त सुधद्रव्यार्थिक ठन । भेद कलपना भिन्न सुध द्रव्य भेद सुकलपन ॥ १८५ ॥ जू भिन गुन परजायसे तिज्जिय अभिन सुकहणौ । सो निरपेक्ष सुध द्रव्यार्थिक तीजै गहणौ ॥ कर्मोपाव सयुक्त जीवकू इम अनभवनो । क्रोधी मानी आदि आतमाको जुं कहनौ ॥ १८६ ॥ विघोपमसापेक्ष असुध द्रव्यार्थिक तुरियं । उत्पाद वय ध्रुव युक्त द्रव्यको जु अनभवियं ॥ एक समै मैं जीव तिहुं कर युक्त जु संचम । सत्ता द्रवय सापेक्ष द्रव्यार्थिक सोई पंचम ॥ १८७ ॥ भेद कलपना युक्त वस्तुकू सत्त सु गहनौ । ज्ञान दर्श चारित्र युक्ति जो जियको कहनो ॥ भेद कलप सापेक्ष सुध द्रव्यार्थिक सो षट । गुण परजाय सुभाव जुक्त जूं द्रव्यनकू रट ॥ १८८ ॥

चौपाई–गुन परजाय लिये जू जीव, सोय अनय द्रव्यार्थक सीव । जो सुखभाव द्रव्यको ग्रहै, सैा जु चतुष्टय जू वीय लहै ॥ १८९ ॥ सो स्वः द्रव्यार्थक ववचार, जं परद्रव्य सुग्रहै गवार । अन्न चतुष्टै जूं निय व्यर्थ, सो परद्रव्य ग्राहक द्रव्यार्थ ॥ १९० ॥ सुध सरूपको जो अनुभाय, ज्ञानस्वरूपी जूं चिद्राय । परम भाव ग्राहक द्रव्यार्थ, ए दस भेद प्रथम नय सार्थ ॥ १९१ ॥

दोहा–पर्यायार्थिक षट विधि, सुनो भेद जुत नाम।
अरथ सहित वरनन करूं, यथाशक्ति थित ताम ॥ १९२ ॥

काव्य–जो अनाद अरु नित्त वस्तु परजा अनुभविये। जूं पुदगल परजाय नित्त मेरादिक लहिये ॥ सो प्रथम अनाद नित परजायार्थक ठरनो। आद सहित पर नित्य पणे परजा अनुभवनो ॥ १९३ ॥ जेम सिद्ध भगवान आद जुत अन्त न जाको। स्याद नित्य परजायार्थिक जग कहिये ताको ॥ जो सत्ता विन वयोत्पादयुत वस्तु अनुभवनो। जैसे जीव जु समय समय परजाय पलटनो ॥ १९४ ॥ सो ततखोण सुभाव नित सद परजायार्थिक। सद सुभावयुत अनित असुध परजा इम भाषिक ॥ जूं चिद तीन सुभाव धरें इक समय मोहवरू। सो सत्ता जुत भाव नित असुध परजायरू ॥ १९५ ॥ विधो पाधसूं भिन्न अनित परजाय सुध है। जूं संसारी जिय प्रजायकी न्याय सुध है ॥ विधोपाध विन नित्त सुध परजायार्थिक गन। वीधो पाध कर युक अनित असुध प्रजायन ॥१९६॥ जूं संसारी जीव सु उपजन विनसन जोमन। विधो पाध सापेक्ष नित सु असुध प्रजायन॥ यह षट विधि पर्जायार्थिक नय मूल सुजानों। अब उत्तर नय सप्त त्रिय नैगम नय मानों ॥ १९७ ॥

छपै–जो अतीतमें हुई ताह कह वर्तमान सम, अखै तीज दिन कहै हार लियो रिषप आज इम। काल भूत सो नैगम नयको प्रथम जान जूं, भावी जनमें होइ वस्तु है वर्तमान जूं ॥ ॥१९८। जूं ब्राजमान अरिहंतजी, सो जिम कहिये सिद्ध। सो

होय अगाउ कालमें, भावी नैगम इम प्रसिद्ध ॥ १९९ ॥

पद्धड़ी–जो वस्तु कारण लाग्यो सु कोय, कछु निपजी निपजी लहै सोय। जूं भात पकावै पको नांह, पकनेकी त्यारी इम कहाह ॥ २०० ॥ यह भात पक हुयौ तयार, सो वर्त्तमान नैगम निहार। इम नैगम त्रिय संग्रह सु अव्व, जूं सेना जात विरोध सव्व ॥ २०१ ॥ यह आद भेद संग्रह सामान, फुन अन त्याग स्वै जात जान। जूं सर्व जीव चेतन सु भाव, यह लख विशेष संग्रह प्रभाव ॥२०२॥ इम द्वै संग्रह सुन द्वै विहार, सामान संग्रह विव विहार। जूं जीवाजीव सु कहे दव्व, दुति जो विसेख कर कहे सव्व ॥ २०३ ॥

अडिल–है संसारी भी सु जीव फुन सिद्ध ही, जो वसेख संग्रह विवहार नय विद्धजी। इम संग्रह विवहार दोयक जु सूत्रजी, तुछ पणे द्रव ग्रह तुछ रुजुसूत्रजी ॥ २०४ ॥

सोरठा–जैसैं जो परजाय, समय समय स्थायीक है। बहुर स्थूल कर राय, द्रवको संग्रह कीजिये ॥ २०५ ॥ जूनगाद परजाय, निज निज आयु प्रमाण है, स्थूल रुजु सूत्राय सो इम जुग रुजसूत्र है ॥ २०६ ॥ दोषरहित जो सुध–सब्द कहै सो शब्द नय। मूल तीन अविरुद्ध, उत्तर शब्द जितै नय ॥२०७॥

दोहा–जे हैं असीकर थापना, वस्तु छेपिये अन्न।
को वित्रादिक नामधर, समभिरूढ़ नय मन्न ॥ २०८ ॥

चौपाई–सारथ शब्द नाम जित होय, करइ सुराई सु इंद्र कहेय। सोई एवंभूत नयंत, सर्व आठ इस भेद कहंत ॥२०९॥

अब उपनयको सुन हो राय, सुध गुण सुध गुणी परजाय। सुध परजाय सुध उपचार, सो सदभूत सुध विवहार ॥ २१० ॥ जो असुधगुणी गुण असुध, असुध प्रजा परजाय असुध। सो असुध सदभूत विवहार, यह ऐसे दो भेद निहार ॥ २११ ॥

कवित्त–जो सुजातमैं भेद करै जू पुदगल बहु परदेस बखान। पुद्गलकी परमाणु जसे मांहोमांहि सुजाती जान॥ इक लक्षन सेती यो कहिये सो विव असद भूत विवहार। बहुरि विजातीपणो असत्यार्थ मत ज्ञानावर्णादि विचार॥ २१२ ॥ ज्यों ए पुदगल ज्ञान विजाती असदभूत विवहार। विजात ज्ञेय विषैं जू ज्ञान महकसो असत्यारथ सुजात विजात ॥ ज्ञेय नाम आतम अजीव पण तातैं आतम ज्ञेय सुजात। इम उपनय विधी तीजो जानो असद भूत विवहार दुजात ॥ २१३ ॥

सवैया ३१–जैसे उपचार कर स्व जाति ग्रहण होय पै असत्यारथ मानै जू पुत्रादि मेरे हैं। मैं हुं पुत्रादिक सो पुत्रादिक जीव पणो स्व जाती है मेरे भाखै सोई झूठ टेरे हैं॥ उपचरित स्व जाती असदभूत व्योहार दूजे उपचार कर विजाती कू हेरै है। जैसे वस्त्र भरणादिक सो अजीव विजाती है मेरे मानै सोई झूठ झूठी आसा धरै है॥ २१४ ॥

दोहा–सो विजात उप चरित फुन, असद भूत विवहार।
जिय दुजात उपचरित कर, असत्यार्थ विव धार ॥२१५॥

छंदचाल–जू नयर देस जग मेरो, इन दोऊ विजाती हेरो। सो झूंठा कहै सुमेरा, सु असत्यार्थ विव हेरा॥ २१६ ॥ जुग

जातुप चरित सु जानो, सदभूत विवहार न मानो। इम तीन तीन है पहले, सब उपनय वसु विध गहलै ॥ २०७ ॥

सोरठा—तत सत जीवाद, दर्सनाद बहु भेद फुन। नय-न्तै जो साध, सिद्ध होय सब दर्व ही ॥ २१८ ॥

अथ जीव निरूपण गाथा।

जीव नाम उपयोगी, करता हरता सुदेह पर मनं। अब सब रूप अरूपी उर्ध गत सुभाव नव भेदं ॥ २१९ ॥

अथ जीव प्रथमभेद वर्णनं।

चौपाई—च्यार भेद व्योहारी प्रान, निहचै एक चेतना जान। जो इनसूं नित जीवत रहै, सोई जीव जैन मत कहै ॥ २२० ॥ आयु अक्ष पण आण रूपाण, बल त्रिय मूल चार ए प्राण। उत्तर दस विध सैनी जिंत, दसौं प्राण धर जीवै तीते ॥ २२१ ॥ मन विन जीव प्रान नव ठाठ, श्रोत्र विना चो इंद्री आठ। द्रगविन धरै ति इंद्री सात, घट विन प्राण वि इंद्री जात ॥ २२२ ॥

सोरठा—रसना वच विन चार, एकेन्द्री के प्रान ए। तीन लोक तिहुंकार, या विध जीवें जीव सब ॥ २२३ ॥ मुक्त जीवके प्रान, सुख सत्ता चित बोध मय। जीवपनो इम जान, दुतिय भेद उपयोग सुन ॥ २२४ ॥

अडिल—दोय भेद उपयोग सुदरसन तुरि विधा, चक्षु अचक्षुर अवध रु केवल जिय लघा। दुतिय ज्ञान वसु भेद कुमत

श्रुत अरु पजु, फुन त्रिय सुभ मन परजय केवल लख पजू ॥ २२५ ॥

दोहा–मत श्रुत एजु परोक्ष है, सुनो भेद परवान।

जो सर्वारथ सिद्धमें, बाहर वंस पुरान ॥ २२६ ॥

अडिल–सुनो पंच विध नाम, प्रथम मत बोधजी। मति स्मृति संज्ञा चिंता मिन बोधजी. इंद्री मन संजोग बिना नहीं होतजी। सो त्रिय सत छतीस भेद उद्योतजी ॥ २२७ ॥

छंद चुलका–चख रु वस्त संयोग जुग, जभी पदारथ दरसन पावै। फिर ताको कछु ग्रह नहीं, सोय अवग्रह नाम कहावै ॥ २२८ ॥

दोहा–जेम वृतै नेत्र कर, ग्रहिए यह कछु स्वेत।

इम लख वस्त स्वरूप, वाह सोय अवग्रह हेत ॥२२९॥

चौपाई–तिस वसेख सो जानौ चहै, यह सो रचे तप कि अहै। वग पंकत कि धुजा पंकती, ऐसो ग्रहन सुईहा मती ॥ २३० ॥ जानै वस्तु वसेख यथार्थ, यह बग पंकत ही सत्यार्थ पंख लह उड ऊंचै जाय, नीचै आवै धुज किह भाय ॥ २३१ ॥ ऐसे ठीक ग्रहन आवाह, फुन कालांतर भूले नांहि। यह बग पंकत लखी प्रभात, इम धारणा मिली चव स्यात ॥ २३२ ॥ ए च्यारौं बारातै गुनों, तीन बाराको भेद जु सुनौ। बहु कहिए बहु वस्त सु जान, अबहु थोडेको परमान ॥ २३३ ॥ बहुविध कहिये द्रव्य अनेक, अबहु विध कहिये द्रव एक। क्षिप्रहु सीघ्र अक्षि अविलंब, ये पद नाम

अर्थ अवलंब ॥ २३४ ॥ निश्चत निकलो पुद्गल नाम, अनि-श्रत अनि निकसो ताम। तुक्त उक्त कहना इम जान, अथाय अनुक्त प्रमान ॥ २३५ ॥ ध्रुवस्तु यथारथ ग्रहन निरंत्र अध्रुव अपद ग्रहन इम मित्र। बहोत वस्तुका किंचित ज्ञान, बहुत अवग्रह ताको मान ॥ २३६ ॥ बहु सन्देह रूप जानना, सो बहु ईहा विध मानना। जो बहुको निश्चै जानियै, बहुत अवाह सोइ मानियै ॥ २३७ ॥ कालांतर बहु भूलै नाह, सोय धारना बहोत कहाःदि इम बारातै गुनकर लिये, अवग्रहादि अठतालिस भये ॥ २३८ ॥ बहु स्पर्शतैं जानै तुथ, सु बहु स्पर्श अवग्रह दय बहु स्पर्शतै लख संदेह, सो बहु स्पर्श ईहा भेद ॥२३९॥ बहु स्पर्शतै ज्ञान यथार्थ, सो बहु स्पर्श अवाह सु सार्थ। बहु स्पर्शतै भूल न कहा, सो बहु स्पर्शन धारन यहा ॥ २४० ॥ इम पंच इन्द्रीय मनसू गनै, अठतालीस उपर जे भनै। सर्व अठासी दोसै भए, बहुरि अवग्रह दो विध ठये ॥ २४१ ॥

दोहा-अघट अवग्रह होय जित, है कुछ द्रव्य सु एह।
ऐसा जहं कुछ ज्ञान है, अर्थावग्रह एह ॥२४२॥
होय अवग्रह अप्रगट, है कछु वस्तु जु एह।
ऐसो ज्ञान जहां नहीं, विजन विग्रह तेह ॥२४३॥

सवैया ३१-जैसे कोरे मृतकाके भाजनमैं जल बूंद एक दोय तीन डारै कछु नांह दर्सतै। फुर वापै बार बार पाणी पड़ गिला होय तैसे देह जिभ्या नासकान त्रिय फर्सतैं ॥ २४४ ॥

दोहा-मन दृग केम परस विना, होत दूरतै ज्ञान।
यातै मन दगकै कह्यौ, अर्थावग्रह ज्ञान ॥ २४५ ॥

चूलिकाछंद–तन रसना घ्राण, श्रवण सपरस विना न ज्ञान हुनौके।
विजन विग्रह प्रथम ही, फिर अर्थावग्रह होय तिनकै॥२४६॥

चौपाई–फुन फर्शादिक इंद्री चार, बहु आदिकतें गुण अठतार। पुर्वे अठासी दोसै जोय, मिले तीनसै छत्तीस होय ॥ २४७ ॥ यह मत ज्ञान तनो विस्तार, आगे कहैंगे श्रुत निरधार। अवधादिक ऊपर लख लीव, इम उपयोग धरत है जीव ॥ २४८ ॥

अथ कर्त्ता वर्णनं।

कल्पित असद् भूत व्योहार, तिस नय घटपटादि करतार। अनुपचरित अयथारथ रूप, ता नय कर्म करे चिद्रूप ॥ २४९ ॥ जब असुध नेहश्च नय धरै, तब जिय राग दोषकूं करै। सुध निश्चै नय का यह जीव, सुध भाव करतार सदीव ॥ २५० ॥ जबसो प्रगटै सुध सुभाव, तब चेतन हो शिवको राव। जो सब नयतै साधै जीव, तो ईम कथन न आवै सीव ॥ २५१ ॥

अथ भोक्ता वर्णनं।

प्रानी सुख दुख या जगमांहि, सुगतै निज तन विष फल लाहि सो व्योहार कह्यो भगवान, निहचै सुख भुगतै शिव थान ॥ २५२ ॥

अथ देह प्रमाण वर्णनं।

दोहा–देह मात्र व्योहार नय, कह्यो चंद जिनराय।
नेहचै नयकी दृष्टिसुं, लोकप्रदेशी थाय ॥ २५३ ॥

दीरघ तन जब जिय धरै, तब विस्तार लहंत।
सूछम देह लहै सु जब, तब संकोच गहंत ॥ २५४ ॥
जैसे दीप प्रकास अति, भाजन मित मरजात।
समुद्घात विन फुन सुनो, समुदघात अहलाद ॥ २५५ ॥

अथ समुद्घात वर्णनं।

तैजस कारमानस जुत, बाहर जीव प्रदेस।
निकसै तन छोडै नहीं, समुद्घात इम भेष ॥ २५६ ॥

चौपाई—सात भेद सु प्रथम वेदना, दुतिय कषाय त्रियक्कुर बना। मारिनांत तुरी तेजस पंच, हारक षट केवलि सप्तच ॥ २५७ ॥

अथ वेदना समुद्घात वर्णनं।

कवित्त—काहुके अत्यन्त आमय हो ताकी भेषज नांह नजीक। सो जीवनकी तजै आस निज होय आर बल अधिकसु ठीक॥ जहां होय भेषज तसु आमय सांत हेत तसु तास प्रदेस। निकस जीवके जाय रूपसैं सोय वेदना समुद्र सुभेस ॥ २५८ ॥

अथ कषाय वर्णनं।

कोउ अधिक सु निर्बल दीपत ताकै होय कषाय प्रचंड। ताप्रदेस जब बाहर निकसै तब ही करै सत्रु सतखंड। अधिक बली जो होय सु तौभी हारै तापै लहै सुदंड॥ दूजो समुद्घात है या विध नाम कषाय असुभ विध मंड ॥ २५९ ॥

अथ वैक्रियक नाम समुद्घात वर्णनं।

होय आद अर असंख्यात लंक देह बनावै नाना रूप। जुरे मूल तनसैं जु मिश्रसो मूल शरीरमांहि चिद्रूप ॥ इम सुर

नारक करै वैक्रिया ऐसी शक्ति आतमा मांह। यही कुर्वना तीजी जानो भेद बखानो श्रीगण नाह॥ २६०॥

अथ मारणांत समुद्घात वर्णनं।

जीव रहै याही तनमांहि मरती बार इसके अंस। निकस बाह्य परसै अगली गत बांधो जिसने जैसो बंस॥ सो मरणांत चतुर्थी जानो सुन तेज पंचम विष होय। असुभ तथा शुभ होवे मुनके प्रथम असुभ विव सुनिये जोय॥ २६१॥

अथ तेजससमुद्घात दोय रूपमैं प्रथमभेदवर्णनं।

मुनकै कछु कारन लह उपजे क्रोध न थाम्यो जाय लगार। यह औसर है तेजस तनको वाम कन्धसे निकसि विथार॥ बारै जोजन लम्ब व्यास नव ज्वालमई जिम अरुन सिंदूर। बावत छिनमैं भस्म करे सब फिर मुन भस्म करै अघ पूर॥ २६२॥

अथ तेजससमुद्घात द्वितीयो वर्णनं।

दुरभिक्षादि रोग कर पीडित जगत जीव लख करुणाधार। तब मुन दक्षन करतैं निकसैं शुभ आकृत पूरब वत सार॥ रोग शोक भय दोष निवारि दुर्भिक्षादिक दहे सब कोय। फिर निज थान प्रवेस करत है पंचम समुद्घात है सोय॥ २६३॥

अथ आहारक समुद्घात वर्णनं।

पदको अर्थ विचारत मुन जब मन संसै उपजै तेहवार। तब तहां चिंता करत तपोधन कैसे यह संसै निरवार॥ भरत-क्षेत्र आदिक भू मांही अब ह्यां निकट केवली नांहि। तातै

करिये को उपाव अर विन भगवान मरम किम जाय ॥२६४॥
तब वा मुन मस्तकसै निकसै आहारक पुतला है सोय । इक कर परमित स्फटिक वरन दुति तहां जाय जहां केवली होय ॥ करै विहार केवलि बिन वपू पुतला सोभित थित कर रहै । ता मस्तकसे और पुतला निकसे मिश्र अहारक वहै ॥२६५॥ तहां जाय जहां जाय केवली दरसन करत मिटै सन्देह । आ पुतला पुतले मे मावै सो पुतला मावै मुन देह ॥ षष्टम समुदघात है या विध मुनके होय छठे गुणथान । सप्तम होय केवली के फुन समुदघात सो सुनो बखान ॥ २६६ ॥

अथ केवली समुदघात वर्णनं ।

वाक्ष प्रदेस कटे संयोगी जिनके अलख रूप समयाठै । पहले समय सु होय दंडवत राजू मित चौरस षट आठ ॥ खंग द्वितीयमें फैले सो इम जू आगल सु कपाट कहाय । त्रितियै फल भरै कीने सब लोय प्रतर फुन लोक भराय ॥२६७॥ पंचमलोक भरत संकोचै षष्टम प्रतर संकोचै सोय । सप्तम समय संकोचै आगल अष्टम दंड संकोचै जोय ॥ वेदनि नाम गोत्र बहु वाकी आयु तुछ सो करै महान । असंख्यात गुनी होय निरजर प्रथम समयादिक आठौ थान ॥ २६८ ॥ नौमी समय मुक्तिकूं जावै करै केवली या विध जान । मारनांत आहारक दोनौ एक दिसा गत तिनकौ मान ॥ बाकी पांच रहे सो सब ही दसौ दिसा गत कहे जिनेन्द्र । सो विध गोमट-सार विषै लख समुदघात कहि नेम मुनेन्द्र ॥ २६९ ॥

अथ संसारी जीव वर्णनं।

चौपाई—दुविध रास जगवासी जन्तु, थावर जंगम रूप कहंत। उपर थिर भाषै विध पांच, चार जात जंगम सुन सांच॥ २७०॥ चलत फिरत दीखै सु थोक, संख सीप कोडी कम जोक। दुचख इत्यादि तियन्द्री सुनो, चींटी डांस कुंथ घुन मनो॥ २७१॥ माखी माछर भृंगी भृंग, चख इत्यादि चव सुनो पंचंग। सुरनर नारकि पशू कितेक, ए सब त्रस थावर विघटेक॥ २७२॥ तिन जीवनकी संख्या सुनो, वीर पुरान देखकर मनो। असंख्यात पच इन्द्री पशू, सब गुने सु असैनी तिशू॥ २७३॥ तैसे ही विकलत्रिय जान, फुनि त्यो थावर चतुक प्रमान। वनस्पती प्रतेक है जिते, सब देवन सम संख्या तिते॥ २७४॥

दोहा—तातैं नंत गुने इतर, साधारन त्यौं निरथ।
जीव माघवी नर्कमें, सर्व संख पर मित॥२७५॥

सोरठा—आगै छहो सुथानमें, संख संख गुने जान।
सनमूर्छन है संख मित, मानुष गति परवान॥ २७६॥

काव्य—सात रु नव जुग दोय आठ इक षट जुगम पण। ऐक चार जुग षट चार त्रिय तीन सम पण॥ नव त्रिय पण तुरि तीन नव रु पण नम। त्रितुरित्रि षट इम गर्भज उनतीष अंक नर इकतिय जुगवद॥ २७७॥

सोरठा—सब सुर चतुर न काय, इकसो ठावन अंक मित।
कोडाकोड कहाय, द्वादस सार्द्ध पल अर्द्ध कच॥ २७८॥

चौपाई–इस संसारी सब विध जोय, जगमें भ्रमत सदा दुख भोय। जो कोऊ जीव करै विध अंत, सो सिव थिर लहै सुख्य अनंत ॥ २७९ ॥

अथ सिद्ध जीव वर्णनं।

अडिल–अष्ट गुणातम रूप कर्म मल मुक्त है, थित उतपति विनास धर्म संयुक्त है। चर्म देहमैं कछुक हीन परदेस है, लोक अग्र पुर बसै परम परमेस है ॥ २८० ॥

अथ सिद्धों विषै उत्पाद व्यय ध्रुव वर्णनं।

सवैया ३१–अथिर अरथ परजाय हानि वृध रूप तिस नय सिद्धनमें वयोत्पाद ध्रुपधै। त्रिविध प्रणित धरै ज्ञेय ज्ञान तदाकार योंभी सिवपद मांहि वयोत्पाद ध्रुपधै ॥ तथा मो प्राणि तनसौ मद्र सिव परजाय सुभाय अचल सदा योंभी तीन हु सधै। सिव नंतानंत सब ताके नंतानंत भाग अभव्यकी रासि एती जगमांहि ध्रु लधै ॥ २८१ ॥

अथ अमूर्तीक वर्णनं।

दोहा–पंच वरन रस पंच जुग, गंध फर्स वसु वीय।
इनमें एक न जीवकै, इस अमूर्त्त जणीय ॥ २८२ ॥
जगमैं बंध संजोग सुं, छुटो न विध वपराय।
असदभूत व्योहार पख, मूरतवंत कहाय ॥ २८३ ॥

अथ उर्धगमन वर्णनं।

चौपाई–प्रकृति स्थित अनुभाग प्रदेस, इसी बंध विन

आतमदेस। करगत उर्ध सरल इक समय, लोक अंत मांहि जिय निवसय ॥ २८४ ॥ भू अल तुंब लेप त्रिन उर्ध, रंडबीज खिल डोडी मूर्द्ध। तथा अग्नि सिखस सहज सुभाव, बंध रहित त्यौं जीव लखाव ॥ २८५ ॥ जबलौं चहुं विध बंधंसु बंधो, सरल वक्र गत तबलौं सधो। विदिसामें नहीं जाय लगार, जीवत तई मनव अधिकार ॥ २८६ ॥

अथ अजीव तत्व वर्णनं।

पुद्गल धर्म अधर्म अकास, जम सु अजीव तत्तपण मास। दो विध पुद्गल अनुस्कंध, ए रूपी चव रूप न बंध ॥२८७॥ छेद भेद बिन अनु अविभाग, अलाग्रादसे सु पदन त्याग। आद अंत बिन सब्द न बास, कारण भूत शब्द पयमास ॥२८८॥

छपै-धूमल पावक वाय सबनकूं हेत रूप वर। बहु विध कारन पाय पलट बरनाद तुरत धर ॥ बरन पंचरस पंच माह इक इक ही हो है। दोय गन्धमें एक फर्ष वसुमें जुग जो है ॥ इक परमाणुमें पंच गुन। सात पंचमें जानिये ॥ सब वर्नादिक जे बीस हैं। ते गुन जात बखानिये ॥ २८९ ॥

चौपाई-खण्ड किये न मिले अति थूल, खण्ड किये मिल है सो थूल। देखत थूल ग्रह्यो नहीं जाय, द्रग बिन विसय चवाक्ष सुनाय ॥ २९० ॥ गमन पणाक्ष अग्र विध पिंड, इम पण सूक्ष्म अणु अखण्ड। इम षट विध पुद्गल सुख गोन, इम निराधार लोक त्रिय भोन ॥ २९१ ॥ अरु पदोप इन षटको भेद, धर्मादिक चारौं बिन छेद। उपर देख सु इतन उचार, सो

फुनकछु होय उर धार ॥ २९२ ॥ इक जिय पण अजीव षट दर्व, कम विन काय पंचास्तत सर्व। जीव धर्म अधर्म देस त्रिजान, असंख्यात सो लोक प्रमान ॥ २९३ ॥ नभ अनंत परदेस धरंत, पुद्गल संख असंख अनंत। कालाणु इक धरे प्रदेस, यातैं ताकै काय न लेस ॥ २९४ ॥

कवित्त–शिष्य पूछै विन काय काल क्यौं : क्यौं पुद्गल परमाणु सकाय ॥ तस्योत्तर असंख्य कालाणु भिन्न २ जग मध्य समाय। आपसमें न मिलै सु कदाचित यूं तन वतन काल कहाय ॥ रूखै चिकने मिलै प्रदेस हो। पंचरूप पुद्गल सु सकाय ॥ २९५ ॥

अथ आकाश रूप तथा शक्ति वर्णनं ।

जितने मान एक अविभागी परमाणु रोकै आकास। ताकौं नाम प्रदेस कह्या है देय सर्व दर्वनको वास ॥ तहां एक कालाणु निवसै धर्म अधर्म प्रदेस निवास। रहै प्रदेस अनंत जीवके पुद्गल पंद लहै अवकास ॥ २९६ ॥ ह्यां प्रश्नोत्तर धर्म अधर्म रु नभ चिद चार अरूपी आइ। सो सब फुनरूपी पुद्गल बहु क्यौं मावै नभ दे सकै मांहि ॥ ज्यूं इक घरमें जोय दीप बहु सहज प्रकासन बाधा रंच। त्यौं इक नभ प्रदेसमें निवसैं निराबाध पुद्गल बहु संच ॥ २९७ ॥

अथ आस्रव वर्णनं ।

चौपई–कर्मागम आस्रव सो जान, दो विध भावरु दर्वित मान। मिथ्या अव्रत जोग कषाय, जुत परमाद भाव

चिद राय ॥ २९८ ॥ सो भावाश्रवके अनुसार, ढिग वरती पुद्गल विह वार। आवै कर्म भावके योग, सो दर्वित आश्रव अमनोग ॥ २९९ ॥

अथ बंधतत्व वर्णनं।

पद्धड़ी—रागादि भावसैं बंधै जीव, सो भाव बंध जानो सदीव। छाये चिदपैं बहु विध पुगल, तिनसूं नयै बंधै सु दर्व जान ॥ ३०० ॥

अथ संवरतत्त्व वर्णनं।

आश्रव सु विरोध न हेत भाव, सो जान भाव संवर सु भाव। जो दर्वित आश्रव रोध रूप, सो कह्यो दरव संवर सरूप ॥ ३०१ ॥ शुभ वर्तीके वृत्तादि चर्न, पापाश्रव कारनको सु हर्न। शुधवर्तीके आचर्न एह, शुभ अशुभ शुभको हरन येह ॥ ३०२ ॥

अथ निर्जरातत्त्व वर्णनं।

दोहा—तप बल विध थित लह तथा, जिन भावो रस देत।
खिरै भावसो निर्जरा, संवरादि खिप हेत ॥ ३०३ ॥
बंधै कर्म छुटै सु जब, दर्व निर्जरा होय।
यों लख जो रुचा करै, सम्यकदृष्टी सोय ॥ ३०४ ॥

अथ मोक्षतत्त्व वर्णनं।

जो अभेद रतनत्रयै, भाव भावको मोष।
जीव कर्मसूं रहत जब, दर्व मोष निर्दोष ॥ ३०५ ॥

चौपाई—ए विध सप्त तत्त्व वर्नये, पुन्य पाप मिल नव पद भए। दर्व भाव विध दो दो भेद, अरु ताको फल सुन विन खेद ॥ २०६ ॥

पद्धड़ी—पूजाद विविध सुभ रूप भाव, सो भाव पुन्य विध जान राव। तिस रूप क्रिया जब करै कोय, सोई दर्वत विध पुन्य होय ॥ २०७ ॥

चौपाई—जो संसार विषै सुख सार, नर सुरगत सुख सहज विथार। सो फल पुन्य कलपत रु सार, यातैं पुन्य करो निरधार ॥ २०८ ॥

पद्धड़ी—हिंस्यादि विविध अघरूप भाव, सो भाव पाप विधको प्रभाव। तिस रूप क्रिया जब करै जीव, सो दर्वत विध अघ तज सदीव ॥ २०९ ॥

चौपाई—जो संसार विषै दुख जात, पशु नर्क गतमें बहु भांति। सो फल अघ बबूल तरु सूल। यातैं पाप करौ मत भूल ॥ २१० ॥ पुन्य पाप आश्रव तत मांहि, यातै तत्त्व सात ही कहांहि। सुर अरिहंत सुगुरु निरग्रंथ, दया धरम धर चलो सुपंथ ॥ २११ ॥ यह सम्यक व्योहार सु जान, निहचै आप आपमें मान। पर पर जान सु त्याग करेह, सो सम्यकको भेद सुनेह ॥ २१२ ॥

उक्तं च।

दोहा—समकित उतपत चेहन गुन, भूसन दोस विनास।
अतिचार जुत अष्ट विध, वरनूं विवरन तास ॥ २१३॥

अथ सम्यक नाम यथा।

चौपाई—इस प्रतीत अवस्था जास, दिन दिन गीत गहै सम ताप। छिन छिन करै सावधै जुध, समकित नाम तुरिय अविरुध ॥ २१४ ॥

उतपत यथा।

काललब्ध है चहु गतमांहि, सहज नियोग रसु गुरसहाइ। भव सैनीके हों विध चार, लह यह लब्धि मिथ्यात मंझार ॥२१५॥ चार लब्ध लहि बहुवर आप, कर्णलब्धि विन होन कदाप। सो है तीन प्रकार सु जान, अधो अपूरव अनिव्रित मान ॥ २१६॥

अथ अधोकर्ण यथा।

कवित्त—समकित सनमुख होय जीव अब ता फिर भाव होय मिथ्यात। काक नेनवत जीव एक है दग गोलकवत भाव दुभांत ॥ वाजेसैं जन आगै जावै पीछेको डर फिर फिर झांक। वा पिछलो अभ्यास याद रहै त्यौं ही अधो करणकूं ताक ॥ २१७॥

अथ अपूर्वकरण यथा।

काल लब्ध लह भाव अपूरब जन्मदलिद्रि जूं चक्री होय। तथारकं चितामण जैसै त्योंह अपूरब कर्ण सु जोय ॥ एकोदेस होय ऐठे पइ संपूरन हो अष्टम थान। समय समय प्रति भाव धरत इम अग्नि संजोग यथा त्रण जान ॥ २१८ ॥

अथ अनिविरतकरण यथा।

दरशन मोह करै उपसम जब तब अनि विरतकरन गह

सु जुहै। जैसे वैरी कोऊ बांधे मनमें अधिक प्रमोद गहै जु॥ अथवा मोह रिपु कुंछय कर होय निचिंत जीव नृप ज्ञान। एकोदेस जु हो मिथ्यातमें निहचै हो नोमें गुन ठान॥३१९॥

दोहा—अन्त महूरतमें त्रय. कर्न मांहि शुभ भाव।

होय समय प्रति कथन यह, गोमटसार लखाव॥३२०॥

चौपई—जो सम्यक् सम मुख अनुसरै, सो ए तीन प्रथम गुन करै। पुन रु अष्टम ठाणे गहै, सो दोऊ श्रेणी मग लहै॥ ३२१॥ स्वयं परमर दह निसन्देह, विन छल सहज त्रिलछन एह। वात्सल दया सजन निज निंद, सम वैराग भक्ति शुभ वृन्द॥ ३२२॥ एवसु गुन सुन भूसन उक्त, चित प्रभावना भाव सयुक्त। हेय उपादे वांण स्पष्ट, धीरज हर्ष प्रवीन सु पष्ट॥ ३२३॥ दोष पचीस मल मद वसु अष्ट, त्रिमूढत अनायतन षष्ट। ज्ञान गर्व मत तुछ वच दुष्ट, रुद्र ध्यान आलस पण नष्ट॥ ३२४॥ लोक हांस रुच भोग अपार, अग्र सोच निज आयु विचार। कुश्रुत भनत मिथ्याती सेव, तज अतिचार पष्ट विध एव॥ ३२५॥ दर्स मोहनी चव नंताउ, चर्ण मोहनी तीन मिथ्यात। प्रथम क्रोध मान छल लोभ, मिथ्या समय प्रकृत त्रिक छोभ॥ ३२६॥ अनुक्रम कर इम सातौं हनी, सो सम्यक गुरनो विध भनी। वेदक चार क्षयोपसम तीन, उपसम छायक इक इक चीन॥ ३२७॥

पद्धड़ी—खिप चारो सम जुग एक वेद, सो प्रथम क्षयो-

पसम वेद भेद। खिय पांचों पसम इक इक रुवेद, सो तुरीय क्षयोपसम वेद भेद ॥ ३२८ ॥

दोहा–खै षट एक उदै त्रियै, छायक वेदक सोय।
षट उपसम इक उदय तुरि, उपसम वेदक होय ॥ ३२९ ॥
चार पिवै त्रिय उपसमै, पण खय उपसम दोय।
षट खय उपसम एक ही, खय उपसम त्रिक होय ॥ ३३० ॥
सातो ही उपसम करै, फुन सब छय कर तार।
उपसम छायक दोय इम, नो विध सम्यक धार ॥ ३३१ ॥

छै–नाम चार विध उतपत चार सु तीन करण कर। त्रिय लक्षन गुन आठ षट भूषन श्रृङ्गार मर ॥ तजो दोष पच्चीस षट अतिचार निवारो। होय नाम विध पंच तासकी पक्ष विहारो॥ तब नो प्रकार होवै सम्यक सकल तिहत्तर भेद गिन ॥ यह निकट भव्यके होय इट, श्री चंद्रप्रभ एम भन ॥ ३३२ ॥

चौपई–अब सुन प्रश्न मालको उत्र, सुभ गाव कावै सर्वत्र। जा विध भाषी चंद्र जिनेन्द्र, सो उचरो गुणभद्र मुनेन्द्र ॥ ३३३ ॥ जानन जोग सु जीवाजीव, आश्रव बंध सु तजो सदीव संवर निर्जरा मोक्ष सु तीन, एही ग्रहन जोग परवीन ॥ ३३४ ॥

कवित–अनन्तानके उदय अहंकार दस तुरी कृष्ण लेश्याके भाव। पंच पापमें हो प्रवृत्त अति विषयन लोलप वेर अथाव ॥ देव धरम गुरुमै सु भेद कर कुमत चलावे अति हावभाव। रौद्र ध्यान जुत मरन करै जो सोई जाय नरकमें राव ॥ ३३५ ॥

चाह मोल इच्छोम वस्तु पर निज तन सुदृढ़ तनी कर आरत। अथवा पाद अपाद विचार न खान पानमें विवेक न धारत॥ सुन परमाद दया विन वर्तन मायाचार बहुत विस्तारत। सो पर भवनें पाप पश्चतन भो भव ऐसै सु गुरु उचारत ॥२३६॥ सम्यक् धार भजे जिन तापर वंदन अस्तुत हर्ष करे हैं। बा तपसी लग है बहु संयम दीन दुखीपै दया धरे हैं॥ चार प्रकार मच वैयाव्रत्त सुश्रुत भाप सुनै सु धौ है। सरल सुभाव अज्ञान तथा जुत सोमर सुर्ग विषै उधरै है॥ २३७॥ अल्पारंभ परिग्रह धारै सरल चित्त फुन रहै उदार। षट्कायाकी दया सु पालै दीन दुखी पपै अगार॥ जिन पूजे रु सुपात्र दान दे जग भयभीत रहै। सु त्रिवेक विषय कषाय मंद सो मरकै नरभव पद पावै सु वसेक॥ २३८॥

काव्य–अनभवमें अनजीवनके दग फोड़त दुख दय दुखित नैन वा अन्ध मुदित लख अन अनमोदय। हांसी कर बहुकाय सु छल बलकर धनाद हर, इत्योदय अघ होय अन्ध अथवा त्रिपाक्ष धर॥ २३९॥

छप्पै–त्रिकथा सुन हरषन्त सतकू असत कहै तक असत अपत ही जान सत्त विसवाद उदय एक। सुन दुरजन दुरवचन कलको सरवस हरयो॥ बधर जान दुर वचन मनै फुन हांस जु कारो वा न्याय वचन सुन अनुनकर। कांक्षी प्रत उत्तर न दे। मानाद उदय जो एम कर, बधर सुहो चतुराक्ष दे॥२४०॥

चौपाई–परकी घ्रान कटावे काट, लखन कटो मुद करे

सु माट। तसु पापोदित हो तिन भ्रम, अचंभा होय सुइन्द्री जान ॥ ३४१ ॥

छप्पै—परमुख मूंद रुख मारे दुखकन कहै फुन। असत गिलैं कर बुरो न वनैं सद वच सुन ॥ रसना लोलुप अभख भख वा परके काढै। मूरख देख वहक्राप हांस कर मारै लाठे ॥ अरु अप्रछिन्न दुर वचनमें मार देय सगुझै नसी। अति मुद निज उदय समू कहो। फुन थावर हो मुष लछनसो ॥३४२॥

काव्य—परभवमें अनजीवनके पग छेद करे हो। हरे चित्त वा पंगु देखि दुर्वच उचरे हो ॥ अन पग छेद देख मुदित कर हास मकायो। सो कर्मोदय पंगु होय वा थावर थायो ॥३४३॥

चौपाई—निरधनकू [illegible]न दे मुद भरै, निरवित्तकै धन हेना चहै। निरधन धनी होय [illegible]न खुसी, यौं धनवन्त हो अघू तुखी ॥ ३४४ ॥

काव्य—परधन हरवा लूट ठगै छीनै छल बल कर। लख धनवन्त अभाव करै मुद निरधन लख कर ॥ नाना निमित्त रु भाव चहै अन निरधन होना। सो सो निमित्त लहे वित छय हो रंकन मीना ॥३४५॥

कवित्त—महला संग भला जानै फुन तिय सम चेष्टा कर मुद ठान। रह कामनिमें मोहित वस कर जगत रावका रूप सु जान ॥ चाह काम जल सींचैं नित प्रत माथा वेल प्रफुल्ल महान। इत्योदय होवै परभवमें पराधीन तिय वेद प्रमान ॥३४६॥

गीता छंद—हो काम चाह सु मंद जाकै [illegible] सु मन्द

बिना अरु मंद विषय कषाय धारै सुव्रत तप जज गुर जिना ॥ जो त्रिय नपुंसक देख चेष्टा हरष मन ना हो कदा। सो लहै ताके वेद पुरस जु यो करो तुम भी सदा ॥ ३४७ ॥

सवैया ३१—नर नार रूप करै नारी नरको सुमरे। जगजनकूं सुमोहै स्वांग लख हरषै ॥ जब रीतै षंड करै षंड कला लख सुर षंड चेष्टाके सुभाव निज मांहि करषै। फुनि परनरनार तिनको मिलाय कार सीलवेलको प्रहार रूप नग परषै॥ षंडवेद किमकार ऐसो जीव दुरचार मर षंड वेदधार मन दुष मारषै॥ ३४८॥

कवित्त—त्रस थावरकी दया सुपाले दीन दुखीकूं दे चव दान। तथा शक्ति बिन भावत कोमल दुषी देषकै दुष मन आन॥ चार संघकी भक्ति करै अति जिन पूंजे थुत वंदन ठान। विषय कषाय मंद वैरागी सो परभव लहै आयु महान ॥ ३४९ ॥ त्रस थावरकूं हनै दया बिन दुराचार जुत विषय कषाय। हिंसोपकर्म बनायरु बेचै कर उपदेसरु लख हरखाय ॥ क्रूर प्रनाम कृष्नलेश्या जुत आर्तरौद्र हिरणं मैं थायु। जो इत्यादिक पाप करै अति सो परभौ मैल है तुछ आयु ॥ ३५० ॥ दीन दुषी लष देष दया कर वस्तभोग उपभोग अनेक। मुन श्रावककों देय भक्त जुत भुक्त रसादृ जु सहत विवेक॥ वृत्तिका श्रावकनी श्रावककू देय वर व्रतिन माफिक जान। सोई लहै भोग उपभोग सु बहु प्रकार पुन्यकी खान ॥ ३५१ ॥ भोगुपभोग मिले उनकूं बहु ताकै अन्तराय जो करै। भोग सहत फुन नाह सुहावै भोग तलक लख आनंद धरै॥ ना भूखे प्यासेकी

हांसी कर अनस्वाद अन्न ले जाय। तास अघोदय छती वस्तु घर भोग न सकै देख दुख पाय ॥ ३५२ ॥

सवैया ३१–जीव मरते बचावै तथा बंधते छुटावै पाद पटदेय पोषै मृदु वच भासना। साता देय दुखिनको सुख चाहै अरु मृतु देखकै उदास होय तज विषवासना ॥ दीन दुखी जीवनकी रक्षा करै भाव सेती विषय कषाय मांही मंदता प्रकासना। ऐसो जीव मर परभवमें दीरघ आयु सुख नित प्रत दुखगन नासना ॥ ३५३ ॥ जीवनकी घात करै भूम खोदै जल गाहै तरु छेदै अग्नि जालै दासका चलावना। विकल कलेन्द्री जीव इत्यादि संताप होय बहोत आरंभानंद जन्तुको सतावना ॥ दुखी रोगी रोवते कू देखिकै आनंद होय आप तथा अन्य पहता बुरा करावना। इत्यादिक पापके उदयतै होय दीरघायु तक दुख नाना भांति पर भोगै पावना ॥ ३५४ ॥

छप्पै–पर चतुराई देख दोष दे हांस जो करवो, मांड कला लख हर्ष दोष पर देख उचरवो। अपने दूषन लोप कला निज प्रघट करै जग, पुरष विज्ञानिको परचा वैरीक्ष तास ठग। अरु पढ़त सुननमें अरुचि अति ॥ बन्धन श्रुत पढ़ा हरै, फुनि दोष लगा पंडित न हंस। सो मर मूरख अवतरै ॥ ३५५ ॥ पंडित लख मुद विनय करै श्रुत लिखै लिखावै। कांक्षा विन श्रुत दान देय हितसूं जु पढ़ावै ॥ ग्रंथ अशुध शुध करै सु भक्ष वंदन दे पूठा। सद श्रुतको अभ्यास करै मूरख ढ रूठा ॥ जग जीव अज्ञानी है जीवे तिन सबको निज ज्ञान सुख। जो इम

बन्छक पर भव विषै सो चतुरनमें होय मुख ॥ २५६ ॥

कवित्त—भेष न देवे वर्ज दया विन लख रोगी मुद करै गिलान । तथा हांस करके बहकावे विन आमय लख दुखी महान ॥ तिनके रोग सु वांछे नित प्रत वा आमय वधकारी हेत । दे भेषज ऐसे सुजीव जेते रोगी हो है दुख खेत ॥२५७॥ बहुत सुपात्र अंगमें आमय लख भोजनमें भेषज दई । दीन दुखीपै करुना करके सो निरोग हो साता लई ॥ रोगी देख करी अनुकंपा हांस गिलान विना सुख चहै। विना रोग लख मुदित हसो जो, सो मरके निरोग तन लहै ॥ २५८ ॥

दोहा—पुत्र रहित जा पापतैं, जो सु होय जगमांहि ।

सो वरनन ऊपर कह्यौ, देख संघ पण ताह ॥२५९॥

परभवमें पर पुत्र लख, जनम्या सुन अनमोद ।

सुत कांक्षीके सुन चहै, सो सुत लहै सुबोध ॥२६०॥

काव्य—जो बहु विध लखकै कुचाल पर सुतकी हरषै । सो कुपुत्रकौं लहै दुख्य तस्यो दित पावै ॥ ज्यों परसुतकी बहु सुचाल लखके हरषावै । सो सुपुत्रकं लहै सुख्य तस्योदित पावै ॥ २६१ ॥

चौपाई—आंगोपांग छेद जो करै, वा विकलांग लखानंद धरै। वा विकलांग हंसै वह काय, सो मरकै विकलांग लहाय ॥ २६२ ॥ निज गुन पर निंदा जो वकै, निज औगुन परगुनको ढकै । ऊंच न रुचे नीच संग रुचै, सो तन लहै नीच तन मुचै ॥ २६३ ॥

गीता छंद–अभिमान विन निज गुन परोगन ढांक माखै पलटकै। कर संघसेवा भजै जिन गुर दुराचार जु सुलटकै॥ फुनि दीन पोषै बहुत तोषै मिष्ट वचन उचारिकै। बहु मान दे आदर करै सो ऊंच हो तन छारकै॥ २६४॥

चौपाई–जिन दीक्षित जो मुनवर कोय, लख विभूत सुर नर पत सोय। या तपको फल हो मुझ इसो, इम निदान कर तन जम ग्रिसो॥ २६५॥ तास तपस्याके परभाव, हो दिवमें सुर वासुर राव। तितसें चय हो अघ चक्रीस, दोय प्रकार कह्यौ मुन ईस॥ २६६॥ ले परतग्या भंग जु करै, सो भव भ्रमत अधिक विस्तरै। जो पालै अभंग धर नेम, सो जग रहत लहै पुर खेम॥२६७॥ जो मुन नाना तप विध धार, सुध भाव जुत सह्य विदार। सो हो नारक विषै निर्जरा, वा अहमिंद इन्द्र अवतरा॥ २६८॥ तितसै चय हो बल चक्रेस, ऋद्ध वृद्धि सुख लहै विसेस। लेहै रतननि कृत जो भोग, सो सब पुन्यतनौ संजोग॥ २६९॥ पालै ब्रह्मचर्य मन लाय, परकूं उपदेसै हरखाय। च्युत न होय बहु सह उपसर्ग, मुदित लखै सीलह सवर्ग॥ २७०॥ अन्तराय विन गह सुध भाव, मद मत्सर विन जज जिनराव। निंदन करै सील लख हीन, सो मर होय मार परवीन॥ २७१॥

दोहा–तीर्थंकर पद होनको, ऊपर कथन सु जान।
सपुनरुक्त दूसन थकी, फेर न कियौ बखान॥२७२॥

सवैया ३१–नाना भांत दुख देख दुखी लख हरषाय

विसय कषाय वस तथा सु दिवा यहै। नाना भांति सुखिया सु देखके कषाय करै तथा अन्तराय करै और पै कराय है॥ सोई सोई तिस जात लहै अन्तराय जगतमें निंद होय सुगुरु भनि जिये। इन कर तब सेती उलट प्रवर्त जास उलटो सु फल पाय रुचै सोई कीजिये॥ ३७३॥

दोहा—या विध प्रश्न सुभालको, यह उत्तर मकरंद।
भव्य भृंग मन लख रमत, लहत परम आनंद॥३७४॥
देवसैन सिष सिष्यने, देव वचन मय भास।
मोहकम पुत्रात्म जयदा, भाषा माह प्रकास॥३७५॥

इतिश्री चन्द्रप्रभपुराणे जिनकेवलोत्पत्तसमोसर्नवर्निद रचित जिनधर्मोपदेशवर्णनो नाम चतुर्दशम संधिः संपूर्णम्॥ १४॥

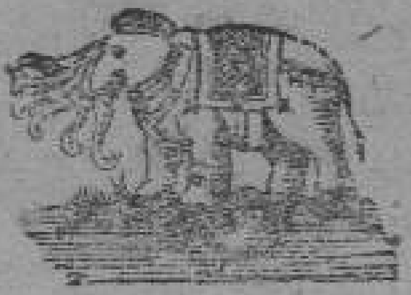

पंचदशम संधि।

कवित्त—समोसर्न वर्तुल मनो सत्तर इन्द्र नील मन भलक देत। मानो नीर विषै नभ झलकै चमचमाट मनु लहरे लेत॥ बारे सभा चार मारग मिल षोडस दल जुत कुमद महान। ता मध अधर गगनमें शशि जिन शशि सम करत कुमुद प्रफुलान॥ १॥

दोहा—सोय कवलनी देख बहु, सुरनर अलि सम राच।
लह पराग जिम धुन मुदित, तिरपत हो न कदाच॥ २॥
ऐसैं चंद्र जिनेन्द्रकौ, गुर गुन भद्र नमंत।
तिन दोऊकू कवि नमें, गन गौतम भाषंत॥ ३॥

चौपाई—सुन श्रेनक आगे मन लाय, तुम समान श्रोता पत आय। मघवा नाम भूप पर-सिद्ध, आय नमो लख प्रभुकी रिद्ध॥ ४॥ पूजा कर पढ़ अस्तुत पाठ, चक्रिन चित हुवो लख ठाठ। गणदत्तादिक अरु मुन सवै, विगत २ सबको वी-वै॥ ५॥ मानुष कोठेमें थिर सोय, प्रश्न करी प्रभु सनमुख होय। महापुरुष जगमें प्रभु जिते, तिन चारित्र कहो हम प्रते॥ ६॥ प्रभुकी दिव्य धुन असरार, खिरी मेघ गर्जन उनहार। सर्व देस भाषामय सनी, सुन मुद भव सिख नाचै गुनी॥ ७॥ गन नायक श्रीदत्त उचार, सुन मघवा भूपत विस्तार। मन वच काय लाय हे भद्र, ठारे कोड़ाकोड़ समद्र॥ ८॥ भोगभूमि रह रीत अषंड, इसी भरतमें आरज षंड। ताही क्षेत्रतना व्याख्यान,

औरा को नाही परवान ॥ ९ ॥ जुगल मरे अरु जुगल हि होय, ईत भीत भचाल न कोय। राव रंक ना स्वामी दास, चोर चुगल ना धरत शाप ॥ १० ॥ ठग लवाड़ ना राड करांहि, सब संतोषी निज लछ मांहि। रोगी दुखी दीन नहीं जहां, पुन्योदिक सब सम सुख गहा ॥ ११ ॥ तहां न अहनिस तनी प्रवर्त्त, ताके अंत कर्म भू वर्त्त। तामै पुरष सलाका होय, भिन्न २ त्रेसठि सुन सोय ॥ १२ ॥ जिनवर रिषभ भरत चकवै, इनको कथनो पर लप सवै। लाख पचास कोड़ जब गये, श्रेनक अजित सुजिन तब भये ॥ १३ ॥

सवैया—नृप जित सत्रु नार विजया गरभ धार जेठ कृष्न-मावसेंद्र वैजियन्त तजियो। जन्म माघ सित दसैं साढ़े चार सत धनु तन बहत्तर लाख पूर्वा युरु गजयो ॥ कारपने चतुरां सविनेक त्रिभुनराज पूर्वांगक जादे जन्म दिन तप सजियो। छद्मस्त दोसत वर्ष पोह सदि एकादस केवलोत्पन्न गनधर नव्वे भजियो ॥ १४ ॥ नमूं मुन लाख गननी हजार तीस श्रावक त्रिलाख २ पाप श्रावका सवै। मासेक निरोध जोग उद्धांग मोक्ष गए चैत सुदी पांचे महा जक्ष भक्ति करतवै जवाल मालनी सो सुरी भयोरु समुदविजै भूप नार बाला सुतसागर चक्री जवै प्रभु सम काय रूप वंसपुर सिव थान सतर पूरव लाख आयु धर सो फवै ॥ १५ ॥

चौपाई—और भेद सुन भाषूं अवै, भए औधमै सो सुन सवै। रिषभ अजित अभिनंदन सुम्ब, भरत सगर चक्री जिन-

नंत ॥ १६ ॥ चंद सुविध सित पार्स सुपास, हरत लाल पदम जजरास । स्याम नेम मुन सुव्रत एह, अरु सोले कंचन सम देह ॥ १७ ॥ वृषवसैं अधर जोजन हीन, पावर ने मात सुचीन। या विध समोसरन विस्तार, तपतंतार केवल थित धार ॥१८॥ काश्यपगोत्र सकल जिनधार, धर्मरु सांति कुंथ अर धार। कुरुवंसी हरमें त्रिये धीर, मुन सुव्रत नेमी अतिवीर ॥ १९ ॥ और इच्वाक वंस मरजाद, वास पूज नेमी वृष वाद। ए पदमासनतैं सिव गये, अरु सब खड्गासनतैं भये ॥ २० ॥

दोहा—आदनाथ चौदे दिवस, दिन षट सन मत जान।
बाकी इक इक मास सब, जोग निरोध प्रमान ॥२१॥

चौपाई—वासपूज चंपापुर मोष, अरु गिरनार नेम निर्दोष। पावापुर सनमति निरवान, अरु समेदगिरतैं सब जान ॥ २२ ॥

सवैया ३१—दध तीस कोड लाख गए भये संभवेस साव श्रीस दृढ़ रथ सेना देवी मामनी। तज ग्रीव फाग सितु आठै जन्म कातिकांत धोडाकं पूरव लाख साठ आयु पामनी ॥ कार चतुगम राज त्रिगुनेकवीना चार पूर्वांग अधिक तप जन्म दिन लामनी। छदमस्त वर्ष बारै कातिक किसन तुरी केवलोत्पन गन पांचके सतामनी ॥ २३ ॥ लाख मुन अरजका त्रिगुन श्रावक तेते श्रावकनी पंच लाख चार सत धनुचा। पंचमो कल्यान दिन वैसाख सुकल छठ गए शिवमांहि तनक पूरवतमुचा ॥ यदै समुक्ष नाम फुन मती यक्षनीक दस कोड लाख दध कालगत जो सुचा। संवर भूपत नार सिद्धारथा

गर्भ धार वैसाख शुक्ल छठ वैजयंतसे सुधा ॥ २४ ॥ जनम बारस माघ शुकल पचास लाख पुर्वायु तनु पचास साढे तीन सत है। अभिनंदनांक कप चतुरांस बाल काल त्रिगुन एक न अष्ट पूर्वांग नृपत है ॥ जन्म दिन तप धार छद्मस्त वर्स आठ पोह कृष्न मणोत्पन केवलेक सत है। तीन गन मुन गृही तीन अजियारु छ सत सहन तीस अधिक वमत है ॥ २५ ॥

दोहा-पांच लाख है श्रावका, सित वैशाख छठ सेत।

जक्षेसुर तिय सरस्वती, जिन सेवा नित चेत ॥ २६ ॥

सवैया ३१-नव लाख कोड दध गए सुमतेस औध भूप मेघ प्रभ अंग मंगला धरा। जयंत सावन सुत दूज छे जन्म चेत सित ग्यार त्रिस तुच धनु चका पाधरा ॥ लाख पूर्व चालीसायु चतुरांस कार राज त्रिगुने कविन जादे पूर्वांग बारा धरा। नैत्रसाख सित तप वर्स बीस छद्मस्त जन्म दिन केवलि हुै संघ सब साधरा ॥ २७ ॥

कांव्य-तीन लाख मुन बीस सहस। गन इकसो सोले ॥ सहस तीस अजिया लाख त्रय ग्रही गुनोले। पांच लाख श्रावका नमू चैतांत मोख लह, सुर तुंवर कीतिये यक्षनी सेवत निस अह ॥ २८ ॥

सवैया ३१-उदध सहस नव्वै कोड़ पूर्व गए भए कोसंमी थान भूप सुसीमा गरभमें। माघ काली छठ चये ग्रीवक्क ॥ जन्म स्याम तेरसि कार्तिक चिह्न पदम सुर ममै। दो सत्तार्ध कारमुक तनुधा हु तीस लाख पूर्व चतुरांस बालराज इकीस

वारे ॥ अधिक पूर्वांग सोलै तप कार्ति बदि छठि छदमस्त। वर्ष नव चेतार्ध ज्ञानं पारे ॥ २९ ॥ एक सत दस गन तीन लाख तीस हजार मुन अजिया सहस बीस चार लक्ष है। सरावग तीन लाख श्रावगनी पंच लाख फागन भूमर चौथ शिव लही दक्ष है ॥ मातंगेस सुलोचना यक्ष यक्षनीस नाम समुद सहस कोड नव पूर्वपक्ष है। बानारसि सुप्रतिष्ठ भूप नार पृथ्वी गर्भ भाद्र शुक्ल छठ चुत ग्रीवकको पक्ष है ॥ ३० ॥ जन्म जेठ सितबारे संखियाक दोसै चाप बीस लाख पूरवायु चतुरांपवार है। त्रिगुनेक थाट राज जाहे पूरवांग बीस जन्म दिन तप वर्षनो छद्मस्तकार है ॥ फाग स्यामनै केवल छनवे गनेस मुन अजिया श्रावक लाख तीन त्रिप्रकार है। पांच लाख श्रावकनी फागवदि सातै सित बिजे सुर पूर्वापुरी दुखतै उभार है ॥ ३१ ॥

दोहा—नवसै कोट गए सु जब, भए चन्द्रप्रभ वर्ण।
देख इसी श्रुतमैं सकल, नवै कोट दप हर्ण ॥ ३२ ॥

छप्पै—काकंदीपुर ईस नाम सुग्रीव तिथाचर। रामागर्भलि फाग नवमि च्यु आरने लहर ॥ मृगसिर सित इक जन्म धनु सत एक तनोन्नत। पुर्वायु लाख जुगबाल तुरि नृप तुरि असोभित ॥ पुर्वांग अठाईस अधिक फुन तप तिथ जन्मरु वर्ष चव। छदमस्तरु कातिक सित दुतिया केवल लहि गण चाईस चव ॥ ३३ ॥

काव्य—अजिया सहस असी त्रिलाख मुनि दोय लाख तप्तु त्यौं

श्रावग पण लाख श्रावका भाद्र कृष्ण वसु। गए मोष अजतेप जक्ष
बहु रूपनीदेवी पुष्पदंत पद नमो त्रिजग मन वच तन सेती।।२४।।

दोहा–अन्तराल इन अन्तरैं, पाव पल्ल वृष नास।
फिर सीतल जिन होहिंगे, तब हो धर्म प्रकास ॥ २५ ॥

मनहरन छंद– नव कोट गताव्वा भद्दल नगरी दृढ़रथ नृप घर नार भली सुनुनंद रली। चय अचुतेंद्र कलि चत अष्टमी जन्म माघ अलि द्वादसली। धनुनव्व वली इक पूर्व लाख थित सुरतरु कपि सुथावराज। फुन दुगन कियो फेर जोग लियो तिय जन्म मस्त छंद वसे तीने अलि पोह सम जुग ज्ञान लियो केवल सुनयो ॥ २६ ॥ गणधर इक्यासी लाख एक मुन त्रिगुन अर्जिका ग्रह दुगुनी चव श्रावकनी। अस्वन सित आठैं सिव वर ठाठैं सुर ब्रह्मातिय सिया भनी मुन भूम धनी ॥ दध कोठ गए जम तत्र इते कमलाप सुधा मठ सहस भए छत्तीस लए। सिंहपुर त्रिमले संतिय विमलादे जेठ वदी छठ गर्भ ठये पुष्पोत्र चये ॥ २७ ॥ लियो जन्म फालगुन अलि ग्यारसि तन उच्च धनुस्सीगैं ह्याकं वय लख्याकं चोरासी वर्स फुन पाव बालपन दुगन राजपन जन्मांक तिथ तपसाकं। छदमस्त वर्स षट केवलोतपन माव अलि तियतचरराम सुसंघ खत्र ॥ सव सहस चौरासी अर्जिया बारा जुगलख श्रावक तियैं दुगुण समोप गरत्र ॥ २८ ॥

दोहा–श्रावन सित नोमी दिना, ईसुर सुर प्रभु भक्त।
वन्हिन नामावासुरी, धो श्री श्री जिज सक्त ॥ २९ ॥

चौपाई—इनके समय भए हरबली, प्रतिहर कथा पुरानन चली। यथमें कछुक कहुं थल पाय, श्री जिनवानी सुगुरु सहाय॥ ४०॥ पग गिर अलकायु रपतईत, मोर कंठ सुत असुग्रीव। आयु चोरासी लाख तनूच, धनुअस्सी अरिगन सब्भूच॥ ४१॥ तीन खण्ड पति प्रत हरगन्न, पोदनपुर परजाप्त नृप अन्न। नार जया सुत विजय सु आयु, लाख सतासि वर्ष सतकायु॥ ४२॥ सो बल चार रतनको धनी, गदामाल हल मूसल गनी। मृगावती नृप दूजी तिया, सुत त्रिपिष्ट सु हरपद लिया॥ ४३॥ आयु काय प्रतिहर सम स्याम, हल वसु सहस दुगुन बहु नाम। धनुष संख सक्ती असी चक्र, दंड गदा मण सातसु वक्र॥ ४४॥ प्रतिहरको हर मास्यौ जबै, सप्तम नर्क पहुंचो तबै। हर बीआयु अन्त तिन जाय, विजय २ विधि सिवपुर पाय॥ ४५॥

दोहा—नारद भीम भयो तबै, आयु काय हर जेम।
धमनदत्र श्री ते गए, तज महाशुक्रसु एम॥ ४६॥

छप्पै—चंपापुर वसुपूज भूप तिय जया गर्भ धर। छठ असाड कलि बहुर जनम चौदस फागन करि॥ सत्तर धनु तन तुंग बहत्तर लछ वर्षायु। सिसु चतुरांस जनम दिन तप इक वर्ष करायु॥ सित माघ दूज केवल लहो, गन छासठ जुग सहस मुन। इकलाख सहस षट आर्जिका, श्रद्धी दुलख श्रद्धनी दुगन॥ ४७॥

दोहा–सिर अनंत चौदस लियो, सुरकुमार मुनिसांक।
मुक्त असोकनी सुरीकर, वासपूज महकांक ॥ ४८ ॥

कवित्त–इनके समय भोगवर्द्धनपुर श्रीधर सुत तारक येस। सो प्रतिनारायण बलवंतो अरु द्वार पुर ब्रह्म नरेस ॥ नार सुभद्रा पुत्र अचल बल दूजी पुत्र दुपिछकी माय। सत्तर चाप तिहु तन उन्नत लक्ष बहत्तर सुग हर आय ॥ ४९ ॥ लाख सतत्तर बरस आयु बल नारायन प्रतिहरको मार। हर मर आयु अंत दोऊ लह सप्तमनरक महा दुखकार ॥ लह पर्वण बलभद्र सुतपते अरु विधूत उपर निरधार। महाभीम नारद तब रूपनो आयु काय हरसम ब्रम चार ॥ ५० ॥

सवैया ३१–तीस दव गए पुरकंप ले सकृत धर्म भूपतिय जयसेना तास उरमैं बसे। जेठ कलिदस स्वाम सहश्रा जन्म माघ सित चोथ सन्मोन्नत साठ धनुष लसे ॥ साठ लाख वर्ष आयु चतुराम बालराज दुगन जनम दिन तप वर्स त्रिलसे। केवल सुकल माघ छठ लहो पचपन गण मुन साठ सहस अघोच देखे नसे ॥ ५१ ॥

पद्धडी–अजिया पट सहसरु एक लाख। सुग लाख ग्रही ग्रहनी दुभाख ॥ साठाष्ट कलि सिवषन्मंद्दर। लक्षमना सूरी विमल कृद्दर ॥ ५२ ॥ इन समय रतनपुरमैं सु होय। मधुप्रतके अनु सुनो लोय ॥ पुर द्वारवती नृप रुद्र नाम। तसु भद्रा तिय सुत धर्म धाम ॥ ५३ ॥ सडसत वर्स लक्ष आयु झिद। दूजी तिय प्रथ्वी सुत स्वयंभु ॥ तिहु तन उन्नत है धनुष साठ।

अरु हर प्रतिहर थित लछ साठ ॥ ५४ ॥ भयो रुद्रनाम नारद उदार। हर सम वय अति कलहकार ॥ हर प्रतिहर मर लइ रोरवांत। बलि सिव पाई जीत्यो कृतांत ॥ ५५ ॥

सवैया ३१–नवदध गए भये औधपुर महा नृप सिंघसेनकी सुन्दे गर्भ मांही आ लसो। चय अचुतेन्द्र सितकातिम एकम फुन जन्म जेठ सित एकैसे हीनता कालसो ॥ पंचास धनुष काय तीस लाख वर्ष आयु साढ़े सात लाख छार दुगन भुपाल सो। दिक्षादोइ। जेठ वदि छदमस्त दो वरस चित्रार्ध केवल पाय गन लीधे नालसो ॥ ५६ ॥ छासठ सहस मुन लाखेक सहस आठ अजिया श्रावक दोय लाख दुनी श्राविका। चैत्रार्ध लिसि वयक्ष पाताल अनंत बीजा इनके समै जो भयो बानारसी मानका ॥ नृप मधूसुदन सु प्रति हरपद पाय और द्वारापुरी विषै सोमप्रभ रावका। नार जयावती सुत सुप्रभ हलीस दुजी नार सातामृत नाम पुरुषोत्तम आवका। ५७ ॥ लाख तीस हर दोउ नारद महारुद्र चारोंकी उन्नत देह धनुष पचासकी। हलायुप तीस लाख वर्ष तपतैलि सिव सप्तम नर्क मांहि दोनो हर वासकी ॥ फुन तीन दध गए नगर रतनपुर भानराय त्रिसुव्रताके गर्भवासकी। तज सर्वार्थ सिद्ध वैशाख सुमरु आवै जनम वेसि माघ सित धर्म रासकी ॥ ५८ लछन वज्र दंड पैतालीस धनु तुंग दस लाख वर्ष आयु पाव बालपनमें। दून राज पत धार जन्म दिन वर्ष एक छदमस्त पोह शुक्ल चौदस असनमें ॥ केवल ले पैतालीस गनोत चौसठ-

सहस मुन सहस बासठ चोसत अर्जकानमें। दो लाख श्रावक दूनी श्रावका चोदस सित जेठ सु रक्षितासुरी विध्नहर सुरनमें ॥ ५९ ॥

छंद चाल–इन समय सुहारखु राई, प्रति हरनि सुभ सुखदाई। फुन चक्र नगर नृप भारी, सख्यात सुप्रभा नारी ॥ ६० ॥ तसु पुत्र सुदर्शन नामा, फुनि दुतिय अम्बका नामा। पंचम नरसिंह सु कैसो, तब काल सु नारद वैसो। ६१॥ तिहुं आयु लाख दस वर्ष, सतरे लख बल थित दर्से। पैतालीस धनु तिहुं हाथ, जुग हर सत्रा चौठाय ॥ ६२ ॥ बल तप कर शिवपुर पाई, पीछे चक्री उपजाई। पुर अवधि सु मित्र जुराई, तसु नार सुभद्रा थाई ॥ ६३ ॥

दोहा–तासुत मघवा कनक दुत, वंस इक्ष्वाकमें दर्स।

इकसत सत्तर हस्त तन, पांच लाख थित वर्स ॥ ६४ ॥

विभो चक्र पद भोगिके, तपधर कर्म विनास।

केवलग्यान उपायके, लियो मुक्त परवास ॥ ६५ ॥

फुन ता पुरमें नृप भयो, नाम अनंत सुवीर्य।

सहदेवी सुत उपनो, सनतकुंवार सुधीर्य ॥ ६६ ॥

साढा इकतालीस धनु, तन थित लाख सु तीन।

कनक दुति चक्र विभो भुगत, तपकर शिवपुर लीन ॥ ६७॥

छप्पै–गजपुर विश्वसेन नृप तिय ऐरादेवी घर। गरभ भाद्र अलि सप्त त्याग सरवारथ सिधहर ॥ जन्म जेठ अलि चतुर्दशी मृगचिन्ह ततुक्षत। धनु चालीस लक्षायु पाय [illegible]

बाल पनै गत ॥ पद मंडलेश त्यों विजय वसु, सत चिन चक्री पात्र चित । गइ जन्मकाल छद्मस्त तप, घर षोडश वुध मौन चुत ॥ ६८ ॥ लहि केवल सित पौष दसैं छतीस गनधर मुन । बासठ सहस रु सहस साठि त्रिपशत अजिया गन ॥ श्रावक दो लख दुगुन श्रावका जनम दिवस सित । यक्ष किंपुरुष यक्षनीस संज्ञा वैरोचन इत । ये धर्म त्रियाम्बगतपै भये जिन सोलम बारम मकर लह चक्रवर्त पंचम सुपद ॥ नमूं सांत जगमैं सुकर ॥ ६९ ॥

अडिल–घाट पलार्ध तित सूरसेन नृप भये नरी। श्रीकांता घरनार भदवैं श्रावन करी ॥ तज सर्वारथ सिद्ध जन्म सु वैसाखमें। सित इक धनु पैतीस तनुच अजाकंमे ॥ ७० ॥ सहस पचनवै आयु पाव गत बालजी। तितने राज रु विजय षट सत टालजी ॥ पात्र चक्रि पद त्यागि जनम दिन तप धरो। सेलि सुर छद मौन केवल तप दिनवरो ॥ ७१ ॥ गनधर पैंतीस साठ सहस मुन अर्जिका। तितनी फुन सत होट प्रही दुनि श्राविका ॥ लाख तिथादिसित गरुड अनेक सुरुपणी। यक्ष भक्त पद अनमूं कुंथ जग सिर मणी ॥ ७२ ॥

सवैया ३१–लाखो लाख वर्ष घाट पल्ल गए भए तत्र भूप सु दर्शन मित्रसेना नार है। गर्भ फाग शुक्ल तीज त्याग सर्वारथ सिध जन्म सित मार्गशिर चौदस झकार है ॥ तीस धनु तुंग आयु चौरासी सहस पात्र बाल पांच मंडली सविजै सत चार है। त्यों चिन चक्रीस पात्र माघसित दसैं तप छद्मस्त

बालपने गत ॥ पद मंडलेश त्यौं विजयवह, वष जिनपकी पाचा थित। यह जन्मकाल छद्मस्त तप, वर षोडस वृष मौन व्रत ॥ ६८ ॥ लहि केवल सित पौष दसैं छतीस गनधर मुन। बासठ सहस रु सहस साढि त्रियसत अर्जिकागन ॥ श्रावक दोलख दुगन श्राविका जनम दिवस सिव। यक्ष किंपुरुष यक्षनी संज्ञा वैरोचन इव ॥ ये धर्म त्रियाब्ध गतपै भये जिन सोळमवार मम कर लह चक्रवर्त पंचम सुपद। नमूं सांत जगमें सुकर ॥ ६९ ॥

अडिल–गत पलार्ध तिव सूरसेन नृप भये नरी श्रीकांता घर गरभ दसैं श्रावन करी ॥ तज सर्वार्थ सिद्ध जन्म सु वैसाखमें। सित इक धनु पैंतीस तनुच अजांकमें ॥ ७० ॥ सहस पचनवे आयु पाव गत बालजी। तितने राजक विजय षट सत टालजी ॥ पाव चक्रि पदत्यागि जनम दिन तप धरो। सोलै वृष छद मौन केवल तप दिनरो ॥ ७१ ॥ गनधर पैंतीस साठ सहस मुन अर्जिका। तितनी फुन सतहोट ग्रही दुनि श्राविका ॥ लाख तिथा दषिव गरुड अनेक सुरूपणी। यक्ष भक्त पद अनमूं कुंथ जग सिर मणी ॥ ७२ ॥

सवैया ३१–लाखों लाख वर्ष घाट पाव पल्य गए भए तत्र भूप सुदर्सन मित्रसेना नार है। गर्भ फाग शुक्ल तीज त्याग सर्वारथ सिध जन्म सित मार्गशिर चौदस झकार है ॥ तीस धनु तुंग आयु चौरासी सहस पाव बाल पांच मंडलो मविजै मत चार है। ता विन चक्रीस पाव माघ सित दसैं तप छदमस्त

सोहै वर्ष कार्त्त सित वार है ॥ ७३ ॥ केवल लहो लक्षार्ध मुनीघ गनेस तीस अजिया सहज साठ श्रावकेक लाखजी। सहस आठ श्रावगनी तीन लाख लीचैतार्थ मोख यक्ष गंधर वसुरी रएता आखजी ॥ ठारमें जिनेस चक्री सातमें दुगन मक्री चंद्र अरे चारें नृप पुर औध राखजी। वंश ईश्वाक स्हसबाहु तिया चित्रमती सुत सुभूप सहस सतसठ वर्ष भाखजी ॥ ७४ ॥ ठाईस धनुष तुंग कवार सहस पांच मंडलीस वेतो विजै पांच सत वरसं। आठमो चक्रीस होय वाकी थित राज मांहि मरक रोरांत हाय और कथा सरसं॥ हरपुर प्रतिहार सो निसुभनाम वर और चक्र पुर पत वरसेन दरसं नार वैजियंता सुत मंदसेन हली आयु सतपठ स्हस दुजी लक्ष नवतीरसं ॥ ७५ ॥ नार सुत पुंडरीक पैंसठ सहस आयु हर प्रतिहर हल छवीस धनु तन। महाकाल नारद सुहर सम आयुकाय मर गए सुभूप बल सिवपतनं ॥ लाखो लाख वर्ष गये भये मिथु-लेस कुंभ तिय प्रजावति गर्भ सित एकै चैतनं। तज अपराजतेंद्र जन्म अगहन सित ग्यारस सहस वर्ष पचपनु चैतनं ॥ ७६ ॥

छप्पै-पचीस कार्मुक एक सतक सिस जनम दिवस तप। वर्ष षट छदमस्त पूस अलि दूज केवल थप ॥ गनधर ठाईस संग मुनी चालीसहजार सब। अजियावय सम ग्रही लाख इक त्रय ग्रहनी फव ॥ लहि सिव फागन सित पंचमी जक्ष कुवेर रत भक्तमैं। जिन सासन सुर हिमा सुरीवर मल्लिनाथ पदक्रकमैं ॥ ७७ ॥

चौपाई–पद्मनाम बानारसि ईस, रामापुत्र पदम चक्रीस।
वंश इक्ष्वाक कनक तन चाप, बाईस तीस सहस नृप आप ॥७८॥
पंच सहस वरस गत बाल, तावत मंडलीक विन साल। सतक
रु विजय नवम चक्रीस, भोग भोग शिव जाय मुनीस ॥७९॥
ता पीछे खग गिरपै जान, हरपुर नृप पहलाद महान। सो
प्रतिकेसव सुन अनरूप, नगर विनास अग्निसिख भूप ॥ ८० ॥
तिये जयंती सुत नंदेमित्त, केसवती त्रिय फुन सुतदत्त। सैतीस
बत्तीस सहस वर्षायु, सुमुख नाद हर सम वय कायु ॥ ८१ ॥
हर प्रतिहर बल धनुष बाईस, तप कर लहै वैकुंठ हलीस। हर
प्रतिहर गत सप्तम धरा, प्रथमसु जिनवर जबा सिव वरा ॥८२॥
फिर दूजे जिन जब शिव जाय, सो अंतरमें आव समाय। एही
भेद जाने सब ठौर, आगे कथन सुनों मद छोर ॥ ८३ ॥
राजग्रही पुर भूप सुमित्र, सोमादेवी नार पवित्र। भूप धरो
श्रावण कलि दोज, प्राणतेंद्र तज आपो सोज ॥ ८४ ॥ बदि
वैसाख दसै लह जन्म, बीस चाप सु कूरम चिन तन्म।
चोवन लाखांतर अरे वर्ष, मांही तीस सहस थित दर्स ॥८५॥
पाव कार पन दुगुन सुराज, तपनोवर्स जनम दिन साज। नष
वैसाख लिल हतोघांत, गणी अठारे मुन गुन पांत ॥ ८६ ॥
तीस सहस गननी लक्षार्ध, त्रिय ग्रहनी इकग्रही गुनवार्ध।
फागुन कलि बारसि लह मोष, बंदू मुनिसुव्रत निरदोष ॥८७॥

दोहा–वरुण यक्ष सिद्धायको, और सुनो नृप बैन।
पद्मनाम नृप भोग पुर, एरा सुत हरषेन ॥ ८८॥

आदवंस धनु वीस तन, मुनिसुव्रत सम आय।
दसम विमो चक्री सुगत, गयौ अनुत्तर ठाय ॥ ८९ ॥
चौपाई–लंकापुर नृप रतन श्रनास, नाग्केक पुत्र दसास।
सो प्रतिके सब राक्षस वंस, फुन कोसल पुरमें रघ वंस ॥ ९० ॥
जसरथ नृप कोसल्ला पुत्र, रामचंद्र फुन लछमन उत्र। सो
सुतनार सुमित्रा तनौ, सोलै धनुष तिहु तन बनो ॥ ९१ ॥
ठारै सहस वरस रघु आय, तेरै सहस विष्नु जुग थाय। नरक
तीसरे गत शिवराम, नारद नाम महा सुख ताम ॥ ९२ ॥

सवैया ३१–छ लाख वरस गए मिथुला नगर ईस विजैनार
प्रभा गर्भ धार क्वाद्दै अली। जन्म साढ वदि दसै कमलांक
तन ऊंच चाप पद्रै सहस दस वर्सकी ढली ॥ पात्र बाल अर्द्ध-
राज जन्म दिन तप छदमस्त वर्ष नव रुद्र अगहन अकली।
बानसतैं रु संघ दो दस सहंस अर्जा पैंतालीक ग्रही त्रिय लाख
ग्रहनी भली ॥ ९३ ॥
दोहा–शिव वैशाख अलि चतुरदस, भृकुट नाम सुर यक्ष।
हंस वाहनी यक्षनी, सो नम सब जग रक्ष ॥ ९४ ॥
छपै–कोसंभी पुर ईस विजय तिय प्रभाकरी। सुत कन
तनुंच धन पद्रै फुन त्रिय सहस वरस थित ॥ बाल मंडली
सत २ विजय चक्रि चव। उन्नीस सतक तप करो त्याग तन
लह्यो जयवत अब सो ग्यारम चक्री जयो ॥ पांच लाख गए
वर्ष जब तब नगर द्वारकाके विखै। समुद विजय राजा सुकृत
॥ ९५ ॥ सिवा तिय धर गर्भ कार्ति छठ हर जयंत नस।

तिव सित श्रावन षष्ट जन्म सपोक धनुष दस ॥ सहस वरस
थित तीन सतक गत बालकपनमें। व्याह समै वैराग जनम
तिथ छप्पन दिनमें ॥ लहि केवल अश्वन इकम सित गन रुद्र
संघ उन्नीस। सहंस २ चालीस अर्जका ग्रहनी त्रिइक लख
गृहीस ॥ ९६ ॥

दोहा–लइ सिताष्ट सिव साढकी, गोमुख यक्ष प्रसिद्ध।
सुरी अंबिका यक्षनी, सो नेमी द्यो रिद्ध ॥ ९७ ॥

चौपाई–समुदविजयको लहुर अनुज, वसुदेव रोहनी तनुज।
पदम सुनाम चरम बलदेव, दुतिय देवकी तिय वसुदेव ॥९८॥
ता सुत कृष्ण सु नवमो हरी, मुख्य नाम नारद तिह धरी।
हरि रिपु जरासिंघ प्रति हरी, बलसत दुपट सहस त्रय धरी ॥९९॥
त्रिय आयु सब दस धनु देह, इनकी सकल रिद्ध सुन लेह।
सौलै सहस हर नव हलनार, तिते नृप नमै मुकट सिर धार
॥ १०० ॥ तीन खंडके सुरनर खगा, ते सब सेवै चरनन
लगा। सात हरी हलकै मण चार, सहस सहस सुर रक्षाकार
॥ १०१ ॥ बलभर स्वर्ग सोलमैं इंद्र, हर त्रिय नरक लहो
दुख सिंघ। ताही समय औंवपति ब्रह्म, तिय चूला सुत है
दत्तब्रह्म ॥ १०२ ॥ तन धनु सात सतक थित सार, छहो खंड
साधे बल धार। चर्मचक्रि सब बस करि आप, सप्तम नरक
गयों कर पाप ॥ १०३ ॥

कवित्त–अश्वसेन कासीपति वामा गर्भ सित दूज वैशाख।
प्राणतेंद्र जन्म पोष अलि रुद्र हस्त नव थित सत साख ॥ तिन

बाल विन जनम राज तिथ तप छदमस्त वरस चव माख। चैत चौथ कलि केवलोत्पन्न गनधर दसमुन संघ जु राख ॥१०४॥ सोलै सहसरू अडतिस अजिया तीन लाख ग्रहनी इक ग्रही। श्रावण सित सप्तम सिवलह सुर पद्मावति धरणेन्द्र जु सही ॥ पास पास तोडो अब मोरी दीजे निज सुख औ निज मही। उरग लखन सुचरनमें सुंदर अढाई सत गत कही ॥ १०५॥

सवैया ३१–विदेह सु नाम देश नगर कुंडलपुर सिद्धारथ भूप नार प्रियकारनी वरा। पुष्पोत्तर जान तज गर्भ साढ सुदी छठ जनम तेरसि चैत सिंह चिह्न पापरा ॥ सप्त हस्त देह आयु बहत्तर वर्ष तीस क्वार ब्याह राजदिन परिग्रह छारना। अगहन स्यामु दसैं छदमस्त बारे वर्स दशमी वैशाख स्याम घातिय उपारना ॥ १०६ ॥ अतीत वरत भावी चराचर जुगपत तत्त्व सब झलके है केवल मुकरमें। ग्यारै गनधर मुन सहस चौदे छत्तीस व्रतका श्रावक लाख एक तीन घरमें ॥ कातकमावस मोख जक्ष नाम मातंगरू, अपराजित सुरीसो सीप धर करमें। ऐसे महावीर पदकमल जुग लहद और सोभा सारी रद नमत अमरमें ॥ १०७॥

काव्य–तीन सतक छियत्तर वारम तीन तीन सत, अरे पारस चव सहस रिषभ फुन सहस २ अति। भए भूप मुनि भिन्न२ सब संघ जनेसुर, निज भावन अनुसार लही गति कह्यो महेसुर ॥ १०८॥ जती सात विध सतक चार दस त्रय नगन धर, संघ अठाईस लाख सहस अठतालीस मुनवर।

सैंतिस सहस सतक नव चालीस पूरब धारी, बीसलाख सब पंच रु पचपन शिष्य निहारी ॥ १०९ ॥ इकलाख सहस सत्ता-ईस छसै अवध सहस मुन, वसु सत पौणदुलाख केवली मन-परजय सुन। इकलाख पैंतालिस सहस शतक नव पंच प्रवानो। दुलक्ष सहस पैंतीस शतक नव वैक्रिय जानो ॥ ११० ॥ इक लाख सहस चौवीस तीन शतवादी मुनवर, संघ सात इम भेद् कह्यौ चौवीसों जिनवर। लाख चवालिस सहस चुणवै षट सतार्द्ध मित, अजिया अठतालीस लाख ग्रह ग्रहनी दुन तित ॥ १११ ॥ तेरे सतक रु आठ जान अनु बंध केवली, ग्यारे सतक बयासी है संतत सु केवली। चौवीस लक्ष चौसठि हजार सत चव मुन शिवगत, द्वैलक्ष सहस सत्तर वसु सतलह-नुत्तर गत ॥ ११२ ॥

दोहा—इकलाख पंचहजार फुन, आठ सतक मुन जान।
सो धर्माद अनुत्र गत, लह सब जिनसम थान ॥११३॥
एक एक जिनकै समय, दस दस मुनवर जान।
अंतक्रित केवलि भए, त्यौं उपसर्गी मान ॥११४॥
फुन तावत उपसर्ग सह, अन्त सुकृत मुनि और।
सौधर्माद अनुभूगत, लही सो कर्म मरोर ॥ ११५ ॥

सवैय, ३१—तीनसै चौवीस पद्म पांचसत द्वादस छसै एक पास पूज सात सत अनंत। आठसैरु नव धर्म नवसत सात मल्ल सत पांच २ छत्ती नेम संग गिनंत। छत्तीस पारसनाथ संग मुन सिव पाई बाकी सब संग मुन भिन्न २ अनंत ॥

सहस्र सहस्र मुन संग सब मोक्ष गए ऐसे सब जीनजीको हम थुत ठनंत ॥ ११६ ॥

छप्पै–बाहुबल अमृत सुतेज श्रीधर जयभद्र फुनि असेन ससि चंद्र वर्णबासन्द्र मुक्कर। सनतकुमार श्रीवछ कनक प्रभ मेघवरन गन ॥ सांतकुथ अरे विजयराज श्रीचंद्ररु नल मन। फुन हनुमान बलराज नृप वासदेव प्रद्युम्न अहि। कवर सुदरसन जंबु मुन थिव चुवीस इन समर लइ ॥ ११७ ॥

चौपाई–रुद्र भीम बल जीत रिपु मल्ल, विश्वानल सुप्रतिष्ट अचल्ल। पदम जितधर अरु जितनम प्रोष्टल, क्रोधानल ए साम ॥ ११८ ॥ महावीर जब शिवपुर लहै, तीन वरस सतरे पक्ष रहै। चोथे काल विषै ए ज्ञान, तापाछै पंचम जम आन ॥ ११९ ॥ तब नर आयु वीस सत वर्ष, सात हाथ उन्नत तन दर्स। काया रूक्ष विरूप अधीर, विषय कषाय तिखे रनवीर ॥ १२० ॥ असन त्रिकाल करै हित लाय, सुत असक्त रहै अधिकाय। अन्न दोष जे फुन अधिकार, ते सब काल दोषतैं धार ॥ १२१ ॥ ऐसे पाप करम कर तार, होय हजारों अघ अनुसार। नृप जथोक्तको होय अभाव, होसी संकर वरन जुराव ॥१२२॥ इकीस सहंस वर्स जम एह, तामैं होय कलंकी जेह। सहस सहंस वरस प्रति एक, आद अंतको कहुं विसेक॥१२३॥

सवैया ३१–पटने सहर मांहि सिसुपाल भूप नार प्रथवी चतुरमुख सुत पापी मोर है। सो कलंकी दुखदाय सत्तर वरस आय चालीस वरस राज करै न्याव तो रहै॥ सेवै सब पाखंडकूं

तब नृप वस करै तिन ऐ अखंड अज्ञा मनावै सजोर है। एक दिन सेवक बुलाय पूछे तिन सेती मेरी अज्ञा लोकमांहि हैक कोऊ मोरहै ॥ १२४ ॥ तब मंत्रीयौं उचार जेहैं निरग्रंथ धार रहै वनके मझार अद काय तजकै। पुरमें असन हेत आवै इकवार चेत हम सुन क्रोध केत पापी मान सजकै ॥ आप जाय दाता घर प्रथम गिरास के उठाय मुन कर पतै अत रजकै। साधुके अहार मांहि पडियो सुअंतराय वही सुवन मांहि गए मुक्त तजकै ॥ १२५ ॥ तब नागाधिप पीठ हालत अवधि दीठ जानकै धरम नास समदृष्टी आइयौ। न्यायवंत बलवान सहै न सकै अन्याय गदा सेती मारौ अधोगत सो सिधाईयौ ॥ कल्की नार जो अकाली सुत अजितजे नाम निज मातसंग सोय सुर सर्ग आइयौ। जैन धर्मको प्रकाश सब जन देखौ इम तब सब जन नित जैन धर्म ध्याईयौ ॥ १२६ ॥

चौपाई–इस विध जैन धर्म उद्योत, नित यौं वृध दोज ससि जोत। सहंस बरस गत कर इक वारे, ऐसे होवै वीस बहोर ॥ १२७ ॥ जैन धर्मके द्रोही जान, इकीसमेंको सुनौ बखान। जल मंदन सब नृपमें मुख्य, पापी अधिक अज्ञानी दुख्य ॥ १२८ ॥

दोहा–इन्द्राचार्य वनो जु सिष, वीरांगद मुन नाम।
सर्वश्री अर्जिका अग्निल, फाल्गुनसेना वाम ॥ १२९ ॥
सो दुखमा कालांतमैं, होय जीव ये चार।
तीन दरस पद्मु पक्ष मास, सेष काल रह्यो सार ॥ १३० ॥

चौपाई–तब वीरांगद आदिक चार, अंतराय इन मुक्त मंझार। कर सन्यास सुगण चव जात, कातिक अर्ध स्वाति रिष प्रात ॥ १३१ ॥ भूप नास मध्यान मंझार, सन्ध्या अग्न अगन सब छार। अरु षट कर्म धर्म आचार, जासी मूल थकी ततकार ॥ १३२ ॥

दोहा–इनके मध मधके विषै, हो अघ कलकी और।
तेभी इकीस जान दुख, परजाकै दे चार ॥१३३॥

चौपाई–ए सब दुष्यम काल सुरीत, अब सुन अति दुष्यमकी मीत। वीस वरस थितकर तन सवा, अवरति मुक्त दोऊ गत गवा ॥ १३४ ॥ केतेक दिनमें पटन सपाद, तब पात्रा दिनतैं तब छाद। सो वीनसेरु नागे फिरै, वनमें कुपवत फल मख करै ॥ १३५ ॥ अतिदुखमामैं वरषा अल्प, आय कायबल जन्मै सुल्प। क्षीन भयौ इम अंजुलि तोय, कालदोषतै जानो सोय ॥ १३६ ॥ षोडस वरस एक कर देह, काल अन्त जन जानौ एह। अथिर सुभाव कृष्ण तन रुक्ष, दुरभग दुपमल चित दुरलक्ष ॥ १३७ ॥ विकटा त्रितरद वक्र असंत, दुरबल गदानन दग तंत। चिपटी घ्रान रहत आचार, क्षुधा प्यास पीडा अधिकार ॥ १३८ ॥

औरस रोगी रहत इलाज, दुख्य स्वाद ज्ञायक बिनलाज। इस विध काल गंवावें सबै, अति दुख्यमके यंत सु तबै ॥१३९॥ घटत घटत सब घट है वरा, नीरसूख रुखी हो धरा। थल २ फटै रुद्र मही अंत, कछु न बाकी सबी नसंत ॥ १४० ॥ और

कहा अधिकीमें भणू, जित तित प्रलय सुजीवण तणो। इक जोजन भूदग्ध सु होय, अघो अग्नि कारन अवलोय ॥ १४१ ॥ गंगा सिंधु नदीको पार, छिद्र बिले जिह थान निहार। और वेदका खग गिर तनी, तेजु धरा अति निरमय मनी ॥१४२॥ जुगल बहत्तर मानुष तना, कुल जु बहत्तरका उपजना। तिनै लेय खग तितले धरै, तेउ तक छुवक जमगम कर ॥ १४३ ॥ अरु सरिता उपजे कछु मीन, मैंडुक आदिक भक्षन कीन। दीन अनाचारी इस रीत, रहसी अब सुनो मम मीत ॥ १४४ ॥

दोहा—वर्षा होवै सात जब, सप्त सप्त दिन एक।
प्रथम सप्त दिन बात अति, सात निरस जल टेक ॥१४५॥
फिर खारी जल जहर फुन, अगन रु रज जुगजान।
फुन त्रण पुज जु धुम्र जुत, इम सब अंत प्रमान ॥१४६॥
इम अब सर्प्पणी कालमें, घटत घटत घट जात।
चित्रा प्रथ्वी प्रगट हो, आगे सुन सु विख्यात ॥१४७॥
अति दुखमा फुन काल यह, थितबल बुध सुख गात।
अब सब बधती जायगी, उत्सर्पणीमें बात ॥१४८॥
अब सर्पणीको प्रथम जम, छठेकाल समपेख।
तामैं वर्षा सात फुन, सप्त सप्त दिन एक ॥१४९॥

चौपाई—जल वर्षा तैं हो भू सांत, पय वर्षा तैं मृदु कहांत। घृत वर्षा तैं भू चीकनी, विष्ट इक्षु रस मिष्टापनी ॥ १५० ॥ सुधा विष्टतैं सुधा समान, फिर भू होय सुगंध महान। हर दुरगंध सु सीतल होय, मिट आताप प्रमित दिन सोय ॥ १५१ ॥

वाकर दूव तरु फल फूल, होहै नाना विध अंकुर। फैले महक अधिक विह जोय, तब गंगादि विलनवें सोय ॥ १५२ ॥
कुंगल बहचर जुग नर पसु, नाना जुगल रूप ह्वै लघु। तब सब बारज तरल सुभाव, जानम धर्म कर्म परभाव ॥ १५३ ॥
आयु रु काय काल थित जान, छट्टे सम इस आद प्रमान।
फुन पंचम सम दूजो होय, तास अंतमें कुलकर जोय ॥१५४॥

फिर चौथे सम तीजो काल, तामैं त्रेसठि पुरुष विसाल।
होवै चकी हरजुग हली, तीर्थंकर सुन नामावली ॥ १५५ ॥
महापदम एदमानन एव, सूरदेव सेवै हरदेव। देह सुपास सुपार्श्व सुवास, स्वयंप्रभु स्वयंप्रभ भास ॥ १५६ ॥ जय सर्वारमभूतसु निहार, देवपुत्र बगहुत सम पार। जिनकुल नाथ नमैं सुर साथ, बसुम उदंगनाथ सुननाथ ॥ १५७ ॥ प्रष्नकीर्ति प्रष्नोत्तर देव, जयकीरत कीरतगुन गेह। मुन सब्रत सुव्रत दातार, अरे अरि-नास किये सब छार ॥ १५८ ॥ जय निष्पाप सु पाप हरंत, निष्कषाय सकषाय हनंत। विपुल विपुल गुण ज्ञान समोह, निरमल निरमल धीकर मोह ॥ १५९ ॥ चित्रगुप्त त्रियगुप्तसु धार, धरे समाध गुप्त सु अहार। स्वयंबुध सु स्वयंभु भए, अगत अनिविरत होय व्रत लिये ॥ १६० ॥ जयवंतो जय नाथ इकीस, विमल विमल पद दीजै ईस। देवपाल सब जन प्रति-पाल, धर्मोनत वीर्य गुनमाल ॥ १६१ ॥

दोहा–होनहार भावी सु येह, तीर्थंकर चौबीस।
सेव हु जिम गुणसेन वर, लाल निवावत सीस ॥ १६२ ॥

चक्री हल धर जुगहरी, हो त्रेसठ इ ओर ।
दुख सुखमा तीजे सु जम, इकदश कोडा कोर ॥१६३॥
फिर दो तीनरु चार दश, कोरा कोरी काल ।
जघिन मध्यम उत्कृष्ट त्रिय, भोग भूम हो हाल ॥१६४॥
काल तनी इम फिरन है, आरज खंड मंझार ।
म्लेछ पंचरु पांद्र पै, प्रलय न होय निहार ॥१६५॥
सतक वीस त्रस रूस कर, आयु काय घटनांह ।
कोट पूर्व सत पंच धनु, बढै न नर तिह ठांह ॥१६६॥
चौपाई—आगे इस आरज षंडदर्स, भए सलाक त्रिसठ
पुर्स । चक्रवर्त बलदेव मुरार, जिन चौवीस नाम उर धार
॥ १६७॥ जो निर्भय देत निर्वान, सागर भवसागरको जान ।
महा साधु साधू निरग्रंथ, विमल २ कर प्रघट सुपंथ॥१६८॥
सुद्ध भाव करहे सुध भाव, श्रीधर समोसरन युत राव । दाता
श्री श्रीदत्त जिनेस, करहे अमल अमलप्रभ वेस ॥ १६९ ॥
आय इधर प्रभ और निहार, अग्नि अग्नि कर्मेधन जार । प्रभ-
संयम संयम दातार । कुसमांजलि कुसमांग निवार ॥ १७० ॥
शिवगुण जिन शिवके गुण देत, प्रभु उत्साह उत्साह करेत ।
ज्ञाननेत्र ज्ञानाक्ष सुकरही, परमेसुर परमेसुर तुही ॥ १७१ ॥
विमलेस्वर वंदै विमलेस, भास यथार्थ यथार्थ जिनेस । सुप्रभु
यसोधर यसोधर नाद, हरप्रभ कृष्ण कृष्ण लेस्याद ॥ १७२ ॥
मत ज्ञानादि देह मत ज्ञान, कर विसुध मन कुसुध सु हान ।
प्रभु श्रीभद्र भद्र गुन नमैं, सांत सांतकर भवदुख हमैं ॥१७३॥

दोहा–यही चुरीसी तिन नमै, देव सु जिन गुनसेन।
सो मघवा तुझको करो, उज्जल मंगल चेन ॥१७४॥

चौपाई–पुरष सलाका कथन विचार, ग्रन्थ बधनतैं मैं न उचार। दत्त नाम गणधर हम भनौ, सुन मघवाद हरख कर चनौ ॥ १७५ ॥ अब श्रीदत्त देऊ उपदेस, सुनौ सभा सब सुदित वसेस। विन मरजाद काल वीतयो, तामैं जीव दुखी अति भयो ॥ १७६ ॥ विषयन वस कर राग विषाद, तावस भूमो विना मरजाद। सोई विसय जान पंचक्ष, प्रथम फस वसु विषय प्रतक्ष ॥ १७७ ॥

कवित–विस्तारादि मृदु नान द्रव्य सुफर्स राग जानै राग जानै जो भरी। विषमिश्रित देवै सुदावत कता फर्सत मृतु होत ॥ सुवरी मुदमण भूसनाद कठन अति फर्सत वज्रकणी अतिभरे। भूषन चूभे देहमैं बहु विधि सो दुख राग तने वस मरे ॥ १७८ ॥ कुंकुंम बहुते लाद सुगंध सुता फर्सत बहु जन लह चैन। इम कोइ जान मंत्र पढ पढवै ताइ सु वस कर है वस मैन ॥ रूलयम द्रव अंजन सिंदूर बहु फर्सत आनंद लहै अमान। तावस जान करै तंत्रादिक ताकै लाय सुनिज्ञ वस ठान ॥ १७९ ॥ सत्तु तेल रु अंजनादमैं विष मिलाय दे डारे मार। हलवो फर्स विसय वस जातैं कोच फलीको रुंवा डार ॥ अर्कतूल आदिक बहु हरवे जाइ फर्स सुख लह वस राग। भारी भूसनाद फर्सत तसु सुख दुख उपर लख बड भाग ॥१८०॥ उष्म द्रव्य जो महक धूंवा मण कंबल भोगु भोग अपार।

हिम रितुमें दुखदायक सब ही, ग्रीषममें दुखदाय अपार ॥ चाहिम कर मृत्र द विन जो अतिता बम उष्म वस्तकूं खाय। ततछिन दाह उगादिक हो है पट घरमें लुक दम घुट जाय ॥ १८१ ॥ ग्रीषम रितुमें पोन जलादिक अति सीतल फर्सत घर राग। ततछिन दे दुख ये मृत्रादि ही हिम रितुमें दुखदायक लाग ॥ इह आठों पे मंत्र तंत्र अरु जंत्र चले पर बस हो नचै। जूं बाजी गिर गइ कपि फेरे वाके दोमख जू जन मचै ॥१८२॥

चौपाई—सुखदायक मिलने तैं राग, मिले विनाकर दोष अभाग। जो दुखदाय मिले कर दोष, विना मिले अति ही सुख पोष ॥ १८३ ॥ देखो वारन रहै सु छंद, वनमें लीला करै अनंद। महावंम विजियादिक मांहि, उगजोबन तन जन भय दाहि ॥ १८४ ॥ काल वरन मनु जम भय दाय, जासुन शब्द सिंह भग जाय। ऐसे गजकूं जो वस करै, सो नर चतुराई विस्तरै ॥ १८५ ॥ करे चित्र करनी की जोय, ताकूं जर घर सनमुख सोय। देती देख विषय बस फास, आवै मुद मदांध लख तास ॥ १८६ ॥ दाव दाय ततु चोट चुकाय, गजार्थोभि सिर बैठे जाय। अति फिराय मद रहित सु करै, बांध जंजीर रच वस अनुसरै ॥ १८७ ॥

देखो नाग महाबल भरो, फास विसय बस बंधमें परो। सुन जन थावस तप छिटकाय, तो अन दीनन कही बसाय ॥ १८८ ॥ कोई मीठेकू अति चहे, मिले सुरूय अनमिल दुख कहे। मिले लुब्ध खावे जो घना, सोई दुख पावे अति घना

॥ १८९ ॥ त्यौंही षट रस विसय सुभान, मधुर फीका आदिक रस मान। पुंगी एला लौंग तंबोर, वस्तु इत्यादिक स्वादक छोर ॥ १९० ॥ तीखा लवन मिरच कर युक्त, आवैं राच मिले अति शुक्त। तो दुख लहै तथा विन मिले, सो दुख लहै अमित वत मिले ॥ १९१ ॥ यापै मंत्र अंत्र अरु तंत्र, चाले नाना गुन उचरंत। खाय विसय वस करन विचार, परत्रस दुख लह यात न छार ॥ १९२ ॥

जलमें मछली केल करंत, काहुसैं न विरोध धरंत। मांस लोलपी कीर सुआय, जलमैं देवै जाल बिछाय ॥ १९३ ॥ कंट वा लोह बंधो ता मांहि, तामुख चून पिंड ग्हो छांह। रसना लोलप झख तिह आय, चाढै ताहि महा दुख पाय ॥ १९४ ॥ इल तनतर खैंचै झट तांह, कंठ वामीन कंठ चुभ जाइ। सो तड़फत ही छोडै प्रान, रसना वस दुख सहो महान ॥ १९५ ॥ फुनि त्यौं जान सुगंध दुरगंध, राग दोष कर्हि मद अंध। हिम रितुमें भूपाद महान, अगर धूपादिक वामें ठान ॥ १९६ ॥ निसमे सोवै धूंआ रोक, कंठघमर लह दुख थोक। ऐसे गंध लोलपी घने, प्रतिछ और दिष्टांतिक मने ॥ १९७ ॥

गंध लोलपी पंपै भृंग, सूर्योदय आतिष्ट उमंग। लेत लेत गंध तृप्त न भयो, एतेमें दिनकर छिप गयो ॥ १९८ ॥ मुद्रित भयो कमलमें भृंग, कंटक चुभ रु मिचो सरवंग। तड़फत ही तिन छोडे प्रान, घ्रान विषय वस ए दुख जान ॥ १९९ ॥ नेत्रसु विषय मूल पण नाम, सेत रु रक्त पीत हरि स्याम।

देखत मरे दृष्टिविष सर्प, नार लखे उपजै तन दर्प ॥ २०० ॥ चाह एक इकको जो धरै, मिले राग अमिल दुख भरै। देखो सारंग देख पतंग, त्रिप्तनेक विलोक अभंग ॥ २०१ ॥ मुदित जाय दीपकमैं परै, सहै दुष्य ततछिन जल मरै। नैन विसय ऐसो दुखदाय, यातैं जान तजो बुध राय ॥ २०२ ॥ श्रोत्र विसय जुगसु सुर दुस्सुरो, यह प्रतिक्ष मोह निमंतरो। सुनते जार पुरुष जो कोय, सोई तुरत ताहि वश होय ॥ २०३ ॥ केई पुद्गल राग बसाय, दीपकसैं दीपक बल जाय। राग मलार लाय घन घेर, बिन रितु जल बरसावै हेर ॥२०४॥ इत्यादिक पुद्गल वस घने, तो जीवन गन ना को गने। उरग कान बस पावस थाय, तथा शिकारी बनमैं जाय ॥ २०५॥ गन सारंग अटन हो देख, गावै पंचम राग वसेख। कूदत फिरत हिरन गन सुनो, जित तित थके सुमुरत मनो ॥ २०६॥ थक मपंक तब देख मृगार, मृगया करै चांप सर छार। लगत सु तीर पीर मृग सहै, तरफ प्रान तज परगत लहै ॥ २०७ ॥ राज तने बस जो को होय, ते ऐसी गत पावै सोय। इम इक एक विसय वस भए, ऐसे ऐसे दुख तिन लिये ॥ २०८ ॥ जे पंचाक्ष विसय वस दीन, ते दोऊ भवमैं दुख लीन। बुध भव त्रिन भोवनमैं फिरै, सो कुपांच निगोदमें परै ॥ २०९ ॥ फुन कषाय सब ही दुखदाय, पहलीवार नरक ले जाय। पाह नरेश क्रोध नहीं घटै, मरन प्रजंत जीव नित रटै ॥ २१० ॥

माठा थंम समान सु मान। मुडै नहीं वा जावो प्रान।

मायावस बिडावत बान, सरल रंच नही करै बखान ॥२११॥ लोभ लाखके रंग समंग, कपडा फटै फटै नही रंग। अपने रंचक स्वारथ हेत, परको बुरो महा कर देत ॥ २१२ ॥ फुन अप्रत्याख्यानी चार, तिनको धारै जीव अपार। समय पाय समझाए छार, सोले तिर जग गत अवतार ॥ २१३ ॥ क्रोध रेख हल थंभ मानस्त, मेष श्रृङ्गवत मायाग्रस्त। गाडी धुरा मैल सम लोभ, अब इन कथन सुनो तज क्षोभ ॥२१४॥ यही दीपमैं पुव्व विदेह, पुषलावंती देस सनेह। उत्पल खेट नगरको भूप, वज्रजंघ नामा बुधि कूप ॥ २१५ ॥

श्रीमती राय तनी पट नार, इक दिना पाई यह सार। पुंडरीकपुर और अनूप, वज्रदंत चक्री तिहु भूप ॥ २१६ ॥ श्रीमति पिता सुवर वैराग, अमिततेज सुतकू कर राग। कह्यो राज करवो नही लेय, सम विष भुक्त सुधी लख हेय ॥२१७॥ पुंडरीक पोतेकू देय, आप आतमा काज करेय। सो सिसु पैन राज सब थंभै, वज्रजंघसु बुलायो तबै ॥ २१८ ॥ इम चरके सुन वज्र सु वैन, ततछिन चलौं करन सिसु चैन। मगमैं सर्प सरोवर तीर, डेरा तहां करो धर धीर ॥२१९॥ नृपकै भोजन हुवो तयार, तब मनमैं इम कियो विचार। जो मुनको भोजन दे भखैं, तो निज जनम सफल अब लखै ॥ २२० ॥

तित चारन जुग आए मुनी, दमवर सागरसेन जु गुनी। तिनने यही प्रतग्या धार, आज विपनमें लेय अहार ॥२२१॥ पूरव पुन्य उदयतै भई, दातृ पात्र विध सब मिल गई। दपति

नौधाभक्ति सु करैं, सप्त सुगुन दाताके धरे ॥ २२२ ॥ विध-
पूर्वक मुन भोजन धटो, तब सुर पंचाश्चर्य सु ठटो। ले अहार
ले अहार मुन गए एकांत, गुर लख चार जीव भए सांत
॥ २२३ ॥ फिर नृपतिन दर्सनको गयौ, मुन लख हस्त जोर
सिर नयौ। धर्मवृद्ध दे नृप उपदेस, सुनौ धार आनंद महेस
॥ २२४ ॥ फिर निज भव पूछे मुननपै, सुन अतीत भवगुर
इम अख। प्रथम दीपमें अपर विदेह, गंधलदेस सिंहपुर जेह
॥ २२५ ॥

तहां श्री ब्रह्मा राजकंवार, बालकपनमें मुनव्रत धार। खग
विभूत लख करो निदान, प्राण त्याग तित धम गिर थान ॥२२६॥
उत्तरदिस अलकापुर भूप, हुवो महाबल खग गुन रूप। श्रावक
व्रत पाले बड़भाग, प्रान समाध मरन कर त्याग ॥ २२७ ॥
दुतिय सुरगमैं श्रीप्रभ जान, भयो देव ललितांग महान। सो
चय वज्रजंघ तू भयौ, फुन भावी भव सुन मुन चयौ ॥२२८॥
मरन लहै निजघरमें जान, लह भूभोग पात्र फल दान। उत्तर
कुरु उत्तम सब भोग विविध लहै सो पुन्न नियोग ॥ २२९ ॥
तितसूं चय ईसान दिव मांहि, श्रीधर देव होय रुक नांहि।
श्रीब्रह्माते भोग सुमंत, श्रीमति तुम तिय भई गुनवंत ॥२३०॥

फुन तिय लिंग छेद सुर होय, सो तुम कनै सयंप्रभ जोय।
श्रीधर चुत जंबू दीपेस, पूर्व विदेह महाकछ देस ॥ २३१ ॥
होय सुदृष्ट सुसीमापुरी, एक समय नृप दीक्षा धरी। कर
समाध हो परम सुरेंद्र, पुन्डरीकपुरमें चय इन्द्र ॥ २३२ ॥

होय सु वज्र नाभ चक्रीस, फिरत परिग्रह होय मुनीस। शुद्ध भाव तन धार नतिंद्र, सरवारथ सिद्धमें अहमिंद्र ॥ २३३ ॥ तितस चयकर प्रथम जिनेस, भरतक्षेत्रमें होय महेस। इम नृप भव सुन हर्ष प्रकास, चार जीव बैठे मुन पास ॥ २३४ ॥ नोल सिंह कपि सूकर एह, सुनत आय शांत भए जेह। लख संसै कर नृप पूछंत, शांत भए किम कारन संत ॥ २३५ ॥ फल भक्षी अरु क्रूर सुभाव, इन हिंसकको भेद बताव। तब मुन कहैं सुनो भूमेस, यही देशमें गजपुर वेस ॥ २३६ ॥ सागरदत्त तिया धनवती, नृप कोठारी सुत दुग्मती। उग्रसैन कर चोरी सदा, घृत तंदुल नृपके ले पदा ॥ २३७ ॥

दोहा—वेप देख निज पुत्र इम, नित समझावे तास।
सो नहीं मानै रंच भी, कर निसंक सुद ताप ॥ २३८ ॥

चौपाई—वेरयानै दे गहतल रक्ष, बांध बुरी विध मारो दक्ष। जो मैं भी होतो बलवंत, नृपकूं दुख देतो सु अनंत ॥ २३९ ॥ प्रत्याख्यान क्रोध इन धरो, सो मर सार्दूल अवतरो। विजय-पुरीमें नृप महानंद, तिय वसन्तसेना गुणवृन्द ॥ २४० ॥ ता सुत हरवाहन जुत मान, मात तातको विनै न ठान। इक दिन आज्ञा लोय सु भजो, लगी ठमक गिरियो दुख सजो ॥ २४१ ॥ मस्तक सिल लग फूटो जेह, सूर मान जुत मर भयो एह। धान्यकपुरमें वनक कुवेर, नागदत्त सुत छल जुत हेर ॥ २४२ ॥ दुहिता व्याह निमित्त वित जुदा, यातैं गाडहाटमें मुदा। नाग-दत्त बहु छलबल संच, याके हाथ न आयो रंच ॥ २४३ ॥

सो ताकी आरत कर मरो, यह माघावस रूप अवतरो। प्रतिष्ठत पट्टणमें वैस, धनलोभी लुब्धक नामेस ॥ २४४ ॥ करै कन्दोई पण बुध धरै, एक समय नृप जिनगृह करै। ढोवै ईंट मजूर सु हुवा, इक ईंट दे नित पुवा ॥ २४५ ॥

फोड ईंट कनकमय जान, लगो लोभ ताकूं अधिकान। इक दिन निज पुत्रीपुर गयो, अंगजकूं ऐसे कह दियो ॥ २४६॥ लावै ईंट मजूर सु तिनै, पुवा दे ले ईंटमि भनै। ऐसे कहर गयो आप, सुतन कियो पीछे इक काम ॥ २४७ ॥ ईंट जिनालेकी कनमई, लेको विघ बांधै अधिकई। आय पूछ सुतसूं कर कोप, लट उपल कर मारो रोप ॥ २४८ ॥ फुनि निज पग तोरे कर लोभ, सुन नृप दण्ड दियो कर छोभ। सो मर भयो नोल यह आय, इम नृपसूं माखो मुनराय ॥ २४९ ॥ जाती सुमरन भयो इम राय, तुमरो दान देख हरषाय। अनमोदन कर ता परसाद, भोगभूमि ए चव जिय लाध ॥ २५० ॥

अवसैं अष्टम भवके मांहि, तुम जिनवर ए सुत उपजांहि। देव सयंप्रभ चर श्रीमती, हांसी नृप लह तुम सम गती ॥२५१॥ तुम जिन पात्र दात्र सो भूप, तब जुग प्रघट करो जुग रूप। तुम सब सिवपुर जावो यथा, यह कषायकी पूरन कथा ॥२५२॥ फुन चव प्रत्याख्यानी जान, क्रोध लीक रथ काष्टित मान। छल गोमुत्र लोभ तन मैल, इनको तुछ उदै नरगैल ॥२५३॥ फुन सज्वल क्रोध जल रेख, मानवैत छल चवर परेख। लोभ हलदसम मुनकै उदै, ऐ चो सुर पद दे सिव मुदै ॥ २५४ ॥

अंध रूई अपंगु कुबरा, गहला मूक रोगकर भरा। उनकी हांस करै वह काय, सो मर तास मही दुख पाय ॥ २५५ ॥

जो परपीडे कर अति हांस, सो लहै नरक निगोद कु वास। या विध हांस करम दुखदाय, ऐसी जान तजो भो राय ॥ २५६ ॥ भोग और उपभोग जु दर्व, दस विध बाह्य परिग्रह सर्व। पूरव पुन्योदित जो पाय, तिनमें एकमेक हो जाय ॥ २५७ ॥ सो रत कर्मोदय वस मरै, तो फिर दुर्गतमें अवतरै। वा अघ उदय मिलै विषयुक्त, ताग्रह तडफ तडफ तन मुक्त ॥ २५८ ॥ इन सब दर्व विषै जो राच, पूरव पुन उदै सुक दाच। तामें तै कोई नस जाय, तब अति आरत कर दुख पाय ॥२५९॥ ता आरतमें छुटै प्रान, सो दुरगत दुख लहै निदान। अथवा सोक उदैस्य कोय, करै पुकार सु रोय सु रोय ॥२६०॥ सिर छाती कूटै अकुलाय, वा तिस सोक विषै मर जाय। दुरगत जाय सहै दुख घना, जानै कोन केवली विना ॥२६१॥ उपर कहे सात भय जान, ताकै उदै सु छूटै प्रान। सोवी भव बनमें बहु भ्रमै, सुगुरु सीष विन किम शिव गमै ॥ २६२ ॥ असुचि द्रव्य नाना विध पेख, रोग ग्रसत काहु जिय देख। प्रान मोर थूकै कर ग्लानि, हो भव भवमें तास समान ॥२६३॥ कारन मिलै नकारज होय, दोनोंसें जिह एक न कोय। मनमें नरके त्रियकी चाह, नारी मनमे नर उछाह ॥ २६४ ॥ होय नपुंसकके दोऊ चाह, वा तिहु भाव इकिक थाह। ताही भाव उदै जो मरै, सो मर नरक निगोदे परै ॥ २६५ ॥

कथा कुमावती सुन एक, सिंधू रमन समुद्र विसेख। तामैं रावो मछ महान, लंबो जोजन सहस प्रमान॥ २६६ ॥ सो मुख फाड पडो जल मांहि, ता मुखमें जिय आवै जांहि। सो काहूको कुछ नहीं करे, भूख लगे जब उदर सुमरे ॥२६७॥ जब तो हिंस्या करहै सही, और समय मनमें हूं नही। ता दगमें तंदुल लघु मछ, सो सब देख धुरे निज अक्ष॥ २६८ ॥ जो ऐसो तन मुखमैं धरूं, तो सबहीको भक्षन करूं। ऐसे भावनके परभाय, सो मर नरक सातवें जाय॥ २६९ ॥ इम लख छांडो विसय कषाय, कह्या दत्त गनधर ए भाय। सुन सब सुरनर मुद गुन रास, विषय कषायसु भए उदास ॥ २७० ॥

फुन भाषे गनधर सुन राय, षट लेस्या जियकूं दुखदाय। कृष्न नील कापोत रुपीत, पदम सुकल गह तज विपरीत॥२७१॥ सुन इनको दिष्टान्त अबार, षट जन रहै इक नगर मझार। एक समै ते क्रीडा हेत, चले विपनमें हर्ष समेत॥ २७२ ॥ तित तिन लखी सफलित सहकार, निज लेस्या सम भाव विचार। याको जडसे काटो यार, तब सब फल भख हैं निरधार॥२७३॥ हर लेस्या धारीके वैन, सुन दुतिये बोलो फिरु ऐन। याकी साषा छेदो सब्ब, हम तुम फल षावेंगे अब्ब ॥ २७४ ॥ फिर तीजो कह फल जुत डाल, लघु छेद पावो दरहाल। चौथो कहै अब सब हरो, ताको माखो और क्या करो॥ २७५ ॥

पंचम कहै पक फल चूंट, चूवो अरु सब तरुफल छूट। षष्टम कहै पडे भू मांहि, भखन जोग इन विन अन नांहि॥२७६॥

निज निज लेस्याके परभाव, भए भाव तिनके तिह ठाव । छहौ त्रिषै खाये नहि किने, तिन भावनवस अवकर सने ॥ २७७ ॥ वाफल नर्क निगोद मंझार, सहै दुख नाना परकार । इम सुन लेस्या केतेक भव, अशुभ त्याग शुभ ग्रहन करंत ॥ २७८ ॥

दोहा—फिर गनधर कहै सबनकू, सात विसन द्यो छार ।

जूत मांस मद नगर तिय, खेट चोरि परनार ॥ २७९ ॥

गीतछंद—अघदूत मथ संकेत आपद हेत अजस सु खेत है । अरु दालिद्रा करि झटकी धुज विसनराज परे तहे ॥ फुन सख बडाई सुजस धन विश्वास चन्द्रकू ग्रहनए । सो तजो बुधजन विसन सात सु सात नर्क निस नए ॥ २८० ॥ फुन भूमि तरु गिरते न उपजे असुच अति घिन रासको । जेकर सुदीनन पशू हिस्या दुष्ट इम मख मांसको ॥ अव देख अपराधन हिया नहि मया तन मन वै नए । सो तजो बुधजन विसन सात सु सात नर्क निस नए ॥ २८१ ॥

कृमरासि निषध कुवास मदिरा जाय सुच ता धुवत ही । सो पिये तन दह जाय सुध मुखमें कुकर जुत चुवत ही ॥ तव जननी तिय सम जान गह लावत भनै दुरवै नए । सो तजो बुधजन विसन सात सु सात नर्क निसै नए ॥ २८२ ॥ धन हेत प्रीत पीलव गुडजू करै नाहन तुरजू । अरु खाय फल मद नीच मुख लव फरस गंडक सूरजं ॥ अत क्रूर भावरु नर्क दूती मोनगनकामें नए । सो तजौ बुध जन विसन सात सु सात नर्क निसै नए ॥ २८३ ॥ हिस्या न अस तन धन त्रिया पर हरन

मद वैस्या रमें। अर दूत कर यन नगर बिन बनमें फिरे त्रण मुख धमें ॥ इम मृगी दीनपे दया बिन दुठ खेट कर अधमें नए। सो तजो बुधजन बिसन सात सु सात नर्क निस नए ॥२८४॥ भय जुत चु कायल रहै नित वित हरे डरना मरनकौं। मारे धनी लख घने दुर्जन तब गहै किह सरनकौं ॥ नृप तो परो पउ डाय सुत चौंरी अमित अघ नए। सो तजो बुधजन बिसन सात सु सात नर्क निसे नए ॥ २८५ ॥ दुत दीपसम परनार तज लख कुजन पडत पतंगसे। सो सहै दुख निज दहै तन तज शीघ्र मार मतंग्रसे ॥ इम लख सु अदन विसय बसकर अनीत नसे नए। सो तजो बुधजन बिसन सात सु सात नर्क निसे नए ॥ २८६ ॥

चौपाई—इम सुन मघवादिक बहु जने, त्यागत भए बिसन अघ सने। कहै दत्त गनधर फिर इम, दुखमें सुख मानत जग जीव ॥ २८६ ॥ ताको सुन दिष्टांत विशेक, भूलि भ्रमें बनमें जन एक। भरन थाइ नहि दगरन कही, दन्ती सुपंथी देखो तही ॥ २८८ ॥

सोरठा—गज लागो ता पूठ, पथिक करी लख आवतो। भगो न यामें झूठ, चितवे काकी सरन अब ॥ २८९ ॥

कवित्त—क्षुधा तृषा अरु उष्न पीड अति मगको खेद भयो अमगार। भमत भमत इक वट तरु देखौ जम सम पृष्ट लगो सु डार ॥ ता तरु तल इक अंध कूपके अंत पड़ो अजगर मुख फार। मध चौ दिश त्रणमें चोफन घर तित इक सर जड

लटक निहार ॥ २९० ॥ ताकूं अलि सित मूषक काटै इम निरखत सो आयो तत्र। गज भय सर जड गइ तित लूंबो दावतके अह आदि सर्वत्र ॥ मक्ष म्हाल थोवट साखा पर ता गइ सूंड हलावै करी। मक्ष आय तनकू काटै सहत बूंद इक दो मुख परी ॥ २९१ ॥ तब एक खग नभ मगमें जातो इम लख दुखी दया मन आन। या ढिग आय कहै इम नभचर अहो भद्र तू बैठ विमान ॥ तब यह भनै बूंद इक मधुकी जो अरु मो मुख परै महान। तब उस स्वाद लेय कर चालू जब फिर पडी बूंद इक आन ॥ २९२ ॥ खग कहै लेय चुको रस अब चल क्यों नाना दुख सहै इत भांत। पंथी कहै और इक आवै ताइ स्वाद कर चलहु साथ ॥ इम विद्याधर बहु समझायो समझो रंच न सही असात। ऐसै सब जगवासी जनकी रीत जानियो तुम भी भ्रात ॥ २९३ ॥ भव वनमें पंथी सम प्रानी रोग सोग मम भूख रु प्यास। चिंता सम है पीड उसनकी नाना क्लेश खेद मग मास ॥ काल करी सम पीछै लागो आयु सरकडा जड गइ लूंब। निस दिन ऊंदर सम नित काटै चौगत सम अह जरा सम कूंब ॥ २९४ ॥ तल निगोद सम अजगर पर जन माखी सम तन धन सम खाय। पुत्रादिक सम स्वाद बूंद मधु अरु चाह सम दुख विसराय ॥ इम दुखमें लख दुखी दया कर गुरु विद्याधर टेरत आय। कहकू एक बूंद अनस्वादू फिर गुर कह अब तो चल भाय ॥ २८५ ॥

चौपाई—ऐसै सुगुरु दया उपजाव, बहोत बार ताकूं

समझाय। समझो नांहि रंच सुख हेत, सो नाना विध दुख्ख सहेत ॥ २९६ ॥ इम गुर तो उपगार ही करै, समझै नहीं तु फिर क्या करै। यातै लख तुम समझो भाय, तजो कुमारग जो दुखदाय ॥ २९७ ॥ इम मघवादि घने नर सुरा, तिरग इरख सुन तन मन धरा। काचित मुनिव्रत काचित गृही, केतांन जिय सम्यक् धर ही ॥ २९८ ॥ फिरकर प्रश्न जु मत्र भूपती, जिनवानीकी संख्या किती। कहै दत्त सुनिये नर नांह, जिनवानी दध अगम अथाह ॥ २९९ ॥ निज निजमत भाजन भर सबै, कहै प्रमान सु तावत फबै। पण श्रुतकी जो संख्या सार, वृषभसेन गणधर उचार ॥ ३०० ॥ वृषभदेवकी धुन अनुसार, त्यौं चन्द्रप्रभ धुन विस्तार। ता समभैं रचि करतो कहुं, अक्षर भेद प्रथम वरनहु ॥ ३०१ ॥ अ इ उ ऋ लृ ए ऐ ओ औ, ह्रस्व दीर्घ प्लुत कर सहु। ए सत्ताईस अंक प्रमान, विंजनतै तीग बच भय जान ॥३०२॥ क ख ग घ ङ, च छ ज झ ञ, ट ठ ड ढ ण, त थ द ध न, प फ ब भ म, य र ल व श स ष ह।

दोहा—अं अनुसार विसर्ग अः, जिभ्या मूलेपु ध्यान।
दोऊ समस्या ता लखो, चौसठ अंक प्रमान ॥ ३०३ ॥
कोई संसै धर कहै, ए ऐ ओ औ चार।
कहो कैसे ऐ लघु भए, सुन उत्तर निरधार ॥ ३०४ ॥
सहंस्कृतमैं दीर्घ ए, पराकिरतमैं ह्रस्व।
वा भाषा बहु देसमें, तहां ह्रस्व सर्वस्व ॥ ३०५ ॥

चौपाई—अष्ट थानतैं उपजै एह, ताको भेद सुनो धर नेह।
कंठोत्पत सुर जुग रुक वर्ग, वहु महकार रु नवम सर्ग ॥ ३०६॥
फिर जुग सुरयस पंचम पांत, ताल्हूत्पत रसना फर्प सांत। फिर
जुगसुर पवर्ग मिल सात, ए जुग होट सपोंत्पात ॥ ३०७॥
फिर जुग सुर टवर्ग रख नोय, उर्धोत्पत मुर्धनि कह लोय।
ताल्हूपर रसना फरसंत, तस्या ग्रोलट झट उचरंत ॥ ३०८॥
जिभ्या मूली रसनाकार, फिर जुग सुर रु तवर्ग सकार। रद
रसना फर्सोष्ट निसांक, क च ट त प पण वर्गा तांक ॥३०९॥
ए अनुस्वार रच थल अरु थान, तिन दोऊसै उत्पति जान।
वर्णोपर जा सुननुसार, सो इक नासातैं उचार ॥ ३१० ॥ ए
ऐ कंठ ताल्हुपै कहै, ओ औ कंठ होठसै लहै। दंतोष्टोत्पत एक
वकार, इय वर लय उरतै उचार ॥ ३११ ॥

दोहा—आदिसु विंजनके विषै, मिलै प्रथम सुर आय।
तब वो व्यंजन ह्रस्व हो, फुन सुर मिल गुर थाय ॥३१२॥
पहले सोलै स्वर कहे, ऋ ॠ ऌ ॡ दार।
सेस दुपट व्यंजन मिले, चारैं रूप निहार ॥ ३१३॥
संयोगी इत्यादि फुनि, मिलै परस्पर अंक।
सो संयोगी कहत अरु, सम मिल दुत्त कइंक ॥३१४॥
रेफ ऊर्ध्वं जल तुम्ब वत, भाषामें लघु दीह।
कहुं संयोगी रेफ दुत्त, लखे सुबुद्धि जोइ ॥३१५॥
विंजन लघु गुर रेफ फुन, युक्ता संस्कृत मांहि।
लहु गुर दुष प्राकृतमें, इम त्रिय वर्ण लखांहि ॥३१६॥

चौपाई–इन अंकन करिकैं पद होय, सो सब रिषभकथामें जोय। मध्यम पदमैं संख्या जान, द्वादशांग रचना परवान ॥ २१७ ॥ सीस करा दाशांग जु नरा, त्यौं श्रुत द्वादशांग मित धरा। सुना चार जुत आचारंग, सहस अठारै पद सरवंग ॥ २१८ ॥ जामें स्वः पर समय बखान, सूत्र कृतांग दुगुन सु जान। त्रिय ठानांग बियालीस सहस, भिनव इकाद दसांत लखेस ॥३१९॥ जामैं द्रव्य क्षेत्र यम भाव, हो समानता कथन अथाव। संवायांग तुर्य पद जान, चौसठ सहस लाख इक मान ॥ ३२० ॥ जामें किए सो प्रश्न विसेस, परमित साठ हजार जिनेस। जानन त्रियकु सु वाघ्य प्रगसि, ठाइस सहस लाख जुग लिस ॥ ३२१ ॥ जामै जिन हर चक्री आद, धर्म कथा सो कथन अगाध। ज्ञात्र कथांग पट मयद धार, पंच लाख छप्पन हजार ॥ ३२२ ॥ जामै श्रावक वृत सर्वांग, सप्तम उपासका धेनांग। सत्तर सहस रुद्र लख पदै, ठाईस सहस तेईस लक्ष जुदै ॥ ३२३ ॥ लहि थितांत केवल निर्वान, सो केवली अन्तकृत जान। दस दस इक इक जिनके समै, हो दसांग अन्त कृत धर्मै ॥ ३२४ ॥ फुन सुन ता सम लहै अनुत्र, इनको कथन जहां सरवत्र। नुत्तुरपाद दसांग पदध्य, सहसं चवालीस बणवै लध्य ॥ ३२५ ॥ त्रिय नर पसु त्रिजुग सुर अष्ट, निज तन निज तनकूं दे कष्ट। नवचेतन पुद्गल कृत दसौं, सहै उपसग सुघ मुन ऐसो ॥ ३२६ ॥

छप्पै–जामै याविध प्रश्न वरत खोई छिप करमें। चित

लाभ अलाभ धान्य धन फुन दुख सुखमें ॥ जीवन मरन इत्यादि तीत भावी फुन वरतत। काल सम्बन्धी भण यथार्थ अपाय रूप अति ॥ अरु अक्षेपनि आदिक चतुर। होय कथा जापै सकर ॥ पद सोल सहस तिर नव लख। कहै प्रश्न व्याकरन वर ॥ ३२७ ॥

चौपाई—जेह कर्मोदय तीन प्रकार, सो द्रव्याद अपेक्षा चार। जामैं सो विपाक सूत्राय, पद इक कोड चोरासी लाख ॥ ३२८ ॥

अडिल—पद प्रमान ग्यारै अंगनको सुन अबै, दो हजार चव कोट लाख पंदरै सबै। दृष्टिवाद पद इकसो आठ करोडजी, छप्पन सहस लाख अठसठ पण औरजी ॥ ३२९ ॥

दोहा—तीन सतक त्रेसठ सकल, कथन कुवादी अत्र।
मूल भेद तिनके चतुर, सुनो मित्र सर्वत्र ॥३३०॥
क्रियवादी इकसत असी, अक्रियवादी चुरासि।
सत सठ वादकु ज्ञान मित, विनय बतीस प्रकासि ॥३३१॥

छप्पै—वस्तु स्वभाव नेहचै इक दोय समय त्रिय पूर्व विधो। दयतुर्य पं मैं उद्यम धर जिय ॥ स्वार नित्या नित्य गुनै चव सेहु वीसवर। नव पदार्थ सु गुनै फेर इकसत असी कर ॥ एक्रियावाद सुन अक्रिया। रचै परतैं तरान गुनै ॥ फिर पहले पांचनतै गुनो। इम सत्तर ए अरु सुनो ॥३३२॥

दोहा—फिर नेहचै अरु कालसू, गुनै तब्बर दस चार।
दो सत्तर सु मिलाय फिर, चौरासी निरधार ॥३३३॥

नो पदार्थ सत असत पद, गुने तरेसठ जान ।
कोई कहै अज्ञात पछ, केई असद हठ ठान ॥३३४॥
कोई सत्य असत्य पछ, कोई अव्यक्तव्य धार ।
सब मिल मतसठ ए भए, ते अज्ञान निरधार ॥३३५॥
मात तात नृप देवि सिसु, वृद्ध तपस्वी जान ।
ए वसु मन वच दान तन, चवगुन बत्तीस मांत । ३३६॥
विनै करै तिनकी विविध, विनय सु वादी जान ।
पण अज्ञान मत पक्षतैं, करैं न सो परमान ॥३३७॥

कवित्त—ज वदया विन क्रिया घनेरी, करै मूढ हिंसा अधिकार। ऐसे क्रियावादी जानों, निज निज पक्ष धरैं हंकार॥ क्रिया रहित फुनि उदय महारत, उद्यम विन सु अक्रियावाद। ज्ञान मांहि बहु तर्क करत है, एकएक सुपक्ष परसाद ॥३३८॥ सो अज्ञानवाद अति मूरख, सुन अब विनयवाद विस्तार। विनय मूल है जैनधर्मको, पण ते विन विवेक सविकार ॥ निज निज पक्ष धार हटकर है, आय सम भी कहै गार। तौ जिन मतमें कैसे मिलहै तिन सिरमें दीजै रज छार ॥३३९॥ विनय भेद नहीं लखै जथारथ, मूर्त्ति मात्रकूं जानै देव। पत्र मात्रकूं जान शास्त्र फुन भेष मात्रकू गुरु कर सेव ॥ नीर मात्रको तीरथ मानै, इक नय पक्ष अंगको ग्रहै। सो सब त्रथा ताम्र रूपी सम, मूरख गहै पंडित क्यों चहै ॥ ३४० ॥

चौपाई—दृष्टवादमें कथन इत्यादि, ताके भेद पांच कहै साद। प्रथम प्रकर्म सूत्र अनुयोग, पूरवगत चूलका योग ।।३४१॥

कवित्त—जो जगमें प्रसिद्ध गतनके अंक इकादिक नव

परजंत। ए तो ऊपर तल श्रेणीवत फुन पंक्तिको सुन किरतंत॥ इक दस सतक सहस इक इक नभ धरे होहि दस गुणो महंत। इम वा मीठ नभ परपाटी फुन कर्माष्टक मन भगवन्त॥३४२॥

छप्पै–श्रेणी बंध अंक जोडै संकलन कहै तसु। घटै जोड़में अंक रहै बाकी विरल नल सु॥ पाटी आदि फलाव जगतमें सो गुनकार। राम मांहि कर भाग जितो सो भाग रजु हार॥ समरास परस्पर जो गुनै। सो वर्ग दुवादु चार॥ इम फुन सम राशि त्रिवार गुन। सो घन चव चोसठ कार॥ ३४३॥

दोहा–चवचव गुन सोलै वरग, मूल चार वर्ग मूल।
फुन चौसठि घनको सुधी, करै चार घन मूल॥३४४॥
लंब व्यास चव विलसत्यों, उन्नतके कर खण्ड।
विलस विलस सम त्रिविधि कर, सब चौसठ जनमंड॥३४५॥
जामें इत्यादिक प्रमित, क्रम कर कह्यौ विधान।
बयासी लाख रु कोट इक, सहस पंच पद जान॥३४६॥

चौपई–जामें ग्रहन उदय चय ग्रदा, ससिके भोगादिक संपदा। वरनन चन्द्र प्रज्ञप्ति सार, छतीस लाख पद पंच हजार॥ ३४७॥ जामें सूर विभव उदयाद, तिय भोगादिक कथन अगाद पंच लाख पद तीन हजार, सो आदित प्रज्ञप्ती सार॥ ३४८॥ सवातु तीन लाख पद लिप्त, कथन सु जंबू दीप प्रज्ञप्ति। सब द्वय दीप प्रज्ञप्ती सार, बावन लाख छतीस हजार॥३४९॥ जामें पुद्गल इक जुत रूप, अरु जीवादिक पंच अरूप। जीवाजीव भव्य जुत भेद, षटद्रव्यन विस्तार अखेद॥३५०॥

दोहा–जामें यह वरनन सकल, व्याख्या प्रज्ञसी वेद ।

सहंस छतीस चुरासि लख, पदपर कमे सु एद ॥३५१॥

छपै–दृष्टवादमें दुतिय सूत्र है सोचौ विधि चिन । जीव अबंध स्वपर परकासक करत मुक्त बिन ॥ ३५२ ॥ निर्गुन अस्त नास्त इम पहलो नाम अबंधा । धुन केवलि श्रुत समृत वचन गनधर कृत धंधा ॥ मुनि वच पुरान तिहु मिलि भए श्रुत समृत सुपुरान उन । फुनि नयतैं त्रय निश्चै कथन सहंस पांच पद जोग ॥ ३५३ ॥ भेद तुरीय अंतागमें पूर्व गत दस चार । एक सतक पचाणवे इनमें वस्तु निहार ॥ ३५४ ॥

अडिल–दस चौदे वसु ठारे बारै बार है, सोलै विस क तीस पंदरै दस चार हैं । दस दस मिलि भई एकस पचानवे, वीस वीस सब मांहि यहांवड़ जानमें ॥ ३५५ ॥

दोहा–उंआलिस से सबनकी, भइ यहां वड सार ।

प्रथम नाम उतपाद है, तामैं दस अधिकार ॥ ३५६ ॥

जीवादिक जे वस्तु हैं, बहु नय पेक्षा साध ।

उतपाद वय ध्रुव आठकर, त्रिय तिहु जग गुन लाध॥३५७॥

भए भेद नव एककें, इम सब भेद अनेक ।

नवमें भिन भिन इम कहे, तसु करोड पद एक ॥ ३५८ ॥

छपै–फुनि अग्रायन दुतिय पूर्वके छनवै लाख पद । तामैं चौदे वस्तु सुनत हों सकल पाप रद ॥ पूर्वांत अपरांत ध्रुव अध्रुवन लब । अध्रुवंस पणि ख्यात कल्प अष्टम अर्थक सब ॥

मोमावय रु सर्वार्थ कलप निर्वान अतीतानाम्र। फुनि सिद्ध उपाधि चतुरदस एव वस्तु कहे अध्याय ॥ २५९ ॥

चौपाई–तामैं पंचम अचवन लब्ध, तहां यहां बड विसत अब्ध। कर्म प्रकृति यहां बड तुरी, चौबीप जोग द्वार तित धरी ॥ २६० ॥

छपै–कृत वेदना स्पर्श कर्म परकृत बंधन घट। निबंधन प्रकृतमें उपकृत उदय मोक्ष संक्रमगट ॥ लेस्या लेस्यरु कर्म बहुर लेस्या सुनाम धर। साता सात रु दीर्घ ह्रस्व बहु धारन फुन कर ॥ पुद्गलात्म निधता नितब सुन कांचित अनिकांचितरु। फुनि कर्म स्थित कर कंध सब अल्प बहुत इम कथन वरु। २६१ ॥

चौपई–ऐसे भेद अन्य सर्वत्र, ग्रंथ वढन भय कहे न अत्र। और महा सिद्धांत मझार, ताको देख करो निरधार ॥ २६२ ॥ जहां आत्म पर जुग क्षत्राद, वीर्य कथन सु वीर्यानुवाद। सत्तरलाख सुपद की कथा, साठिलाख सु अस्तनास्तथा ॥ २६३॥ जहां ज्ञान पणतीन कुज्ञान, पंचमज्ञान प्रवान सुवाद। एक घाट पद एक करोर, सत प्रवाद षष्टम इककोर ॥ २६४ ॥

छपै-तहां सचन चत्स्कार कारण दोय गिन। इक स्थान जो कंठ हृदादिक प्रथम सोय मन। फुनि प्रयत्न पक्षभेद सोय सुन तन तन फर्सत। वरन उचारे सोय स्पृष्टता किंचित फर्सत ॥ भण वर्ण सुइपत्स्पष्टता तन उघाड़ कह विव्रता। किंचित उघाड़ मन तुर्य इम सोई ईषत विव्रता ॥ २६५ ॥

चौपाई–तनतें तन ढक मणसे व्रतंत, यह परिचय तन जान भनत। वचन प्रयोग दोष विधि जान। श्रेष्ठ भला दुठ बुग वखान ॥ २६६ ॥ फुन भाषा बारे परकार, अभ्या-ख्यान प्रथम निरधार। को करता को अकरता भव्य, तिन तट मन हिस्या कर्तव्य ॥ २६७ ॥ दुतिये कलह वचन उचरैं, जा सुन कलह परस्पर करैं। त्रिय वचनेप सुन अनिष्ट, करै दोष चुगली पर पिष्ट ॥ २६८ ॥ तुरीय अवधि प्रलाप जु भनै, वचन धर्मार्थादिक विन घनै। पंचम रत उतपाद उचार, अक्षन विसय उपावनहार ॥ २६९ ॥ इत्यादिक बहु राग अगाद, षष्टम अरत उतपाद विषाद। प्रणवोपध सप्तम वच त्यक्त, असद परिग्रह विरधा सक्त ॥ २७० ॥ वसु निकृत वच ठगने रूप, सुन अप्रणित नवम वच भूप। दर्सनाद चव परमेष्टीष्ट, तिनकी विनै न करै न किष्ट ॥ २७१ ॥

दोहा–दसम मोष वचके सुने, चौरी मांहि प्रवर्त ।
ग्यारम सम्यक दरस वच, सुन जिय सम्यकवर्त ॥२७२॥
वारम मिथ्या दर्स वच, सुनत गहै मिथ्यात ।
चारैं विध भाषा यही, सुन दस सत्य विख्यात ॥२७३॥

चौपाई–कवलनैन नाम हग हीन, भनै नाम सत्यादिक चीन। काहु नैन गजज चित्राम, लख एए रूप सत्यजुग ताम ॥ २७४ ॥ वस्तु छती अछती निरधार, ताह थपै निरकार सकार। त्रितिय थापन सत्य सुपहै, विन देखी देवी सम कहै ॥ २७५॥ प्रथनुस्वार शब्द वखान, सो प्रतीत सत्यतुरि जान ।

नाना बाजे सब्द सुनृत्य, पुरुष नाम कह संभूत सत्य ॥ ३७६॥ जित अजीव जीव भेदैन, संजोजन सतपट जूं सैन। जनपद नाम देसका पाम, जिह जिहवस्त जिसो कह नाम ॥ ३७७ ॥ सोई जनपद सत सातमैं, ग्राम नगरमैं नृप पुन गमैं। उनके वचमैं धृप न्यायाद, अष्टोपदेस दे सत्य अगाद ॥ ३७८ ॥

छप्पै–जो द्रव्यनका ज्ञान यथारथ केवलिको है। छदमस्तनकूं नाह ज्ञान मंदित इम सोहै ॥ तेभी केवल वचनुस्वार प्रासुक अप्रासुकता निश्चै कर भखै सुप्रासुकन अप्रासुक। उन भावनमैं परतीत यह अकथान केवलि वचन सो भाव सत्य नवमैं गिरा, समय सत्य दसमो चरन ॥ ३७९ ॥

काव्य–षट द्रव्यनको वासुभाव परजाय भेद सब। वक्तात्तादि यथार्थ जैन आगम ही है अब ॥ तहां कह्या सो सत्य इसी जिन वच प्रतीत दृढ़। ए दस विध सत वचन सत्य परखो रू विषे मिढ़ ॥ ३८० ॥

चौपाई–जिह कर तत्त्व और ध्रुग तत्त्व, अरु नितत्त्व वा फुनि अनितत्त्व। नंत स्वभाव इत्यादिक जीव, नय निश्चयायुक्त सदीव ॥ ३८१ ॥ कथन छवीस कोर पद पमा, आत्म प्रवाद पूर्व सातमा। कर्म प्रवाद कर्म चंवाख, एक कोडपद असी लाख ॥ ३८२ ॥ दवे भाव संवर जिह मांह, जती व्रतीकी शुद्ध अथाह। प्रत्याख्यान नवम पूर्वाख, ताके पद चौरासी लाख ॥ ३८३ ॥ विद्यालघु अंगुष्टसे नाद, सात सतक गुर रोहंन्याद। पंच सतक विद्याको कथन, मंत्र यंत्र साधन बहु

मधन ॥ ३८३ ॥ विद्यानुवाद पूर्व दस भाख, एक कोड फुन पद दस लाख। जामै जो तिर्गनक विचार, अर्कादिक नवग्रह विस्तार ॥ ३८५ ॥ बारे रासि कही मेषादि, ठाईस निषत मन अमजदाद। रासिन पै ग्रह चार लखीव, काल दुकाल सुभाव सुभ जीव ॥ ३८६ ॥ ग्रहन होन फल बरनन चली, तीर्थंकर चक्री हर बली। इंद्रादिक फुन पण कल्याण, फुनि अष्टांग निमित्त वखाण ॥ ३८७ ॥ इम कल्यानवाद ग्यारमें, पद छबीस कोड पूरवमें। जामै काय चिकित्सा आदि, अष्ट भेद वैदक मरजाद ॥३८८॥ इडा पिंगला सुर सुषमना, साधन पवनाभ्या जु गिना। भू अप तेज वायु आकास, पंच तत्त्व इनका परकास ॥३८९॥ प्राणवाद पद तेरा कोर, तेरम क्रिया विसाल वहोर। छन्द रु सब्द शास्त्र व्याख्यान, ताकी भेद सुनो बुधवान ॥ ३९० ॥

दोहा—बरन छन्दके बन्धमें, तीन बरन गन जान।
मन भय सतजर स्वामिफल, रूप अष्ट इम मान ॥३९१॥

कवित्त—मगन त्रिगुर भू स्वामि लक्ष दैन गन त्रिलघु दिव स्वामि सुभायु। भय गुण दिससि स्वामि कीर्त्त फल बुध स्वामि सल हस्वादायु ॥ स्वामि वायु सगनात गुरु भय फल भ्रमनम नृप लहु तगनांत। जय मघ गुरु स्वामि रव फल गदरय मघ हस्त स्वामि अगनांत ॥ ३९२ ॥

दोहा—मात्र वर्ण विभेद कर, दो विध छन्द सुजान।
भिन्न भिन्न संख्या कहु, प्रथम मात्र वाख्यान ॥३९३॥

अडिल्ल–एक मात्रको एक, दोयके दोय है। तीन मात्रके तीन, चार पण होय है॥ पञ्च मात्रके अष्ट, षष्टके तेयरै। सप्त मात्र इकीस अष्ट चत्र तीयरै॥ ३९४॥

दोहा–षष्ट सप्त मात्रा तने, तेरे इकीस छंद।
दोनों मिल चोंतीसही, अष्ट मात्र पर बन्द॥ ३९५॥
ए दोनों मिल अंतके, छंदन जो परमान।
एक मात्र आगै बधै, तामै एते जान॥ ३९६॥
अब पुन अंकन छंदको, जो प्रस्तार प्रमान।
एक अंकके छंद जुग, दोके चार सुजान॥ ३९७॥
एक२ अक्षर बधे, दूने दूने छन्द।
इम अंकनके छन्दको, जानो सब पर बन्द॥ ३९८॥
इम सम मात्रा अक्षरनके, छंदनको प्रस्तार।
बहुरि विषम मात्राक छंद, नाना विध निरधार॥ ३९९॥
एक येक ही छंदकी, जात अनेक प्रकार।
एक एक फुन छन्दके, नाम अनेक निहार॥ ४००॥

कवित्त–फुन संगीत सप्त सुर संजुत ताल मुर्छ नान वरस आद। अलंकार नाना विध यामै कला बहत्तर नर मरजाद॥ फुन चौसठि गुन इत नारीके नाना विधि चतुराई लाद। गर्भाधान आदि चोरासी क्रियाकी यामैं विध साद॥४०१॥

दोहा–सम्यक् दरसनकी क्रिया, इकसो अठ्यि जान।
देव वंदनाकी क्रिया, पचीस फुन इत मान॥ ४०२॥

सवैया ३१–फुनि व्याकरन मांहि सब्द अनेकयाके नर

नारि खंड लिंग रूप तीन करे है। संधि और धातुनसै अंकमैं तैं अंक काढ नाना विध अरथ सपष्टता उचरे है॥ फुन याही पूर्व मांहि सल्पी आद नाना कला जगत प्रवर्च सब यणी त्रिसतरे है। जामैं ए कथन सब क्रिरिया त्रिसाल नाम तेरमो पुन्व पद नव कोड धरे है॥ ४०३॥

दोहा—तीन लोकको कथन सब, फुनि परिकर्म छबीस।
आठ विव्हारऊ बीस चव, सिव सुख कथन मनीस॥४०४॥
फुन सिवकारन भूत क्रिय, सिव सरूप वाख्यान।
बारे कोड पचास लख, लोक बिंदु पद जान॥४०५॥
या विध चौदे पूर्वको, कथन कह्यौ विन खेद।
बहुर बारमें अंगमें, सुनौ पंचमो भेद॥४०६॥
नाम चूलका तासके, पांच भेद विस्तार।
जलपैथलवत चलन विधि, सो जलगत निरधार॥४०७॥
थल पै जलवत चुविकि विध, थलगत दूजी एह।
खगवत नभमें चलन विधि, नभगत त्रिय गिनेह॥४०८॥
रूप प्रवर्त्तन बहुत विधि, तुर्य रूपगत जान।
इंद्रजाल क्रिरिया विविध, सो माया गत मान॥४०९॥

छपै—दोय कोड नव लाख नवासी सहंस दोय सत। एक एक पद प्रमित पंचको इकठे सुन इत॥ सहंस उनासी लख उनीस दस कोड सकल पद। सब श्रुत सुन बाराम कथन पद खोड करी हद सब इकसौ बारे कोडपर। लाख विरासी सहस पर अठावन उपर पंच पद। इम संख्या बनधर उच्चर॥४१०॥

चौपाई–इक पदके असलोक निहार, क्यावन कोड लाख वसु धार। सहंस चुरासी षट सत थान, साडे इकीस इम परवान ॥ ४११ ॥ अंग बाह्य परकीर्णक मांहि, चोदै नाम कथन सुन ताहि। समता आदि भाव विस्तार, सो सामायक प्रथम निहार ॥ ४१२ ॥ चौविस जिनगुन सुमरन यत्र, कर कर करै तवन दुति यत्र। इक जिनको अवलंबन लेइ, चैत वंदना तीजै पद ॥ ४१३ ॥ फुन प्रतिक्रमण सात परकार, किये दोषका जिह परिहार। जो दिनमें कोऊ लागो दोष, टारै स्याम सामायक जोष ॥ ४१४ ॥ सोय देवासिक पहलो जान, निसको दोस हरै अपराह्न। सोय रात्र फुन पक्ष निहार, पदरै दिन कृत दोष निवार ॥ ४१५ ॥ फुन चव पलमें दोष जु लगे, सो तुरी मास जोष कर ठगे। फुन इक वर्स दोष लिय जोय, कर प्रहार सवत्सर सोय ॥ ४१६ ॥ लगो दोष चलते सुनिहार, सो इर्यापथ षष्टम टार। सब परजाय संबंधी दोष, सो विचार टारै गुनकोस ॥ ४१७ ॥ उत्तमार्थ सप्तम मरजाद, छित मर्याद काल दुखमाद। षट संघनन जुक्त थिर अथिर, इम प्रेश्वाद प्रतिक्रम सुकर ॥ ४१८ ॥

दोहा–ज्ञानदर्स चारित्र तप, फुन उपचार सु पंच।
 तासविनयको कथन जिह, विनय प्रकीर्णक संच ॥४१९॥

कवित–जिह अरिहंत सिद्ध आचारज उपाध्याय मुन फुन जिनधर्म। जिनबानी जिनग्रह जिनप्रतिमा ता वंदन फुन निज आश्रय पर्म॥ त्रियावर्त दोनुत भिन भूलगचरनुत सिर निवाय

कर ओर। धारै आवर्तन इत्यादिक नित नैमित्तक क्रिया बहोर ॥ ४२० ॥

चौपाई—सो कृत कर्म प्रकीर्णक पष्ट, फुन आचार विवहार स्पष्ट। मुक्त शुद्धता लक्षन लिष्ट, सो दस वैकाल कहै सष्ट ॥ ४२१ ॥ जिह चोविधको कहै उपसर्ग, अरु सहन निजजु परिसह वर्ग। तसु विधानता फल प्रश्नोत्र, सोय उत्तराधैन अष्टोत्र ॥ ४२२ ॥ जह मुन योगाचर्ण विधान, सोय अयोग सुपात्रिवदान। कल्प विवहार प्रकीर्णक नवै, द्रव्य क्षेत्र जन भाव जु फवै ॥ ४२३ ॥ मुनकूं योग अयोग सु एह, कल्पाकल्प दसममें तेह। महाकल्प परकीर्णक रुद्र, तामैं कथन जु सुन भव भद्र ॥ ४२४ ॥

सवैया—जिनकल्पी मुननके उतकिष्ट संघनन जोग द्रव्य क्षेत्र कालभावमैं प्रवर्त्तना। विषयम आतापन धरहै त्रिकाल योग इत्यादिक फुन मुन स्थिवर निवर्तना ॥ ताको दिक्षा सिक्षा जोग संघको पोषन तन समाधान सल्लेखना अघको आचर्तना। बहोर भवनत्रिक होनको कारन दान पूजा तप समकित संयममैं वर्त्तना ॥ ४२५ ॥

चौपाई—फुनि अकाम निर्जरा मर्ग, तिह, नानाविध विमो सुवर्ण। जहां कथन यह सो धारमैं, पुडरीक परकीर्णक पर्वै ॥ ४२६ ॥ इंद्र प्रतेंद्र अहमिंद्रादि, कारन होन तपश्चरणादि। महापुंडरीकमैं एह, सब वर्नन तेरम गुन गेह ॥ ४२७ ॥ जो प्रमादवश लागे दोष, निराकरण तसु प्राश्चित पोष। जामैं इम

वर्णन बहु मंत, सो निषद्ध परकीर्णक अंत ॥ ४२८ ॥ अंग बाह्य परकीर्णक एह, चौदनके अक्षर सुन लेह। आठकोड़ इक लाख हजार, वसु इक सतक पिछत्तर धार ॥ ४२९ ॥

दोहा—सब श्रुतके अक्षर सु इम, वीस अंक परमान।
तिन अंकनके नाम सब, कहुं भिन्न पहचान ॥ ४३० ॥
इक वसु चार चार षट सपत, चार चार नमसप्तेन।
सात सुन्न नव पंच पण, इक षट इक पण गेन ॥ ४३१ ॥
इक पदकूं स्याही किती, लगै सुहेत विचार।
कहुं तोल या देसकी, वर्त्तमान निरधार ॥ ४३२ ॥

सवैया ३१—उत्तम मध्यम तुछ कर्मभूम बाल लीक तिलक तंदुल गुंजा मासा आठ टेक है। गुनेको प्रवान जान दस मासो टंकए बारा मासे तोला पांच तोलेका छटांक है ॥ षोडष छटांक सेर चालीसको मन एक चौतीस मन आठ सेर तोलके। चौतीस तोलेरु मासे चार रत्ती पांच एती स्याही द्वादशांग पदेकको घोलके ॥ ४३३ ॥

दोहा—सहंस सिलोक कूटंक जुग, स्याही लगे प्रमान।
इम फलाव करके सुधी, द्वादसांग पद जान ॥४३४॥

चौपाई—नंतानंत कल्प जम विखै, भए सु जिन सब योही अखै। तातैं आदर हित जुत आदि, आधीस्वर करता पन सांच ॥ ४३५ ॥ नंतानंत कल्प जम विखै, होय सु जिनसे भी इम अखै। तातैं अंत रहित ए ग्रंथ। पेख्या अंत नसै शिवपंथ ॥४३६॥ या विध भरत ऐरावत मांहि, अक्षर अर्थ सब्द इम आहि।

केवल ज्ञान बराबर जान, पढन सुनन फल केवल ज्ञान ॥४३७॥
इम सुनकर सबत्रा भूपती, अरु नर सुर सुर सब हर्षोत्पती ।
इम सब सभासु आनंद रूप, सुधा सिंच मनु देह अनूप ॥४३८॥
दोहा—या विध वर्णन बहु कहो, श्री जिन धुन अनुसार ।
त्यौं गुणभद्राचार्य मन, श्री सुत नुत विस्तार ॥४३९॥

इतिश्री चन्द्रप्रभपुराण मध्येभवत्रानूपरक्षरद्वणोत्रतभाद्वादर्शाग-रचनावर्णनोनाम पंन्दशम संधिः संपूर्णम् ॥ १५ ॥

षोडश संधि ।

दोहा—शुद्धातम मारग प्रणमि, प्रति गुणभद्रादेष ।
अब विवहार वरनन कहूं, पय थल पाय विशेष ॥ १ ॥

चौपाई—अब सुरिंद्र उठ विनती करी, जोडि कराञ्जुलि जुग सिरधरी । भो जग नायक जग आधार, तीन भवन जन तारनहार ॥ २ ॥ यह विवहार औसर भुवनेस, कहिये देव दया धरनेस । भुवमैं भव षेती कुमलाय । मिथ्या रव तप तेज बसाय ॥ ३ ॥ भो परमेस अनुग्रह करो, धुन घन जल सिंचो तप हरो । सिवपुरके तुम सारथवाह, सरनागतकों निरभय दाय ॥४॥ तुम सहायतें भव सिव लेय, आवागवन जलांजलि देय ॥५॥

भयो अनिछा गमन जिनेस, भव जीवनके भाग्य विसेस ।

ताकी महिमा को कवि गिने, पयचल पाय कलुपक मने ॥ ६ ॥ प्रथ्वी दरपनवत दुतिवंत, जूं तिय पिय लखकर विहसंत। अरु षट रितु फल फूल विथार, हर्षाश्रु मुन वांझ निकार ॥ ७ ॥ चरनकवल तल कवल लसत, कनमय सहस पत्र दुतिवंत। पंद्रहकी पंकति चहुं चोर, दोय सतक पचीस सब ओर ॥ ८ ॥ देव रचित मनू भू आमर्न, नाना रतन चित्रयुत धर्न। अंजन कुंकम गंध सिंदूर, ताकर लिप्त मनु तन भूर ॥ ९ ॥ इंद्र सची सुर सुरनर त्रिया, जिनपदाब्ज भ्रमम अलि प्रिया। भक्तिरूप मकरंद सुपान, करत तृप्त नही होत महान ॥ १० ॥ मरुतदेव कृत मंद सुगंध, चलै पवनजन आनंदकंद। जिनतुगामनी इव पतिव्रता, निज पत पाय हर्ष मनु कृता ॥ ११ ॥ इर आज्ञातै सुर बहु जात, सो वस भक्त असें उचरात। तुम जैवन्ते कृपा करेय, जग हितकी वेला यह देव ॥ १२ ॥

कवित–तुम जगके हित विषै उद्यमी तुमको सुरनर नवैं गुन भोन। तुम समस्त विधिके वेत्ता प्रभ कल्याणार्थ विश्वके गोन ॥ अग्र अग्र वृषचक्र चलत है सहसकोर जुत किरणेंव सूर। गममैं श्री विस्तरी त्रिजगजन हर्ष भयो सबकै उर भूर ॥ १३ ॥

पद्धडी–अरगधन जोग बाजे बजंत, ढोलाद जेम घन रव गजंत। नाना विध मंगल सब्द होत, केइ गान करै कहु कथा होत ॥ १४ ॥ केई हांस करै गर्जत कोय, कहुं नाना विध कारण होय। किन्नरी नृत करहै अपार, कहूं सुरांगना नृतच विथार ॥ १५ ॥ गंधर्व देव वादित्र तार, केई मंगलीक कथुत

कर उचार । केई दरव भाव थुच कर अनंत, केई न्याय तीयकर थुग चरंत ॥ १६ ॥ केई जै जै जै जै धुन रटंत, नाना विध सुर नर गांन टंत । जित जित जिन पद धारत चलंत, तित तित सुमंगला धारनंत ॥ १७ ॥ दिग्पाल दिसनको सवाधान, थुत सेवा करत चले सुजान । प्रभुकी सेवा कल्याण अर्थ, निज निज अधिकार सुकर समर्थ ॥ १८ ॥ दोरे दोरे सुर फिरे कतान, सु चलावे माफ करीत वान । सुर जोरि करांजुलि सीस न्याय, रूणयुक्त वहे दुति रही छाय ॥ १९ ॥ मनु कोटक कमलन युक्त भूम, प्रभुकी पूजा कर है सु झूम फुन लोकपाल आग अग्र गछ, वेलोके स्वरके चर प्रतक्ष ॥ २० ॥ मानो प्रभु तनकी कांतिवंत, हो मूर्त्तवंत आगैं चलंत । वैरक नाना सुर ले चलग्र, इम नभ सरव फूले समग्र ॥ २१ ॥ फुनि पदमा सरस्वति आदि जोय, करमै धर मंगल दर्व सोय । चल अग्र मनो भगवंत कांत, मूरत धर अग्र चली इभ्रांत ॥ २२ ॥ परदक्षण देकर नमस्कार, हर चले जोर कर इम उचार । हे देव दयाकर जग उधार, नृप देस देसके त्यौं निहार ॥ २३ ॥ इम विहरत इस त्रिलोकि नाथ, नर त्रिजग सुरासुर नमैं माथ । सेवकतरू लोक उद्धार अर्थि, आरज छितमैं सुविहार कर्त ॥ २४ ॥ हे नाथ स्वयंभू जगत ज्येष्ट, जयवंत पितामह जगत श्रेष्ट । अविनासी देव सुगुन अनंत, जीवनदयाल जयवंत संत ॥ २५ ॥ हे जगबांधव हे धर्मनाथ, सबको सरणागत कर सनाथ । तुम हो पवित्र उत्तम श्री युक्त, तुम जयवंते हो इस्वरस युक्त ॥ २६ ॥

चौपाई–न जे धुन अरु दुंदभि नाद, अति कोलाहल धुन गानाद। पूर दिशांतर सुंदर एह, मनु दध धुन वा आनंद मेह ॥ २७ ॥ पतिव्रता स्त्री अनुगामनी, कनदुत मणि भर्ण इववनी। समोसरण श्री प्रभु आधीन, अरु चोगिरद पवन सुर चीन ॥ २८ ॥

काव्य–सेवामें जन सबाधानतें साध वृत सम। रज कंटक बिन कर्त भूम सुध दर्पण छव सम ॥ धनकवार सुर करत विष्ट गंधोदककी जित। जोजनांत दैदीपमान तित बिजली चमकित ॥ २९ ॥ सुर तरु पुष्पसु विष्ट होत मंदार आद बहु। तिन परि अलि गुंजार करत मनु, जयति कहत सहु ॥ इम लख ईस विहार करत देवाढ्य प्रसंसा। कन मन रज भूयुक्त दिपै इम नभ जुत हंसा ॥ ३० ॥ बहु प्रकारके पत्र तिन्है सुर कुंक लिप्त कर। श्री वभ्राभ्रनंरगिके लिए लाखार कवर ॥ दाडिम पुंगी दुतर्फ फले इत्यादिक तरुवर। त्यौं सब रितु बहु फूल धान्य सब फले एकवर ॥ ३१ ॥ मनमें ठिग ठिग महल सुमग तिनमें देवी सुर। अरु नर नारी करै गान जुत नृत हरष उर ॥ जिन विहारको मार्ग इयो यह कर्मभूम सब। सामग्री कर पूर सु जीती भोगभूम अब ॥ ३२ ॥ दो दो कोस दुतर्फ सीव विस्तार जान मग। सो तोरन कर जुक्त दान सुरचित करत तग ॥ ठोर ठोर मग विखै दान साला इछत मन। दे जाचक प्रति मनो दानकी सक्ति वही गन ॥ ३३ ॥ तिन तोरनके मध्य पुष्प मंडफ अति सुंदर। रोक रस्मव ऐसो बनो वनवास पुरंदर ॥ बहु विध वनके पुष्प मंजरी वृक्ष सु महकत। सघन श्याद अति स्वंग सुजा कदलीकी लहकत ॥ ३४ ॥

चौपाई-सम चित्राम बेल अरु भीत, कांति अधिक ससि रव भाजीत। मानो पुण्य पुंज आकार, लहु गुरघटन धुन विस्तार ॥ ३५ ॥ खैंचै अलि निज मद्दक बसाय, मूर्तिवंत मनो प्रभु जस थाय। त्वंग थंभ जुत चार दुवार, स्थुर मुक्त झल्लर जुत सार ॥ ३६ ॥ ता मधि दयामृत्त निराग, संयमेस सिभ्र बड-भाग। सब लोकाथ हेत कर गोन, पाछै भामंडल भामौन ॥ ३७ ॥ उपरोपर त्रिय छत्र लसंत, त्रिजगनाथ इव प्रगट करंत। प्रभुपर ढोरत चमर समूह, जू खग गिरपै हंसन व्रूह ॥ ३८ ॥ इकमागे पुन प्रभुकी लार, अरु नित तित सुर सेन निहार। इरडे द्वारपाल सुर युक्त, सेवत अग्र चले सचि युक्त ॥३९॥ श्रीकेवली प्रगट जिन नाम, मंगलको मगल सुखराम॥ ताकें आगें मंगल दर्व, लिये हस्तमें जा सुर सर्व ॥४०॥ संख पदम नामा निध दोग, तिन कर दान मनवांछित होय। सुप रितनकी वर्षा होत, अह सुर मोल मगन उद्योत ॥ ४१ ॥ दीपक सम मनु ज्ञान सु दियौ, अनिलकवार धूप घट लियौ। तिन पराग ऊर्द्धकूं जाय, मनु जिनांग सुगन्ध फैलाय ॥४२॥

कवित्त-प्रभुके भक्त सुरमार्ग भाजुत गोदर्पण ले मंगल द्रव्य। रोध अताप रत्नमय उज्जल छत्र प्रभो पर फेर सुरव्य॥ सुरगन करमें झण्डे फरकत मनु मिथ्यातीको तुरस्कार। करके जीतनचं अथवा मनु प्रभुकी दया मूर्त आकार ॥ ४३ ॥

सोरठ-विमची विजया होय, बहुरि वैजयंती सुरी। इत्यादिक मन होय, आगे आगे जायके ॥ ४४ ॥

चौपाई–प्रम ससिकांत चंद्रकानेत, त्रिजग नेत्र सु उद्दर प्रफुलंत। चतुरन काय सुरी सुर सात, मुद नचंत रस प्रघट कगात ॥ ४५ ॥ धुन गंभीर मधुर दुंदभी, घनधुन प्रीत ताड सुर तभी। धर्म सुचक्र अग्र ले गछ, सुरमण कांत समूह प्रतछ ॥ ४६ ॥ अरु सुर करै घोषना एह, यह लोकेप सु इक विहरेह। सो सब आय नमन तुम करो, अभयघोष इम भय परहरो ॥४७॥ इम भगवंत विहार निहार, प्रथ्वी अदभुत सोभा धार। जाजा देश प्रभु विहरंत, ताहि देश जिय चित हरंत ॥४८॥ जीव बद्ध नहि होय लगार, होय परस्पर प्रीत विचार। ना उपसर्ग रुदादि निहार, सबके अदभुत मंगलचार ॥४९॥ भय विष सात ईत फुनि यदा, काहुके को होय न कदा। जन्म अंधके दृग खुल जाय, पंच वरन निरखें विहमाय ॥ ५० ॥ बधर सुनै जिन अतिमय येह, मूक करे जल्पन गुन गेह। पंगु चढैं नग खेद न लहै, जिनागमन जन सुन मुद गहै ॥ ५१ ॥

दोहा–ना अति उष्ण न सीत अति, रात दिवस नहीं भेद।
अशुभ कर्म निरवर्त सब, शुभकी वृद्धि अखेद ॥५२॥
अहन कुलादिक जीव जे, जात विरोधी और।
ते सब वैर निवारिके, करै प्रीत तजि खोर ॥५३॥

चौपाई–दिशु कारी जुन रतना मर्न, प्रभा पुंज मनु इक गे धर्म। सुमन कल्प तरु ल्या जिन जजैं, जो रिक राजुलि मनमें रजै ॥५४॥ निरमल नभमें तारे दीठ, जू हिमरितु सरमें पईठ। ये भगवन अद्भुत अतसाय, पशु भी नमन करत है

आप ॥ ५५ ॥ दर्शनके अभिलाषी जेह, सुर नर तिरजग सबट तेह। मैं आगै मैं आगै जाऊं, ऐसे आपसमें बतराऊं॥ ५६॥ प्रभुके दरसनके परभाय, भूख प्याप औरनकी जाय। तो प्रभु कैसे हार करंत, कवलाहार रहत भगवंत ॥ ५७ चार ज्ञान धारी गणराय, ते भी प्रभुके सेवै पाय। इनमे ऋधिवन्त मुनि जग जेह, सब विद्याके ईस्वर एह ॥ ५८ ॥ नख अरु केस बढ़े न कदाच, केवलज्ञान विषै जद राच। पलक पलकसु लागै नाइ, तन सम फटिक न होवे छांह ॥ ५९ ॥

दोहा—मागध सुरगण धुन मिली, प्रभुकी दिव्र धुन होय।
　　अर्धमागधी भाख इम, भाखा पंडित लोय ॥ ६० ॥
　　जैसे गावै भांड इक, बहु सुर लावत संग।
　　तैसे जिन धुनमैं मिलि, मागध सुर धुन चंग ॥ ६१ ॥
　　दर्स अनंतानंत है, ज्ञान अनंतानंत।
　　सुख्य अनंतानंत जुत, वीर्य अनंतानंत ॥ ६२ ॥
　　केई दुठ ऐसें कहैं, करै केवली हार।
　　हार विना कैसे जीवै, अरु ऐसैं उचार ॥ ६३ ॥
　　चौपाई—देव करावै अतिसय अंत, चर्म दृष्म दीसत संत।
ताकी कहिय तहै छन मात, न्याय विचारत जो पछतात ॥ ६४ ॥
दोहा—अंतराय जो हारकी, कैसे टरै विचार।
　　नर्कादिक जे असुच सब, इनके ग्यान मझार ॥ ६५ ॥
　　जो प्रभुके होवै छुधा तृषा क्षुधातैं लाग।
　　दोष होय इन विन मिले, मिले होय अनुराग ॥ ६६ ॥

अधिक मिलै ते रोग हो, को दुठ करै निहार।
समोसर्णकूं छांडिकै, कित जावै उचार ॥ ६७ ॥
जोवै तित ही करत है, तो गहले बन जाम।
इम निश्च निकलंक प्रभ, तोभी सत नहीं मान ॥ ६८ ॥

चौपाई—तिनकी रसनाके सतखंड, होउ असत चवै परचंड। अपने पोषन विषय कषाय, ते दुठ प्रभुको दोष लगाय ॥६९॥ तामें संभासन नहीं जोग, प्रभुकै क्षुधा तृषा नहीं रोग। जन्म जरा विस्मय नहीं कोइ, आरत चिंता विस्मय मोह ॥ ७० ॥ मद भय स्वेद खेद नहीं दोष, काहूमैं न राग कहूं पोख। मरन सदोष अठारै कोय, श्री जिनवरकै एक न होय ॥७१॥ जिनके दरस करत सुख भरै, औरनके सब दूषन टरै। तो कैसे श्री जिनकै होय, संसै कर पूछै अब कोय ॥ ७२ ॥ जिनके मरन कहो किम नाह, ताको उत्तर सुन श्रुत छांह। मर्नसमै जीव पादेस, निकसत होवै दुख्य विसेस ॥ ७३ ॥ सो तो जगवासीकै जान, वै हैं पूरन ब्रह्म महान। आयु अंत सह जतन त्याग, जूनन जीर्न पट तज तन राग ॥ ७४ ॥ अथवा कोई परघर छोड़, निज घरमैं आवै गुन प्रौढ। परघर त्यागनको नहीं खेद, निज घर पाय सु सुख निज वेद ॥ ७५ ॥

प्रभुकै संघ चार परकार, अब ताको सुन ये विस्तार। प्रभुकी ज्ञान मूर्त मनु एह, देय प्रश्नका उत्तर वेह ॥ ७६ ॥ श्री दत्तादिक गनधर सोय, सकल तिरनैव संख्या सोय। सिद्धागार मोह अरि जीत, ज्ञानाभूषन परम पुनीत ॥ ७७ ॥

पूरवधारी दोय हजार, मिथ्यातम हरख उनहार। दुलख च्यारि सत सिष्य मुनिंदु, विकलप निसतम हर इव इंदु ॥७८॥ अवध ज्ञान वसु सहस जतीय, हन अज्ञान ध्वांतको दीप। दसहज्जार केवली साध। सेव श्रीवल्लभ निरअपराध ॥ ७९ ॥ मनपरजय जुत अष्ट हजार, शुक्लध्यान धर सूक्ष्म निहार। चौदेसहस वैक्रिया धरै, जिनंमडपमें तपको करै ॥ ८० ॥ परमत इभ मद भंजन सिंह, जिनचरनाम्बुंज सेवन भृंग। सुमताणार नमू त्रिय-वार, वादी षट सत सप्त हजार ॥ ८१ ॥

दोहा—ढाइलाख तिरानवै, भए सकल मुन सार।
चरुनादिक जे अर्जिका, इकलख असीहजार ॥ ८२ ॥

कवित्त—सम्यक्तादि अनुव्रत भूसत तीनलाख श्रावक बुधि-वंत। दग सीलादि व्रताढ्य श्राविका पंचलाख सेवै भगवंत ॥ देव चतुरविध इन्द्र आद सब देवीगण जिनसेय असंष। गजहर अहनकुलाद वैर विन पशुव्रताढ्य द्रग भूषत संष ॥ ८३ ॥ प्रथमगवन पूरव दिस किनौ अरु दक्षन दिस पछिम दिसा। उत्तर दिस अरु मध्य देस बहु केयक देस नाम सुन त्रिसा ॥ अंग वंग पंचाल पदचर सूरसेन अभृष्ट तिलंग। सिंधु अवंती मलय मरुस्थल सोरठ लाट अभीर कलिंग ॥ ८४ ॥ गुज गुजरात मरुक कुंतल दग कास्मीर नरदक कुरसान। कुर जांगल कोसल कासी अरु नैपालादिक देस महान ॥ इत्यादिक बत्तीस हजार सब आरज खंड विखै विहरान। बहु भव बोध पयोदक धारे जिन भव्याब्ज विकासन भान ॥ ८५ ।

चौपाई–जगदधतैं तारन सुसमर्थ, रत्नत्रये भाक्सो तीर्थ। प्रगट कियो सोइ वरतंत, जूं कियौ प्रथम वृषभ भगवंत ॥८६॥ तीन भवनहित कारक धर्म, ताइ सुदृढ कराके जिनधर्म। पीछे बहु भवि बोध सुपाय, परम तीरथ इव पर वरताय ॥ ८७ ॥ विहरत आए गिर सम्मेद, कूट ललित पट थित निरवेद। जूं उदयाचलपै मार्तण्ड, वा कैलास रिषभ थित मंड ॥ ८८ ॥ जहतैं वरतमान जिन षट, और अनंत मुनी संवष्ट। कर्म शत्रु हनि शिवपुर गए, जिन अनंत तीत जम भए ॥ ८९ ॥ मास आय जब बाकी रही, जोग निरोध करो तब सही। समोसरन श्री तब विघटत, बानी खिरत नहीं भगवत ॥ ९० ॥ बारे सभा करांजुलि जोर, विनयवंत निरखै जिनवोर। हलन रु चलन वचन विन मनो, लंकारांकित चित्र सु बनौ ॥ ९१ ॥ रतन सिलापर सो खडगासन, स्फटिक बिंब वत अचल समासन। फाल्गुन सित सप्तम अपरान्ह, ज्येष्ठा रिषमे सोलम ध्यान ॥ ९२ ॥ थित ठानात लघु क्षर पंच तित दो भाग कर्मगण मुंच। आयु रु नाम गोत वेदनी, प्रथम बहचर तेरह हनी ॥९३॥

दोहा–तूंबी मृतका लेप जुत, जलमैं डूबी सोय।
लेप विघट ऊरध गई, अगन सिखा इम जोय ॥ ९४ ॥
अथवा बीज अरंडको, खिलत उरधको गछ।
त्यौंही कर्म सूं रहित जिन, जाय ऊर्द्ध परतक्ष ॥ ९५ ॥

चौपाई–राते अंबर लाधी मुक्त, एक समयमें बहु गुन जुक्त। कर्म काय विन सिवपुर गए सिद्ध अष्ट गुन मंडित भये ॥९६॥

दोहा-मोह रिपु हरकै लियौ, गुन छायक सम्यक्त।
ज्ञानावर्नी हर भए, ज्ञान अनंता जुक्त ॥ ९७ ॥
जीत दर्सनावर्न रिपु, लइ अनंत गुन दर्स।
अंतरायको हानिकैं, बल अनंत गुन फर्स ॥ ९८ ॥
नाम कर्मको खय कियो, तव सूक्ष्म गुन प्राप्त।
आयु कर्मको नास कर, अवगाहन गुन आप्त ॥ ९९ ॥
प्रवल वेदनी नास कर, अगुरु लघु गुन धार।
गोत कर्म कर नास गुन, अव्याबाध निहार ॥ १०० ॥

चौपाई—इम विन्हार निश्चै रु असंक, जै श्रीचंद्र भए निकलंक। पंचकल्यानक पाय जिनेस, जगत जीव उद्धार विसेस ॥१०१॥ भए पूज परमातम देव, जै चन्द्राभ तनी कर सेव। तीन लोक नर सुर सब जिते, तीन काल संबंधी तिते ॥१०२॥ तिनको पंचइंद्री सुख सबै, ताइ अनंत गुनौकर अबै। जो सुख एक समय सिव लहै, ताहि अनंत भाग नहीं वहै ॥ १०३ ॥ जिनके सुख अरु ग्यान जु तनी, उपमा नाहि जगतमैं बनी। थिर सुख पिंड जोतमय रूप, इंद्रीगोचर नाहि अनूप ॥१०४॥ प्राग भारा जो अष्टम धरा, लोक सीसपैं सो विस्तरा। इक राजू पूर्वापर व्यास, लंब सप्त दक्षोत्तर भास ॥ १०५ ॥

वसु जोजन मोटी मध सार, ससिदुति सिला गोल आकार। तामैं सिद्ध अनंतानंत, एक सिद्धमैं सिद्ध अनंत ॥ १०६ ॥ पुरुषाकार सकल भिन्न भिन्न, ताको सुन दिष्टांत सुचिन्न। जैसे एक प्रदेस अकास, तामैं पंचदरवको वास ॥ १०७ ॥ पुद्गल

जीव रु धर्म अधर्म, कालसु भिन्न २ विन सर्म। फुन दृष्टांत सिद्ध आकार, ताकौ सुन रु करौं निरधार ॥ १०८ ॥ कागद विरधु पुरुषाकार, मध्य पोल अरु कछु न निहार। तामैं गगन सुभ जड़रूप, त्यौंही शिवमैं चेतन भूप ॥ १०९ ॥ ज्ञानपुंज कागद सम तुचा, ता सम रहत सिद्ध इव सुचा। या विध परम ब्रह्मको रूप, निराकार साकार सरूप ॥ ११० ॥ चरम देहसैं किंचित ऊन, याइ अपेक्षा कहत गुरून। पूरववत सुरधर भए चिन्न, अवधज्ञानतैं जान सवन्न ॥ १११ ॥ देव चतुर्विध संघ समेत, आए शिव कल्यानक हेत। निज निज वाहन जुत पर-वार। विभवयुक्त नृताद विथार ॥ ११२ ॥ अगनसिखा सम जिन शिव पाय, तन प्रकास सम काय नसाय। रहे धुभ्र सम नख अरु केस, जान पवित्र सुरासुर वेस ॥ ११३ ॥ प्रथम नमन कर लिये उठाय, ता युत हर जिनदेह बनाय। मणमय शिवकापै सो थाप, हक्र भक्त जुत पूजे आप ॥ ११४ ॥ अष्ट सुदर्व लेय जल आद, बहुर सुरासुर भक्ति अगाद। चंदन अगर कपूर मंगाय, सर उतंग कीनो अधिकाय ॥ ११५ ॥

ताहि चितामैं जिन तन धरौ, जो हर मायामय विस्तरौ। अगनकुमार प्रनाम सु करौ, कर जुग जोर सीस निज धरौ ॥ ११६ ॥ उठी मुकट ज्वाला मण तणी, अति विकराल अगनिकी घनी। भस्मीकृत फैली मकरंद दसमे दिव लो परमानंद ॥ ११७ ॥ सब सुर जंजकार सु करै, परमानंद भक्ति उर धरै। जोरि करांजुलि निज सिर न्याय, प्रथम इन्द्र

ऊति हर्ष रढ़ाय ॥ ११८ ॥ चिता चतुर्दिस फिरत नमंत, नमैं च विंत सुर हरषंत। एते अगनि भई जलछार, प्रथम इन्द्र निज मस्तक धार ॥ ११९ ॥ नेत्र कंठ उरके फुन लाय, फिर लाई सुरगन हिद माय। भस्मिको नहि पायो खोज, फिर पूजाको कीनो सोज ॥ १२० ॥

तब हर तिन नामाकि सिला, करो सुगान नृत जुत कला। देवन सहित परम उछाह, अधिक अधिक कीनो सुरराय॥१२१॥ तिनके गुन चितत मनमांहि, निज निज थान गए सुर नांह। सुन संक्षेप भवांतर रूप, पहले भव श्री ब्रह्मा भूप ॥ १२२ ॥ फिर सौधर्म स्वर्गमे थयो, श्री प्रभदेव दुतिय भव भयो। तीजे षंड धातकी मांहि, अजितसेन चक्री पद लाह ॥ १२३ ॥ अच्युतेन्द्र चौथे भव भयौ, पंचम पदमनाभ नृप थयो। षष्टम वैजयंतसु विमान, सप्तम भए चन्द्र प्रभ आन ॥ १२४ ॥

पद्धड़ी—नव्वे केवलि अनुबंध जान, सतंत केवलि चव ऊसी मान। चौतीस सहस दो लाख साध, एते तासभय सु मोष लाध ॥ १२५ ॥ सु अनुत्तरार्द्ध सर्वार्थसिद्ध, बारे हजार मित लही रिष फुन, चार सतक मुन और जान। सोधर्मादिक पायो विमान ॥ १२६ ॥

चौपाई—गिर समेदसो सिवगए, तिनकू हात जोड हम नये। यह निर्वान क्षेत्र सुभ थान, भव जिय पातक हरन महान ॥ १२७॥ और चौरासी कोडाकोड, मुनी बहत्तर कोड सुजोड। सहस चौरासी असी लाख, पांच सतक पचपन गुर

भाख ॥ १२८ ॥ और गए एते निर्वान, ताही ललित कूटतैं जान। एकबार वंदन जो करै, मन वच काय सुधता धरै ॥१२९॥ सोलै कोड वृतन फल होय, नर्क तिर्यंच कटै गति दोय। ऐसे सुन फुन श्रेनिक भूप, गनधरसै कर प्रश्न अनूप ॥१३०॥ वंदन कर किहनै फल लियौ, ताकी कथा प्रभु अब कहो। सत पुरसनकी कथा कर जिनै, उपजो है कोतूहल तिनै ॥१३१॥ ऐसे श्री गोतम गन मुनी, बोले कहुं सुनो भू धनी। जोधदेस सोरीपुर वसै, ललितदत्त भूपति तिह लसै ॥ १३२ ॥

दत्तसेना महकी जुतराज, एक समै बनक्रीडा काज। चले अरनमैं मुनि अवलोइ, चारनरिद्ध सहित अनमोइ ॥१३३॥ देय प्रदक्षना प्रनमो तास, हर्षवंत नृप बैठो पास। राजा पूछे सीस नवाय, चारनरिद्ध मिले किम भाय ॥१३४॥ प्रश्न पाय तब गुरु उचरो, सम्मेदाचल यात्रा करो। तो चारन रिघ पावो सही, ऐसी विध मुनवरने कही॥१३५॥ ए सुन नर वै हर्षितवंत, सम्मेदाचल गयो तुरंत। एक करोड छियालीस लाख, एते मनुष संग गुरु भाष ॥ १३६ ॥ यात्रा करी जाय बड़भाग, कछु कारण लख भयो वैराग। राज त्यागकै भयो मुनिंद, नानाविध तप कर गुन वृन्द ॥ १३७ ॥ चारणादि रिघ पाई घनी, फिर केवल उपजायो मुनी। संग बहोत मुन मुक्ती लही, मैं भी अब वंदूं वह मही ॥ १३८ ॥

गीता छंद—जो लही नाना रिघ शिवगत प्रवज्या परभावसं। गिर भक्ति महिमा किम कहो इम प्रश्नोत्र सुन अब-

चावद्र ॥ भारथ विषै सुभचन्द्र गुर मन सबरनै इक टीलरे। गुर द्रोण लष फिर भीन गुर कर टील सो गुर सम थपे ॥१३९॥ अष्टांग जुत थुत भक्त तैं अजता सरज लेबी लही। माल दग उर कंठ बाहु लाय नित विनई लही ॥ धीहेत धुन वेधी सिषै, तब चांप सरतज तानजी। सो भई टील प्रभाव त्यौं नग भक्ति शिवदा जानजी ॥ १४० ॥

काव्य—अब सुन फल मिथ्यात तनो श्रेनिक मन वच तन। जो मरीच नग हो भ्रमो तस्योदित जगवन ॥ भार्यो अवनी-मांहि सह्यो दुष अतच काल ही। त्रस थावर भटकाय कोन कह महबालही ॥ १४१ ॥ अब उपसांत भयो त्रिपिष्ट नारायन पहलो। फिर नर्कादिक मांह पसू गतमैं दुष सहलो ॥ आय भये वीर प्रतिक्ष जग चर्म जिनेसर। ये मिथ्यात फल तुछ रह्या अरु जान वसेसर ॥ १४२ ॥

दोहा—हाथ जोड़ श्रेणक नृपति, पूछत सीस नवाय।
कौन पुन्न पूरब कियो, भयो भूप मैं आय ॥ १४३ ॥

चौपाई—इन्द्रभूत कह सुन मग्धेन्द्र, जूं दिव धुनकर कह्यो जिनेन्द्र। यही भारतमैं आरज षंड, विंध्याचल तट अति बन षंड ॥ १४४ ॥ बहु रिमालतैं इरहत किरांत, मास अहारी जिय कर घात ॥ इक दिन पुन्योदय मुनराय, नमो सभाव गुरुको आय ॥ १४५ ॥ मुननैं धर्मवृति सु दई, उन पूछो वृष विध किम भई। त्रिमकार तज पालै दया, हम वृष दिव सिवदे गुर चया ॥ १४६ यही हार हमैं किम छुटै. फिर मुन कहै

तजो जो छुटे। सब ही कहे सुन जो पल काक, गहूं न आयो तक लोमांक॥ १४७॥ मुनको नमकर निज घर आय, इक दिन पापोदय अति थाय। भयो सुरोग वैद इम भनै, पाय काक फल गदजद हनै॥ १४८॥ तब परजन कहे ल्यावे वेग, रोगी सुन मन जुत उदवेग। तजो काक पल ना आचरूं, प्रान जाउ व्रत भंग न करूं॥ १४९॥

दोहा–या विध परियन जन सुनो, सूर वीर अन नाम।

भगनीपत या खबरकूं, आवै थो गुन धाम॥ १५०॥

मारगमें इक तरु तलै, कांचीदेवी रोय।

ताह देख पूछत भयो, रोवै कारन कोय॥१५१॥

सुरी कहे इस बनसुरी, मैं पत कारन रोय।

काम अगन तनकं दहै, ताकी विधि सुन सोय॥१५२॥

पद्धड़ी–जो खदरिसाल तुझ नार भ्रात, तिन तजो काक पल रोग गात। उपजों भन वैद सु वही खाय, तो रोग शांत हो इम बताय॥ १५३॥ थित अल्प सुमर हो कंथ आय, जो खाय काक फल नर्क जाय। सा हेत खडी रोऊ अवार, सुन सबर चलो निहचै निहार॥१५४॥ लख सालो गद जुत कपट धार, खावो किन जो वैदन उचार। क्यों सहै वृथा दुख मरन होय, जो जीवो फिर व्रत गहो सोय॥ १५५॥

दोहा–ता वच सुन सो यों कहै, तुम जोग यह नांह।

व्रत भंग अति निंद मर, पहुंचे नर्क सु मांह॥१५६॥

नरन निकट आयो अबै, किंचित धर्म सुनेह।

परभव सुखदा क्यों तजूं, इम दृढता लख येह ॥१५७॥
कही कथा देवी तनी, एक नेम फल एह।
उर वैराग बैठायके, सब फल तज धर नेह ॥१५८॥
पंच परमेष्टी सुमर कर, सुत समाध कर मर्न।
प्रथम सुरगमें सुर भयौ, रिध जुक्त मन हर्न ॥१५९॥

चौपई—चलौ भील निज घरकूं फेर, रोवत मगमें फिरै वेहेर। सूरवीर कह अब क्यूं रोय, कहै सुरीतैं मोपत खोय ॥ १६० ॥ ओ मर भयौ सुरग सौधर्म, रोऊं पति बिन दुख भयो पर्म। इम सुन धर्म विषै धर राग, भोग सुरग सुख दोदध त्याग ॥ १६१ ॥ पुण्योदय चय तू भयो अत्र, उपश्रेणक तिय श्रीमति पुत्र। सुरवीर सुन फल व्रत गह्यौ, प्रथम सुर्ग सुख भोग सु चयौ ॥ १६२ ॥ अभैकवर तुझ सुत भयौ आय, वो देवी चय चेलन थाय। जैनधर्म तुझ कुल क्रम आइ, बालपने तुझ पिता कढाइ ॥ १६३ ॥ बोधमतीकै भोजन लह्यौ, तब तैं बोध धर्म संग्रह्यो। फिर आकर पायो निज राज, एक समैं बन-क्रीड़ा काज ॥ १६४ ॥ गयौ विपनमें मुनी निहार, मृतक नाग वा गलमें डार। तबतैं नर्क निकांक्षित बन्ध, तैनै करो राग सनबन्ध ॥ १६५ ॥

नार वचन सुन दया उपाय, तीजे दिन काढौ अहि जाय। आवे रागदोष बिन मुनी, तब जिनमतकी सरधा ठनी ॥१६६॥ वीर मुखोदित तत्व विचार, ताकर छाइक समकित धार। बांधो शुभ तीर्थंकर गोत, जो उत्तम त्रिभुवन धर जोत ॥१६६॥ तो

उन छिदो निकांछित वंध, प्रथम सु नर्क सहो दुख द्वंद। तिससैं चयकर आयो यांहि, प्रथम तीर्थ उतसर्पिनि मांह ॥१६८॥ धर्म तीर्थकर सिव गत होय, यह संक्षेप भवावलि तोय। सुन राजा अति हर्षित भयो, वंदन कर निज घरकूं गयो ॥१६९॥ वीर जिनेसुर कियो विहार, धर्मवृष्टि मनु भादोकार। बहु भव बोध भवोदध तार, पावापुर आए निरधार ॥ १७० ॥

सुकल ध्यान वसि सिवपुर गये, पीछे तीन केवली भए। तीन वरस सतरे पख रहे, तुर्य कालमें इम मुन कहे ॥ १७१ ॥ गोतमस्वामि सुधर्माचार्ज, अंतम जंबूस्वामी आर्ज। चौथे काल विषै उपजये, पंचममैं ते सिवपुर गये ॥ १७२ ॥ बांसठ वर्ष यथावत ज्ञान, रह्यौ केवली भाषित जान। तापीछे सतवर्ष मंझार भए पंच श्रुत केवलि सार ॥ १७३ ॥ प्रथम विष्नु नाम इम चीन, नंदा मित्र अपराजित तीन। गोवर्द्धन फुन भद्र सु बाहु, चोदे पूरव ज्ञान पढाऊ ॥ १७४ ॥ फिर एकादस मुन अवतार, इकसठ त्रासी वर्स मझार। दस पूरव ग्यारांग सुज्ञान, ता धारक इम नाम प्रमान ॥१७५॥ विसाषा प्रोष्टल क्षेत्रार्थ, जया नागसेन सिद्धार्थ, श्री धृतसेन विजय वुध लिंग। देव सुधर्माचार्य सुलिंग ॥१७६॥ तिन पीछे मुन पंच प्रसिद्ध, ग्यारा अंग धरे ते रिद्ध। दोसै वीस वरसमें भए, निक्षत्र औरु जै पालुप जये ॥ १७७ ॥ पांडव अरु ध्रुतसेन रु कंस, तिन पीछे मुन चव प्रवटंस। इकसौ ठारे वर्स मझार, एक ही आचारंग सुधार१७८॥ प्रथम सुभद्र दुतिय जयभद्र, जसोभद्र तिय ज्ञान समुद्र।

लोहाचार्य चतुर्थम जान, ह्यांतक रह्यौ अंगको ज्ञान ॥ १७९ ॥
दोहा—अंगामरू पुर्वांप धरुं, विनयंधर श्रीदत्त।
सिवदत्त रु अर्हदत्त चत्र, भए कछुक दिन गत्त ॥ १८० ॥

चौपाई—तिन पीछे सु कुछक दिन मांहि, भए पुष्पदन्त मुन नाह। पहले श्रुत रच सित पण ज्येष्ट, तबतै प्रगटे ग्रन्थ जु श्रेष्ट ॥ १८१ ॥ तिन पीछे अंगन बिन मुनी, रहे महा ज्ञानके धनी। व्रत कर जुक्त तपस्वी महा, तिनके नाम कछुक सुनह्यां ॥ १८२ ॥ नयंधर रिष श्रुत रिष गुप्त, फुन शिवगुप्त अर्हद्बल गुप्त। मंद रु मित्र वीर बलदेव, फुन बल मित्र सिंहबलदेव ॥ १८३ ॥

कवित्त—पद्मसेन पद्मगुन बारम गुना ग्रनी जित दंड मुनिंद्र। नंदसेन अरु दीपसेन फुन श्रीधरसेन वृषसेन जतेन्द्र ॥ सिधसेनसु सुनंदसैन फुन सूरसेन अरु अभयसैन। भीमसेन जिनसेन जतीसुर सांतसेन जयसेन मुनेन ॥ १८४ ॥

चौपाई—सिष्य अमितसेन इक कह्यौ, कीर्तसेन दूजो सरदह्यौ तासो मुख्य सिष्य जिनसेन, तिन आरंभो ग्रंथ सुलेन ॥ १८५ ॥ त्रिषष्टी जन महापुरान, प्रथम ही पढो अगणइक आण। मृत्यु जोग ताकूं लषि रिषि, अपने सिषतैं ऐसे अषी ॥ १८६ ॥ यह पुरान पूरन नहीं होय, पय इन करै भक्त वस होय। जब भए दस हजार अश्लोक, तब जिनसेन भए परलोक ॥ १८७ ॥ ताको मुख्य शिष्य गुणभद्र, तिन यह पूरण कियो समुद्र। दस हजार अश्लोकनमांह, कहक उन सम बुध मुख नांह ॥ १८८ ॥ मैं उन मरम कछु नहि लह्यौ, कौन कथन

उन रच्यन चही। उन परतग्या पूरन काज, कथन रच्यो निज बुद्ध समाज ॥ १८९ ॥ सो प्राचीन श्रुतन अनुसार, सक्तिहीन वस भक्त विचार। चौविस श्री जिनवर धर ध्यान, चक्रीहर बली व्याख्यान ॥ १९० ॥ जो प्रमाद वस भूलो कहुं, सब्द अर्थ वर्नादिक सहुं। पद मात्रा स्वर रेफ रु संधि, पंडित सोधो लघ संबंध ॥ १९१ ॥ एक केवली ही भगवान, ते चूकै न कदाचित जान। नाह यथावत बुध छदमस्त, जो भूलै तो अचरज नस्त ॥ १९२ ॥ कित यह महापुरान समुद्र, कितमो बुद्ध छुद्रतैं छुद्र। जिन गुन श्रुत यामैं अधिकान, सो पुन्योत्पत कारन जान ॥ १९३ ॥ ताही बांछा कामैं करी, कीर्त कामना मन नहि धरी। काव्य गर्भ ईर्षा नहीं धार, केवल इक जिन भक्ति विचार ॥ १९४ ॥

दोहा—तामैं बारै सहस मित, आद पुरान बखान।
आठ सहस मैं दूसरो, उत्तर नाम पुरान ॥ १९५ ॥
सात सतक कछु अधिक ही, संवत सर पहचान।
तब यह श्रुत पूरन भयो, मो बुधके उनमान ॥ १९६ ॥

चौपाई—शब्द अर्थ अक्षर जड़ रूप, मैं चेतन तिहुंकाल अनूप। मैं इन ग्याता दृष्टा जोय। चेतन जड़ करता किम होय ॥ १९७ ॥ यह अनादको सहज नियोग, कर्तापन मानै सठ लोग। शब्द अर्थ अक्षर मिल जाय, होनहार कारन बस पाय ॥ १९८ ॥ निश्चै श्रीजिन सिवपुर जाय, पण दिक्षा विन कबहुं नांह। दिक्षा कारन कार्य पर्य, यातैं आन मिलो यह वर्ग

॥ १९९ ॥ जिनसेना जो मुन मण्डली, ता शिव सुपुन साल चुघल्ली। तिन क रचित परंपर थाय, सर्व संघको मंगलदाय। ॥२००॥ ताकी भाषा करी सु स्याल, ताकू देखी हीरालाल। चन्द चरित लख कियो विचार, जो यह कुछक होय विस्तार ॥२०१॥ भव्यजीव बांचै अरु सुनै, पढ़े ज्ञान सब ही अघ हनै। जे तैं करत लगैं बहु काल, तैतैं पुन्य वृद्ध दरहाल॥ २०२ ॥ किम गुणभद्र नाम उचार, इम प्रश्नोत्तर उद्ध निहार। यातैं संधि सधि प्रति ठाउं, गुरु गुणभद्र धरो इम नाउं ॥ २०३ ॥ वीरनंदि मुनि ता प्रति देख, करी चन्द्रप्रभ काव्य विसेष। तिन दोऊ प्रत लख व्याख्यान, कवि दामोदर रचो पुरान ॥२०४॥ दोहा—पूछै और न अर्थ इन, कह्यौ कथन विस्तार।

यातैं भी गुणभद्र गुर, धरो नाम निरधार ॥ २०५ ॥

गीता छन्द—वर वज्र मन जू वज्र बीधो सहज तब तसु पाईयो। सो रेसमी गुनके विषै तब हार सुंदर सोहियो॥ वर पंडितनकी सभा मंडपता स्वयंवरके विषै तित ग्यान नृप दुहिता सुबुध ना कण्ठमें घर वरनषै ॥ २०६ ॥ सो संग ले शिव सदन जाकर निरन्तर सुख भोग है। तब सर्व जगके दुख्य छूटै सो अतिंद्री सुख गहै ॥ दुख चूर भूर समन्तभद्रसु पूर तीर्थंकरको। तिम करो हमको सुख्य ससि जिन हरो भव भय दुंदको॥२०७॥

चौपाई—यह श्रीचन्द्र प्रभु पुरान, तामैं नाना विध व्याख्यान। धर्म अर्थ काम अरु मोष, चार पदारथ साधन पोष ॥ २०८ ॥ यह पुरान सिध जिन श्रुत करी, ताकर पुन्य भंडारी

मरी। ताको फल मोको हो यहै, भव्यजीव याकूं सर दहै ॥२०९॥ ताके होय सकल अघ नास, पंडित याह समामैं भाप। मोत्रांजुली कथा कर पान, करहों अमरस भाजन दान ॥२१०॥ यह पुरान बाचै वा सुनै, तिनके सकल पाप चिर हनै। निजपर हेत करो व्याख्यान, निज पर तारक जान पुरान॥२११॥ जिनके नाम ग्रहन परताप, नवग्रह पीडा होय न कदाप। या पुरानकी महिमा सुनो, थोडीसीमें बहुती गुनो ॥ २१२॥

कवित–मंगलके अर्थी जे जन है, तिनको मंगल कारन जान। धन अर्थीकूं धनकी प्रापत निमतीकूं यह निमत महान॥ महोपसर्ग विषैं सुमरन यह सात करन दुष हरन बखान। प्रश्नीकूं यह शकुन ग्रंथ अति सुभ सूचक जानों बुधवान॥२१३॥ ध्यानार्थीकू ध्यानसु कारन जोगार्थीको जोग सरूप। पुत्रार्थीकूं पुत्र सुदाता भोगार्थीकू भोग अनूप विजयार्थीकूं विजयसु दायक सुष अर्थीकू सुष विस्तार सर्व वस्तु दाता यह जगमैं श्री चन्द्राभ पुरान निहार ॥ २१४ ॥ चोवीस जिनकी महाभक्ति सुरि सासन चक्रेसुरा सु धीर सम्यकदृष्टि निर्ग्रंथाश्रित सब नित जिन धर्म सुपातम वीर। नवग्रह भूत पिसाच असुर ग्रह ए पुरसन हि में कर विघ्न तव बुध जन जिनसासन सुरग नमांन करैं ते छुद्र सुरग्न॥ २१५॥ जो पुरान पढ़ै भक्त कविता मनवांछित हो विनपेद। इम काम रु धर्मार्थ मोक्ष लह तातै कपट रहित सदवेद ॥ आर्ज पुषे पूजा युत श्रुतको श्रुत विस्तारो ईर्षाछार। मायाचार लोन विन सम हो बार बार

का रहस निहार ॥ २१६ ॥ या भव्यनमूँ यह प्रारथना कौन भये वे सहज सुभाव। बांचे सुनै विचारे क्रम जून मथन जल केशिर घर भुलाव॥ यह पुरान गंगासम निर्मल, जलसम शब्दनको बरवाइ। दो नय तटसम फैल दष्टांतक बहुजन सेवो हर्ष बढाइ ॥ २१७ ॥ वे जिन देव तत्त्वके द्रष्टा सुरगन सेवत सो जयवंत। परजाकूं अति सांति सुदायक निद्राविन केवल द्रगवंत ॥ प्रजा कुसल सुर होईत विन परमातम राज निवसंत। परंपराय धर्म जिन भाषित जयवंतो मंगल सु करंत ॥ २१८ ॥

छप्पै-जयो चंद्र प्रभचंद्रका ज्ञान प्रकाशी जयो चंद्रप्रभ चंद्र जगत निम भ्रम तम नाशी। जयो चंद्र प्रभचंद्र भव्य कुमदास्य प्रकासत ॥ जयो चंद्र प्रभचंद्र श्रवत वचनामृत हितमित। ता लगत मिटै भवताप जग विमल दोष राहाद विन सित सुजस सु त्रिभुवन विस्तरो ॥ सो जयो अपूरव चंद्र जिन ॥ २१९ ॥ जयो चंद्र जिन सूर भूर, मिथ्यातम नासक। जयो चंद्र जिन सुर भूर जिव्याब्ज प्रकाशक॥ जयो चंद्र जिनसूर भूर सिव मग दरसावत, जयो चंद्र जिन सूर दुर भव उलून लखावत। जै तेजपुज विनताप जिन निमघन केतादिक रहत। सो जयो चन्द्र प्रभ अपर दिन, तास कृपा सब सुख लहत ॥२२०॥ जा त्रिन लखन स्वभाव वस्तु जिय भव्वन दंदै धूम्र कलंक समुक्त पवन वादी नहीं खंडै ॥ जयो चन्द्रप्रभ दीप अपर दुत त्रिभुवन घरमैं। गुनमन पूर प्रकास नास तम अघ जग सरमैं॥ हम देख तुमैं पै दोष सब, मान घरो मत अधिक यह। तुमकू

सु छांडकर किह वन, जे कुदेव तिन सरन गहु ॥ २२१ ॥
जयो चन्द्र प्रभनाम मंत्र आधार सु जिनकै। नाग वाघ वस होय सुरासुर सेवक तिनकैं ॥ जिन सासनवर भक्त यक्ष संज्ञासु अजित लसु। चन्द्रमालनी सुरी भक्तजन भक्ततने वस तिन आय वहोत कष्टकोय जो ॥ हो सक्क मनसु भक्तवैं, सो जयो चन्द परसीद कर। जिनसेन सिष्य नुत भक्तवैं ॥२२२॥

दोहा—सोलै कारन भावना, तासम सुख करतार।
सोलै संधि समाप्त श्रुत, भव जन मंगलकार ॥ २२३ ॥

इतिश्री चन्द्रप्रभपुराणे गुणभद्राचार्यप्रणीतानुसारे भगवत्चन्द्रप्रभ-
मोक्षकल्याणकवर्णनो नाम षोडश संधिः संपूर्णम् ॥ १६ ॥

सप्तदशम संधिः।

दोहा–वंदो रिषवर पार्स पद, सारद सुगुरु प्रनाम।
ग्रन्थ होन कारन सुनो, कवि कुल नगर सु नाम ॥ १ ॥
जो कवि ग्रंथ बनाय है, नाम न अपनो धार।
सो पंडित जनको बहुरि, श्रुतको चोर निहार ॥ २ ॥
सोरठा–ऐसा हेत विचार, मान बड़ाई ईरषा।
ए नहीं मनमें धार, कहुं वंश मैं आपनो ॥ ३ ॥

चौपई–जम्बूदीप भरतवर जान, आरज खंड मनोहर थान। तामैं कुर जांगल वर देस, धनधानादिक भरो विसेस ॥ ४ ॥ तहां फले जीरनके षेत, सांटन षांड महा छवि देत। सोफै घणो वाडीरु कसूब, रितु रितुमें फल फूल सुलुंब ॥ ५ ॥

नितर चुनै तिनको पांगना, तिन छव लख थक सुर अंगना। कंठ कोकिला पंचम राग, गावत सुन कुरंग थक भाग ॥ ६ ॥ गान सुनत अरु रूप लखंत, पथी रहे लुभाय अत्यंत। महकी प्रिष्ट होय असवार, गावत पंचम राग गवार ॥ ७ ॥ मुरली धुन जुत देखत सुरी, मोहित होय पथिक नरनरी। सुर कुर सम भोग कर महा, सत कुरुजांगल जनपद कहा ॥ ८ ॥ तित सुरपुर सम गजपुर जान, प्रथम सोमनृप भए महान। वसे देस कुरु इम कुरुवंस, सोम भूपते सोम सुवंस ॥ ९ ॥ वहां वंश परपाटी विषै, भए बहोत नृप कहांतक अषै। एते पदवीधारक चीन, सांत कुंथ अर जिनवर तीन ॥ १० ॥

तित श्री श्री कल्याणक धरा, इंद्रसु आय महोछव करा।
सब अतिशय छिनमें यह सिरे, पूजा नुतकर पातिग हरे॥ ११॥
साल साल प्रति उत्सव होय, संघ सहित आवै भवि लोय।
वात्सलयुत मुन विष्णुकवांर, तिनका जस जगमें विस्तार॥ १२॥
पांडुवाद बहु नृप शिवलीन, हथनापुरतैं पश्चिम चीन। पुर
"बडौत" सोहै सुखवास, कालंद्री तनुजा वह पास॥ १३॥
क्षीर नीर मधु सुधा समान सुर विमान सम किरती जान।
वट तरुवे र फूल फल अंत, थल नभचर पशु मिष्ट अनंत॥ १४॥
परखा ओंडी साल उतंग, पंचानन सम पण दुरसंग।
सघन बसै अति सोभा रास, तहां सु जिनके होय
अवास॥ १५॥

चित्रन चित्रत नूतन काम, देषत मोहै सुरनर वाम।
पार्श्व रिषभ प्रतिक्ष जिनतनी, नायक समारु प्रतिमा घनी॥ १६॥
जिन न्हवनाद जज्ञ भव करै, श्रुत वखान चरचा विस्तरै। कोय
पढ़ै कोई सुनै पुरान, को सिद्धांत सुनै मन आन॥ १७॥
दान यथावत करै है सर्व, सप्त क्षेत्रमें खरचै दर्व। अग्रवाल सब
जैनी जोर, जाति चुरासी मैना और॥ १८॥ भयो अग्र नृपकै
कुलवंश, नामांकित पुरस्य सरहंस। सो कुल नभमें ससि
सम भये, गोयल गोत गगन सम विषै॥ १९॥ जै जिनदास
महोकमसिंह, ता सुत जैकवार घनसिंह। रामसहाय रामजस
च्यार, धनसिंह सुत हीरा सु निहार॥ २०॥

ठंडीराम पंडित गुणवंत, गोमटसार पठन सिद्धन्त। तिनके ढटकर अक्षराभ्यास, भाषाको भयो बोध प्रकास ॥ २१ ॥ भाषा ग्रंथ लिखे दो चार, सहंस्कृतको नाहि विचार। छन्द अर्थ पद विपुल ज्ञान, मात्रा वर्न हनी न पिछान ॥ २२ ॥ देव शास्त्र गुरुके परसाद, सब पंचन सहाय कर याद। नृप अंग्रेज राजके मांहि, पूरन ग्रंथ चैनसे थाइ ॥ २३ ॥ श्रुतगण बाग समान अतुल, नाना कथन रंगके फूल। चुन चुन छंद सुगुनमें पोय, सुन्दर हार ग्रन्थ यह होय ॥ २४ ॥

दोहा—धरे सुबुधी कंठ जब, तब श्रुत शोभा धार।
पद बच लपे जल बूंद जूं, मुक्ताफल उनहार ॥ २५ ॥
श्रुतदध कथन सु मथन कर, चोज षोज घृत लीन।
यह पुरान संग्रह कियो, जूं माषी मधु चीन ॥ २६ ॥
अल्प काज गर बो गिने, अल्प बुध यह रीत।
जूं पपील कन ले चली, किधो चली गढ़ जीत ॥ २७ ॥
षट वर्ष कछु अधिकमें, पूरन भयो पुरान।
सर्व संघ मंगल करन, जैवन्तो सु महान ॥ २८ ॥

सोरठा—जब लग शशि अरु भान। तब लग जगमें विस्तरो ॥ नृप अरु परजा मान। सबहीको मंगल करो ॥ २९ ॥

दोहा—यह पुराण भिन थुन करी, सिरी चंद्रप्रभ तोहि।
भव भवमें निज भक्ति द्यो, जब लग शिवगति होय ॥ ३० ॥

उन्नीससै तेरसमै, तेरस भाद्रव स्याम।
गुरु दिन पुष रवि प्रात ही, पूरन ग्रंथ प्रमान ॥३१॥
छन्द बन्ध सब श्रुत प्रमित, तीन सहस सत चार।
देख सकल सुधी जन, भूलि निवार सु धार ॥३२॥
ज्यूं जिनमा सुपनीत गज, निज मुखमें मम देख।
त्यूं षोडश संघातमें, चहु सतरमी पेख ॥ ३३ ॥

राग प्रभात—यही मंगलचार हमरे यही। अरिहंत मंगल सिद्ध मंगल सुगुरु मंगलकार ॥ केवली भाखित धर्मवर। सु मंगल करतार ॥ ३४ ॥ यही उत्तम जग मांही, चार सब अघ हार ॥ सरन इनहीकी सु हीरालाल। भवदधि तार ॥३५॥

इति श्री चन्द्रप्रभपुराणे कविकुलनामग्राम वर्णनो नाम
सप्तदशम संधिः सम्पूर्णम् ॥ १७ ॥

संवत् १९१४ श्रावण कृष्णा तृतीया चन्द्रदिने ग्रन्थ पूर्णकृतं लिखितम्।
मिश्र रूपरामः बडवत (बड़ौत) मध्ये लिखापितं, साधर्मी लाला
रामबक्ष तस्यात्मज लाला उमेरचंद, नगरे जिनचैत्यालये
स्थापितम्। शुभ मंगलं ॥ श्री श्री श्री ॥

॥ समाप्तम् ॥